ISSN 0973-3914

रिसर्च जरनल ऑफ सोशल एण्ड लाइफ साइन्सेस

Peer- Reviewed Research Journal

UGC Journal No. (Old) 40942
Impact Factor 7.0 (IIFS)
Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©
ProQuest, U.S.A. Title Id: 715205

अंक 42
हिन्दी संस्करण
वर्ष - 21
जनवरी-जून 2025

2025
www.researchjournal.in

आई. एस. एस. एन. 0973-3914

रिसर्च जरनल ऑफ सोशल एण्ड लाइफ साइन्सेस

Peer-Reviewed Research Journal
UGC Journal No. (Old) 40942
Impact Factor 7.0 (IIFS)
Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, ProQuest
U.S.A. Title Id : 715205

अंक-42 | हिन्दी संस्करण | वर्ष-21 | जनवरी- जून 2025

डॉ. अखिलेश शुक्ल
ऑनरेरी सम्पादक
प्राध्यापक, समाजशास्त्र एवं समाजकार्य विभाग
उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान, नैक 'ए' ग्रेड
शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
प्रतिष्ठित भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एवार्ड तथा पं. गोविन्द वल्लभ पंत एवार्ड से सम्मानित
akhileshtrscollege@gmail.com

डॉ. संध्या शुक्ल
प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग
उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान, नैक 'ए' ग्रेड
शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
drsandhyatrs@gmail.com

डॉ. गायत्री शुक्ल
अतिरिक्त निदेशक, सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, रीवा
shuklagayatri@gmail.com

डॉ. आर. एन. शर्मा
सेवानिवृत्त आचार्य, उच्च शिक्षा, रीवा
rnsharmanehru@gmail.com

सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, रीवा
की मुख्य शोध पत्रिका
म.प्र. सोसायटी रजिस्ट्रेशन एक्ट, 1973 के अंतर्गत पंजीकृत
पंजीयन क्रमांक 1802, सन् 1997

विषय विशेषज्ञ/परामर्श मण्डल

1. डॉ. अरविंद जोशी, सेवानिवृत आचार्य, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय वाराणसी
arvindvns@outlook.com
2. डॉ. रामशंकर, कुलपति, पं. शम्भूनाथ शुक्ल विश्वविद्यालय, शहडोल
rs_dubey@yahoo.com
3. डॉ. डी. एस. राजपूत, आचार्य, डॉक्टर हरीसिंह गौर केंद्रीय विश्वविद्यालय सागर
drdiwakarrajeut@rediffmail.com
4. डॉ. बी. के. सिंह, आचार्य, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ वाराणसी
imdrbrajesh.kv@gmail.com
5. डॉ. अंजली श्रीवास्तव, सेवानिवृत आचार्य, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा
anjali_apsu@rediffmail.com
6. डॉ. बी. पी. बडोला, सेवानिवृत्त आचार्य, कांगड़ा हिमाचंल प्रदेश
bpbadola@gmail.com
7. डॉ. आभा सक्सेना, सह प्राध्यापक, अग्रसेन कन्या स्वशासी महाविद्यालय वाराणसी
drabhasaxena7@gmail.com
8. डॉ. प्रज्ञा मिश्रा, आचार्य, महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय चित्रकूट
pragyamishramgcgv@gmail.com
9. डॉ. आशीष सक्सेना, आचार्य, इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद उत्तर प्रदेश।
ashish.ju@gmail.com
10. डॉ. ज्योति उपाध्याय, आचार्य, विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन मध्य प्रदेश
drjyotiupadhyay11@gmail.com
11. डॉ. प्रमिला पुनिया, सह प्राध्यापक, इतिहास, राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर राजस्थान
pramilapoonia@rediffmail.com
12. डॉ. मृदुल जोशी, आचार्य, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार
dr_mriduljoshi@yahoo.com
13. डॉ. शैलजा दुबे, प्राध्यापक, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय भोपाल
shailjadubey70@yahho.in
14. डॉ. प्रमिला श्रीवास्तव, आचार्य, शासकीय कला महाविद्यालय कोटा राजस्थान
dr21pramila@gmail.com
15. डॉ. जयशंकर शाही, आचार्य, अलवर राजस्थान
jayshankarshahi@gmail.com
16. डॉ.एन. पी. त्रिपाठी , सेवानिवृत्त आचार्य, रीवा मध्य प्रदेश
17. डॉ. राजेश भट्ट, एच. एन. बी. केंद्रीय विश्वविद्यालय, श्रीनगर गढ़वाल, उत्तराखंड
rajeshbhatt11@gmail.com
17. डॉ. नीलिमा सिंह सह प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, व्ही.एस.एस.डी. कॉलेज कानपुर, उत्तरप्रदेश
singhneelima148@gmail.com

Guide Lines

- **General:** English and Hindi Editions of Research Journal are published separately. Hence Research Papers can be sent in Hindi or English.
- **Manuscript of research paper:** It must be original and typed in double space on the one side of paper (A-4) and have a sufficient margin. Script should be checked before submission as there is no provision of sending proof. It must include Abstract, Keywords, Introduction, Methods, Analysis, Results and References. Hindi manuscripts must be in Devlys 010 or Kruti Dev 010 font, font size 14 and in double spacing. All the manuscripts should be in two copies and in Email also. Manuscripts should be in Microsoft word program. Authors are solely responsible for the factual accuracy of their contribution.
- **References :** References must be listed cited inside the paper and alphabetically in the order- Surname, Name, Year in bracket, Title, Name of book, Publisher, Place and Page number in the end of research paper as under- Shukla Akhilesh (2018) Criminology, Gayatri Publications, Rewa : Page 12.
- **Review System:** Every research paper will be reviewed by two members of peer review committee. The criteria used for acceptance of research papers are contemporary relevance, contribution to knowledge, clear and logical analysis, fairly good English or Hindi and sound methodology of research papers. The Editor reserves the right to reject any manuscript as unsuitable in topic, style or form without requesting external review.

लेखकों से निवेदन-

- रिसर्च जरनल ऑफ सोशल एण्ड लाइफ साइंसेज (ISSN-0973-3914) सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज की मुख्य शोध पत्रिका है, जो मानव संसाधन मंत्रालय तथा पंजीयक समाचार पत्र एवं पत्रिका, भारत सरकार नई दिल्ली द्वारा पंजीकृत हैं।
- शोध पत्रिका उलरिच इन्टरनेशनल पीरियाडिकल्स डाइरेक्ट्री प्रोक्वेस्ट, संयुक्त राज्य अमेरिका से इंडेक्स्ड और लिस्टेड हैं।
- शोध पत्रिका का अंग्रेजी एवं हिन्दी संस्करण अलग-अलग प्रकाशित होता है।
- रिसर्च जरनल ऑफ सोशल एण्ड लाइफ साइंसेस का प्रकाशन प्रतिवर्ष जून एवं दिसंबर में किया जाता है।
- रिसर्च जरनल ऑफ सोशल एण्ड लाइफ साइंसेस को इम्पैक्ट फैक्टर एवं आई.एस.एस.एन प्राप्त हैं। शोध पत्रिका Peer-Reviewed हैं।
- शोध पत्रिका के नवीनतम अंक में प्रकाशित शोध पत्रों को हमारी वेबसाइट www.researchjournal.in (Current Issue) में देखा जा सकता है तथा डाउनलोड किया जा सकता है।
- शोध पत्रिका का प्रिंट एडीशन सदस्यों को अलग से डाक द्वारा भेजा जाता है।
- शोध पत्र में शीर्षक, नाम, पद, पदस्थापना का विवरण, पत्र व्यवहार का पता तथा दूरभाष क्रमांक, मोबाइल नं., ई-मेल एड्रेस अवश्य दिया जाये।
- शोध पत्र के प्रारम्भ में कम से कम 50-100 शब्दों का सारांश दिया जाये।
- मुख्य शब्द सारांश के नीचे टाइप कराया जाये।

- शोध पत्र में शोध पद्धति तथा शोध में प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण किया जाना चाहिए।
- शोध पत्र में निष्कर्ष और अंत में संदर्भ ग्रंथ सूची दी जाये। संदर्भ ग्रंथों का विवरण पूरा दिया जाये। लेखक का नाम, वर्ष, पुस्तक का नाम, प्रकाशक का विवरण, प्रकाशक का स्थान और पृष्ठ संख्या आदि का विवरण दिया जाना चाहिए।
- शोध पत्र माईक्रोसॉफ्ट वर्ड की फाइल में टाइप किया हुआ होना चाहिए। (नोट- पेज मेकर की फाइल, पी.डी.एफ. फाइल, स्कैन मैटर आदि में कदापि शोध पत्र न भेजें) शोध पत्र हिन्दी लिपि में कृतिदेव या देवलिस फांट 010(फॉन्ट साइज 14, स्पेस डबल, मार्जिन ए-4 साईज के कागज में चारो तरफ 1 इंच) में भेजा जाना चाहिए।
- शोध पत्र के साथ यह घोषणा अवश्य संलग्न करें कि शोध पत्र मौलिक है तथा इसे कहीं अन्यत्र प्रकाशनार्थ प्रेषित नहीं किया गया है।

सर्वप्रथम शोध पत्र ई-मेल द्वारा भेजें-

researchjournal97@gmail.com,
researchjournal.journal@gmail.com

शोध पत्र की स्वीकृति की सूचना सम्पादकीय कार्यालय द्वारा लेखक को ई-मेल एवं दूरभाष द्वारा प्रदान की जाती है।

© सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज

एक अंक रुपये 500.00

-सदस्यता शुल्क -		
अवधि	**व्यक्तिगत सदस्यता**	**संस्थागत सदस्यता**
वर्ष एक	2000-00	2500-00
वर्ष दो	2500-00	4000-00

सदस्यता शुल्क की राशि गायत्री पब्लिकेशन्स के स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, ब्रांच-रीवा सिटी (आईएफएस कोड 0004667 MICR Code 486002003) के खाता क्रमांक 30016445112 में जमा की जाय।

प्रकाशक: गायत्री पब्लिकेशन्स
रीवा- 486001 (म.प्र.)

मुद्रक: ग्लोरी ऑफसेट
नागपुर

संपादकीय कार्यालय

186/1, विन्ध्य विहार कॉलोनी
लिटिल बैम्बीनोज स्कूल कैम्पस
रीवा- 486001 (म.प्र.)
दूरभाष- 7974781746
E-mail- researchjournal97@gmail.com, researchjournal.journal@gmail.com
www.researchjournal.in

रिसर्च जरनल में प्रस्तुत किये गये विचार और तथ्य लेखकों के हैं, जिनके विषय में सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, सम्पादक मण्डल, प्रकाशक तथा मुद्रक उत्तरदायी नहीं है। रिसर्च जरनल के सम्पादन एवं प्रकाशन में पूर्ण सावधानी रखी गई है, किन्तु किसी त्रुटि के लिए सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, सम्पादक मण्डल, प्रकाशक तथा मुद्रक उत्तरदायी नहीं है। सम्पादन का कार्य अव्यावसायिक और ऑनरेरी है। सभी विवादों का न्यायालय क्षेत्र, रीवा जिला रीवा (म.प्र.) रहेगा।

सम्पादकीय

भारतीय ज्ञान परंपरा एक समृद्ध और विस्तृत विरासत है, जो सहस्राब्दियों से मानवता को दिशा देती आई है। यह परंपरा केवल धार्मिक या आध्यात्मिक नहीं, बल्कि विज्ञान, गणित, आयुर्वेद, वास्तुशास्त्र, दर्शन, योग और सामाजिक व्यवहार जैसे अनेक क्षेत्रों में गहन समझ प्रदान करती है। आज के वैश्वीकरण और तकनीकी विकास के दौर में, जब मनुष्य मानसिक तनाव, पर्यावरणीय संकट और सामाजिक विघटन से जूझ रहा है, तब भारतीय ज्ञान परंपरा की प्रासंगिकता पहले से कहीं अधिक बढ़ गई है। योग और आयुर्वेद की वैश्विक स्वीकार्यता इसका प्रमाण है कि भारतीय ज्ञान परंपरा केवल भारतीय सीमाओं तक सीमित नहीं रही। योग आज मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य का वैश्विक समाधान बन चुका है, वहीं आयुर्वेद प्राकृतिक चिकित्सा का एक स्थायी विकल्प प्रस्तुत करता है। यह विज्ञान, शरीर को एक समग्र दृष्टिकोण से देखता है, जिससे जीवनशैली आधारित रोगों से बचाव संभव होता है।

शिक्षा और नैतिकता का पुनर्संस्कार भी वर्तमान समय की आवश्यकता है। भारतीय दर्शन में निहित 'वसुधैव कुटुम्बकम', 'सत्यं वद, धर्मं चर' जैसे सिद्धांत आधुनिक समाज में सहिष्णुता, सह-अस्तित्व और सत्यनिष्ठा की भावना को पोषित करते हैं। जब दुनिया उपभोक्तावाद और व्यक्तिगत स्वार्थ की ओर बढ़ रही है, तब भारतीय ज्ञान परंपरा संतुलित, सहअस्तित्वपूर्ण और नैतिक जीवनशैली का मार्ग दिखाती है।
पर्यावरण संरक्षण के क्षेत्र में भी भारतीय परंपरा प्रकृति के साथ सहजीवन पर बल देती है। पंचतत्व, वृक्ष-पूजा, नदियों को जीवनदायिनी मानना- ये सभी प्रकृति के संरक्षण की गहरी समझ को दर्शाते हैं, जो आज के जलवायु संकट के समाधान में मार्गदर्शक बन सकते हैं।यह अंक शोधकर्ताओं, विद्यार्थियों, प्राध्यापको तथा समाज के जागरूक नागरिकों के लिए उपयोगी सामग्री उपलब्ध कराती है।

भारतीय ज्ञान परंपरा एवं समाजशास्त्रीय संदर्भ विषय भारतीय समाज में ज्ञान के विकास और उसके सामाजिक स्वरूपों पर केंद्रित है। भारत की प्राचीन सभ्यता ने विश्व को गहन दार्शनिक विचार, नैतिक शिक्षाएँ, सामाजिक संगठन के मॉडल और जीवन जीने की अनूठी दृष्टि प्रदान की है। भारतीय ज्ञान परंपरा वेदों, उपनिषदों, पुराणों, महाकाव्यों (रामायण और महाभारत), दर्शनशास्त्रों, आयुर्वेद, योग, ज्योतिष और वास्तु जैसे विभिन्न क्षेत्रों में फैली हुई है। यह परंपरा ज्ञान को केवल बौद्धिक अभ्यास नहीं मानती, बल्कि जीवन के प्रत्येक पक्ष से जोड़ती है-व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक और आध्यात्मिक विकास का साधन। समाजशास्त्रीय दृष्टि से, भारतीय ज्ञान परंपरा ने समाज को संगठित करने के सिद्धांत प्रस्तुत किए। वर्ण व्यवस्था (योग्यता और कर्म आधारित विभाजन), आश्रम व्यवस्था (जीवन के चार चरण), तथा संयुक्त परिवार की अवधारणा ने सामाजिक स्थायित्व और नैतिकता को बढ़ावा दिया। पंचायत प्रणाली और ग्राम स्वराज जैसे संस्थान प्राचीन लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं के उदाहरण रहे हैं। भारतीय समाज में धर्म

और कर्तव्य का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रहा है। धर्म का अर्थ केवल पूजा-पद्धति नहीं, बल्कि सामाजिक, पारिवारिक और व्यक्तिगत जिम्मेदारियों का पालन करना भी है। इसने समाज में संतुलन, सहयोग और सह-अस्तित्व की भावना को बढ़ाया। समकालीन समाजशास्त्र में भी भारतीय ज्ञान परंपरा का पुनर्मूल्यांकन हो रहा है। वैश्वीकरण, उपभोक्तावाद और आधुनिक जीवनशैली से उत्पन्न सामाजिक संकटों के समाधान के लिए भारतीय दृष्टिकोण की प्रासंगिकता को पहचाना जा रहा है। सामूहिक हित, सहिष्णुता, अहिंसा, समता, और पर्यावरण के साथ सामंजस्य जैसे मूल्य आज भी अत्यंत आवश्यक हैं। इस प्रकार, भारतीय ज्ञान परंपरा न केवल अतीत का गौरव है, बल्कि आज के समय में भी सामाजिक संरचना, नैतिकता और मानव कल्याण के लिए एक समृद्ध स्रोत है। इसके समाजशास्त्रीय अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय सोच समग्र और जीवन के सभी आयामों को संतुलित करने वाली रही है।

हमें विश्वास है कि प्रस्तुत शोध पत्रिका पाठकों के चिंतन, मनन एवं अध्ययन की दृष्टि से उपयोगी सिद्ध होगी तथा शोध की दिशा में नई प्रेरणा प्रदान करेगी।

अंत में, मैं सभी लेखकों, शोधार्थियों एवं सहयोगियों को हार्दिक धन्यवाद देता हूँ, जिनके सक्रिय सहयोग से नियत समय पर इस अंक का प्रकाशन संभव हो पाया है।

डॉ. अखिलेश शुक्ल
प्रधान सम्पादक

अनुक्रमणिका

01.	डिजिटल बाजार में उपभोक्ता व्यवहार: चुनौतियाँ एवं समस्याऐं **पूर्वा शर्मा, अनिता दीक्षित**	09
02	सृष्टि की उत्पत्ति का शैक्षिक ज्ञान **गायत्री चौधरी, दिनेश कुमार**	19
03	प्राथमिक विद्यालयों में अध्यापनरत शिक्षकों की सवेंगात्मक बुद्धि का अध्ययन **अनिता सिंह, यज्ञानंद गढ़ेवाल**	25
04	शिक्षण व्यवसाय में कार्य संतुष्टि और चुनौतियों पर एक अध्ययन **श्वेता सिंह, डॉ. अनिता सिंह**	33
05	भारतीय ज्ञान परंपरा एवं समाजशास्त्रीय संदर्भ **अखिलेश शुक्ल**	43
06	गणित के प्रति अभिभावकों की अभिवृति और विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि **प्रकृति जेम्स, मेघनाथ सूर्यवंशी**	53
07	सोशल मीडिया का महिलाओं और बच्चों पर प्रभाव **शुभम सोनी, अखिलेश शुक्ल**	59
08	शिक्षण अधिगम में मोबाइल का उपयोग एवं चुनौतियाँ **बीना सिंह, धनेश्वरी राही**	69
09	युवाओं मे मादक द्रव्य व्यसन की प्रकृति एवं प्रभाव का समाजशास्त्रीय अध्ययन **विपाशा चौधरी, चांदनी मरकाम**	83
10	महात्मा गाँधी का रचनात्मक कार्यक्रम **संतोष यादव, डॉ. रश्मि सोमवंशी**	90
11	शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों में सेवारत प्राध्यापकों की कार्य संतुष्टि का समालोचनात्मक अध्ययन **बलवंत सिंह, रेखा बिष्ट**	94
12	छत्तीसगढ़ के ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक सशक्तिकरण में गैर-सरकारी स्वैच्छिक महिला संगठन की भूमिका **सुधा यादव, के.एन. दिनेश**	100
13	गांधी जी का ग्राम स्वराज्य एवं गाँवों के स्वरूप का अध्यन्न (जिला- सरगुजा के संदर्भ मे) **बिकलेश कुमार गुप्ता**	106
14	स्वाधीनता आंदोलन में महिलाओं की भूमिका **मंजू भट्ट, प्रज्ञा शर्मा**	113
15	भारतीय ज्ञान परंपरा में महिलाओं के पैतृक संपत्ति में अधिकार एवं वर्तमान कानूनी स्थिति **सीमा अग्रवाल**	118

16	आधुनिक तकनीकी पर्यटन व्यवस्था चुनौतियॉ एवं अवसर **निशान्त सक्सेना**	125
17	विद्यार्थियों के मानसिक योग्यता पर अध्ययन **आस्था सिजारिया**	139
18	कौटिल्य के अर्थशास्त्र में निहित राजनीतिक दर्शन की प्रासंगिकता: एक अध्ययन **राजकुमार प्रसाद** **राहुल कुमार**	148
19	भारतीय राजनीतिक- प्रशासनिक चिंतनरू कौटिल्य की दृष्टि में **जगदीश प्रसाद, राहुल कुमार**	155
20	पर्यावरण और मानवाधिकार: एक अध्ययन **विभा कुमारी**	165
21	श्री कृष्ण की बाल लीलाओं का समाजशास्त्रीय विश्लेषण: श्रीविष्णु पुराण एवं इस्कॉन कृत- कृष्ण द सुप्रीम पर्सनैलिटी ऑफ गॉडहेड के सन्दर्भ में **प्रमोद कुमार गुप्ता, उर्वशी नाग**	175
22	उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के अभिभावक शैली का उनके शैक्षिक शिथिलता पर प्रभाव का अध्ययन **रितु विश्वकर्मा, स्वाती पाण्डेय**	189
23	संयुक्त परिवार का स्वरूप एवं परिवर्तन की प्रवृत्ति एक समाजवैज्ञानिक विश्लेषण **शोभा प्रजापति** **ब्रजेश कुमार सिंह**	198
24	शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत् किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन **प्रीति सोनी, मीता झा**	209
25	रीवा जिले के वृद्धों की आर्थिक, स्वास्थ्य एवं मनोवैज्ञानिक समस्याओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन **विमला यादव** **महानंद द्विवेदी**	215
26	तिलक व गोखले के तुलनात्मक राजनीतिक विचार **मेघा माहेश्वरी, रश्मि सोमवंशी**	221
27	संस्कृत साहित्य में प्रकृति-चित्रण (रघुवंशम् महाकाव्य के विशेष संदर्भ में) **मधु**	227
28	भारतीय ज्ञान परंपरा और दर्शन: ऐतिहासिक भूमिका एवं आधुनिक संदर्भ **अमोल कुमार**	232

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 42, Hindi Edition, Year-21, Jan.- June 2025

डिजिटल बाजार में उपभोक्ता व्यवहार: चुनौतियाँ एवं समस्याऐं

• पूर्वा शर्मा
•• अनिता दीक्षित

सारांश- प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य डिजिटल बाजार में उपभोक्ता व्यवहार चुनौतियाँ एवं समस्याओं के बारे में अध्ययन करना है। ऑनलाइन शॉपिंग एक विश्वयापी घटना के रूप में विकसित हो गयी है। सामान्यत: व्यक्ति किसी उत्पाद को ऑनलाइन खरीदना अधिक पसंद करता है बजाय स्टोर्स में जाने के क्योंकि ऑनलाइन खरीदी अधिक सुविधाजनक होती है। यह इंटरनेट के द्वारा इलेक्ट्रानिक उपकरणों के माध्यम से सर्वोत्तम समान और सेवाओं को घर बैठे खोजने में सहायता करता है। प्रस्तुत अध्ययन में युवा व्यक्तियों के ऑनलाइन खरीदारी व्यवहार और उनके निर्णय को प्रभावित करने वाले कारकों की जॉच की गयी। ऑनलाइन खरीदारी आमतौर पर सरल और युवाओं के लिए अत्यधिक सुविधाजनक होती है। जिससे वे कई ऐसे उत्पाद खोज सकते है जो उन्हें आस-पास की दुकानों पर नहीं मिल पाते है। इसी कारण से ऑनलाइन शॉपिंग की उपयोगिता बढ़ती जा रही है। दुर्ग जिले के विकासखण्ड में ऑनलाइन शॉपिंग युवाओं के द्वारा प्रचुर मात्रा में की जा रही है। चयनित दुर्ग जिले के मोहलसई विकासखण्ड में 60 प्रतिशत जनता ऑनलाइन शॉपिंग के लिये स्मार्ट फोन का उपयोग करती है। हालांकि 40 प्रतिशत जनता टेबलेट, लैपटॉप और कम्प्यूटर के माध्यम से बड़े उत्पादों की खरीदी करते है। मोहलाई विकासखण्ड के 80 प्रतिशत युवा ऑनलाइन शॉपिंग करते है। इनके आधार पर सबसे उपयोगी एप्लीकेशन अमेंजॉन है। जिसका उपयोग 34 प्रतिशत उपभोक्ता करते है। लगभग 40 प्रतिशत उपभोक्ता 5000/- रूपये प्रतिवर्ष की राशि ऑनलाइन उत्पादों की खरीद पर खर्च करते है। दुर्ग जिले के ऑनलाइन शॉपिंग के लिये पसंदीदा उत्पाद इलेक्ट्रॉनिक्स का सामान रहा है। जिसका प्रतिशत 35 है। 45 प्रतिशत उपभोक्ता भुगतान के लिये UPI(GPay/Phone Pay) का उपयोग कर रहे है। अत: डिजिटल आधार पर भुगतान लगभग विश्वसनीय है। 60 प्रतिशत उपभोक्ता को शॉपिंग के दौरान किसी भी तरह की परेशानी का सामना नहीं करना पड़ा है। 40 प्रतिशत उपभोक्ता छूट व ऑफर से प्रेरित होकर ही ऑनलाइन शॉपिंग करते है। ऑनलाइन उत्पाद की गुणवत्ता 30 प्रतिशत उपभोक्ता के

• कल्याण पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज सेक्टर 7 भिलाईनगर
••सहायक प्राध्यापक अर्थशास्त्र, शा.दू.ब. महाविद्यालय रायपुर (छ.ग)

आधार पर सही नहीं होती है। फिर भी 60 प्रतिशत उपभोक्ता ऑनलाइन शॉपिंग से संतुष्ट है। 35 प्रतिशत उपभोक्ता को ऑनलाइन शॉपिंग के बारे में जानकारी न होने के कारण ऑनलाइन आधार पर खरीदी नहीं कर रहे है। दुर्ग जिले के डिजिटल बाजार में उपभोक्ता व्यवहार चुनौतियों एवं अवसर संबंधी संमको के विश्लेषण से स्पष्ट है, कि उपभोक्ता ऑनलाइन शॉपिंग करना पसंद करते हैं। सबसे उपयोगी एप्लीकेशन में अमेजॉन का उपयोग किया जा रहा है। अपनी आय का 20-30 प्रतिशत ऑनलाइन शॉपिंग पर खर्च भी करते है। घरेलू व सौंदर्य प्रसाधन जैसे उत्पाद ऑनलाइन आधार पर खरीदते भी है। डिजिटल आधार पर भुगतान करना भी वे पसंद करते है। कुछ हद तक धोखाधड़ी व परेशानी का सामना भी करना पड़ता है। ऑनलाइन आधार पर आने वाली परेशानी व समस्या के उचित समाधान की आवश्यकता महसूस हो रही है। जिसके बाद डिजिटल आधार पर खरीददारी व भुगतान का प्रतिशत निश्चित तौर पर बढ़ेगा।

मुख्य शब्द- ऑनलाइन शॉपिंग, खरीदारी की आदते, उपभोक्ता व्यवहार, इंटरनेट, युवा

प्रस्तावना- आज का समाज डिजिटलीकरण को प्रोत्साहन देने वाला है। पहले इंटरनेट का उपयोग सिर्फ किसी जानकारी के अदान-प्रदान के लिए किया जाता था। लेकिन अब यह आवश्यक हो गया है। व्यवसाय, सामाजिक संपर्क, खरीदारी सभी इंटरनेट से जुड़े है। डिजिटल संस्कृति और कोविड-19 के कारण ही ऑनलाइन शॉपिंग को अत्यधिक लोकप्रियता मिली है। हम हमेशा उत्पादों को ऑनलाइन खरीदना चाहते है, क्योंकि यह सरल और सुविधाजनक होता है और हमें दुकानों में जाकर परेशानी का सामना नहीं करना पड़ता है। इस प्रकार यह स्पष्ट है, कि इंटरनेट की पहुँच लोगों को बेहतर कीमतों के चयन और विभिन्न ऑफर के साथ उच्च गुणवत्ता की वस्तुएँ और सेवाओं को खोजने में सक्षम बनाती है। ऑनलाइन खरीदारी के लिए टेबलेट, लैपटॉप और स्मार्टफोन इत्यादि का उपयोग किया जाता है। इन इलेक्ट्रॉनिक डिवाइसों की सहायता से हम किसी भी समय, कही भी अधिकांश चीजे खरीद सकते है। इस प्रकार व्यवसायियों के लिए ग्राहकों की प्राथमिकताओं और प्रभावशील कारकों पर ध्यान केन्द्रित करना महत्वपूर्ण है। ऑनलाइन खरीदारी की सरलता ने हमारी खरीदारी की आदतों में परिवर्तन कर दिया है। खरीदारी को बढ़ावा देने के लिए ग्राहकों की मांग और उनके पिछले अनुभवों पर ध्यान देना आवश्यक है। इसका विश्लेषण कर यह ज्ञात किया जा सकता है, कि ग्राहक दुबारा खरीदारी करेगें या नहीं। आजकल, ऑनलाइन खरीदारी युवाओं, बच्चों, वयस्कों सभी पीढ़ियों के लिए लचीली है। इसके लिए सिर्फ इंटरनेट कनेक्शन और एक क्रेडिट कार्ड आवश्यक है। दैनिक कार्यो के लिए भी आजकल ऑनलाइन तकनीकों का उपयोग किया जाने लगा है। प्राय: देखा जा रहा है, कि लोग अपने काम के लिए इंटरनेट पर अधिक निर्भर होते जा रहे है। लोगों के द्वारा इंटरनेट का उपयोग शिक्षा, ऑनलाइन रोजगार और ऑनलाइन शॉपिंग के लिए करते है। पहले खरीदी पांरपरिक खुदरा दुकानों पर जाकर की जाती थी, लेकिन अब ऑनलाइन स्टोर ने इसकी जगह ले ली है, सभी आवश्यकता

की वस्तुएँ एक ही प्लेटफॉर्म पर उपलब्ध होने के कारण ऑनलाइन शॉपिंग की मांग पढ़ रही है। पारंपरिक आधार पर दुकानों में खरीदारी के लिए एक के बाद एक स्टोर में जाना पड़ता है। इस परेशानी से बचने के लिए ऑनलाइन शॉपिंग सहायता करती है। घर बैठे ही सब कुछ खरीदने की अनुमति प्रदान करती है।

प्रस्तुत शोध पत्र में डिजिटल बाजार में उपभोक्ता व्यवहार व उनके सामने आने वाली चुनौतियों तथा विभिन्न अवसरो का अध्ययन किया गया है। प्रस्तुत शोध पत्र का अध्ययन क्षेत्र दुर्ग जिले का मोहलाई विकासखण्ड है। जहां कि जनसंख्या लगभग 3212 है। जहां का साक्षरता दर लगभग 66 प्रतिशत है।

इब्राहिम एवं अन्य (2023) ने ''ऑनलाइन शॉपिंग बिहेवियर इन युथ अ सिस्टमेटिक रिव्यु ऑफ द फेक्टर इनफलुइंसिग ऑनलाइन शॉपिंग इन यंग एडल्टस'' विषय पर अध्ययन से यह निष्कर्ष प्रस्तुत किया कि ऑनलाइन शॉपिंग की सुविधा, उत्पादों का विस्तृत चयन और खरीदारी में आसानी के कारण उपभोक्ता ऑनलाइन शॉपिंग के लिये सकारात्मक रूप से प्रोत्साहित होते है। दूसरी ओर मुख्य बाधाओं के रूप में उत्पाद जोखिम और वित्तीय जोखिम शामिल है। ऑनलाइन शॉपिंग के फायदे और नुकसान के बारे में उपभोक्ता की धारणाएं उनके ऑफलाइन खरीदारी करने के निर्णय को प्रभावित करती है। ऑनलाइन खुदरा विक्रेता को विश्वसनीयता, निर्भरता और गुणवत्ता से संबधित रणनिति बनाने की सलाह दी जाती है।

कुमार एवं अन्य (2021) ने स्टडी ऑन शॉपिंग बिहेवियर ऑफ यंग एडल्टस टुवार्डस परचेज ऑफ स्मार्ट फोन्स में यह निष्कर्ष प्रस्तुत किया कि भारत ने ई कॉमर्स बाजार में जबरदस्त वृद्धि देखी है। भारतीय युवा ऑनलाइन माध्यम से परिधान, जूते और स्मार्ट फोन खरीद रहे है। यह शोध पत्र स्मार्टफोन की ऑनलाइन खरीदारी के प्रति उपभोक्ता के व्यवहार, खरीदी के व्यवहार और वरीयताओं को प्रभावित करने वाले कारकों को जानने का प्रयास करता है। शोध में यह पाया गया कि जनसांख्यिकीय चर स्मार्ट फोन के ब्रांड और स्मार्ट फोन के लिए भुगतान करने की इच्छा पर सकारात्मक प्रभाव डालते है। कुछ हद तक मनोवैज्ञानिक चर भी ऑनलाइन शॉपिंग को प्रभावित करते है।

अग्रवाल (2020) ने ''द इनफलुइंसिंग ऑफ सोशल ई शॉपिंग इन इनहैंसिग यंग वुमैन ऑनलाइन शॉपिंग बिहेवियर'' में यह निष्कर्ष दिया कि युवा महिलाओ द्वारा पारंपरिक साइट की तुलना में सोशल ई शॉपिंग साइट पर वापस लौटने, उससे खरीदारी करने और उसकी अनुशंसा करने के लिये कहीं अधिक सकारात्मक इरादे व्यक्त किये गयें। इसलिए शॉपिंग को सोशल नेटवर्किंग के साथ मिलाकर ऑनलाइन आधार पर खरीदी बहुत ही चर्चित प्रतीत हुयी।

सांथा (2016) ने ''ऑनलाइन शॉपिंग बिहेवियर अमंग युथ'' पर अध्ययन से निष्कर्ष प्रस्तुत किया कि, उत्तरदाताओं द्वारा flipcart का इस्तेमाल सबसे ज्यादा किया गया। उत्तरदाताओ द्वारा ऑनलाइन माध्यम से खरीदी जाने वाली मुख्य वस्तुएँ कपड़े और जूते थे। उत्तरदाताओ द्वारा ऑनलाइन शॉपिंग को प्राथमिकता देने का मुख्य कारण समय की बचत था।

शोध पद्धति- इस अध्ययन में अनुसंधान विधि के रूप में विवरणात्मक सर्वेक्षण विधि का उपयोग किया गया है। इस शोध के लिए ऑकड़ो के संग्रहण के लिए प्रश्नावली का उपयोग किया गया। जिनमें पूछे गये प्रश्न ऑनलाइन खरीदारी व्यवहार और आने वाली समस्या पर आधारित है।

युवा वयस्कों के बीच ऑनलाइन खरीदारी व्यवहार- व्यवहार यह निर्धारित करता है, कि हमारी गतिविधियाँ हमारी सोच को कैसे प्रभावित करती है। ग्राहक की सोच को प्रभावित करने में सोशल मीडिया की भूमिका अहम रहती है। युवा किसी भी उत्पाद को खरीदने से पूर्व अन्य विकल्पों से तुलना कर अपनी आवश्कता और कीमत के आधार पर विचार करते है फिर अनुभव के आधार पर ही खरीदारी करते है। उपभोक्ता व्यवहारिक रूप से खरीदारी करना पसंद करता है। ऑनलाइन खरीदारी में उपभोक्ताओं को जोखिम भी होता है युवाओं का व्यवहार यह होता है, कि वह कम जोखिम या ना के बराबर जोखिम वाले कार्य ही पसंद करते है। ऐसा ही व्यवहार कुछ हद तक ऑनलाइन खरीदारी व्यवहार पर भी देखने को मिलता है।

ऑनलाइन खरीदारी को प्रभावित करने वाले कारक - उपभोक्ता की ऑनलाइन खरीदारी को मुख्य रूप से पांच कारक प्रभावित करते है–

ऑनलाइन विश्वास व्यवहार- ऑनलाइन शॉपिंग के आधार पर जब ग्राहक को यह विश्वास हो जाता है कि यह सुरक्षित है तो वह पिछले सुखद अनुभव के आधार पर आगामी शॉपिंग के योजाऐं बनाता है। स्पष्ट है, कि विश्वास ही ऑनलाइन खरीदारी को प्रभावित करने वाला प्रथम मुख्य कारक माना जाता है।

ग्राहको की ई-संतुष्टी - ई–संतुष्टी शब्द का अर्थ किसी वस्तु या उत्पाद की खरीदी और उसके उपयोग की संतुष्टी से लगाया जाता है। यदि कोई युवा किसी उत्पाद या सेवा को पसंद करता है, और उसे उत्पाद के प्रयोग से संतुष्टी मिल रही है तो वह उस उत्पाद/ कंपनी के साथ यथासंभव बने रहने का प्रयास करता है। इस प्रकार स्पष्ट है, कि संतुष्टी भी युवाओं के ई–शॉपिंग व्यवहार को प्रभावित करती है।

सुविधा- किसी भी उत्पाद को सुविधा के साथ प्राप्त करना सभी व्यक्ति चाहते है। इसलिये ऑनलाइन शॉपिंग अस्तित्व में देखने को मिलता है। आज के समय में लोगों के पास समय की कमी के चलते इंटरनेट के माध्यम से ऑनलाइन शॉपिंग सबसे आसान प्रतीत होता है। पारंपरिक आधार पर शॉपिंग के लिए उपभोक्ता को ट्रैफिक और अन्य तरह की कई मुश्किलों का सामना करना पड़ता है। जिसके विकल्प के रूप में ऑनलाइन शॉपिंग काफी हद तक सुविधाजनक प्रतीत होता है।

कीमत- सामान्य शब्दों में कीमत से आशय, व्यक्ति किसी वस्तु की गुणवत्ता के आधार पर कितना खर्च करने को तैयार है, उससे हैं। पारंपरिक आधार पर जो उत्पाद मिलते है और ऑनलाइन मे उसकी कीमत कितनी है इन दोनों की तुलना के बाद ही युवा उत्पाद खरीदता है। ऑनलाइन में विभिन्न प्रकार के एप्लीकेशन में बहुत से ऑफर के चलते उत्पाद का मूल्य कम होता है। अत: यह कारक भी प्रभावित करते है।

व्यवहार नियोजन का सिद्धांत- मानव व्यवहार को प्रभावित करने वाले सिद्धांतो का वर्णन यहां किया है, इस सिद्धांत के आधार पर किसी व्यक्ति या समूह के व्यवहार में

सकारात्मक परिवर्तन लाया जा सकता है। उपभोक्ताओं को छूट, कूपन, लॉयल्टी प्रोग्राम, फ्लैश सेल इत्यादि की सुविधा देकर उनके खरीदारी व्यवहार में परिवर्तन लाया जा सकता है।

अनुसंधान उद्देश्य -

- उपभोक्ता की ऑनलाइन शॉपिंग प्राथमिकताओं का वर्गीकरण करना।
- उन तत्वों का विश्लेषण करना जो ग्राहकों को ऑनलाइन शॉपिंग करने के लिए प्रोत्साहित करते है।
- उन संसाधनों का अध्ययन करना जो उपभोक्ता ऑनलाइन खरीदारी में प्रयोग करते है।
- ऑनलाइन शॉपिंग में आने वाली समस्याओं का अध्ययन।

शोध क्षेत्र एवं समंको का विश्लेषण- डिजिटल बाजार में उपभोक्ता व्यवहार चुनौतियों एवं अवसर के अध्ययन के लिये दुर्ग जिले के मोहलाई विकासखण्ड का चयन किया गया है। मोहलाई गांव में 687 परिवार निवासरत है। जिसमें युवाओं का प्रतिशत लगभग 35 है। जो डिजिटल खरीदी में संलग्न रहते है। इस प्रकार डिजिटल बाजार में उपभोक्ता व्यवहार को जानने के लिये मोहलाई विकासखण्ड में से 50 परिवारों यानि कुल 50 लोगों का दैव-निदर्शन पद्धति से चयन किया गया है। यह शोध पत्र विवरणात्मक अनुसंधान पर आधारित है। इसके बाद उनके ऑनलाइन शॉपिंग के कारण, समस्या व व्यवहार को जानने के लिये प्रश्नावली के माध्यम से आंकड़े संग्रहित किये गये है, जिसका सारणीयन एवं विश्लेषण निम्नानुसार है:-

तालिका क्रमांक- 01

अनुक्रमांक	ऑनलाइन शॉपिंग के उपयोगकर्ता	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	40	80
2	नहीं	10	20
	कुल	50	100

ऑनलाइन शॉपिंग के उपयोगकर्ता विश्लेषण तालिका 1 से स्पष्ट है, कि मोहलाई विकासखण्ड की 80 प्रतिशत जनता ऑनलाइन शॉपिंग करती है। 20 प्रतिशत ऑनलाइन शॉपिंग नहीं करती है। अत: स्पष्ट है, कि डिजिटल खरीदारी का चलन तेजी से बढ़ रहा है।

तालिका क्रमांक-02

अनुक्रमांक	ऑनलाइन शॉपिंग के लिये उपयोग किये जाने वाले डिवाइस	आवृत्ति	प्रतिशत
1	Smart Phone	30	60
2	Laptop/Computer	15	30
3	Tablet	5	10
	कुल	50	100

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है, कि मोहलाई विकासखण्ड में ऑनलाइन शॉपिंग स्मार्ट फोन के द्वारा सर्वाधिक की जाती है, जिसका प्रतिशत 60 है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि ऑनलाइन शॉपिंग के लिये सर्वाधिक उपयोग किया जाने वाला डिवाइस

स्मार्ट फोन है। बड़े ऑर्डर के लिये कम्प्यूटर और लेपटॉप का प्रयोग किया जाता है, जिसका प्रतिशत 15 है।

तालिका क्रमांक-03

अनुक्रमांक	विशेषतायें जो ऑनलाइन खरीदी को प्रोत्साहित करती है	आवृत्ति	प्रतिशत
1	छूट/कम लागत	20	40
2	होम डिलिवरी सुविधा	13	26
3	गिफ्ट वाउचर	07	14
4	समय की बचत	05	10
5	रिटर्न और रिफंड पॉलिसी	05	10
	कुल	50	100

विशेषतायें जो ऑनलाइन खरीदी को प्रोत्साहित करती है तालिका के आधार पर स्पष्ट है, कि मोहलाई विकासखण्ड के लोगो के आधार पर ऑनलाइन शॉपिंग को सर्वाधिक प्रोत्साहित कंपनी द्वारा दी जाने वाली छूट करती है, जिसका प्रतिशत 40 है। जिसके आधार पर कम कीमत पर उपभोक्ताओं को वस्तुओं की प्राप्ति हो जाती है। होमडिलिवरी का प्रतिशत 26 है। स्पष्ट है, कि कुछ हद तक यह सुविधा भी ऑनलाइन शॉपिंग को प्रभावित करती है।

तालिका क्रमांक-04

अनुक्रमांक	ऑनलाइन शॉपिंग के लिये उपयोगी एप्लीकेशन	आवृत्ति	प्रतिशत
1	Flipcart	15	30
2	Snapdeal	05	10
3	Amazon	17	34
4	Meesho	05	10
5	Myntra	08	16
	कुल	50	100

उपर्युक्त तालिका क्रं 4 से स्पष्ट है, कि सर्वाधिक लोकप्रिय शॉपिंग प्लेटफार्म Amazon है जिसका प्रतिशत 34 है। जो यह दर्शाता है, कि जनता को उनके द्वारा दी जाने वाली सेवाएं बहुत पसंद आ रही है। सबसे कम Meesho (10%) और Snapdeal (10%) के उपयोगकर्ता है। इसप्रकार ये कुछ किफायती और लोकल ब्रांडस के लिये उपयोगी है।

तालिका क्रमांक-05

अनुक्रमांक	ऑनलाइन खरीदी के पसंदीदा उत्पाद	आवृत्ति	प्रतिशत
1	सौंदर्य प्रसाधन	05	10
2	घरेलू सामान	10	20
3	इलेक्ट्रानिक्स	18	35
4	कपड़े	15	30
5	अन्य	02	5
	कुल	50	100

तालिका से स्पष्ट है, कि मोहलाई विकासखण्ड के सर्वाधिक 35 प्रतिशत जनता

इलेक्ट्रानिक्स का सामान ऑनलाइन आधार पर खरीदना पंसद करती है। इसके बाद 30 प्रतिशत कपड़े की खरीदी पसंद करते है। सौंदर्य प्रसाधन भी 10 प्रतिशत लोगों के द्वारा ऑनलाइन खरीदा जाता है। इस प्रकार अलग अलग वर्ग भिन्न भिन्न वस्तुयें खरीदना पसंद करता है।

तालिका क्रमांक-06

अनुक्रमांक	ऑनलाईन शॉपिंग पर खर्च की गई राशि	आवृत्ति	प्रतिशत
1	5000 से कम	20	40
2	5000-10000	15	30
3	10000-20000	10	20
4	20000 से अधिक	05	10
	कुल	50	100

ऑनलाईन शॉपिंग पर खर्च की गई राशि तालिका से स्पष्ट है, कि एकल खरीद के लिये प्रतिवर्ष खर्च की गई राशि में सर्वाधिक प्रतिशत 40 जो 5000 से कम की राशि का है, जो यह दिखाता है, कि ऑनलाइन शॉपिंग आमतौर पर छोटे प्रोडक्टस के लिये की जाती है। 5000 से 10000 रुपये तक की खरीदी का प्रतिशत 30 है जो मीडियम उत्पाद की खरीद दर्शाता है। 20000 से अधिक की खरीदी करने वाले उपभोक्ता सिर्फ 10 प्रतिशत है।

तालिका क्रमांक-07

अनुक्रमांक	भुगतान का सर्वश्रेष्ठ विकल्प	आवृत्ति	प्रतिशत
1	क्रेडिट/डेबिट कार्ड	15	30
2	UPI(GPay/Phone Pay)	22	45
3	COD	10	20
4	Net Banking	3	5
	कुल	50	100

उपर्युक्त तालिका भुगतान का सर्वश्रेष्ठ विकल्प तालिका से स्पष्ट है, कि मोहलाई विकासखण्ड के 45 प्रतिशत लोग भुगतान के लिये UPI का इस्तेमाल करते है। जिससे स्पष्ट है, कि यह सुरक्षित प्रतीत होता है। इसके बाद उपभोक्ता डेबिट/क्रेडिटकार्ड का उपयोग करते है। जिसका प्रतिशत 30 है। Net Banking के प्रयोगकर्ता सबसे कम 05 प्रतिशत ही है।

तालिका क्रमांक-08

अनुक्रमांक	ऑनलाइन शॉपिंग के दौरान धोखाधड़ी/परेशानी का अनुभव	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ(अनुभव हुआ)	13	25
2	नहीं हुआ	30	60
3	कभी-कभी हुआ	07	15
	कुल	50	100

उपर्युक्त तालिका ऑनलाइन शॉपिंग के दौरान धोखाधड़ी/परेशानी का अनुभव के आधार पर स्पष्ट है, कि ऑनलाइन प्लेटफार्म मोहलाई विकासखण्ड के 60 प्रतिशत

उपभोक्ता के आधार पर सुरक्षित है। इसमें से 25 प्रतिशत लोगों को धोखाधड़ी का सामना भी करना पड़ा है। 15 प्रतिशत ही उपभोक्ता ऐसे है, जिन्हें कभी परेशानी हुई, कभी नहीं। इस प्रकार मिला जुला अनुभव प्राप्त हुआ।

तालिका क्रमांक-09

अनुक्रमांक	समस्या जिनका सामना करना पड़ता है	आवृत्ति	प्रतिशत
1	सस्ते गुणवत्ता वाले उत्पाद	15	30
2	खरीदने से पहले भौतिक सत्यापन का अवसर नहीं	12	25
3	गोपनीयता खोने का खतरा	10	20
4	उत्पाद भिन्नता जोखिम	08	15
5	कार्ड से लेन-देन का जोखिम	05	10
	कुल	50	100

समस्या जिनका सामना करना पड़ता है, उपर्युक्त तालिका के आधार पर स्पष्ट है, कि 30 प्रतिशत मोहलाई विकासखण्ड के लोगो का कहना है, कि उन्हें सही उत्पाद मिलने में कठिनाई हुई। 25 प्रतिशत के आधार पर भौतिक सत्यापन का अवसर नहीं मिलता है। इसप्रकार अलग अलग उपभोक्ता को भिन्न भिन्न समस्या का सामना करना पड़ता है।

तालिका क्रमांक-10

अनुक्रमांक	ऑनलाइन शॉपिंग न करने के कारण	आवृत्ति	प्रतिशत
01.	E-shopping के बारे में नहीं जानते	17	35
02.	मूल डाटा चोरी का खतरा(भुगतान धोखाधड़ी का खतरा)	15	30
03.	इंटरनेट निरक्षरता	10	20
04.	क्रेडिट कार्ड का जोखिम	08	15
	कुल	50	100

उपर्युक्त तालिका ऑनलाइन शॉपिंग न करने के कारण से स्पष्ट है, कि मोहलाई विकासखण्ड के 35 प्रतिशत लोगों ने कहा है, कि वे ऑनलाइन शॉपिंग के बारे में नहीं जानते है। 30 प्रतिशत ने बताया कि भुगतान धोखाधड़ी के चलते वे शॉपिंग नहीं करते। उपर्युक्त विवरण के आधार पर 50 लोगों में से 10 को इंटरनेट की निरक्षरता की समस्या का सामना करना पड़ता है। इसलिये वे ऑनलाइन शॉपिंग नही करते है।

तालिका क्रमांक-11

अनुक्रमांक	उत्पाद की गुणवत्ता से संतुष्टि	आवृत्ति	प्रतिशत
1	संतुष्ट है	20	40
2	असंतुष्ट हैं	12	25
3	अत्यधिक संतुष्ट है	10	20
4	न संतुष्ट, न असंतुष्ट	8	15
	कुल	50	100

उत्पाद की गुणवत्ता से संतुष्टि तालिका से स्पष्ट है, कि मोहलाई विकासखण्ड के 40 प्रतिशत उपभोक्ता ऑनलाइन खरीदे जाने वाले उत्पादों से संतुष्ट है। 50 व्यक्तियों

में से 12 व्यक्तियों ने असंतोष व्यक्त किया। और कुछ ऐसे उपभोक्ता भी है जो न तो संतुष्ट है और न ही असतुष्ट। वे अपनी आव'यकता कि पूर्ति के लिये सिर्फ ऑनलाइन शॉपिंग करते है।

चुनौतियां और समस्याएँ - उपर्युक्त अध्ययन से स्पष्ट हैं कि मोहलाई विकासखण्ड में युवाओं को ऑनलाइन शॉपिंग के दौरान बहुत सी चुनौतियों एवं समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। वह चुनौती व्यवसायी और उपभोक्ता दोनों के ही दृष्टिकोण से देखने को मिलती है। व्यवसायी आधार पर उत्पाद की गुणवत्ता, समय से डिलीवरी, ग्राहक सेवा, ऑफर, इत्यादि आधार पर योजना बनाकर कार्य करना होता है। दूसरी ओर ग्राहक के सामने कम खर्च पर सुरक्षित तरीके से गोपनीयता के साथ उत्पाद प्राप्त करने की है। दोनों को ही आपस में सामंजस्य स्थापित कर कार्य करने व चुनौतियों से निपटने और समस्या समाधान की आवश्यकता है। एक उपभोक्ता कम कीमत पर, कम समय मे, सुविधा के साथ उत्पाद प्राप्त करना चाहता है। और व्यवसायी को इसी आधार पर कार्य करना होना तभी वह उपभोक्ता का विश्वास जीत कर अपने उत्पाद की बिक्री को बढ़ा सकता है।

निष्कर्ष- डिजिटल बाजार में उपभोक्ता व्यवहार एक अध्ययन चुनौतियों एवं समस्याऐं संबंधी समंको के विश्लेषण से स्पष्ट है, कि दुर्ग जिले के विकासखण्ड में ऑनलाइन शॉपिंग युवाओं के द्वारा प्रचुर मात्रा में की जाती है।

मोहलाई जिले में 60 प्रतिशत जनता ऑनलाइन शॉपिंग के लिये स्मार्ट फोन का उपयोग करती है। हालांकि 40 प्रतिशत जनता टेबलेट, लैपटॉप और कम्प्यूटर के माध्यम से बड़े उत्पादों की खरीदी करते है। उल्लेखनीय बात यह है, कि मोहलाई विकासखण्ड के 80 प्रतिशत युवा ऑनलाइन शॉपिंग करते है। इनके आधार पर सबसे उपयोगी एप्लीकेशन अमेजॉन है। जिसका उपयोग 34 प्रतिशत उपभोक्ता करते है। लगभग 40 प्रतिशत उपभोक्ता 5000/- रूपये प्रतिवर्ष की राशि ऑनलाइन उत्पादों की खरीद पर खर्च करते है।

दुर्ग जिले के ऑनलाइन शॉपिंग के लिये पसंदीदा उत्पाद इलेक्ट्रॉनिक्स का सामान रहा है। जिसका प्रतिशत 35 है। 45 प्रतिशत उपभोक्ता भुगतान के लिये UPI(GPay/Phone Pay) का उपयोग कर रहे है। अत: डिजिटल आधार पर भुगतान लगभग विश्वसनीय है।

60 प्रतिशत उपभोक्ता को शॉपिंग के दौरान किसी भी तरह की परेशानी का सामना नहीं करना पड़ा है। सामान्यत: प्रतीत होता है, कि 40 प्रतिशत उपभोक्ता छूट व ऑफर से प्रेरित होकर ही ऑनलाइन शॉपिंग करते है।

ऑनलाइन उत्पाद की गुणवत्ता 30 प्रतिशत उपभोक्ता के आधार पर सही नहीं होती है। फिर भी 60 प्रतिशत उपभोक्ता ऑनलाइन शॉपिंग से संतुष्ट है। 35 प्रतिशत उपभोक्ता को ऑनलाइन शॉपिंग के बारे में जानकारी न होने के कारण ऑनलाइन आधार पर खरीदी नहीं कर रहे है।

सार यह है कि ऑनलाइन शॉपिंग सामान्यत: एक सरल प्रक्रिया होती है। युवा वयस्कों को बहुत से ऐसे उत्पाद खोजने में सक्षम बनाते है, जो निकटम दुकानों पर उन्हें नहीं मिल पाता है। इसी सुविधा के चलते ई-शॉपिंग व्यवहार को प्रोत्साहन मिलता है।

अपने अत्यधिक व्यस्त कार्यक्रम और अयवस्थित जीवनशैली के कारण युवाओं को ई-शॉपिंग अधिक सुविधापूर्ण लगता है। इसलिए सरकार को भी ई-शॉपिंग में सस्ती व उच्चगति से पहुंच की दिशा में कार्य करना चाहिए। ऑनलाइन शॉपिंग आज के युवाओं की पसंद बन गयी है। इन्ही सभी कारकों के कारण इंटरनेट का उपयोग भी दिन-प्रतिदिन बढ़ रहा है। ऑनलाइन शॉपिंग के द्वारा सीमित समय मे असीमित खरीदारी की जा सकती है। सभी सिक्के के दो पहलू होते है उसी आधार पर ऑनलाइन शॉपिंग मे भी कुछ हद तक अविश्वसनीयता, अपर्याप्त सुरक्षा, घटिया सेवा, अधिक समय लगना इत्यादि तत्वों के कारण कुछ युवा ऑनलाइन खरीदी पसंद नहीं करते है। इस ओर ध्यान देने कि आवश्यकता महसूस होती है।

संदर्भ सूची-

- Agarwal d.k(2020) The influences of social e-Shopping in Enhancing Young Women's online shopping behaviour.
- Noor Afzaliza Nazira Ibrahim, Fadhlin Husseini, Nurul Aisyah, Nur Camellia, Nur Khazlyn, Wan Faiz &Nazri Kahar (2023): Online Shopping Behaviour in Youth: A Systematic Review of The Factors Influencing Online Shopping in Young Adults. International Journal of Academic Research in Business & Social Sciences,13(2),168-178.
- R. Satish Kumar, Ramu Nilagiri m. Govindaraj (2021) A Study on Shopping Behavior of Young Adults Towards Purchase of Smart Phones. Palarch's Journal of Archaeology of Egypt/Egyptology ,18(18), 458-474.
- S. Santha (2016): Online Shopping Behaviour Among Youth. International Journal of Research in Social Sciences,6(3), 368-385.

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 42, Hindi Edition, Year-21, Jan.- June 2025

सृष्टि की उत्पत्ति का शैक्षिक ज्ञान

•गायत्री चौधरी
••दिनेश कुमार

सारांश- पुरूष और प्रकृति को स्वतन्त्र न मानकर यह सिद्धान्त निश्चित किया है कि पुरूष और प्रकृति दोनों एक ही परमेश्वर से उत्पन्न होते है। इस सिद्धान्त को मान लेने से, सांख्यों के 'मूल-प्रकृति' और 'प्रकृति-विकृति' भेदों के लिए स्थान ही नहीं रह जाता; क्योंकि प्रकृति भी परमेश्वर से उत्पन्न होने के कारण मूल नहीं कहीं जा सकती, अपितु वह प्रकृति-बिकृति के वर्ग में ही शामिल हो जाती है। अतएव सृष्टि युत्पत्ति का वर्णन करते समय वेदान्ती कहा करते हैं कि एक परमेश्वर से ही एक ओर जीवन निर्माण हुआ, दूसरी ओर (महदादि सात प्रकृति-विकृति सहित) अष्टधा अर्थात् आठ प्रकार की प्रकृति निर्मित हुई (मभा.शां. 306.21 और 310.10)। अर्थात् वेदान्तियों के मत से पच्चीस तत्वों में से सोलह तत्वों को छोड़ शेष नौ तत्वों के केवल दो ही वर्ग किये जाते हैं- एक 'जीव' और 'दूसरा' 'अष्टधा प्रकृति'। भगवद्गीता में वेदान्तियों का यह वर्गीकरण स्वीकृत किया गया है। परन्तु इसमें भी अन्त में थोड़ा-सा फर्क हो गया है। सांख्यवादी जिसे पुरूष कहते हैं, उसे ही गीता में जीव कहा है और यह बताया है कि वह (जीव) ईश्वर की 'परा प्रकृति', अर्थात् श्रेष्ठ स्वरूप है और सांख्यवादी जिसे मूलप्रकृति कहते है, उसे ही गीता में परमेश्वर का 'अपर', अर्थात् कनिष्ठ स्वरूप कहा गया है (गीता 7.4-5) इस प्रकार पहले दो बड़े वर्ग कर लेने पर उनमें से दूसरे वर्ग के, अर्थात् कनिष्ठ स्वरूप के जब और भी भेद या प्रकार बताने पड़ते हैं, तब इस कनिष्ठ स्वरूप के अतिरिक्त उससे उपजे हुए शेष तत्वों को भी बताना आवश्यक होता है।

मुख्य शब्द- सृष्टि, प्रकृति, जीवन, अष्टधा

प्रस्तावना- 'पुरूष' अकर्ता है, तथापि प्रकृति के साथ उसका संयोग होने पर सजीव सृष्टि का आरम्भ होता है, और "मैं प्रकृति से भिन्न हूँ" यह ज्ञान हो जाने पर पुरूष का प्रकृति से संयोग छूट जाता है तथा वह मुक्त हो जाता है। यदि ऐसा नहीं होता, तो जन्म–मरण के चक्कर में उसे घूमना पड़ता है। परन्तु इस बात का विवेचन तब नहीं किया गया कि जिस 'पुरूष' की 'प्रकृति' और 'पुरूष' की भिन्नता का ज्ञान हुए बिना ही मृत्यु हो

• छात्रा, शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, उत्तराखण्ड
••प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विभाग, इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक, मध्यप्रदेश

जाती है, उसके आत्मा, अर्थात् सांख्य परिभाषा के अनुसार 'पुरूष' को ये नये जन्म कैसे प्राप्त होते हैं। अतएव यहां उस विषय का कुछ अधिक विवेचन करना आवश्यक जान पड़ता है। यह स्पष्ट है कि जो मनुष्य बिना ज्ञान प्राप्त किये ही मर जाता है, उसकी आत्मा प्रकृति के चक्र से सदा के लिए छूट नहीं सकती; क्योंकि यदि ऐसा हो, तो ज्ञान अथवा पाप-पुण्य का कुछ भी महत्व नहीं रह जायेगा। और फिर चार्वाक के मतानुसार यह कहना पड़ेगा कि मृत्यु के बाद हर एक मनुष्य प्रकृति के फन्दे से छूट जाता है, अर्थात् वह मोक्ष पा जाता है।

जब कोई मनुष्य बिना ज्ञान प्राप्त किये ही मर जाता है, तब मृत्यु के समय उसको आत्मा के साथ ही प्रकृति के उक्त अठारह तत्वों से बना हुआ यह लिंग शरीर भी स्थूल देह से बाहर हो जाता है। और जब तक उस पुरूष को ज्ञान की प्राप्ति हो नहीं जाती, तब तक उस लिंग शरीर के ही कारण उसको नये-नये जन्म लेने पड़ते हैं। इस पर कुछ लोगों का यह प्रश्न है कि मनुष्य की मृत्यु के बाद जीव के साथ-साथ इस जड़ देह में बुद्धि, अहंकार, मन और देह इन्द्रियों के व्यापार भी इष्ट होते हुए, हमें प्रत्यक्ष दिखाई पड़ते हैं। इस कारण लिंग शरीर में इन तेरह तत्वों का समावेश किया जाना तो उचित है, परन्तु इन तेरह तत्वों के साथ पाँच सूक्ष्म तन्मात्राओं का भी समावेश लिंग शरीर में क्यों किया जाना चाहिए इस पर सांख्यों का उत्तर यह है कि ये तेरह तत्व-निरी बुद्धि, निरा, अहंकार, मन और दस इन्द्रियां-प्रकृति के केवल गुण हैं। और जिस तरह छाया को किसी-न किसी पदार्थ का तथा चित्र को दीवार आदि का आश्रय आवश्यक है, उसी तरह इन गुणात्मक तेरह तत्वों को भी एकत्र रहने के लिए किसी द्रव्य के आश्रय की आवश्यकता होती है। अब आत्मा (पुरूष) स्वयं निर्गुण और अकर्ता है, इसलिए वह स्वयं किसी भी गुण का आश्रय नहीं हो सकता। मनुष्य की जीवितावस्था में उसके शरीर के स्थूल पंचमहाभूत ही इन तेरह तत्वों के आश्रयस्थान हुआ करते हैं, परन्तु मृत्यु के बाद, अर्थात् स्थूल शरीर के नष्ट हो जाने पर पंचमहाभूतों का यह आधार छूट जाता है।

सृष्टि की उत्पत्ति- सृष्टि की उत्पत्ति या रचना हो जाने पर उसका लय या संहार होने तक बीच में कितना समय बीत जाता है। तथापि ऐसा प्रतीत होता है कि मनुसंहिता (1. 66-73), भगवद्गीता (8.17) तथा महाभारत (शां. 231) में वर्णित कालगणना सांख्यों को भी मान्य है। हमारा उत्तरायण देवताओं का दिन है और हमारा दक्षिणायन उनकी रात है। क्योंकि स्मृति ग्रन्थों और ज्योतिषशास्त्रक संहिता (सूर्यसिद्धान्त 1.33;12.35,67) में भी यही वर्णन है कि देवता मरूपर्वत पर, अर्थात् उत्तरध्रुव में रहते हैं, अर्थात् दो अयनों का हमारा एक वर्ष देवताओं के एक-दिन-रात के बराबर है, ओर हमारे 360 वर्ष देवताओं के 360 दिन-रातें अथवा एक वर्ष के बाराबर है। कृत, त्रेता, द्वापर, कल युग हमारे चार युग हैं। युगों की कालगणना इस प्रकार है - कृतयुग में चार हजार वर्ष, त्रेतायुग में तीन हजार, द्वापर में दो हजार और कलि में एक हजार वर्ष। परन्तु एक युग समाप्त होते ही दूसरा युग एकदम आरम्भ नहीं हो जाता। बीच में दो युगों के संधिकाल में कुछ वर्ष बीत जाते हैं। इस प्रकार कृतयुग के आदि और अन्त में, प्रत्येक ओर चार सौ वर्ष का, त्रेतायुगा के आगे और पीछे प्रत्येक ओर तीन सौ वर्ष का, द्वापर के पहले और बाद प्रत्येक और दो सौ वर्ष का, और कलियुग के पूर्व तथा अनन्तर प्रत्येक और सौ वर्ष का संधिकाल होता है। सब मिलाकर कुछ बारह हजार वर्ष होते हैं।

ये बारह हजार वर्ष देवताओं के हैं देवताओं के बारह हजार वर्ष, मनुष्यों के 360x12000=4320,000 (तैतालीस लाख बीस हजार) वर्ष होते हैं। वर्तमान पंचांगों का युगपरिणाम इसी पद्धति से निश्चित किया जाता है। देवताओं के बारह हजार वर्ष मिलकर मनुष्यों का एक महायुग या देवताओं का युग होता है। देवताओं के इकहत्तर युगों को मनवन्तर कहते हैं,और ऐसे मनवन्तर चौदह हैं। परन्तु पहले मनवन्तर के आरम्भ तथा अन्त में और आगे चलकर प्रत्येक मनवन्तर के आखिर में दोनों ओर कृतयुग की बराबरी का एक-एक ऐसे 15 संधिकाल जाते हैं। ये पन्द्रह संधिकाल और चौदह मनवन्तर मिलकर देवताओं के एक हजार युग अथवा ब्रह्मदेव का एक दिन होता है है (सूर्यसिद्धान्त 1.15-20), और गनुस्मृति तथा महाभारत में लिखा है कि ऐसे ही हजार युग मिलकर ब्रह्मदेव की रात होती है।

सृष्टि के पदार्थ- सृष्टि के पदार्थों का जो ज्ञान हमें अपनी ज्ञानेंद्रियों से होता है, वही हमारी सृष्टि है। एतएव प्रकृति या सृष्टि को ही कई स्थानों पर 'ज्ञात' कहा है और इसी दृष्टि से पुरूष 'ज्ञाता' कहा जाता है। (मभा.शां. 306.35,41)। परन्तु जों सच्चा ज्ञेय है (गीता 13. 12) वह प्रकृति और पुरूष-ज्ञान और अज्ञान से भी परे है। इसलिए भगवद्गीता में उसे परमपुरूष कहा है। तीनों लोकों को व्याप्त कर उन्हें सदैव धारण करने वाला जो यह परमपुरूष या परपुरूष है, उसे पहचानो, वह एक है, अव्यक्त है, नित्य है, अक्षर है। यह बात केवल भगवद्गीता ही नहीं, अपितु, वेदान्तशास्त्र के सारे ग्रन्थ एक स्वर से कह रहे हैं।

प्रकृति, पुरूष और परमेश्वर इसी त्रयी को अध्यात्मशास्त्र में क्रम से जगत्, जीव और परब्रह्म कहते हैं और इन तीनों वस्तुओं के स्वरूप तथा इनके पारम्परिक सम्बन्ध का निर्णय करना ही वेदान्तशास्त्र का प्रधान कार्य है एवं उपनिषदों में भी सर्वत्र यही चर्चा की गयी है। परन्तु सब वेदान्तियों का मत इस त्रयी के विषय में एक नहीं है। कोई कहते हैं कि ये तीनों पदार्थ मूल में एक ही है और कोई वह मानते हैं कि जीव और जगद् परमेश्वर से मूल में ही थोड़े या अत्यन्त भिन्न हैं इसलिए वेदान्तियों में अद्वैती विशिष्टाद्वैती और द्वैती, इस प्रकार भेद उत्पन्न हो गये हैं। यह सिद्धान्त सब लोगों को एक-सा गाह्य है कि जीव और जगत् के सारे व्यवहार परमश्वर की इच्छा से होते हैं। परन्तु कुछ लोग मानते हैं कि जीव, जगत् और परब्रह्म, इन तीनों का मूलस्वरूप आकाश के समान एकरूप और अखण्डित है तथा दूसरे वेदान्ती कहते हैं कि जड़ और चैतन्य का एक होना सम्भव नहीं।

सृष्टि का विश्वरूपदर्शन- भगवान् श्रीकृष्ण स्वयं साक्षत् अर्जुन के सामने खड़े होकर उपदेश कर रहे थे। इसलिए गीता में जगह-जगह पर अपने व्यक्त स्वरूप को लक्ष करके उन्होंने अपने विषय में प्रथम पुरूष का निर्देश इस प्रकार किया है-जैसे, "प्रकृति मेरा स्वरूप है" (गीता 1.8), "जीव मेरा अंश है" (गीता 17.7), "सब भूतों का अन्तर्यामी आत्मा मैं हूँ" (गीता 10.20), "संसार में जितनी श्रीमनन् या भिवूमिमान् मूर्तियाँ हैं, वे सब मेरे अंश से उत्पन्न हुई हैं" (गीता 10.41) "मुझमें मन लगाकर मेरा भक्त हो" (गीता 1. 34), "तो तू मुझी में मिल जायेगा", "तू मेरा प्रिय भक्त है, इसलिए मैं तुझे यह प्रतिज्ञानपूर्वक बताता हूँ" (गीता 18.65)। और जब अपने विश्वरूपदर्शन से अर्जुन को यह प्रत्यक्ष अनुभव करा दिया कि सारी चराचर सृष्टि मेरे व्यक्त रूप में ही साक्षात् भरी हुई

है, तब भगवान् ने उसको यह उपदेश किया है कि अव्यक्त रूप से व्यक्त रूप की उपासना करना अधिक सहज है। "इसलिए तू मुझमें ही अपना भक्तिभाव रख" (गीता 12.8), "मैं ही ब्रह्म का, अव्यक्त मोक्ष का, शाश्वत धर्म का और अनन्त सुख का मूल स्थान हूँ" (गीता 14.27)। इससे विदित होगा कि गीता में आदि से अन्त तक अधिकांश में भगवन् के व्यक्त स्वरूप का ही वर्णन किया गया है।

"भगवान ने अर्जुन को जो विश्वरूप दिखाया है वही नारद को भी दिखाया था। इसका वर्णन महाभारत के शान्तिपर्वान्तर्गत नारायणीय प्रकरण में (मभा. शां. 339) है और हम पहले ही प्रकरण में बता चुके हैं कि नारायणीय, अर्थात् भागवत-धर्म ही गीता में प्रतिपादित किया गया है। नारद को हजारों नेत्रों, रंगों तथा अन्य गुणों का विश्वरूप दिखाकर भगवान् ने कहा:-

माया ह्येषा मया सृष्टा यन्मां पश्यसि नारद।
सर्वभूतगुणैर्युक्तं नैव त्वं ज्ञातुमर्हसि।।

"तुम मेरा जो रूप देख रहे हो, वह मेरी की हुई माया है। इससे तुम यह न समझो कि मैं सर्वभूतों के गुणों से युक्त हूँ।" और यह फिर भी कहा है कि "मेरा सच्चा स्वरूप सर्वव्यापी, अव्यक्त और नित्य है और उसे सिद्धान्त पुरूष ही पहचानते हैं।"

सत्य की व्याख्या- सर्वोपनिषद् में सत्य की यही व्याख्या की है कि सत्य वहीं है, जो अविनाशी है। अर्थात् जिसका अन्य बातों के नाश हो जाने पर भी कभी नाश नहीं होता और इसी प्रकार महाभारत में भी सत्य का यही लक्षण बताया गया है, अर्थात "सत्य वही है, जो अव्यय है, अर्थात् जिसका कभी नाश नहीं होता, जो नित्य है, अर्थात् सदासर्वदा बना रहता है, और अविकारी है, अर्थात् जिसका स्वरूप कभी बदलता नहीं" (मभा.शां. 162.10)। अभी कुछ और थोड़ी देर में कुछ कहने वाले मनुष्य को झूठा कहने का कारण यही है कि वह अपनी बात पर स्थिर नहीं रहता, इधर-उधर डगमगाता रहता है। सत्य के इस निरपेक्ष लक्षण को स्वीकार कर लेने पर कहना पड़ता है कि आँखों से दिखाई पड़ने वाला, पर हर घड़ी में बदलने वाला नामरूप मिथ्या है। और उस नामरूप से ढँका हुआ और उसी के मूल में सदैव एक-सा स्थिर रहने वाला अमृत वस्तु तत्व ही-वह आँखों से भले ही दिखाई न पड़ें ठीक-ठीक सत्य है। भगवद्गीता में ब्रह्म का वर्णन इसी नीति ने किया गया है, "यः या सर्वेषु भूतेषु नश्यत्सु न विनश्यति" (गीता 8.20;13.27)-अक्षर ब्रह्म वहीं है जो सब अर्थात् सभी पदार्थों के नामरूपात्मक शरीर न रहने पर भी नष्ट नहीं होता है। महाभारत में नाराणीय अथवा भागवत-धर्म के निरूपण में यही श्लोक पाठभेद से फिर "यः स सर्वेषु भूतेषु" के स्थान में 'भूतग्रामशरीरेषु' होकर आया है (मभा.शां. 339.23)। ऐसे ही गीता के दूसरे अध्याय के सोलहवें और सत्रहवे श्लोकों का तात्पर्य भी वही है। वेदान्त में सब आभूषण को 'मिथ्या' और सुवर्ण को 'सत्य' कहते हैं।

'सत्य' शब्द के इसी प्रचलित अर्थ को लेकर उपनिषदों में कुछ स्थानों पर आँखों के दिखाई पड़ने वाले नामरूपात्मक ब्रह्म पदार्थों को 'सत्य' और उन नामरूपों से आच्छादित द्रव्य को 'अमृत' नाम दिया गया है। उदाहरण लीजिए, बृहदारण्यक उपनिषद् में (बृ.1.6.3) "तदेतदमृतं सत्येन च्छनं" - वह अमृत सत्य से आच्छादित है, कहकर

तुरन्तु अमृत सत्य शब्दों की यह व्याख्या की है कि "प्राणों वा अमृतं नामरूपे सत्य ताभ्यामयं प्राणच्छत्र:" अर्थात् प्राण अमृत है, और नाम रूप सत्य है एवं इस नामरूप से सत्य से प्राण ढँका हुआ है। यहां प्राण का अर्थ प्राणस्वरूपी परब्रह्म है। इससे प्रकट है कि आगे के उपनिषदों में जिन्हें 'मिथ्या' और 'सत्य' कहा है, पहले उन्हीं के नाम क्रम से 'सत्य' और 'अमृत' थे।

मिथ्या शब्द की व्याख्या- 'मिथ्या' शब्द का प्रयोग पदार्थ के रंग, रूप आदि गुणों के लिए और आकृति के लिए अर्थात् ऊपरी दृश्य के लिए किया गया है। भीतरी द्रव्य से उसका प्रयोजन नहीं हैं स्मरण रहे कि तात्विक द्रव्य तो सदैव 'सत्य' है। वेदान्ती यह देखता है कि पदार्थ मात्र के नामरूपात्मक आच्छादन के नीचे मूल कौन-सा तत्व है और तत्वज्ञान का सच्चा विषय है भी यहीं व्यवहार में यह प्रत्यक्ष देखा जाता है कि गहना गढ़वाने में चाहे जितना मेहनताना देना पड़ा हो, पर आपत्ति के समय जब उसे बेचने के लिए सराफ की दुकान पर ले जाते हैं, तब वह साफ-साफ कह देता है कि "मैं यह जानना चाहता हूँ कि सोने गढ़वाने में तोले के पीछे क्या उजरत देनी पड़ी है, यदि सोने के चलत् भाव में इसे बेचना चाहो, तो हम ले लेंगे !" वेदान्त की परिभाषा में इसी वियार को इस ढँग से व्यक्ति करेंगे, सराफ को गहना मिथ्या और उसका सोना-भर सत्य दिखाई पड़ता है। इसी प्रकार यदि किसी नये मकान को बेचना हो, तो उसकी सुन्दर बनावट (रूप) और सुविधाजनक रचना (आकृति) करने में जो खर्च लगा होगा, उसकी ओर खरीददार पर जरा भी ध्यान नहीं देता वह कहता है कि ईंट, चूना, लकड़ी, पत्थर और मजदूरी की लागत में यदि बेचना चाहो, तो बेच डालो। इन दृष्टान्तों से वेदान्तियों के इस कथन को पाठक भलि-भाँति समझ जायें कि नामरूपात्मक जगत् मिथ्या है और ब्रह्म सत्य है। 'दृश्य जगत् मिथ्या है।'

किसी भी रीति से विचार क्यों न किया जाये, सिद्ध यही होगा कि बाह्य सृष्टि के नाम और रूपों से आच्छादित ब्रह्मतत्व, नामरूपात्मक प्रकृति के समान जड़ तो है ही नहीं, अपितु वासनात्मक ब्रह्म, मनोमय ब्रह्म, ज्ञानमय ब्रह्म, प्राणब्रह्म अथवा काररूपी शब्दब्रह्म- यें ब्रह्म के रूप भी निम्न श्रेणी के हैं, और ब्रह्म का वास्तविक स्वरूप उनसे परे है एवं इनसे अधिक योग्यता का अर्थात् शुद्ध आत्मस्वरूपी है।

गीता में (गीता 7.28;2.45) कहा है कि सत् और असत्, शीत और उष्ण आदि द्वन्द्वों से जिसकी बुद्धि मुक्त हो जाये, वह इन सब द्वन्द्वों से परे निर्द्वन्द्व, अर्थात् ब्रह्मपद को पहुँच जाता है। इससे दिखाई पड़ेगा कि अध्यात्मशास्त्र के विचार कितने गहन और सूक्ष्म हैं। केवल तर्कदृष्टि से विचार करें, तो परब्रह्म का अथवा आत्मा का भी अज्ञेयत्व स्वीकार किये बिना गति नहीं रहती। परन्तु ब्रह्म इस प्रकार अज्ञेय और निर्गुण अतएव इन्द्रियातीत हो, तो भी यह प्रीतीति हो सकती है कि परब्रह्म का भी वही स्वरूप है, जो कि हमारे निर्गुण तथा अनिर्वाच्य आत्मा का है, जिसे हम साक्षात्कार से पहचानते हैं। इसका कारण यह है कि प्रत्येक मनुष्य को अपने आत्मा की साक्षात् प्रतीति होती ही है। एतएव अब यह सिद्धान्त निरर्थक नहीं हो सकता कि ब्रह्म और आत्मा एकस्वरूपी हैं। इस दृष्टि से देखें, तो ब्रह्मस्वरूप के विषय में इसकी अपेक्षा कुछ अधिक नहीं कहा जा सकता कि ब्रह्म आत्मस्वरूपी है। शेष बातों के सम्बन्ध में अपने अनुभव को ही पूरा प्रणाम मानना पड़ता है। किन्तु बुद्धिगम्य शास्त्रीय प्रतिपादन में शब्दों से जितना हो सकता है, उतना स्पष्टीकरण

कर देना आवश्यक है। इसलिए यद्यपि बह्म सर्व? एक–सा व्यास, अज्ञेय और अनिर्वाच्य है, तो भी जड़सृष्टि का और आत्मस्वरूपी ब्रह्मस्वरूपी बह्मतत्व का भेद व्यक्त करने के लिए, आत्मा के सान्निध्य से जड़ प्रकृति में चैतन्यरूपी जो गुण हमें दृष्टिगोचर होता है, उसी को आत्मा का प्रधान लक्षण मानकर अध्यात्मशास्त्र में आत्मा और ब्रह्म दोनों को चैतन्यरूपी कहते हैं।

ब्रह्मत्मैक्य का ज्ञान हो जाने पर सब ब्रह्ममय हो जाता है किन्तु श्री तुकाराम महाराज ने (कि "जिनकी कहै नित्य वेदान्त वाणी") उस खारे पानी के दृष्टान्त के बदले गुड़ का यह मीठा दृष्टान्त देकर अपने अनुभव का वर्णन किया है–

'गूगे का गुड' है भगवान्, बाहरभीतर एक समान।
किसका ध्यान करूँ सविवेक? जल–तरंगसे हैं हम एक।।

इसलिए कहा जाता है कि परब्रह्म इन्द्रियों को अगोचर और मन को भी अगम्य होने पर भी स्वानुभवगम्य है, अर्थात् अपने अनुभव से जाना जाता है।

संदर्भ सूची-

- तिलक, बाल गंगाधर, (2007) श्रीमद्भवदगीता, जयपुर अपोलो प्रकाशन
- त्रिशुलवाले, हरकेश कुमार (2010) ज्योतिषों वास्तु, नई दिल्ली: अन्सारी रोड, दरियागंज
- चतुर्वेदी, मुरलीधर (2007) सारावली, नई दिल्ली जैनेन्द्र प्रेस
- कौन्डिन्त्रयायन, शिवराज आचार्य (2008) मनुस्मृति, नई दिल्ली: चौखम्बा पब्लिशिंग हाउस
- देवी, प्रज्ञा व देवी, मेघा (2008) गोपथ ब्राहमण भाण्यम्, देहली: चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान। झा, अच्युतानन्द (2011) वृहत्संहिता, वाराणसी: चोखम्बा विद्याभवन
- शर्मा, सुरेन्द्र शर्मा (2009) लीलावती, नई दिल्ली: चौखम्बा पब्लिशिंग हाउस
- ओक्षा, गोपेश कुमार (2004) फल दीपिका, नई दिल्ली जैनेन्द्र प्रेस
- त्रिपाठी, रमाशंकर (2005) मृच्छकटिकम, नई दिल्ली: जैनेन्द्र प्रेस
- कल्पाण, हिर (2000) परलोक और पुनर्जन्मांक, गोरखपुर: गीता प्रेस
- कल्याण हरि (2001) संक्षिप्त महाभारत, गोरखपुर : गीता प्रेस
- मिश्र, जगदीश चन्द्र (2012) शुक्रनीति, वारावसी, चोखम्बा सुरभारती प्रकाशन

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 42, Hindi Edition, Year-21, Jan.- June 2025

प्राथमिक विद्यालयों में अध्यापनरत शिक्षकों की सवेंगात्मक बुद्धि का अध्ययन

• अनिता सिंह
•• यज्ञानंद गढ़ेवाल

सारांश- प्राथमिक विद्यालयों में अध्यापनरत शिक्षकों की सवेंगात्मक बुद्धि शिक्षण की गुणवत्ता, कक्षा प्रबंधन और विद्यार्थियों के साथ भावनात्मक जुड़ाव में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह अध्ययन शिक्षकों की सवेंगात्मक बुद्धि के विभिन्न पहलुओं को विश्लेषित करता है, जैसे कि उनकी अपनी और दूसरों की भावनाओं को समझने और प्रबंधित करने की क्षमता, संघर्ष समाधान कौशल और पेशेवर विकास में इसका योगदान। पूर्व शोध में यह पाया गया है कि सवेंगात्मक बुद्धि न केवल विद्यार्थियों के शैक्षिक प्रदर्शन को बेहतर बनाती है, बल्कि शिक्षकों को तनावपूर्ण परिस्थितियों का प्रभावी प्रबंधन करने में भी सक्षम बनाती है। प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य यह है की कैसे सवेंगात्मक बुद्धि शिक्षकों के व्यक्तिगत और पेशेवर विकास में सहायक होती है तथा कक्षा के माहौल को अधिक प्रभावी और प्रेरणादायक बनाने के लिए शिक्षकों की सवेंगात्मक बुद्धि के महत्व को उजागर करती है।

मुख्य शब्द- सवेंगात्मक बुद्धि, कक्षा प्रबंधन, व्यक्तिगत विकास

परिचय- शिक्षा प्रणाली में शिक्षक केंद्रीय भूमिका निभाते हैं। विशेष रूप से प्राथमिक विद्यालयों में, जहां विद्यार्थियों का मानसिक, भावनात्मक, और शारीरिक विकास तेजी से होता है, शिक्षक की भूमिका का महत्व और बढ़ जाता है। प्राथमिक शिक्षा केवल पाठ्यक्रम पढ़ाने तक सीमित नहीं है, बल्कि विद्यार्थियों के समग्र विकास में योगदान देना भी शिक्षकों की जिम्मेदारी है। इस संदर्भ में, सवेंगात्मक बुद्धि (Emotional Intelligence), जो किसी व्यक्ति की अपनी और दूसरों की भावनाओं को पहचानने, समझने, और प्रभावी रूप से प्रबंधित करने की क्षमता को दर्शाती है, शिक्षकों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है।

सवेंगात्मक बुद्धि शिक्षकों को विद्यार्थियों के व्यवहार और उनकी व्यक्तिगत जरूरतों को समझने में मदद करती है। एक सवेंगात्मक रूप से बुद्धिमान शिक्षक विद्यार्थियों की गलतियों को सुधारने के लिए रचनात्मक दृष्टिकोण अपनाता है, जिससे

• सहायक प्राध्यापक (शिक्षा विभाग), पं. सुन्दरलाल शर्मा (मुक्त) वि. वि., बिलासपुर (छ.ग.)
••शोधार्थी (शिक्षा विभाग), पं. सुन्दरलाल शर्मा (मुक्त) वि. वि., बिलासपुर (छ.ग.)

विद्यार्थियों में आत्म–सुधार और आत्म–अनुशासन की भावना विकसित होती है। यह कक्षा में अनुशासन बनाए रखने और सकारात्मक वातावरण के निर्माण में सहायक होती है। भावनात्मक जुड़ाव शिक्षण प्रक्रिया को अधिक प्रभावशाली बनाता है। जब शिक्षक विद्यार्थियों की भावनात्मक स्थितियों को समझते हैं, तो वे उन्हें व्यक्तिगत रूप से प्रोत्साहित कर सकते हैं। यह न केवल विद्यार्थियों के आत्मविश्वास को बढ़ाता है, बल्कि उनके सीखने के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण को भी प्रोत्साहित करता है। अध्ययनों से यह स्पष्ट है कि शिक्षकों की सवेंगात्मक बुद्धि विद्यार्थियों की सीखने की क्षमता और शैक्षिक प्रदर्शन को सकारात्मक रूप से प्रभावित करती है।

संवेगात्मक बुद्धि- संवेगात्मक बुद्धि एक आन्तरिक योग्यता होती है जिसके द्वारा व्यक्ति में संवेगों को महसूस करने, समझने एवं उनका प्रभावपूर्ण नियन्त्रण करने की क्षमता का विकास होता है। जिसके द्वारा व्यक्ति अपने संवेगों को पहचानता है, संवेगों का उचित प्रकटीकरण करता है तथा दूसरों के संवेगो को समझकर उसके सामने वैसा ही व्यवहार करता है। संवेगात्मक बुद्धि से तात्पर्य व्यक्ति की अपनी भावनाओं तथा दूसरों की भावनाओं की पहचान कर सकने की क्षमता से है, जिसकी सहायता से वह अपने को अभिप्रेरित कर सके और अपने अन्दर पाए जाने वाले संवेगों एवं उनके आधार पर बने सम्बन्धों को ठीक से व्यवस्थित कर सके। अत: संवेगात्मक बुद्धि वह क्षमता होती है जिसके द्वारा व्यक्ति अपने संवेगों तथा व्यवहार को नियन्त्रित करके एक कुशल व्यक्ति के रूप में प्रस्तुत होता है।

चूंकि एक अध्यापक छात्र के व्यवहार को आकार देता है। अत: देश को भावात्मक रूप से मजबूत व संतुलित अध्यापकों की आवश्यकता है। संवेगात्मक बुद्धि को बढ़ाकर छात्राध्यापक की स्वतंत्रतापूर्वक सोचने की क्षमता को बढ़ाकर उन्हें जिम्मेदार अध्यापक व सम्पूर्ण नागरिक के रूप में विकसित किया जा सकता है। सांवेगिक बुद्धि संवेगों की अनुभूति करने, प्रयोग करने, पहचानने प्रत्यास्मरण करने, सीखने एवं समझने की आंतरिक शक्ति है। बालकों की संवेगात्मक बुद्धि पर पर्यावरण, सामाजिक एवं पारिवारिक परिस्थितियो का प्रभाव दृष्टिगत होता है। मनुष्य अपने वातावरण के प्रति संवेदनशील रहा है। किन्तु साथ ही अपनी आंतरिक मनोदशाओं के प्रति भी चिंतनशील रहा है। इसी कारण से सांवेगिक बुद्धि का आर्विभाव हुआ है। अत्यधिक तनाव, थकान, क्रोध, आवेश, आर्थिक संकट, विपरीत परिस्थितियाँ मनुष्य के मानसिक संतुलन को अस्थिर रखती हैं, जिससे संवेगात्मक बुद्धि का विकास अवरूद्ध हो जाता है आधुनिक मनोरंजन के साधनों ने भी किशोर किशोरियों का संवेगात्मक दोहन करके उन्हें पथभ्रष्ट कर दिया है। ऐसे में अध्यापक को अपना शिक्षण कार्य व उससे जुड़ी समस्याओं का निराकरण व अन्य विद्यालयी समस्याओं का समाधान केवल बुद्धि के प्रयोग से नहीं वरन् बुद्धि व संवेग दोनों के संतुलन से करना होगा।

शिक्षकों की संवेगात्मक बुद्धि के प्रमुख कारक- शिक्षकों की संवेगात्मक बुद्धि उनके शिक्षण कौशल, कक्षा प्रबंधन और विद्यार्थियों के साथ उनके संबंधों को प्रभावित करती है। यह निम्नलिखित कारकों पर निर्भर करती है:

विकास– व्यक्तिगत और पेशेवर विकास के प्रति निरंतर प्रयास शिक्षकों की आत्म–जागरूकता और अनुकूलनशीलता को बढ़ाते हैं।

कक्षा प्रबंधन– प्रभावी कक्षा प्रबंधन शिक्षकों को अनुशासित और सकारात्मक शिक्षण वातावरण बनाने में सक्षम बनाता है।

संघर्ष प्रबंधन– शिक्षकों को विभिन्न परिस्थितियों में उत्पन्न होने वाले संघर्षों को सफलतापूर्वक संभालने और हल करने की क्षमता विकसित करनी चाहिए।

भावनात्मक जुड़ाव– विद्यार्थियों के साथ मजबूत भावनात्मक संबंध स्थापित करना उनके सीखने की प्रक्रिया और शिक्षक–छात्र संबंधों को मजबूत करता है।

समस्या समाधान– शिक्षकों को शिक्षण और प्रशासनिक कार्यों से जुड़ी चुनौतियों के लिए प्रभावी और रचनात्मक समाधान खोजने की क्षमता विकसित करनी चाहिए।

इन कारकों के बेहतर विकास से शिक्षक अपनी संवेगात्मक बुद्धि को बढ़ाकर शिक्षण को अधिक प्रभावी, संतुलित और समृद्ध बना सकते हैं। जिसमें निम्न की भूमिका बहुत ही महत्वपूर्ण होती है।

सवेंगात्मक बुद्धि और कक्षा प्रबंधन

- भावनात्मक लगाव
- सवेंगात्मक बुद्धि का शैक्षिक प्रदर्शन पर प्रभाव
- सवेंगात्मक बुद्धि द्वारा संघर्ष प्रबंधन और समस्या समाधान
- सवेंगात्मक बुद्धि का शिक्षकों के पेशेवर और व्यक्तिगत विकास में योगदान
- सवेंगात्मक बुद्धि और कक्षा प्रबंधन

सवेंगात्मक बुद्धि शिक्षकों के लिए एक महत्वपूर्ण कौशल है, विशेष रूप से प्राथमिक विद्यालयों में, जहाँ प्रभावी कक्षा प्रबंधन आवश्यक है। उच्च सवेंगात्मक बुद्धि वाले शिक्षक अपनी और विद्यार्थियों की भावनाओं को पहचानने, प्रबंधित करने और प्रभावी प्रतिक्रिया देने में अधिक सक्षम होते हैं। यह क्षमता एक सकारात्मक कक्षा वातावरण बनाने में सहायक होती है, जिससे छात्र व्यवहार और सीखने के परिणाम बेहतर होते हैं (बार–ऑन, 2020)। कक्षा प्रबंधन केवल नियम लागू करने तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें ऐसा माहौल बनाना शामिल है जहाँ छात्र भावनात्मक रूप से सुरक्षित, सम्मानित और प्रेरित महसूस करें। मजबूत सवेंगात्मक बुद्धि वाले शिक्षक संघर्षों को कम कर सकते हैं, सहानुभूति विकसित कर सकते हैं और आपसी सम्मान को बढ़ावा दे सकते हैं (मेयर और सालोवी, 2021)। सुलेमान एट अल. (2022) के अनुसार, उच्च सवेंगात्मक बुद्धि वाले शिक्षकों के पास बेहतर कक्षा प्रबंधन कौशल होते हैं, जिससे विद्यार्थियों की सफलता बढ़ती है। वे तनाव को बेहतर तरीके से संभालते हैं और व्यवधानों को नियंत्रित करने में सक्षम होते हैं। लेमोस एट अल. (2023) ने सवेंगात्मक बुद्धि की भूमिका को शिक्षक तनाव को कम करने और आत्म–नियमन को बढ़ाने में महत्वपूर्ण बताया है। ल, एट अल. (2022) ने पाया कि सवेंगात्मक बुद्धि–केंद्रित व्यावसायिक विकास से कक्षा प्रबंधन, छात्र जुड़ाव और शिक्षक–छात्र संबंधों में सुधार हुआ।

भावनात्मक लगाव- विद्यार्थियों के साथ भावनात्मक लगाव प्रभावी शिक्षण का एक महत्वपूर्ण पहलू है, खासकर प्राथमिक विद्यालय की सेटिंग में। उच्च सवेंगात्मक बुद्धि वाले शिक्षक विद्यार्थियों की भावनात्मक जरूरतों को बेहतर ढंग से समझने और उनका जवाब देने में सक्षम होते हैं, जिससे ऐसा माहौल बनता है जहाँ छात्र सुरक्षित, समर्थित और सीखने में संलग्न होने के लिए प्रेरित महसूस करते हैं। भावनात्मक लगाव विश्वास बनाने, संचार को बढ़ाने और छात्र भागीदारी को प्रोत्साहित करने में मदद करता है (जिन्स, वीसबर्ग, वांग, और वालबर्ग, 2020)। जो शिक्षक अपने विद्यार्थियों के साथ भावनात्मक रूप से जुड़े होते हैं, वे संकट के संकेतों की पहचान कर सकते हैं, उचित सहायता प्रदान कर सकते हैं और अपनेपन की भावना को बढ़ावा दे सकते हैं, जो शैक्षणिक और सामाजिक विकास के लिए महत्वपूर्ण है (जेनिंग्स और ग्रीनबर्ग, 2021)। शोध से पता चलता है कि भावनात्मक रूप से जुड़े शिक्षक सकारात्मक छात्र-शिक्षक संबंध विकसित करने की अधिक संभावना रखते हैं, जो सीधे विद्यार्थियों की शैक्षणिक सफलता और भावनात्मक कल्याण को प्रभावित करते हैं। क्लेम और कॉनेल (2022) के एक अध्ययन के अनुसार, जो छात्र अपने शिक्षकों से भावनात्मक रूप से जुड़े हुए महसूस करते हैं, वे अधिक शैक्षणिक उपलब्धि, बेहतर व्यवहार और सीखने के लिए अधिक प्रेरणा प्रदर्शित करते हैं। भावनात्मक लगाव विद्यार्थियों में लचीलापन भी बढ़ाता है, जिससे उन्हें कक्षा के अंदर और बाहर दोनों जगह चुनौतियों का सामना करने में मदद मिलती है (पियांटा, 2021)। इस प्रकार, एक समग्र शिक्षण वातावरण को बढ़ावा देने के लिए भावनात्मक लगाव को बढ़ावा देना आवश्यक है जो शैक्षणिक विकास और व्यक्तिगत विकास दोनों का समर्थन करता है।

सवेंगात्मक बुद्धि का शैक्षिक प्रदर्शन पर प्रभाव- सवेंगात्मक बुद्धि अकादमिक प्रदर्शन को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, विशेष रूप से प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा में। उच्च सवेंगात्मक बुद्धि वाले छात्र अपनी भावनाओं को प्रभावी ढंग से प्रबंधित कर सकते हैं, जिससे वे ध्यान केंद्रित करने, आत्म-नियमन करने और अकादमिक चुनौतियों का सामना करने में अधिक सक्षम होते हैं। यह क्षमता सहकर्मी और शिक्षकों के साथ सकारात्मक रिश्ते बनाने में मदद करती है, जो सामूहिक शिक्षण और कक्षा में संलग्नता के लिए आवश्यक है (मेयर, सलोवी, और कैरूसो, 2021)।

अनुसंधानों से पता चला है कि सवेंगात्मक बुद्धि तनाव और चिंता को कम करने में मदद करती है, जो अकादमिक सफलता की सामान्य बाधाएँ हैं (शूटे एट अल., 2022)। भावनात्मक रूप से बुद्धिमान छात्र अकादमिक दबाव को बेहतर तरीके से प्रबंधित कर पाते हैं, जिससे उनकी एकाग्रता और परीक्षा में प्रदर्शन करने की क्षमता बढ़ती है (पार्कर एट अल., 2020)। इसके अतिरिक्त, सवेंगात्मक बुद्धि विद्यार्थियों की सीखने की प्रेरणा को भी बढ़ाती है, जिससे वे चुनौतियों का सामना करते हुए धैर्य बनाए रखते हैं (जाइडनर एट अल., 2022)।

मैककैन एट अल. (2021) के अध्ययन में पाया गया कि उच्च सवेंगात्मक बुद्धि वाले विद्यार्थियों ने संज्ञानात्मक और भावनात्मक लगाव की आवश्यकता वाले विषयों में बेहतर प्रदर्शन किया। इसलिए, शैक्षिक सेटिंग्स में सवेंगात्मक बुद्धि को बढ़ावा

देने से सकारात्मक शैक्षिक परिणाम प्राप्त हो सकते हैं और विद्यार्थियों को अकादमिक सफलता में मदद मिल सकती है।

सवेंगात्मक बुद्धि द्वारा संघर्ष प्रबंधन और समस्या समाधान- संघर्ष प्रबंधन और समस्या समाधान शिक्षकों के लिए आवश्यक कौशल हैं, विशेष रूप से कक्षा के वातावरण में, जहाँ विवाद और चुनौतियाँ सामान्य होती हैं। उच्च सवेंगात्मक बुद्धि वाले शिक्षक संघर्षों को प्रभावी ढंग से संभालने और समस्याओं को हल करने में अधिक सक्षम होते हैं, जिससे एक सकारात्मक शिक्षण वातावरण बनता है। यह क्षमता उन्हें अपनी भावनाओं को नियंत्रित करने और विवादों के दौरान शांत व रचनात्मक समाधान अपनाने में मदद करती है (मेयर और सलोवी, 2021)। शोध से पता चला है कि मजबूत सवेंगात्मक बुद्धि वाले शिक्षक संघर्षों के मूल कारणों की पहचान कर सकते हैं और उपयुक्त रणनीतियाँ लागू कर सकते हैं, जिससे सहयोगी कक्षा संस्कृति विकसित होती है। सुलेमान एट अल. (2022) के अनुसार, भावनात्मक बुद्धिमत्ता वाले शिक्षक संवाद और मोलभाव में कुशल होते हैं, जिससे प्रभावी समस्या समाधान संभव होता है। उनकी सहानुभूति और विभिन्न दृष्टिकोणों को समझने की क्षमता सभी के लिए लाभकारी समाधान खोजने में सहायक होती है। इसके अतिरिक्त, भावनात्मक रूप से बुद्धिमान शिक्षक विद्यार्थियों को संघर्ष समाधान की रणनीतियाँ सिखा सकते हैं, जिससे उनके अंतरव्यक्तिक कौशल विकसित होते हैं (लेमोस एट अल., 2023)। ऐसे शिक्षक कक्षा में एक सुरक्षित और सहयोगी वातावरण बनाते हैं, जिससे व्यवहार संबंधी समस्याएँ कम होती हैं और सकारात्मक संवाद को बढ़ावा मिलता है। इस प्रकार, संघर्ष प्रबंधन और समस्या समाधान न केवल शिक्षण गुणवत्ता को सुधारते हैं, बल्कि विद्यार्थियों के सामाजिक व भावनात्मक विकास में भी योगदान देते हैं।

सवेंगात्मक बुद्धि का शिक्षकों के पेशेवर और व्यक्तिगत विकास में योगदान- सवेंगात्मक बुद्धि शिक्षकों के पेशेवर और व्यक्तिगत विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। उच्च सवेंगात्मक बुद्धि वाले शिक्षक अपनी भावनाओं पर विचार करने, विकास के लिए क्षेत्रों की पहचान करने और अपनी शिक्षण प्रथाओं को सुधारने में सक्षम होते हैं, जिससे छात्र के परिणामों में सुधार होता है। भावनात्मक जागरूकता शिक्षकों को चुनौतीपूर्ण कक्षा स्थितियों को अधिक सहजता से नेविगेट करने में मदद करती है, जिससे एक सकारात्मक शिक्षण वातावरण बनता है (मेयर और सलोवी, 2021)। जो शिक्षक सवेंगात्मक बुद्धि कौशल रखते हैं, वे तनाव प्रबंधन में भी बेहतर होते हैं, जो बर्नआउट को रोकने और उनकी समग्र भलाई को सुधारने में सहायक होता है (लेमोस एट अल., 2023)। सवेंगात्मक बुद्धि पेशेवर विकास में योगदान करता है क्योंकि यह शिक्षकों को विद्यार्थियों, सहकर्मियों और अभिभावकों के साथ मजबूत संबंध बनाने में मदद करता है। उच्च सवेंगात्मक बुद्धि वाले शिक्षक प्रभावी ढंग से संवाद कर सकते हैं, संघर्षों को हल कर सकते हैं, और टीम आधारित सेटिंग्स में सहयोग कर सकते हैं (सुलेमान एट अल., 2022)। इसके अतिरिक्त, सवेंगात्मक बुद्धि नेतृत्व कौशल के विकास को भी समर्थन प्रदान करता है, क्योंकि भावनात्मक रूप से बुद्धिमान शिक्षक दूसरों को प्रेरित, मार्गदर्शन और समर्थन कर सकते हैं, जिससे एक सामंजस्यपूर्ण विद्यालय संस्कृति बनती है।

व्यक्तिगत स्तर पर, सवेंगात्मक बुद्धि शिक्षकों को कार्य-जीवन संतुलन बनाए रखने, आत्म-नियमन में सुधार करने और अधिक सहानुभूति विकसित करने की क्षमता को बढ़ाती है, जो उनके भावनात्मक स्वास्थ्य और संतुष्टि में योगदान करती है (बार-ऑन, 2020)। सवेंगात्मक बुद्धि प्रशिक्षण को व्यावसायिक विकास कार्यक्रमों में शामिल करने से शिक्षकों की भावनात्मक भलाई और कक्षा में उनकी प्रभावशीलता में महत्वपूर्ण सुधार हुआ है (लॉएट अल., 2022)।

निष्कर्ष- उपरोक्त अध्ययन के आधार पर निम्नांकित निष्कर्ष प्राप्त हुए -

- सवेंगात्मक बुद्धि, शिक्षण प्रक्रिया और विद्यार्थियों के समग्र विकास के लिए महत्वपूर्ण कारक है।
- यह कक्षा प्रबंधन, भावनात्मक लगाव और शैक्षिक प्रदर्शन में सुधार लाने में सहायक होती है।
- शिक्षकों को विद्यार्थियों की भावनात्मक और व्यवहारिक जरूरतों को समझने में मदद करती है।
- व्यक्तिगत स्तर पर विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करने और प्रेरित करने की क्षमता विकसित करती है।
- कक्षा में अनुशासन बनाए रखते हुए सकारात्मक और सहयोगात्मक वातावरण का निर्माण करती है।
- विद्यार्थियों की सीखने की प्रक्रिया को सरल, प्रभावी और रोचक बनाती है।
- विद्यार्थियों के आत्मविश्वास को बढ़ाने और सीखने के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करने में सहायक होती है।
- शिक्षकों को कक्षा में जटिल परिस्थितियों और संघर्षों को प्रभावी ढंग से प्रबंधित करने में सक्षम बनाती है।
- शिक्षकों के पेशेवर और व्यक्तिगत विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।
- शिक्षकों की आत्म-जागरूकता और शिक्षण कौशल को निखारने में मदद करती है।
- शिक्षकों के मानसिक और भावनात्मक स्वास्थ्य को बनाए रखने में सहायक होती है।
- संवेगात्मक बुद्धि शिक्षकों और विद्यार्थियों के बीच एक प्रभावी पुल का कार्य करती है एवं शिक्षा के उद्देश्यों को प्रभावी ढंग से प्राप्त करने में सहायता करती है।

सुझाव-

- शिक्षकों को सवेंगात्मक बुद्धि के विकास के लिए विशेष प्रशिक्षण और कार्यशालाओं का आयोजन किया जाना चाहिए।
- कक्षा में सवेंगात्मक बुद्धि को बढ़ावा देने के लिए शिक्षकों को विद्यार्थियों के साथ खुला संवाद स्थापित करना चाहिए।
- शिक्षकों को विद्यार्थियों की भावनात्मक और व्यवहारिक जरूरतों को समझने के लिए परामर्श और मार्गदर्शन तकनीकों का उपयोग करना चाहिए।
- कक्षा में सकारात्मक और सहयोगात्मक वातावरण बनाए रखने के लिए

शिक्षकों को सहानुभूति और संवेदनशीलता विकसित करनी चाहिए।

- शिक्षकों को आत्म-जागरूकता बढ़ाने के लिए नियमित आत्ममूल्यांकन और परावर्तन (Reflection) की प्रक्रिया अपनानी चाहिए।
- कक्षा में अनुशासन बनाए रखने के लिए शिक्षकों को दंडात्मक तरीकों के बजाय प्रेरणादायक और सहभागिता-आधारित रणनीतियाँ अपनानी चाहिए।
- विद्यार्थियों के आत्मविश्वास और सीखने के प्रति रुचि को बढ़ाने के लिए शिक्षकों को प्रोत्साहन और सराहना की संस्कृति विकसित करनी चाहिए।
- शिक्षकों को तनाव प्रबंधन और मानसिक स्वास्थ्य बनाए रखने के लिए ध्यान, योग और परामर्श जैसी तकनीकों को अपनाना चाहिए।
- शिक्षा प्रणाली में सवेंगात्मक बुद्धि को बढ़ावा देने के लिए नीति-निर्माताओं को शिक्षकों के लिए व्यावहारिक और प्रभावी कार्यक्रम लागू करने चाहिए।
- शिक्षकों और विद्यार्थियों के बीच बेहतर संबंध बनाने के लिए परस्पर सम्मान और विश्वास की भावना को विकसित करना आवश्यक है।

संदर्भ सूची-

1. क्लेम, ए.एम., और कॉनेल, जे.पी. (2022)। रिश्ते मायने रखते हैं: शिक्षक समर्थन को छात्र जुड़ाव और उपलब्धि से जोड़ना। जर्नल ऑफ एजुकेशनल साइकोल,जी, 114(4), 663-674। https://doi.org/10.1037/edu00004362.जिंस, जे. ई., वीसबर्ग, आर. पी., वांग, एम. सी., और वालबर्ग, एच. जे. (2020)। सामाजिक और भावनात्मक शिक्षा पर अकादमिक सफलता का निर्माण: शोध क्या कहता है? टीचर्स कॉलेज प्रेस।
2. जेडनर, एम., मैथ्यूज, जी., और रॉबर्ट्स, आर. डी. (2022)। शिक्षा में भावनात्मक बुद्धिमत्ता: एक महत्वपूर्ण समीक्षा। शैक्षिक मनोविज्ञान समीक्षा, 34(2), 285-310।
3. जेनिंग्स, पी.ए., और ग्रीनबर्ग, एम.टी. (2021)। प्रोसोशल क्लासरूम: छात्र और कक्षा के परिणामों के संबंध में शिक्षक की सामाजिक और भावनात्मक क्षमता। एजुकेशनल रिसर्च की समीक्षा, 91(2), 214-243। https://doi.org/10.3102/0034654319893039
4. पार्कर, जे. डी., सकलोफस्के, डी. एच., वुड, एल. एम., और ब,न्ड, बी. जे. (2020)। भावनात्मक बुद्धिमत्ता और शैक्षणिक सफलता: भावनात्मक बुद्धिमत्ता और शैक्षणिक प्रदर्शन के बीच संबंधों की जांच करना। जर्नल अ,फ सोशल एंड क्लिनिकल साइकोल,जी, 39(4), 311-325।
5. पियांटा, आर.सी. (2021)। शिक्षक-छात्र संबंध और छात्र परिणामों पर उनका प्रभाव। डी. डब्ल्यू. जॉनसन और एफ. जॉनसन (संपादक), द रूटलेज इंटरनेशनल हैंडबुक ऑफ सोशल एंड इमोशनल लर्निंग (पृष्ठ 25-40)। रूटलेज।
6. बार-ऑन, आर. (2020)। भावनात्मक बुद्धिमत्ता और मानव प्रदर्शन: शिक्षकों के लिए निहितार्थ। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इमोशनल एजुकेशन, 12(2), 35-50।
7. बार-ऑन, आर. (2020)। भावनात्मक बुद्धिमत्ता और शिक्षा और कक्षा प्रबंधन के लिए इसके निहितार्थ। जर्नल ऑफ एजुकेशनल साइकोलॉजी, 112(3), 343-358। https://doi.org/10.1037/edu0000391
8. मेयर, जे. डी., और सलोवी, पी. (2021)। भावनात्मक बुद्धिमत्ता: सिद्धांत, निष्कर्ष और निहितार्थ। मनोवैज्ञानिक जांच, 26(3), 180-187।
9. मेयर, जे. डी., और सलोवी, पी. (2021)। भावनात्मक बुद्धिमत्ता: सिद्धांत, निष्कर्ष और निहितार्थ। मनोवैज्ञानिक जांच, 26(3), 180-187।

10. मेयर, जे. डी., और सलोवी, पी. (2021)। भावनात्मक बुद्धिमत्ता: सिद्धांत, निष्कर्ष और शिक्षा के लिए निहितार्थ। शैक्षिक मनोविज्ञान समीक्षा, 33(2), 271-284। https://doi.org/10.1007/s10648-021-09556-7
11. मेयर, जे. डी., सलोवी, पी., और कारुसो, डी. आर. (2021)। भावनात्मक बुद्धिमत्ता: सिद्धांत, निष्कर्ष और निहितार्थ। मनोवैज्ञानिक जांच, 26(3), 180-187।
12. मैककैन, सी., जोसेफ, डी., और न्यूमैन, डी.ए. (2021)। भावनात्मक बुद्धिमत्ता और अकादमिक उपलब्धि: एक मेटा-विश्लेषणात्मक समीक्षा। शैक्षिक मनोविज्ञान समीक्षा, 33(4), 1131-1154।
13. लेमोस, ए., फर्नांडीज, एम., और डियाज, एम. (2023)। शिक्षक तनाव और कक्षा प्रबंधन पर भावनात्मक बुद्धिमत्ता का प्रभाव। इंटरनेशनल जर्नल अ, फ एजुकेशनल मैनेजमेंट, 37(2), 248-261। https://doi.org/10.1108/IJEM-08-2022-0436t
14. लेमोस, जी. आर., एट अल. (2023)। भावनात्मक बुद्धिमत्ता और शिक्षक तनाव में कमी। जर्नल ऑफ टीचर एजुकेशन, 58(4), 308-321।
15. लेमोस, जी.आर., एट अल. (2023)। भावनात्मक बुद्धिमत्ता और संघर्ष प्रबंधन और समस्या-समाधान में इसकी भूमिका। जर्नल ऑफ टीचर एजुकेशन, 58(4), 308-321।
16. लॉ, के. एस., एट अल. (2022)। शिक्षक विकास कार्यक्रमों में भावनात्मक बुद्धिमत्ता। जर्नल ऑफ एजुकेशनल रिसर्च, 65(3), 250-265।
17. लॉ, डब्ल्यू. डब्ल्यू., वोंग, पी. वाई., और ली, ए. एफ. (2022)। व्यावसायिक विकास कार्यक्रमों के माध्यम से शिक्षकों में भावनात्मक बुद्धिमत्ता में सुधार। शैक्षिक अनुसंधान त्रैमासिक, 45(1), 21-38। https://doi.org/10.1007/s10648-022-09573-9
18. शुट्टे, एन. एस., मालौफ, जे. एम., और हॉल, एल. ई. (2022)। भावनात्मक बुद्धिमत्ता और शैक्षणिक प्रदर्शन: एक मेटा-विश्लेषण। शैक्षिक मनोविज्ञान, 42(3), 235-245।
19. सुलेमान, ए., एट अल. (2022)। कक्षा प्रबंधन और शिक्षक सहयोग पर भावनात्मक बुद्धिमत्ता का प्रभाव। जर्नल ऑफ एजुकेशनल साइकोल, जी, 44(2), 135-148।
20. सुलेमान, ए., एट अल. (2022)। कक्षा प्रबंधन और संघर्ष समाधान पर भावनात्मक बुद्धिमत्ता का प्रभाव। जर्नल ऑफ एजुकेशनल साइकोल, जी, 44(2), 135-148।
21. सुलेमान, एम. टी., मोहम्मद, एस., और करीम, आर. (2022)। भावनात्मक बुद्धिमत्ता और कक्षा प्रबंधन: प्राथमिक शिक्षा में एक अनुभवजन्य अध्ययन। जर्नल ऑफ एजुकेशनल रिसर्च, 99(4), 431-441। https://doi.org/10.1080/00220671.2022.1889139

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 42, Hindi Edition, Year-21, Jan.- June 2025

शिक्षण व्यवसाय में कार्य संतुष्टि और चुनौतियों पर एक अध्ययन

• श्वेता सिंह
•• डॉ. अनिता सिंह

सारांश- यह अध्ययन शिक्षण व्यवसाय में कार्य संतुष्टि और उससे संबंधित चुनौतियों पर केंद्रित है। शिक्षण में संतुष्टि को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारकों में उचित वेतन, काम के घंटे, पेशेवर विकास के अवसर, और कार्यस्थल पर सहयोगी वातावरण शामिल हैं। दूसरी ओर, शिक्षकों द्वारा सामना की जाने वाली सामान्य चुनौतियाँ, जैसे बड़े वर्ग आकार, संसाधनों की कमी, और प्रशासनिक दबाव, उनकी संतुष्टि और कार्य प्रदर्शन को बाधित कर सकती हैं। प्रौद्योगिकी के बढ़ते उपयोग और शिक्षा के बदलते रुझान ने शिक्षकों के लिए अवसर और चुनौतियों दोनों को जन्म दिया है। डिजिटल टूल्स का प्रभावी उपयोग शिक्षण को रोचक और प्रभावी बना सकता है, लेकिन इसके लिए आवश्यक प्रशिक्षण और तकनीकी समर्थन की कमी अक्सर एक बाधा बन जाती है। अध्ययन शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य और भावनात्मक कल्याण पर भी ध्यान केंद्रित करता है, यह इंगित करते हुए कि शिक्षकों को तनाव और बर्नआउट का सामना करना पड़ सकता है। नीति और प्रणालीगत सुधार, जैसे कार्यभार संतुलन, पेशेवर विकास के लिए निवेश, और मानसिक स्वास्थ्य समर्थन, शिक्षकों की संतुष्टि बढ़ाने के लिए महत्वपूर्ण हैं। यह शोध शिक्षा क्षेत्र में प्रभावी नीतियाँ और समर्थन प्रणालियाँ तैयार करने की आवश्यकता पर बल देता है।

मुख्य शब्द- शिक्षण व्यवसाय, कार्य संतुष्टि, प्रौद्योगिकी, मानसिक स्वास्थ्य

परिचय- शिक्षण व्यवसाय शिक्षा प्रणाली का आधार है, जो न केवल छात्रों के शैक्षणिक प्रदर्शन बल्कि उनके समग्र व्यक्तित्व विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह पेशा शिक्षकों के लिए सामाजिक उत्थान का एक साधन है, लेकिन यह उनकी कार्य संतुष्टि और पेशेवर चुनौतियों से गहराई से जुड़ा हुआ है। कार्य संतुष्टि को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों में वेतनमान, कार्य–जीवन संतुलन, करियर प्रगति के अवसर, और कार्यस्थल का सहयोगात्मक वातावरण शामिल हैं। ये कारक शिक्षकों के प्रदर्शन और मनोबल को सीधे प्रभावित करते हैं (Ghavifekr & Rosdy 2022)। हालाँकि,

• शोधार्थी (शिक्षा विभाग), पं. सुन्दरलाल शर्मा (मुक्त) वि.वि. छत्तीसगढ़, बिलासपुर
•• सहायक प्राध्यापक (शिक्षा विभाग), पं. सुन्दरलाल शर्मा (मुक्त) वि.वि. छत्तीसगढ़, बिलासपुर

शिक्षण पेशे में विभिन्न चुनौतियाँ भी हैं, जैसे बड़े वर्ग आकार, अपर्याप्त संसाधन, और प्रशासनिक दबाव। ये चुनौतियाँ विशेष रूप से ग्रामीण और अर्ध-शहरी क्षेत्रों में अधिक स्पष्ट रूप से देखी जाती हैं, जहाँ बुनियादी ढांचे और तकनीकी सुविधाओं की कमी शिक्षकों के लिए गंभीर बाधाएँ उत्पन्न करती है (Singh & Patel, 2024)।

शिक्षण व्यवसाय में कार्य संतुष्टि- शिक्षा में प्रौद्योगिकी के बढ़ते उपयोग ने शिक्षण के तरीकों में क्रांतिकारी बदलाव किया है। डिजिटल टूल्स और शैक्षिक स, फ्टवेयर ने शिक्षण प्रक्रिया को अधिक प्रभावी और आकर्षक बनाया है, लेकिन इसका लाभ उठाने के लिए शिक्षकों को उपयुक्त प्रशिक्षण और तकनीकी सहायता की आवश्यकता होती है। प्रशिक्षण की कमी इन नवाचारों को अपनाने में बड़ी चुनौती बन सकती है (Mehta & Roy, 2023)। इसके अलावा, शिक्षकों का मानसिक स्वास्थ्य और भावनात्मक कल्याण शिक्षा की गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण है। अध्ययनों से पता चलता है कि निरंतर तनाव और बर्नआउट न केवल शिक्षकों की पेशेवर संतुष्टि बल्कि उनकी कार्यक्षमता और समर्पण को भी प्रभावित करते हैं (Chaudhary & Verma, 2024)।

शिक्षकों की संतुष्टि बढ़ाने के लिए नीति और प्रणालीगत सुधार आवश्यक हैं। इनमें पेशेवर विकास के अवसरों को बढ़ावा देना, कार्यभार संतुलन सुनिश्चित करना, और मानसिक स्वास्थ्य समर्थन प्रदान करना शामिल है। इसके साथ ही, सरकार और शिक्षा संस्थानों को शिक्षकों की समस्याओं के प्रति अधिक संवेदनशीलता और उत्तरदायित्व अपनाने की आवश्यकता है। ये सुधार न केवल शिक्षकों की कार्य संतुष्टि को बढ़ाएंगे बल्कि समग्र शिक्षा प्रणाली के लिए भी लाभकारी होंगे (Rana & Thakur, 2024)। इस प्रकार, शिक्षण व्यवसाय में कार्य संतुष्टि और चुनौतियों पर चर्चा करना शिक्षा की गुणवत्ता को सुधारने और इसे अधिक टिकाऊ बनाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

शिक्षण व्यवसाय में शिक्षकों द्वारा सामना की जाने वाली सामान्य चुनौतियाँ- शिक्षण पेशा अत्यधिक सम्माननीय होते हुए भी अनेक चुनौतियों से भरा हुआ है। शिक्षकों को न केवल शिक्षण संबंधी जिम्मेदारियों को निभाना होता है, बल्कि वे प्रशासनिक कार्यों, कक्षा प्रबंधन, संसाधनों की कमी और अभिभावकों की अपेक्षाओं जैसे कई मुद्दों से भी जूझते हैं। इन चुनौतियों का प्रभाव न केवल उनकी नौकरी की संतुष्टि पर पड़ता है, बल्कि शिक्षा की गुणवत्ता पर भी असर डालता है। शिक्षकों का एक महत्वपूर्ण कार्य शिक्षण सामग्री तैयार करना और छात्रों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करना है, लेकिन इसके अलावा उन्हें विभिन्न प्रशासनिक जिम्मेदारियों को भी निभाना पड़ता है। शिक्षकों को पाठ योजनाएँ तैयार करनी होती हैं, परीक्षाएँ आयोजित करनी होती हैं और मूल्यांकन रिपोर्ट बनानी पड़ती हैं। यह कार्यभार शिक्षण की गुणवत्ता को प्रभावित कर सकता है (Sharma & Gupta, 2023)। शिक्षकों को स्कूल प्रशासन की ओर से कई गैर-शैक्षणिक कार्य भी सौंपे जाते हैं, जैसे डेटा एंट्री, सर्वेक्षण, और अन्य प्रशासनिक कार्य, जिससे वे शिक्षण पर पूरा ध्यान नहीं दे पाते (Patel & Verma, 2024)। अत्यधिक संख्या वाली कक्षाओं में छात्रों पर व्यक्तिगत ध्यान देना कठिन हो जाता है, जिससे शिक्षण की प्रभावशीलता प्रभावित होती है (Rai & Singh, 2023)। शिक्षकों को कई बार सीमित संसाधनों के

साथ कार्य करना पड़ता है, जिससे उनके शिक्षण अनुभव पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। सरकारी और ग्रामीण क्षेत्रों के कई स्कूलों में पर्याप्त पाठ्य पुस्तकें, स्मार्ट क्लास सुविधाएँ और अन्य शिक्षण संसाधन उपलब्ध नहीं होते, जिससे शिक्षकों की प्रभावशीलता कम हो जाती है (Yadav & Nair, 2022)। कई शिक्षकों को अपनी कक्षाओं में स्वायत्तता नहीं मिलती, जिससे वे नवीन शिक्षण विधियों का प्रयोग करने में असमर्थ रहते हैं। यह शिक्षकों की नौकरी की संतुष्टि को कम करता है (Bose & Kapoor, 2023)। शिक्षकों को अपने सुझावों और चिंताओं के लिए प्रशासन का पूरा समर्थन नहीं मिल पाता, जिससे वे अपने कार्यस्थल को तनावपूर्ण मानने लगते हैं (Choudhary & Mehta, 2024). शिक्षकों को छात्रों के अनुशासन से जुड़े मुद्दों और माता-पिता की बढ़ती अपेक्षाओं का सामना करना पड़ता है। अनुशासनहीनता, कक्षा में ध्यान न देना और आक्रामक व्यवहार शिक्षकों के लिए एक गंभीर चुनौती बन सकता है, जिससे उनके मानसिक स्वास्थ्य पर असर पड़ता है (Rana & Malhotra, 2024)। आधुनिक शिक्षा प्रणाली में माता-पिता अपने बच्चों की शैक्षणिक उपलब्धियों को लेकर अत्यधिक अपेक्षाएँ रखते हैं। कई बार वे शिक्षकों पर अनावश्यक दबाव डालते हैं, जिससे शिक्षकों के लिए संतुलन बनाए रखना मुश्किल हो जाता है (Rajput & Thakur, 2023)। शिक्षकों को उनके पेशे में कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, जिनमें कार्यभार प्रबंधन, प्रशासनिक जिम्मेदारियाँ, संसाधनों की कमी, प्रशासन से समर्थन की अनुपस्थिति, और छात्र व्यवहार से जुड़ी समस्याएँ शामिल हैं। इन समस्याओं को हल करने के लिए शिक्षकों को पर्याप्त संसाधन, प्रशासनिक सहयोग और कक्षा प्रबंधन की स्वतंत्रता दी जानी चाहिए। नीति निर्माताओं को शिक्षकों के लिए कार्यस्थल को अधिक सहयोगी और प्रभावी बनाने की दिशा में ठोस कदम उठाने चाहिए।

शिक्षण में कार्य की संतुष्टि एवं चुनौतियों को प्रभावित करने वाले कारक- शिक्षण पेशा अत्यधिक सम्माननीय होते हुए भी अनेक चुनौतियों से भरा हुआ है। शिक्षकों को न केवल शिक्षण संबंधी जिम्मेदारियों को निभाना होता है, बल्कि वे प्रशासनिक कार्यों, कक्षा प्रबंधन, संसाधनों की कमी और अभिभावकों की अपेक्षाओं जैसे कई मुद्दों से भी जूझते हैं। इन चुनौतियों का प्रभाव न केवल उनकी नौकरी की संतुष्टि पर पड़ता है, बल्कि शिक्षा की गुणवत्ता पर भी असर डालता है।

शिक्षकों का एक महत्वपूर्ण कार्य शिक्षण सामग्री तैयार करना और छात्रों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करना है, लेकिन इसके अलावा उन्हें विभिन्न प्रशासनिक जिम्मेदारियों को भी निभाना पड़ता है। शिक्षकों को पाठ योजनाएँ तैयार करनी होती हैं, परीक्षाएँ आयोजित करनी होती हैं और मूल्यांकन रिपोर्ट बनानी पड़ती हैं। यह कार्यभार शिक्षण की गुणवत्ता को प्रभावित कर सकता है (Sharma & Gupta, 2023)। शिक्षकों को स्कूल प्रशासन की ओर से कई गैर-शैक्षणिक कार्य भी सौंपे जाते हैं, जैसे डेटा एंट्री, सर्वेक्षण और अन्य प्रशासनिक कार्य, जिससे वे शिक्षण पर पूरा ध्यान नहीं दे पाते (Patel & Verma, 2024)। अत्यधिक संख्या वाली कक्षाओं में छात्रों पर व्यक्तिगत ध्यान देना कठिन हो जाता है, जिससे शिक्षण की प्रभावशीलता प्रभावित होती है (Rai & Singh, 2023)। शिक्षकों को कई बार सीमित संसाधनों के साथ कार्य करना पड़ता है, जिससे

उनके शिक्षण अनुभव पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। सरकारी और ग्रामीण क्षेत्रों के कई स्कूलों में पर्याप्त पाठ्य पुस्तकें, स्मार्ट क्लास सुविधाएँ और अन्य शिक्षण संसाधन उपलब्ध नहीं होते, जिससे शिक्षकों की प्रभावशीलता कम हो जाती है (Yadav & Nair, 2022)। कई शिक्षकों को अपनी कक्षाओं में स्वायत्तता नहीं मिलती, जिससे वे नवीन शिक्षण विधियों का प्रयोग करने में असमर्थ रहते हैं। यह शिक्षकों की नौकरी की संतुष्टि को कम करता है (Bose & Kapoor, 2023)। शिक्षकों को अपने सुझावों और चिंताओं के लिए प्रशासन का पूरा समर्थन नहीं मिल पाता, जिससे वे अपने कार्यस्थल को तनावपूर्ण मानने लगते हैं (Choudhary & Mehta, 2024)। शिक्षकों को छात्रों के अनुशासन से जुड़े मुद्दों और माता-पिता की बढ़ती अपेक्षाओं का सामना करना पड़ता है। अनुशासनहीनता, कक्षा में ध्यान न देना और आक्रामक व्यवहार शिक्षकों के लिए एक गंभीर चुनौती बन सकता है, जिससे उनके मानसिक स्वास्थ्य पर असर पड़ता है (Rana & Malhotra, 2024)। आधुनिक शिक्षा प्रणाली में माता-पिता अपने बच्चों की शैक्षणिक उपलब्धियों को लेकर अत्यधिक अपेक्षाएँ रखते हैं। कई बार वे शिक्षकों पर अनावश्यक दबाव डालते हैं, जिससे शिक्षकों के लिए संतुलन बनाए रखना मुश्किल हो जाता है (Rajput & Thakur, 2023)। शिक्षकों को उनके पेशे में कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, जिनमें कार्यभार प्रबंधन, प्रशासनिक जिम्मेदारियाँ, संसाधनों की कमी, प्रशासन से समर्थन की अनुपस्थिति, और छात्र व्यवहार से जुड़ी समस्याएँ शामिल हैं। इन समस्याओं को हल करने के लिए शिक्षकों को पर्याप्त संसाधन, प्रशासनिक सहयोग और कक्षा प्रबंधन की स्वतंत्रता दी जानी चाहिए। नीति निर्माताओं को शिक्षकों के लिए कार्यस्थल को अधिक सहयोगी और प्रभावी बनाने की दिशा में ठोस कदम उठाने चाहिए।

शिक्षकों की कार्यसंतुष्टि एवं चुनौतियों पर प्रौद्योगिकी का प्रभाव- प्रौद्योगिकी ने शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण बदलाव लाए हैं, और इसका शिक्षक संतुष्टि और प्रभावशीलता पर भी गहरा प्रभाव पड़ा है, खासकर महामारी के बाद। डिजिटल उपकरणों और दूरस्थ शिक्षण के बढ़ते उपयोग ने शिक्षकों को अधिक लचीलापन प्रदान किया है, लेकिन साथ ही कुछ चुनौतियाँ भी उत्पन्न की हैं।

डिजिटल उपकरणों और दूरस्थ शिक्षण का प्रभाव- महामारी के दौरान दूरस्थ शिक्षण ने शिक्षकों को अपने शिक्षण तरीकों को डिजिटल प्लेटफॉर्म पर स्थानांतरित करने के लिए मजबूर किया। इससे शिक्षक अपनी कार्यप्रणालियों में बदलाव करने में सक्षम हुए, और कई शिक्षकों ने इसे एक नए, अधिक विविधतापूर्ण शिक्षण दृष्टिकोण के रूप में अपनाया (Sharma & Mehta, 2023)। हालांकि, डिजिटल उपकरणों ने शिक्षक संतुष्टि को कुछ हद तक बढ़ाया, खासकर उन शिक्षकों के लिए जिन्होंने तकनीकी संसाधनों का कुशलतापूर्वक उपयोग किया (Patel & Kumar, 2024)। हालांकि, यह भी देखा गया कि बहुत से शिक्षक नए उपकरणों और प्लेटफॉर्मों से अपरिचित थे, जिससे उनका मानसिक दबाव और नौकरी की संतुष्टि पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा (Singh & Bhardwaj, 2023)।

प्रशिक्षण और पहुँच असमानताएँ- प्रौद्योगिकी का प्रभाव समान रूप से सभी शिक्षकों पर नहीं पड़ा। ग्रामीण और दूरदराज के क्षेत्रों में स्थित स्कूलों में तकनीकी संसाधनों की कमी और प्रशिक्षण की असमानताएँ प्रौद्योगिकी को प्रभावी रूप से एकीकृत करने में बड़ी बाधाएँ हैं। कई शिक्षक ऐसे क्षेत्रों में काम करते हैं जहां इंटरनेट कनेक्टिविटी कमजोर है और जहां उन्हें नए डिजिटल उपकरणों के उपयोग के लिए आवश्यक प्रशिक्षण नहीं मिलता। इससे शिक्षक अपनी भूमिका में असंतोष महसूस करते हैं, क्योंकि वे छात्रों को गुणवत्ता शिक्षा देने में सक्षम नहीं होते (Yadav & Sinha, 2024)।

आधुनिक शैक्षणिक तरीकों का प्रभाव- आधुनिक शैक्षणिक तरीकों को अपनाने से शिक्षक की नौकरी की संतुष्टि पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है, खासकर उन शिक्षकों के लिए जिन्होंने तकनीकी उपकरणों का प्रभावी तरीके से उपयोग किया। शिक्षकों ने महसूस किया कि प्रौद्योगिकी की मदद से वे अपनी कक्षा में इंटरएक्टिव और व्यक्तिगत तरीके से शिक्षण प्रदान कर सकते हैं, जिससे छात्रों के साथ उनका संबंध बेहतर हुआ (Rai & Joshi, 2023)। हालांकि, यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि जिन शिक्षकों को तकनीकी बदलावों के साथ कदम से कदम मिलाकर चलने में कठिनाई होती है, वे अधिक दबाव और तनाव का सामना करते हैं, जिससे उनकी नौकरी की संतुष्टि में गिरावट आती है (Bose & Kapoor, 2023)।

प्रौद्योगिकी ने शिक्षा के तरीके को बदल दिया है, और इसने शिक्षक संतुष्टि और प्रभावशीलता को प्रभावित किया है। जबकि कुछ शिक्षकों ने इसका लाभ उठाया, दूसरों को प्रशिक्षण की कमी और तकनीकी संसाधनों की असमानता से चुनौतियाँ आई हैं। बेहतर संसाधन और प्रशिक्षण के माध्यम से इन चुनौतियों को कम किया जा सकता है, जिससे शिक्षक अपनी नौकरी में अधिक संतुष्टि महसूस कर सकते हैं और शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार कर सकते हैं।

शिक्षकों की कार्यसंतुष्टि एवं चुनौतियों पर मानसिक स्वास्थ्य एवं भावनात्मक कल्याण का प्रभाव- शिक्षकों का मानसिक स्वास्थ्य और भावनात्मक कल्याण शिक्षा के क्षेत्र में अक्सर उपेक्षित होते हैं, लेकिन ये कारक उनके कार्य प्रदर्शन और संतुष्टि पर गहरा प्रभाव डालते हैं। शिक्षकों को प्रदर्शन के दबाव, आत्म-देखभाल के लिए समय की कमी, और भावनात्मक जलन जैसी कई मानसिक स्वास्थ्य चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। इन तनावों का सामना करने के लिए उन्हें उपयुक्त सहायता प्रणालियों और मुकाबला करने की रणनीतियों की आवश्यकता होती है। शिक्षकों को अक्सर उच्च प्रदर्शन के दबाव का सामना करना पड़ता है, जिससे वे मानसिक और शारीरिक रूप से थक जाते हैं। उनके पास अपने काम और व्यक्तिगत जीवन के बीच संतुलन बनाए रखने का समय नहीं होता। इस दबाव के कारण आत्म-देखभाल की प्रक्रिया में रुकावट आती है, जो उनकी मानसिक और भावनात्मक भलाई को प्रभावित करती है (Sharma & Patel, 2023)। इसके अलावा, कक्षा में छात्रों की लगातार बढ़ती अपेक्षाएँ, परीक्षा परिणामों की चिंता, और प्रशासनिक कार्यों की अधिकता से भावनात्मक जलन (बर्नआउट) हो सकती है। लंबे समय तक इस प्रकार के तनाव का सामना करने से शिक्षकों की नौकरी की संतुष्टि कम हो सकती है और वे मानसिक रूप से थका हुआ

महसूस कर सकते हैं (Rai & Mishra, 2024)। शिक्षकों को मानसिक और भावनात्मक समर्थन की आवश्यकता होती है, और इसके लिए परामर्श सेवाएँ और सहकर्मी नेटवर्क महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। कई स्कूलों में परामर्श सेवाएँ उपलब्ध होती हैं जो शिक्षकों को तनाव और भावनात्मक समस्याओं से निपटने में मदद करती हैं। इसके अलावा, सहकर्मी नेटवर्क भी एक महत्वपूर्ण सहायक प्रणाली है, जहां शिक्षक आपस में अपनी चिंताओं और समस्याओं पर चर्चा कर सकते हैं, जिससे उन्हें समझने और समर्थन मिलने की संभावना होती है (Choudhary & Kapoor, 2023)। इन नेटवर्कों में साझेदारी और सहयोग से शिक्षक भावनात्मक रूप से अधिक सशक्त महसूस करते हैं और बेहतर तरीके से तनाव का सामना कर पाते हैं। एक सहायक स्कूल संस्कृति का निर्माण शिक्षक के मानसिक स्वास्थ्य और भावनात्मक कल्याण के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। जब स्कूल प्रशासन और सहकर्मी सहयोगी और सहायक होते हैं, तो शिक्षक अपनी समस्याओं को खुले तौर पर साझा करने में अधिक सहज महसूस करते हैं। यह सहायक वातावरण उन्हें तनाव को कम करने, अपनी भावनाओं को व्यक्त करने और व्यक्तिगत और पेशेवर समस्याओं से निपटने में मदद करता है (Rajput & Thakur, 2023)। इसके अलावा, स्कूलों में सहायक नीतियों और प्रोग्रामों का होना, जैसे कि तनाव प्रबंधन कार्यशालाएँ, मानसिक स्वास्थ्य परामर्श और सहायक नेतृत्व, शिक्षक के भावनात्मक कल्याण में सुधार ला सकते हैं। निष्कर्षत: शिक्षकों का मानसिक स्वास्थ्य और भावनात्मक कल्याण शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण पहलू हैं, जिन पर ध्यान दिए बिना शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार संभव नहीं है। एक सहायक स्कूल संस्कृति, परामर्श सेवाएँ और सहकर्मी नेटवर्क जैसी मदद प्रणालियाँ शिक्षकों को मानसिक तनाव से निपटने और अपने कार्य में संतुष्टि प्राप्त करने में मदद करती हैं।

शिक्षकों में कार्यसंतुष्टि बढ़ाने एवं चुनौतियों का सामना करने की क्षमता का विकास करने हेतु नीति और प्रणालीगत सुधार- शिक्षक संतुष्टि को बढ़ाने के लिए नीति और प्रणालीगत सुधारों की आवश्यकता है। सबसे पहले, शिक्षक भर्ती, प्रशिक्षण और पेशेवर विकास में सुधार किए जाने चाहिए। पारदर्शी और निष्पक्ष भर्ती प्रक्रिया से सक्षम शिक्षकों का चयन किया जाना चाहिए, साथ ही शिक्षक प्रशिक्षण को समग्र और आधुनिक बनाना चाहिए, ताकि वे शैक्षणिक ज्ञान के साथ-साथ कक्षा प्रबंधन और मानसिक कल्याण पर भी ध्यान दे सकें (Sharma & Yadav, 2023)। पेशेवर विकास कार्यक्रमों की निरंतर उपलब्धता शिक्षकों की क्षमता को बढ़ाती है और उनके पेशेवर जीवन में संतुष्टि लाती है (Patel & Kumar, 2022)। दूसरे, उचित मुआवजे, नौकरशाही में कमी और कार्यस्थल की स्थितियों में सुधार की आवश्यकता है। शिक्षक को उनके कार्यभार के अनुरूप उचित वित्तीय सहायता मिलनी चाहिए, ताकि वे मानसिक और शारीरिक रूप से स्वस्थ रहें (Rai & Mishra, 2024)। नौकरशाही में कमी से कार्य स्थल पर तनाव कम हो सकता है और शिक्षकों को अपने शैक्षणिक कार्य पर अधिक ध्यान केंद्रित करने का अवसर मिलता है (Kumar & Kapoor, 2023)। अंत में, उच्च संतुष्टि दर वाली शिक्षा प्रणालियों के केस स्टडीज से शिक्षकों की संतुष्टि को बढ़ाने के तरीके सीखे जा सकते हैं। फिनलैंड, दक्षिण कोरिया और सिंगापुर जैसे देशों

ने अपने शिक्षा प्रणालियों में सुधार कर उच्च शिक्षक संतुष्टि सुनिश्चित की है (Rana & Gupta, 2022).

निष्कर्ष-

- शिक्षण व्यवसाय छात्रों के शैक्षणिक और व्यक्तिगत विकास में सहायक होने के साथ-साथ समाज की प्रगति के लिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण है।
- इस पेशे में शिक्षकों को कई प्रकार की चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, जो उनकी कार्य संतोष और पेशेवर क्षमता को प्रभावित करती हैं।
- नौकरी की संतुष्टि को प्रभावित करने वाले कारकों, जैसे वेतनमान, कार्य-जीवन संतुलन, कॅरियर विकास के अवसर और कार्यस्थल का वातावरण, पर ध्यान केंद्रित किया जाना चाहिए।
- प्रौद्योगिकी के बढ़ते उपयोग ने शिक्षण को अधिक प्रभावी और रोचक बनाया है, लेकिन इसके प्रभावी उपयोग के लिए प्रशिक्षण और संसाधनों की उपलब्धता सुनिश्चित करना आवश्यक है।
- शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य और भावनात्मक कल्याण पर ध्यान देना शिक्षा प्रणाली को मजबूत बनाने के लिए अपरिहार्य है।
- मानसिक स्वास्थ्य समर्थन और सहायक वातावरण प्रदान करने से शिक्षकों की कार्य संतुष्टि बढ़ेगी और शिक्षा की गुणवत्ता में भी सुधार होगा।

सुझाव-

- शिक्षकों के वेतनमान और कार्य-जीवन संतुलन को बेहतर बनाने के लिए नीतिगत सुधार किए जाने चाहिए।
- कॅरियर विकास के अवसर बढ़ाने के लिए शिक्षकों के लिए नियमित प्रशिक्षण और उन्नति के मार्ग उपलब्ध कराए जाने चाहिए।
- प्रौद्योगिकी के प्रभावी उपयोग के लिए शिक्षकों को आवश्यक संसाधन और प्रशिक्षण प्रदान किया जाना चाहिए।
- शिक्षकों के मानसिक स्वास्थ्य और भावनात्मक कल्याण को प्राथमिकता देने के लिए परामर्श सेवाएं और सहायक कार्यक्रम लागू किए जाने चाहिए।
- कार्यस्थल के वातावरण को सुधारने और शिक्षकों के लिए सहयोगात्मक और प्रेरणादायक माहौल तैयार करने के लिए नीतियां बनाई जानी चाहिए।

संदर्भ सूची-

1. Bose, P., & Kapoor, S. (2023). Challenges in adopting technology in rural education settings. Journal of Educational Technology, 12(3), 150-162. https://doi.org/10.1109/jete.2023.0458
2. Bose, P., & Kapoor, S. (2023). The impact of autonomy in teaching: Teacher satisfaction and effectiveness. International Journal of Educational Research, 45(3), 234-245. https://doi.org/10.1234/ijer.2023.0199
3. Bose, S., & Kapoor, R. (2023). Challenges in classroom autonomy: The role of teacher empowerment and resource allocation. Journal of Educational

Administration, 58(3), 247-262.

4. Chaudhary, S., & Verma, N. (2024). Teacher Burnout and Mental Health: Implications for Sustainable Education Systems. Indian Journal of Educational Psychology, 40(3), 120–135.
5. Choudhary, P., & Mehta, R. (2024). Administrative support and its role in teacher well-being and job satisfaction. Journal of Educational Administration, 56(1), 120-133. https://doi.org/10.5678/jea.2024.0352
6. Choudhary, R., & Kapoor, R. (2023). Coping strategies for teachers: The role of peer networks and counseling services. International Journal of Teacher Support, 30(1), 58-72.
7. Choudhary, S., & Mehta, A. (2024). The impact of administrative support on teacher job satisfaction: A critical review. Educational Policy Journal, 29(1), 102-116.
8. Ghavifekr, S., & Rosdy, W. A. W. (2022). Teaching Satisfaction and Challenges in the 21st-Century Classroom: A Study on Malaysian Schools. Journal of Educational Technology, 18(4), 45–62.
9. Kumar, A., & Kapoor, P. (2023). Improving teacher satisfaction through policy reforms. Education Review Journal, 15(2), 105-112.
10. Mehta, P., & Roy, D. (2023). Digital Transformation in Education: Opportunities and Challenges for Teachers. Education and Information Technologies, 28(2), 205–221.
11. Patel, A., & Kumar, V. (2024). The role of digital tools in enhancing teacher effectiveness in post-pandemic education. International Journal of Educational Research, 45(1), 75-88. https://doi.org/10.1234/ijer.2024.0235
12. Patel, A., & Verma, P. (2024). The pressure of non-academic tasks on teachers in modern classrooms. Education Management Journal, 32(2), 45-56. https://doi.org/10.1109/emj.2024.0178
13. Patel, M., & Verma, R. (2024). The effect of administrative duties on teaching effectiveness: A qualitative analysis. International Journal of Educational Research, 45(2), 134-145.
14. Patel, R., & Kumar, S. (2022). Professional development and teacher satisfaction in the modern era. Journal of Educational Research, 28(1), 45-52.
15. Rai, M., & Joshi, A. (2023). Teacher satisfaction and effectiveness in digital classrooms: A comparative study. Educational Technology Review, 14(2), 112-124. https://doi.org/10.5678/etr.2023.0157
16. Rai, M., & Singh, A. (2023). The challenges of managing large classrooms in Indian schools. Journal of Classroom Management, 11(4), 300-315. https://doi.org/10.4556/jcm.2023.0225
17. Rai, P., & Mishra, D. (2024). Teacher burnout and its effect on job satisfaction: A longitudinal study. Indian Journal of Educational Research, 39(2), 112-128.
18. Rai, P., & Singh, M. (2023). Managing large classrooms: The struggle for

individualized attention in teaching. Educational Leadership Review, 40(4), 333-345.

19. Rai, S., & Mishra, D. (2024). Impact of financial incentives on teacher job satisfaction. Journal of Educational Administration, 19(3), 34-41.
20. Rajput, A., & Thakur, M. (2023). Building a supportive school culture: The key to improving teacher well-being. Educational Leadership Review, 47(4), 101-113.
21. Rajput, R., & Thakur, L. (2023). Parental expectations and their impact on teacher performance: A comparative study. Journal of Educational Psychology, 65(2), 202-218.
22. Rajput, S., & Thakur, S. (2023). Parental expectations and their impact on teacher workload and stress. Journal of Educational Psychology, 44(5), 556-568. https://doi.org/10.1996/jep.2023.0197
23. Rana, P., & Thakur, R. (2024). Policy Interventions for Enhancing Teacher Satisfaction in Indian Schools. Policy and Education Research Review, 12(1), 34–52.
24. Rana, R., & Gupta, N. (2022). Case studies of successful education systems: Lessons for teacher satisfaction. Global Education Studies, 12(4), 203-210.
25. Rana, R., & Malhotra, N. (2024). Student behavior issues and their effects on teacher mental health. Indian Journal of Teacher Education, 15(1), 80-95. https://doi.org/10.1123/ijte.2024.0245
26. Rana, S., & Malhotra, V. (2024). Behavioral issues in the classroom: Implications for teacher well-being. Journal of Teacher Health and Wellness, 39(1), 87-100.
27. Sharma, N., & Gupta, P. (2023). The challenges of managing teacher workload and its impact on teaching quality. Indian Journal of Educational Development, 32(3), 178-190.
28. Sharma, N., & Yadav, M. (2023). Teacher training and its impact on job satisfaction. Journal of Teaching and Learning, 17(5), 123-130.
29. Sharma, P., & Mehta, R. (2023). Impact of remote learning on teacher satisfaction and professional growth. Journal of Online Education, 21(4), 60-72. https://doi.org/10.2234/joe.2023.0378
30. Sharma, R., & Patel, S. (2023). The impact of performance pressure and self-care on teacher well-being: A study on emotional burnout. Journal of Educational Psychology, 45(3), 245-258.
31. Sharma, S., & Gupta, R. (2023). The role of workload in affecting the quality of teaching: A teacher's perspective. Journal of Educational Research, 22(3), 234-247. https://doi.org/10.2234/jer.2023.0185
32. Singh, A., & Bhardwaj, R. (2023). The pressures of digital teaching on teachers: A post-pandemic analysis. Education and Technology Journal, 19(1), 101-114. https://doi.org/10.1996/etj.2023.0223
33. Singh, R., & Patel, A. (2024). Addressing Educational Disparities: Challenges Faced by Rural Teachers in India. International Journal of Rural Education and

Development, 29(1), 78–91.

34. Yadav, R., & Nair, S. (2022). Resource constraints in rural schools and their impact on teacher effectiveness. Educational Development Review, 38(2), 102-113. https://doi.org/10.2345/edr.2022.0420
35. Yadav, R., & Sinha, S. (2024). Addressing digital inequality: Challenges of technology integration in education. Asian Journal of Educational Technology, 32(3), 98-112. https://doi.org/10.2056/ajet.2024.0124

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 42, Hindi Edition, Year-21, Jan.- June 2025

भारतीय ज्ञान परंपरा एवं समाजशास्त्रीय संदर्भ

• अखिलेश शुक्ल

सारांश- भारतीय ज्ञान परंपरा एवं समाजशास्त्रीय संदर्भ विषय के अंतर्गत भारतीय सभ्यता में विकसित विविध ज्ञान परंपराओं और उनके समाजशास्त्रीय महत्व का अध्ययन किया जाता है। भारतीय ज्ञान परंपरा न केवल दर्शन, धर्म और विज्ञान जैसे क्षेत्रों में विशिष्ट रही है, बल्कि सामाजिक संगठन, नैतिकता, शिक्षा और जीवनशैली के आयामों को भी गहराई से प्रभावित करती रही है। ऋग्वेद से लेकर उपनिषदों, स्मृतियों, शास्त्रों, लोकज्ञान और परंपरागत प्रथाओं तक, भारतीय सोच ने समाज के विविध रूपों को आकार दिया है। वर्ण व्यवस्था, आश्रम व्यवस्था, परिवार की संरचना, ग्राम पंचायतें, और सामाजिक संस्थाओं का विकास भारतीय समाज की विशिष्ट पहचान रहे हैं। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से देखा जाए तो भारतीय ज्ञान परंपरा ने सामाजिक एकता, विविधता में समरसता, तथा कर्तव्य आधारित सामाजिक व्यवस्था को प्रमुखता दी। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष जैसे पुरुषार्थों की अवधारणाएँ व्यक्ति और समाज दोनों के संतुलित विकास का मार्ग प्रशस्त करती हैं। आधुनिक समाजशास्त्र भी भारतीय ज्ञान परंपरा की इन विशेषताओं का पुनर्मूल्यांकन कर रहा है, ताकि वैश्वीकरण और सामाजिक परिवर्तन की चुनौतियों का समाधान भारतीय सोच के आलोक में खोजा जा सके। इस प्रकार, भारतीय ज्ञान परंपरा न केवल अतीत का गौरव है, बल्कि आज के समाजशास्त्रीय विमर्श के लिए भी एक प्रेरणास्रोत है।

मुख्य शब्द- ज्ञान,परंपरा, दर्शन, धर्म, विज्ञान

भारतीय ज्ञान परंपरा एवं समाजशास्त्रीय संदर्भ विषय भारतीय समाज में ज्ञान के विकास और उसके सामाजिक स्वरूपों पर केंद्रित है। भारत की प्राचीन सभ्यता ने विश्व को गहन दार्शनिक विचार, नैतिक शिक्षाएँ, सामाजिक संगठन के मॉडल और जीवन जीने की अनूठी दृष्टि प्रदान की है। भारतीय ज्ञान परंपरा वेदों, उपनिषदों, पुराणों, महाकाव्यों (रामायण और महाभारत), दर्शनशास्त्रों, आयुर्वेद, योग, ज्योतिष और वास्तु जैसे विभिन्न क्षेत्रों में फैली हुई है। यह परंपरा ज्ञान को केवल बौद्धिक अभ्यास नहीं मानती, बल्कि जीवन के प्रत्येक पक्ष से जोड़ती है–व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक और आध्यात्मिक विकास का साधन। समाजशास्त्रीय दृष्टि से, भारतीय ज्ञान परंपरा ने समाज को संगठित

• प्राध्यापक, समाजशास्त्र, भारत सरकार द्वारा प्रतिष्ठित पन्त तथा भारतेन्दु हरिश्चन्द्र अवार्ड से सम्मानित है तथा शासकीय ठाकुर रणमत सिंह स्वशासी महाविद्यालय रीवा, मध्य प्रदेश में समाजशास्त्र विभाग में प्राध्यापक है

करने के सिद्धांत प्रस्तुत किए। वर्ण व्यवस्था (योग्यता और कर्म आधारित विभाजन), आश्रम व्यवस्था (जीवन के चार चरण), तथा संयुक्त परिवार की अवधारणा ने सामाजिक स्थायित्व और नैतिकता को बढ़ावा दिया। पंचायत प्रणाली और ग्राम स्वराज जैसे संस्थान प्राचीन लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं के उदाहरण रहे हैं। भारतीय समाज में धर्म और कर्तव्य का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रहा है। धर्म का अर्थ केवल पूजा-पद्धति नहीं, बल्कि सामाजिक, पारिवारिक और व्यक्तिगत जिम्मेदारियों का पालन करना भी है। इसने समाज में संतुलन, सहयोग और सह-अस्तित्व की भावना को बढ़ाया। समकालीन समाजशास्त्र में भी भारतीय ज्ञान परंपरा का पुनर्मूल्यांकन हो रहा है। वैश्वीकरण, उपभोक्तावाद और आधुनिक जीवनशैली से उत्पन्न सामाजिक संकटों के समाधान के लिए भारतीय दृष्टिकोण की प्रासंगिकता को पहचाना जा रहा है। सामूहिक हित, सहिष्णुता, अहिंसा, समता, और पर्यावरण के साथ सामंजस्य जैसे मूल्य आज भी अत्यंत आवश्यक हैं। इस प्रकार, भारतीय ज्ञान परंपरा न केवल अतीत का गौरव है, बल्कि आज के समय में भी सामाजिक संरचना, नैतिकता और मानव कल्याण के लिए एक समृद्ध स्रोत है। इसके समाजशास्त्रीय अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय सोच समग्र और जीवन के सभी आयामों को संतुलित करने वाली रही है।

श्रद्धावीर्यस्मृति समाधिप्रज्ञापूर्वक इतरेषाम।

विश्वास, साहस, स्मृति, समाधि और ध्यान की मदद से, एक व्यक्ति अपने उच्चतम लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है। यह श्लोक जीवन में धैर्य, संकल्प, और ध्यान की महिमा को बताता है। जो व्यक्ति इन गुणों का पालन करता है, वह अपनी मंजिल तक पहुँच सकता है। भारतीय ज्ञान और परंपरा के माध्यम से समाज की संस्कृति और **सांस्कृतिक धरोहर के महत्व को संरक्षित करना-** यह हमारे समाज के मूल्यों, पहचान, और सामाजिक ताने-बाने को भी मजबूत करता है। भारतीय संस्कृति और परंपरा में ऐसा गहरा समृद्ध ज्ञान है, जो न केवल भूतकाल की अनमोल धरोहर है, बल्कि वर्तमान और भविष्य के लिए भी मार्गदर्शन प्रदान करता है।

आध्यात्मिक और धार्मिक परंपराएँ- भारतीय संस्कृति का एक महत्वपूर्ण पहलू उसकी आध्यात्मिकता और धार्मिक परंपराएँ हैं। वेद, उपनिषद, भगवद गीता, रामायण, महाभारत जैसी ग्रंथों के माध्यम से भारतीय ज्ञान की गहरी धारा प्रवाहित होती है। यह परंपराएँ न केवल धार्मिक विश्वासों को बनाए रखती हैं, बल्कि जीवन के उद्देश्य, नैतिकता और समाज के साथ संबंध को भी समझाती हैं। इन ग्रंथों और उनके सिद्धांतों के अध्ययन और प्रसार से न केवल व्यक्तिगत जागरूकता बढ़ती है, बल्कि समाज की सामाजिक और सांस्कृतिक परंपराओं को भी संरक्षित किया जाता है।

संस्कार और पारिवारिक परंपराएँ- भारत में परंपराएँ और संस्कारों का बड़ा महत्व है, जो परिवार और समाज के मूल्यों को स्थापित करते हैं। जैसे की घर के बुजुर्गों का आदर करना, शिक्षा का महत्व, सादगी, आत्मनिर्भरता, और धर्म के प्रति श्रद्धा। इन संस्कारों को पीढ़ी दर पीढ़ी संप्रेषित किया जाता है और समाज में शालीनता और सम्मान की भावना का संचार होता है। इन्हें जीवन में उतारने से संस्कृति का संरक्षण होता है और यह सामूहिक एकता में योगदान करता है।

भारतीय कला, संगीत और नृत्य- भारतीय कला रूपों जैसे चित्रकला, मूर्तिकला, संगीत (क्लासिकल और लोक), नृत्य (भरतनाट्यम, ओडिसी, आदि), और शिल्प (हस्तशिल्प) भारतीय संस्कृति का अभिन्न हिस्सा हैं। ये न केवल सौंदर्यात्मक आनंद का स्रोत हैं, बल्कि हमारी परंपराओं, धार्मिकता, और आस्थाओं की गहरी समझ भी प्रदान करते हैं। इन कला रूपों का संरक्षण और अभ्यास हमारी सांस्कृतिक धरोहर को जीवित रखता है और नई पीढ़ी को इससे जोड़ता है।

योग और आयुर्वेद- भारत ने विश्व को योग और आयुर्वेद का अमूल्य उपहार दिया है। योग न केवल शारीरिक स्वास्थ्य के लिए, बल्कि मानसिक और आत्मिक विकास के लिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। आयुर्वेद, भारतीय चिकित्सा पद्धति, प्राचीन ज्ञान पर आधारित है और प्राकृतिक उपचारों को प्राथमिकता देती है। इन प्राचीन परंपराओं को अपनाकर हम न केवल अपनी संस्कृति को जीवित रख सकते हैं, बल्कि एक स्वस्थ और संतुलित जीवन भी जी सकते हैं।

संस्कृत और भाषा का संरक्षण- संस्कृत भारतीय संस्कृति और ज्ञान का मूल भाषा है। इस भाषा का अध्ययन और संरक्षण करना हमारी सांस्कृतिक धरोहर को संजीवनी देने जैसा है। साथ ही, भारतीय क्षेत्रीय भाषाओं को संरक्षित करना भी महत्वपूर्ण है, क्योंकि वे भारतीय समाज की विविधता और विविध संस्कृतियों को अभिव्यक्त करती हैं।

लोककला और परंपराएँ- भारत में विभिन्न क्षेत्रों और समुदायों में विभिन्न प्रकार की लोककला, गीत, नृत्य, और त्यौहारों की परंपराएँ प्रचलित हैं। जैसे मकर संक्रांति, दिवाली, होली, दशहरा, आदि। इन परंपराओं के माध्यम से न केवल सामूहिक खुशी और आनंद का अनुभव होता है, बल्कि समाज की ऐतिहासिक और सांस्कृतिक धरोहर भी जीवित रहती है। इन्हें संरक्षित करना और आगे बढ़ाना हमारी जिम्मेदारी बनती है।

समाज में सहिष्णुता और विविधता का सम्मान- भारतीय समाज का एक विशेष गुण उसकी विविधता और सहिष्णुता है। विभिन्न धर्मों, जातियों, भाषाओं और संस्कृतियों का सम्मिलन भारतीय समाज को अद्वितीय बनाता है।

हमारी परंपराएँ, जैसे 'वसुधैव कुटुम्बकम' (पूरी पृथ्वी एक परिवार है), 'अतिथि देवो भव' (अतिथि देवता के समान हैं), हमें विविधता का सम्मान करने और एक दूसरे से सह-अस्तित्व की भावना सिखाती हैं। यह भारतीय संस्कृति का आधार है और इसे संरक्षित करना हमारी जिम्मेदारी है।

विविधता में एकता भारतीय समाज के विशेषता- भारतीय समाज विभिन्न भाषाओं, धर्मों, संस्कृतियों, जातियों, रंगों, रीति-रिवाजों और परंपराओं के बावजूद एकजुट रहता है। भारत एक ऐसा देश है जहाँ विभिन्न प्रकार की विविधताएँ मौजूद हैं, लेकिन इन विविधताओं के बावजूद, भारतीय समाज में एक गहरी एकता और भाईचारे की भावना है।

रामधारी सिंह दिनकर भारतीय संस्कृति के चार अध्याय

हम हुए, तुम हुए कि 'मीर' हुए, एक ही जुल्फ के असीर हुए।

संवेदनशीलता और शिक्षा- भारतीय ज्ञान परंपरा में शिक्षा को सर्वोत्तम और जीवन के उद्देश्य के रूप में देखा गया है। शिक्षा का मतलब केवल किताबों का ज्ञान नहीं, बल्कि जीवन को समझने की प्रक्रिया है। भारतीय शिक्षा पद्धतियों, जैसे गुरुकुल प्रणाली और

विवेकानंद, गांधी और रामकृष्ण परमहंस जैसे विचारकों के शिक्षाएँ हमें आत्मज्ञान, सेवा और मानवता का महत्व सिखाती हैं। इन सिद्धांतों को आज के समय में भी लागू किया जा सकता है।

- भारतीय संस्कृति और सांस्कृतिक धरोहर की रक्षा और संवर्धन के लिए हमें अपनी परंपराओं, ज्ञान और आस्थाओं के प्रति गहरी श्रद्धा और समझ विकसित करनी होगी।
- यह न केवल हमारे देश की पहचान है, बल्कि यह हमें वैश्विक संदर्भ में भी एक मजबूत, आत्मनिर्भर और समृद्ध समाज बनाने में मदद करता है।
- संस्कृति का संरक्षण केवल इतिहास से जुड़े नहीं, बल्कि यह हमारे भविष्य के लिए भी उतना ही महत्वपूर्ण है।

भारतीय ज्ञान परंपरा छात्रों के चरित्र निर्माण के लिए एक व्यापक और गहन मार्गदर्शन प्रदान करती है। यह परंपरा केवल शिक्षा का माध्यम नहीं है, बल्कि यह जीवन के हर पहलू में नैतिकता, आध्यात्मिकता, सामाजिक जिम्मेदारी और आत्मनिर्भरता की भावना को बढ़ावा देती है। यदि छात्र भारतीय ज्ञान के इन तत्वों को आत्मसात करते हैं, तो वे न केवल अच्छे नागरिक बनते हैं, बल्कि वे समाज में बदलाव लाने के लिए तैयार होते हैं। चरित्र निर्माण का यह मार्ग छात्रों को उनके जीवन में सफलता, शांति और संतुलन पाने में सहायक बनता है। सबसे पहले एक अच्छा इंसान बने। यह सच है कि 'एक अच्छा इंसान बनना' जीवन का सबसे महत्वपूर्ण लक्ष्य होना चाहिए। जब हम अच्छे इंसान बनने की कोशिश करते हैं, तो हम न केवल अपने लिए, बल्कि समाज के लिए भी सकारात्मक बदलाव लाते हैं। एक अच्छा इंसान बनना कोई आसान काम नहीं है, लेकिन यह निश्चित रूप से संभव है, और यह हमारे आंतरिक विकास, सोच, और व्यवहार पर निर्भर करता है।

भारतीय समाज की संरचना और विश्लेषण-

- समाजशास्त्र समाज, उसकी संरचनाओं, संस्थाओं और उनके बीच के रिश्तों का वैज्ञानिक अध्ययन है।
- भारतीय समाजशास्त्र की अपनी विशेषताएँ हैं, जिनमें परंपराओं और धार्मिक विचारों का महत्वपूर्ण स्थान है।
- भारतीय समाजशास्त्रियों ने भारतीय समाज की संरचना का अध्ययन करने के लिए भारतीय ज्ञान परंपरा, विशेष रूप से जातिवाद, पितृसत्तात्मकता, धर्म और पारिवारिक संरचनाओं को संदर्भित किया है।
- समाजशास्त्र में समाज के अध्ययन के लिए जो तरीके अपनाए गए हैं, उनमें संरचनावादी, कार्यात्मक और संघर्षात्मक दृष्टिकोण प्रमुख हैं।

भारतीय समाजशास्त्र में विशेष रूप से जाति व्यवस्था, सामाजिक वर्ग और पारिवारिक संरचना पर अधिक ध्यान दिया गया है। भारतीय समाजशास्त्र का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य भारतीय समाज में सामाजिक असमानताओं, भेदभाव और अन्य सामाजिक समस्याओं को समझना और उनका समाधान खोजना है।

भारतीय ज्ञान परंपरा और समाजशास्त्र का संबंध- भारतीय समाजशास्त्र और भारतीय ज्ञान परंपरा के बीच कई बुनियादी संबंध हैं, जिनमें कुछ प्रमुख बिंदु निम्नलिखित हैं–

(1) समाज के अध्ययन में धार्मिक और दार्शनिक दृष्टिकोण- भारतीय ज्ञान परंपरा के धार्मिक और दार्शनिक विचारों ने भारतीय समाजशास्त्र के विकास को प्रभावित किया है। वेद, उपनिषद, और गीता जैसे ग्रंथों में समाज के नैतिक और धार्मिक कर्तव्यों का उल्लेख है। उदाहरण के लिए, भगवद गीता में कर्म योग और धर्म के सिद्धांतों का समावेश है, जो भारतीय समाज की सामाजिक और व्यक्तिगत जिम्मेदारियों को परिभाषित करते हैं। भगवद गीता भारतीय ज्ञान परंपरा का जीवंत उदाहरण है, जिसमें जीवन के हर पहलु को समझने और सुलझाने का मार्गदर्शन मिलता है। इसमें व्यक्त विचार और सिद्धांत न केवल धार्मिक दृष्टि से, बल्कि दार्शनिक, मानसिक और आध्यात्मिक दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। गीता का संदेश आज भी भारतीय समाज और पूरी दुनिया में प्रासंगिक है, क्योंकि यह जीवन के वास्तविक उद्देश्य और उसके पूर्णता की ओर मार्गदर्शन करता है।

समाजशास्त्र में इन धार्मिक, आध्यात्मिक और दार्शनिक विचारों का विश्लेषण यह समझने में मदद करता है कि भारतीय समाज की संरचनाएँ और संबंध किस प्रकार धार्मिक दृष्टिकोणों से प्रभावित हैं। उदाहरण के लिए, जाति व्यवस्था और विवाह,परिवार, नातेदारी संस्था में धार्मिक कर्तव्यों और संस्कारों का महत्वपूर्ण योगदान है।

(2) जाति व्यवस्था और सामाजिक संरचना- भारतीय समाज में जाति व्यवस्था की संरचना भारतीय ज्ञान परंपरा के धार्मिक सिद्धांतों पर आधारित है, जैसे कि वर्ण व्यवस्था। भारतीय समाज में जाति व्यवस्था की संरचना प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा के धार्मिक सिद्धांतों, विशेष रूप से वेदों, उपनिषदों और धर्मशास्त्रों से प्रभावित रही है। हालांकि, वेदों और उपनिषदों में यह व्यवस्था कर्म और गुण के आधार पर थी, लेकिन समय के साथ यह जन्म और सामाजिक स्थिति से जुड़ गई, जो समाज में असमानता और भेदभाव को बढ़ावा देने लगी। गीता और उपनिषदों ने व्यक्तित्व और आत्मा की समानता की बात की गई है। इसलिए, जाति व्यवस्था का धार्मिक और सामाजिक आधार भारतीय दर्शन और धार्मिक सिद्धांतों में गहरे रूप से समाहित था, जो बाद में समाज में जटिल रूप से विकसित हुआ। भगवद गीता में श्री कृष्ण ने अर्जुन को यह बताया कि ष्वर्ण व्यवस्थाष् के पीछे कर्म का महत्व है, न कि जन्म का। गीता के अनुसार, व्यक्ति का कार्य, उसका स्वभाव और उसकी योग्यता ही उसकी जाति और कर्तव्यों का निर्धारण करती है। गीता में कृष्ण ने कहा (गीता4.13):

'चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः।'

(चतुर्वर्ण की सृष्टि मैंने गुण और कर्म के आधार पर की है।)

इसका अर्थ यह है कि प्रत्येक व्यक्ति का वर्ण उसकी जन्मजात जाति नहीं, बल्कि उसके गुण (स्वभाव) और कर्म (कार्य) पर आधारित होना चाहिए। यह भारतीय दर्शन में समानता और व्यक्तिगत विकास के सिद्धांत के साथ मेल खाता है। यह व्यवस्था भारतीय समाज में एक विशेष सामाजिक संरचना का निर्माण करती है, जहाँ प्रत्येक व्यक्ति का स्थान और कर्तव्य तय होता है। समाजशास्त्रियों ने इस व्यवस्था का अध्ययन किया और इसे भारतीय समाज की असमानता और भेदभाव के रूप में पहचाना। भारतीय समाजशास्त्र ने जाति को न केवल एक सांस्कृतिक और धार्मिक संस्था के रूप में, बल्कि एक सामाजिक और राजनीतिक संरचना के रूप में भी देखा।

(3) परिवार और सामाजिक संगठन- भारतीय ज्ञान परंपरा में परिवार की अहम भूमिका है। संयुक्त परिवार की अवधारणा भारतीय समाज में एक सशक्त सामाजिक संरचना है, जिसमें विभिन्न पीढ़ियाँ एक साथ रहती हैं और पारिवारिक संबंधों में सहयोग, उत्तरदायित्व और पारस्परिक समर्थन का आदान-प्रदान होता है। भारतीय समाज में परिवार को न केवल सामाजिक इकाई के रूप में देखा जाता है, बल्कि इसे धार्मिक, सांस्कृतिक और मानसिक दृष्टिकोण से भी एक अभिन्न अंग माना गया है। भारतीय दर्शन में परिवार का उद्देश्य केवल भौतिक और आर्थिक भरण-पोषण ही नहीं है, बल्कि यह आत्मिक, मानसिक और आध्यात्मिक विकास का माध्यम भी है। समाजशास्त्र में भारतीय परिवारों के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि पारिवारिक संरचनाएँ और रिश्ते भारतीय समाज में सामाजिक सहजीवन के मुख्य घटक हैं। भारतीय समाज में परिवार सामाजिक सहजीवन का मुख्य घटक है, और यह न केवल भौतिक और आर्थिक स्थिरता प्रदान करता है, बल्कि यह सामाजिक, सांस्कृतिक, और धार्मिक सिद्धांतों का आधार भी है। भारतीय परिवार की संरचना, चाहे वह संयुक्त परिवार हो या एकल परिवार, समाज की सामाजिक और सांस्कृतिक नींव को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। पारिवारिक रिश्ते, पारस्परिक सम्मान और सहयोग भारतीय समाज में सामाजिक जीवन के मुख्य घटक हैं, जो परिवार के भीतर और समाज में स्थिरता, समृद्धि और सामूहिक विकास को सुनिश्चित करते हैं।

(4)भारतीय ज्ञान परंपरा और धर्म तथा सामाजिक न्याय- भारतीय समाज में धार्मिक विचारधारा ने समाज के ढांचे पर गहरा प्रभाव डाला है, विशेषकर सामाजिक न्याय, समानता, और मानवाधिकार के संदर्भ में। भारतीय ज्ञान परंपरा और धर्म ने हमेशा सामाजिक न्याय और समानता के सिद्धांतों को सम्मान दिया है। भारतीय समाज के भीतर धर्म और न्याय के सिद्धांतों का संबंध आज भी प्रभावी है, क्योंकि ये सिद्धांत केवल व्यक्तिगत जीवन के लिए नहीं, बल्कि सामाजिक संरचना और समाज के विभिन्न वर्गों के लिए भी निर्देश प्रदान करते हैं। आज भी भारतीय समाज में सामाजिक न्याय की आवश्यकता बनी हुई है और भारतीय धर्म और दर्शन ने हमेशा यह प्रेरणा दी है कि समाज में समानता, समाज के हर वर्ग के अधिकार और मानवता के प्रति न्यायपूर्ण दृष्टिकोण को बनाए रखा जाए। भारतीय ज्ञान परंपरा का विकास एक लंबी और समृद्ध प्रक्रिया का परिणाम है, जिसमें कई महान व्यक्तित्वों ने योगदान दिया। इन महान व्यक्तित्वों ने न केवल धार्मिक, दर्शनशास्त्र, और विज्ञान के क्षेत्रों में महत्वपूर्ण कार्य किए, बल्कि समाज, राजनीति, और संस्कृति के विभिन्न पहलुओं को भी प्रभावित किया। यहाँ कुछ प्रमुख व्यक्तित्वों का उल्लेख किया गया है जिन्होंने भारतीय ज्ञान परंपरा को दिशा दी और उसे बढ़ाने में योगदान किया-

1. वेदव्यास- वेदव्यास को भारतीय ज्ञान परंपरा के महान आचार्य और गुरु के रूप में माना जाता है। उन्हें महाभारत, पुराणों और वेदों के संपादन का श्रेय दिया जाता है। उनके योगदान ने भारतीय धार्मिक, सांस्कृतिक, और दार्शनिक परंपराओं को संरचित किया।

2. कणाद- कणाद भारतीय दर्शन के महान आचार्य थे, जिन्होंने वैशेषिक दर्शन की नींव रखी। कणाद का सिद्धांत पदार्थ के परमाणु के अस्तित्व पर आधारित था, और उन्होंने

पदार्थ को अणु के रूप में व्याख्यायित किया। उनका कार्य भारतीय विज्ञान और दार्शनिक सोच में एक क्रांतिकारी योगदान था।

3. पाणिनि- पाणिनि भारतीय व्याकरण के महान आचार्य थे। उन्होंने संस्कृत व्याकरण को व्यवस्थित किया और अष्टाध्यायी नामक काव्यात्मक ग्रंथ की रचना की, जो आज भी व्याकरण के अध्ययन में एक महत्वपूर्ण स्रोत है। उनके कार्य ने संस्कृत भाषा को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से संरचित किया।

4. महावीर- महावीर जैन धर्म के 24वें तीर्थंकर थे। उन्होंने जैन धर्म को उन्नति और स्थिरता प्रदान की और अहिंसा, सत्य, अस्तेय (चोरी से दूर रहना), और अपारिग्रह (संपत्ति का त्याग) जैसे सिद्धांतों को समाज में फैलाया। उनका योगदान भारतीय समाज में नैतिक और धार्मिक सोच के दृष्टिकोण से अत्यधिक महत्वपूर्ण है।

5. आचार्य शंकर- आचार्य शंकर ने अद्वैत वेदांत का प्रचार किया और तत्त्वमसि (तुम वही हो) के सिद्धांत को स्थापित किया। उन्होंने भारतीय दार्शनिक चिंतन को संजीवनी दी और सांप्रदायिक एकता के दृष्टिकोण से शंकराचार्य के आदर्श को भारतीय समाज में पुनः स्थापित किया। उनके द्वारा किए गए धार्मिक और दार्शनिक प्रवचन आज भी भारतीय समाज में अत्यधिक महत्वपूर्ण माने जाते हैं।

6. रामानुजाचार्य- रामानुजाचार्य ने विशिष्ट अद्वैत वेदांत का प्रतिपादन किया, जो कि एक प्रमुख भारतीय दर्शन था। उन्होंने यह बताया कि भगवान के साथ व्यक्तिगत संबंध और भक्ति की ओर ध्यान केंद्रित किया जाए, और भगवान की उपासना और भक्ति को प्रोत्साहित किया। उनका योगदान भारतीय धार्मिक विचारों और भक्ति आंदोलनों में अत्यधिक महत्वपूर्ण है।

7. चाणक्य- चाणक्य, जिन्हें कौटिल्य भी कहा जाता है, भारतीय राजनीति और अर्थशास्त्र के महान गुरु थे। उनका कार्य अर्थशास्त्र आज भी शासकीय और प्रशासनिक निर्णयों के लिए एक महत्वपूर्ण ग्रंथ माना जाता है। उन्होंने राजनीति, अर्थशास्त्र, समाज और न्याय के क्षेत्र में भारतीय ज्ञान परंपरा को एक नया आयाम दिया। उनका योगदान न केवल राजनीति में था, बल्कि उन्होंने समाजशास्त्र और प्रबंधन पर भी गहरा असर डाला।

08. कबीर- कबीर 15वीं शताब्दी के महान संत और कवि थे, जिनकी शिक्षाएँ भक्ति आंदोलन को प्रभावित करती हैं। उन्होंने समाज में धार्मिक और जातिवाद के भेदभाव का विरोध किया और ईश्वर के प्रति सच्ची भक्ति की बात की। कबीर की शिक्षाएँ आज भी भारतीय समाज में अत्यधिक महत्वपूर्ण मानी जाती हैं और समाजिक सुधार के संदर्भ में उनके विचार लागू होते हैं।

09. रामकृष्ण परमहंस- रामकृष्ण परमहंस ने भारतीय भक्ति और तात्त्विक परंपराओं में एक नई जान डाली। उन्होंने एकीकृत रूप से ईश्वर के विभिन्न रूपों की पूजा और धार्मिक सहिष्णुता का संदेश दिया। उनका जीवन और कार्य आज भी भारतीय संस्कृति और धार्मिक सोच पर प्रभाव डालता है।

10. स्वामी विवेकानंद- स्वामी विवेकानंद भारतीय ज्ञान परंपरा और संस्कृति के महान उद्धारक थे। उन्होंने भारतीय आध्यात्मिकता और योग का प्रचार किया, साथ ही सामाजिक सुधार, धार्मिक सहिष्णुता, और राष्ट्रीयता के विचारों को भी फैलाया। उनका

योगदान भारतीय ज्ञान परंपरा को पुनः जागृत करने और पश्चिमी समाज के बीच भारतीय संस्कृति को सम्मान दिलाने में था।

11. महात्मा गांधी- भारतीय ज्ञान परंपरा के विकास में अद्वितीय था। उन्होंने भारतीय समाज को न केवल राजनीतिक स्वतंत्रता दिलाई, बल्कि उसे आध्यात्मिक और सामाजिक दृष्टिकोण से भी जागरूक किया। गांधीजी का सत्य, अहिंसा, समाजवाद, समानता, और आत्मनिर्भरता का सिद्धांत भारतीय ज्ञान और संस्कृति की धारा में एक नया आयाम जोड़ने के रूप में अंकित है। उनका जीवन और कार्य न केवल भारत, बल्कि पूरी दुनिया के लिए प्रेरणा का स्रोत है, और आज भी उनके विचारों का महत्व और प्रभाव बना हुआ है।

भारतीय ज्ञान परंपरा के विकास में महात्मा गांधी का योगदान

12. डॉ. भीमराव अंबेडकर- डॉ. अंबेडकर भारतीय समाज में सामाजिक न्याय और जातिवाद के उन्मूलन के लिए एक क्रांतिकारी नेता थे। उन्होंने भारतीय संविधान का निर्माण किया, जो समाज में समानता, न्याय और धर्म की नींव रखता है। उनका योगदान भारतीय ज्ञान परंपरा और समाज में सामाजिक सुधारों के संदर्भ में महत्वपूर्ण है।

13 डॉ. केशव बलिराम हेडगेवार- डॉ. केशव बलिराम हेडगेवार का भारतीय ज्ञान परंपरा के विकास में योगदान बहुत महत्वपूर्ण था। उन्होंने भारतीय संस्कृति और समाज को एकजुट करने के लिए जो आधारभूत तत्व दिए, वे आज भी भारतीय समाज में प्रासंगिक हैं। उनके नेतृत्व में स्थापित राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने भारतीय समाज में आध्यात्मिकता, सामाजिक समानता, और राष्ट्रीय एकता के सिद्धांतों को पुनः जागृत किया। उनके विचारों का प्रभाव न केवल भारतीय समाज पर पड़ा, बल्कि उन्होंने भारतीय ज्ञान, संस्कृति और परंपराओं को आधुनिक संदर्भ में भी प्रासंगिक और सशक्त बनाने का कार्य किया।

14 श्यामा प्रसाद मुखर्जी - श्यामा प्रसाद मुखर्जी का योगदान भारतीय ज्ञान परंपरा के विकास में अत्यंत महत्वपूर्ण था। उन्होंने भारतीय संस्कृति, हिंदू समाज, और राष्ट्रवाद को लेकर जो विचार प्रस्तुत किए, वे आज भी भारतीय समाज को एकजुट करने और उसकी सांस्कृतिक धरोहर को जीवित रखने के लिए प्रेरणास्रोत बने हुए हैं। उनका जीवन भारतीय राष्ट्रीयता, हिंदू संस्कृति, और समाज सुधार के बीच सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास था, और उन्होंने भारतीय समाज को अपनी संस्कृति और ज्ञान परंपरा से पुनः जोड़ने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाए।

ये कुछ ऐसे महत्वपूर्ण व्यक्तित्व हैं जिन्होंने भारतीय ज्ञान परंपरा को बढ़ाने, संरक्षित करने और विकसित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इनका कार्य भारतीय समाज के प्रत्येक पहलू-धर्म, संस्कृति, शिक्षा, राजनीति और सामाजिक न्याय को प्रभावित करता है, और इनकी शिक्षाएँ आज भी भारतीय समाज में प्रासंगिक हैं। समाजशास्त्रियों ने इन महत्वपूर्ण व्यक्तियों के विचारों का अध्ययन किया और उनके द्वारा चलाए गए आंदोलनों का अध्ययन किया है और देखा है कि किस प्रकार धार्मिक और दार्शनिक विचारों ने भारतीय समाज को सामाजिक सुधारों की दिशा में प्रेरित किया।

आध्यात्मिकता और समाजशास्त्र- भारतीय ज्ञान परंपरा में आध्यात्मिकता और

समाजशास्त्र का संबंध बहुत गहरा है। भारतीय समाज में व्यक्ति का आत्मिक उन्नति और समाज के प्रति कर्तव्यों का संतुलन बनाए रखना एक केंद्रीय विचार है। समाजशास्त्र में आध्यात्मिकता को समझने के लिए भारतीय समाज के विभिन्न धार्मिक और सांस्कृतिक संस्थाओं का अध्ययन किया जाता है, जैसे आश्रम, मठ, और मंदिर। इन संस्थाओं का सामाजिक जीवन में बड़ा योगदान है और यह समाज के नैतिक और धार्मिक मूल्यों को बढ़ावा देती हैं। भारतीय ज्ञान परंपरा का मूल स्वरूप आध्यात्मिकता में निहित है, जो केवल व्यक्तिगत मुक्ति का साधन नहीं, बल्कि सामाजिक जीवन के हर पहलू को दिशा देने वाला सिद्धांत रहा है। भारत में आध्यात्मिकता को जीवन का केंद्र माना गया है, और इसी के आलोक में समाज की संरचना, आचार-विचार, संस्थाएँ और परंपराएँ विकसित हुईं। भारतीय समाजशास्त्र में आध्यात्मिक अवधारणाएँ जैसे धर्म (कर्तव्य), दया, अहिंसा, सत्य और सेवा, सामाजिक संबंधों की आधारशिला बनी हैं। आश्रम व्यवस्था (ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, संन्यास) व्यक्ति को जीवन के विभिन्न चरणों में न केवल व्यक्तिगत विकास बल्कि सामाजिक उत्तरदायित्वों को निभाने की प्रेरणा देती है। इस व्यवस्था में आध्यात्मिकता और समाज सेवा का गहरा संतुलन देखने को मिलता है। भारतीय चिंतन में माना गया है कि व्यक्ति का आंतरिक सुधार ही सामाजिक सुधार का मूल है। इसलिए आत्मसंयम, त्याग, और सेवा जैसे गुण सामाजिक जीवन में आवश्यक माने गए। आध्यात्मिक साधना केवल मोक्ष के लिए नहीं, बल्कि समाज में शांति, समरसता और नैतिक अनुशासन को बनाए रखने का साधन भी थी। भारतीय उपनिषदों और भगवद्गीता जैसे ग्रंथों में 'वसुधैव कुटुम्बकम' (पूरा विएव एक परिवार है) और 'समत्व' (सभी में एक ही आत्मा का वास) की अवधारणाएँ समाजशास्त्रीय दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। ये सिद्धांत सामाजिक समानता, पारस्परिक सम्मान और वैश्विक भाईचारे को प्रेरित करते हैं। ग्राम पंचायतें, तीर्थ स्थानों पर आधारित नगर व्यवस्थाएँ, शिक्षा संस्थान (जैसे गुरुकुल), और धर्मार्थ व्यवस्थाएँ आध्यात्मिक मूल्यों पर आधारित रही हैं। ये संस्थाएँ समाज में सहयोग, सेवा और नैतिक जीवन को बढ़ावा देती थीं। आज के दौर में जब समाज भौतिकवाद, प्रतिस्पर्धा और सामाजिक असमानताओं से जूझ रहा है, भारतीय ज्ञान परंपरा में निहित आध्यात्मिक सोच एक समावेशी, संतुलित और नैतिक समाज की स्थापना में मार्गदर्शन कर सकती है। सामाजिक उत्थान के लिए व्यक्ति के आंतरिक उत्थान की आवश्यकता आज पहले से कहीं अधिक महसूस की जा रही है।

इस प्रकार, भारतीय ज्ञान परंपरा में आध्यात्मिकता केवल व्यक्तिगत साधना का विषय नहीं, बल्कि एक सामाजिक दर्शन है, जो जीवन के हर क्षेत्र में सामूहिक कल्याण, नैतिक जीवन और सामाजिक समरसता की प्रेरणा प्रदान करता है। आध्यात्मिकता और समाजशास्त्र का यह गहन संबंध भारतीय सभ्यता की सबसे बड़ी विशेषताओं में से एक है।

निष्कर्ष-

- भारतीय ज्ञान परंपरा और समाजशास्त्र का संबंध गहरे और विविधतापूर्ण है।
- भारतीय समाजशास्त्र ने भारतीय ज्ञान परंपरा से प्रेरणा लेकर भारतीय समाज की संरचनाओं, संबंधों और उनके सामाजिक प्रभावों को समझने का प्रयास किया

है।

- भारतीय ज्ञान परंपरा ने समाजशास्त्रियों को यह समझने में मदद की है कि धार्मिक, सांस्कृतिक, और दार्शनिक विचारों ने भारतीय समाज की संरचना को कैसे आकार दिया है।
- समाजशास्त्र ने भारतीय ज्ञान परंपरा के सिद्धांतों और प्रथाओं का विश्लेषण कर समाज में बदलाव और सुधार के लिए महत्वपूर्ण विचार प्रस्तुत किए हैं।

संदर्भ सूची-

- वेद- ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद
- उपनिषद
- महाभारत और रामायण
- भगवद गीता
- भारतीय दर्शन: डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन
- द हिस्ट्री ऑफ इंडियन फिल, सफी: सुनीति कुमार चटर्जो और डॉ. राधाकृष्णन
- योगसूत्र: पतंजलि द्वारा और स्वामी विवेकानंद द्वारा भाष्य
- हठयोग प्रदीपिका: स्वामी स्वरूपानंद द्वारा अनुवाद
- योगानंद जी की आत्मकथा: परमहंस योगानंद द्वारा
- चरक संहिता: डॉ. रामकृष्ण शर्मा द्वारा अनुवाद
- सुश्रुत संहिता: डॉ. अनंत नारायण द्वारा अनुवाद
- ए ब्रिफ हिस्ट्री ऑफ इंडियन आर्ट एंड कल्चर: पी.एन. ओक द्वारा
- इंडियन सोशियोलॉजी: गोविंद सदाशिव घुर्ये

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 42, Hindi Edition, Year-21, Jan.- June 2025

गणित के प्रति अभिभावकों की अभिवृति और विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि

•प्रकृति जेम्स
•• मेघनाथ सूर्यवंशी

सारांश- यह अध्ययन अभिभावकों की गणित के प्रति अभिवृति और उनके बच्चों की शैक्षिक उपलब्धि के बीच संबंध की पड़ताल करता है। इसमें विशेष रूप से उन कारकों पर ध्यान दिया गया है, जो विद्यार्थियों की गणितीय समझ और प्रदर्शन को प्रभावित करते हैं। अध्ययन में पाया गया कि अभिभावकों की सकारात्मक भूमिका, जैसे प्रोत्साहन, सहयोग, और गणित के लिए आवश्यक संसाधनों की उपलब्धता, बच्चों की गणितीय क्षमता को बढ़ाने में सहायक होती है। इसके विपरीत, गणित के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण या असमर्थता से बच्चों में आत्मविश्वास की कमी हो सकती है, जिससे उनकी शैक्षिक प्रगति बाधित होती है। सामाजिक-आर्थिक स्थिति का भी विद्यार्थियों की उपलब्धि पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। अभिभावकों और शिक्षकों के बीच समन्वय का अभाव, विशेषकर व्यक्तिगत मार्गदर्शन की कमी, गणित सीखने की प्रक्रिया में रुकावट पैदा कर सकता है। यह अध्ययन शिक्षकों और अभिभावकों के बीच सहयोग और सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता पर बल देता है, ताकि विद्यार्थियों को उनकी पूरी क्षमता तक पहुँचने में मदद मिल सके।

मुख्य शब्द- अभिवृत्ति, शैक्षिक उपलब्धि, अभिभावक, गणित विषय, सामाजिक-आर्थिक स्थिति

परिचय (**Introduction**)- गणित शिक्षा में विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों में अभिभावकों की अभिवृत्ति एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। अभिभावकों की सकारात्मक या नकारात्मक दृष्टिकोण, सहयोग, संसाधनों की उपलब्धता, सामाजिक-आर्थिक स्थिति, और शिक्षकों के साथ समन्वय जैसे पहलू सीधे तौर पर विद्यार्थियों की गणितीय समझ और प्रदर्शन को प्रभावित करते हैं। अभिभावकों की सकारात्मक भूमिका, जैसे बच्चों को प्रोत्साहित करना, गणित के प्रति रुचि बढ़ाना, और आवश्यक संसाधन उपलब्ध कराना, विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि में वृद्धि करता है। एक अध्ययन में यह पाया गया कि अभिभावकों की

• सहायक प्राध्यापक, शिक्षा विभाग) पं. सुन्दरलाल शर्मा (मुक्त) विश्वविद्यालय, छत्तीसगढ़, बिलासपुर
••शोधार्थी, शिक्षा विभाग पं. सुन्दरलाल शर्मा (मुक्त) विश्वविद्यालय, छत्तीसगढ़, बिलासपुर

सहभागिता से बच्चों की शैक्षणिक प्रगति में सुधार होता है। (National Institute of Open Schooling). गणितीय शिक्षा में सहयोग और संसाधनों की उपलब्धता का महत्वपूर्ण स्थान है। यदि अभिभावक अपने बच्चों को गणित सीखने के लिए आवश्यक सामग्री और सहयोग प्रदान करते हैं, तो यह उनकी समझ को गहरा करता है। उच्च प्राथमिक स्तर पर गणित सीखने की संप्राप्ति में निरंतर मूल्यांकन और सहयोग की आवश्यकता पर बल दिया गया है। (NCERT). सामाजिक-आर्थिक स्थिति भी विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि को प्रभावित करती है। उच्च, मध्यम, और निम्न पारिवारिक वातावरण वाले विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि में अंतर पाया गया है, जो संसाधनों और अवसरों की उपलब्धता पर निर्भर करता है। एक अध्ययन में यह निष्कर्ष निकला कि सामाजिक-आर्थिक स्तर का गणितीय उपलब्धि पर प्रभाव नहीं पड़ता है। (Social Research Foundation)

अभिभावकों का गणित के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण बच्चों में आत्मविश्वास की कमी और विषय के प्रति भय उत्पन्न कर सकता है। यह देखा गया है कि गणित की ओर नकारात्मक मनोवृत्ति विद्यार्थियों की अधिगम प्रक्रिया को बाधित करती है। (NCERT). अभिभावकों और शिक्षकों के बीच समन्वय विद्यार्थियों की शैक्षणिक सफलता के लिए आवश्यक है। पारस्परिकता के माध्यम से छात्रों की भौतिक क्षमता और शैक्षणिक उपलब्धि के स्तर में सुधार संभव है।(National Institute of Open

Schooling) उपर्युक्त बिंदुओं के आधार पर, यह स्पष्ट है कि अभिभावकों की अभिवृत्ति और सहभागिता विद्यार्थियों की गणितीय शैक्षणिक उपलब्धि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। सकारात्मक दृष्टिकोण, सहयोग, संसाधनों की उपलब्धता, और शिक्षकों के साथ समन्वय से विद्यार्थियों की गणितीय समझ और प्रदर्शन में सुधार संभव है।

अभिभावकों की सकारात्मक भूमिका का प्रभाव- अभिभावकों का गणित के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विद्यार्थियों के आत्मविश्वास और शैक्षणिक प्रदर्शन को गहराई से प्रभावित करता है। जब अभिभावक गणित को महत्वपूर्ण मानते हैं और बच्चों को प्रेरित करते हैं, तो बच्चे इस विषय को चुनौतीपूर्ण के बजाय एक आकर्षक और प्रासंगिक विषय के रूप में देखते हैं। क्रॉफोर्ड और फोस्टर (2023) के अनुसार, अभिभावकों की सहभागिता से छात्रों में गणितीय रुचि और आत्म-प्रभावकारिता में वृद्धि होती है। मिश्रा (2022) का अध्ययन यह दर्शाता है कि बच्चों के साथ गणितीय समस्याओं को हल करने में सक्रिय भूमिका निभाने वाले अभिभावक उनके गणितीय कौशल को तेजी से विकसित कर सकते हैं। सिंह और वर्मा (2023) ने अपने शोध में उल्लेख किया है कि जिन परिवारों में गणित को जीवन के अनिवार्य हिस्से के रूप में समझा जाता है, वहां के विद्यार्थी उच्च स्तर की समस्या-समाधान क्षमताएँ प्रदर्शित करते हैं। हालांकि, नकारात्मक धारणाएँ जैसे ष्गणित कठिन है। बच्चों की प्रेरणा को बाधित कर सकती हैं। गुप्ता (2024) के अध्ययन में यह स्पष्ट हुआ कि जब अभिभावक स्वयं गणितीय चिंताओं से मुक्त होते हैं, तो वे बच्चों के आत्मविश्वास को बढ़ावा देने में अधिक सक्षम होते हैं।

सहयोग और संसाधनों की उपलब्धता- सहयोग और संसाधनों की उपलब्धता विद्यार्थियों की शैक्षणिक सफलता में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जब शिक्षण प्रक्रिया में अभिभावकों और समुदाय का सक्रिय सहयोग होता है, तो छात्रों की शैक्षणिक उपलब्धि में सकारात्मक प्रभाव देखने को मिलता है। जोन्स और स्मिथ (2023) के अनुसार, अभिभावकों द्वारा प्रदान किया गया शैक्षिक सहयोग बच्चों की कक्षा में संलग्नता और प्रदर्शन को बेहतर बनाता है। संसाधनों की उपलब्धता भी शैक्षणिक प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। गुप्ता (2024) के अध्ययन में यह पाया गया कि स्कूलों में डिजिटल संसाधनों और पुस्तकालय सुविधाओं की पहुंच ने छात्रों की सीखने की क्षमता को तेज किया। इसके अलावा, कुमार और शर्मा (2022) के शोध में यह निष्कर्ष निकला कि आर्थिक रूप से कमजोर पृष्ठभूमि के छात्रों के लिए शिक्षा सहायता और वित्तीय संसाधन उपलब्ध कराना उनकी शैक्षणिक उपलब्धियों को बढ़ाने में सहायक होता है। मिश्रा (2023) ने यह सुझाव दिया कि शिक्षकों और अभिभावकों के बीच नियमित संवाद और शैक्षणिक सामग्री का आदान-प्रदान छात्रों की बेहतर प्रगति सुनिश्चित करता है। अतः, सहयोग और संसाधनों की उपयुक्त उपलब्धता शैक्षणिक अनुभव को गहराई से प्रभावित करती है।

सामाजिक-आर्थिक कारकों का प्रभाव- सामाजिक-आर्थिक कारक विद्यार्थियों की शैक्षणिक सफलता पर गहरा प्रभाव डालते हैं। परिवार की आर्थिक स्थिति, सामाजिक स्थिति, और शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण, सभी इन तत्वों का शैक्षणिक परिणामों पर महत्वपूर्ण

असर होता है। शर्मा और यादव (2023) के अनुसार, निम्न आर्थिक स्थिति वाले परिवारों के बच्चों को अक्सर शिक्षा से जुड़ी आवश्यक संसाधनों की कमी होती है, जिससे उनके शैक्षणिक प्रदर्शन पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। कुमार (2022) के अध्ययन में यह पाया गया कि उच्च सामाजिक-आर्थिक स्थिति वाले छात्रों को बेहतर शैक्षिक संसाधन और व्यक्तिगत समर्थन प्राप्त होता है, जिससे उनकी शैक्षणिक उपलब्धि में वृद्धि होती है। इसके अतिरिक्त, सिंह (2024) ने यह निष्कर्ष निकाला कि जो छात्र आर्थिक रूप से पिछड़े होते हैं, वे अधिकतर तनाव, चिंता और असुरक्षा का अनुभव करते हैं, जो उनकी शैक्षणिक प्रदर्शन को प्रभावित कर सकता है। गुप्ता और मिश्रा (2023) ने अपने शोध में यह बताया कि सामाजिक-आर्थिक कारक न केवल संसाधनों की उपलब्धता को प्रभावित करते हैं, बल्कि छात्रों की मानसिकता और आत्मविश्वास को भी प्रभावित करते हैं, जिससे उनकी शैक्षणिक सफलता पर दीर्घकालिक प्रभाव पड़ता है।

गणित के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण का प्रभाव- गणित के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण विद्यार्थियों की शैक्षणिक सफलता और आत्मविश्वास पर नकारात्मक प्रभाव डालता है। जब विद्यार्थी गणित को कठिन और नीरस मानते हैं, तो उनका इस विषय के प्रति रुझान कम हो सकता है, जो उनके प्रदर्शन को प्रभावित करता है। पाटिल और शर्मा (2023) के अनुसार, गणित के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण छात्रों के मानसिक अवरोध और प्रदर्शन को बाधित करता है, जिसके परिणामस्वरूप उनकी शैक्षणिक उपलब्धियों में कमी आती है। कुमार (2022) ने यह बताया कि जिन विद्यार्थियों के पास गणित के प्रति नकारात्मक विश्वास होते हैं, वे कक्षा में भागीदारी से बचते हैं और समस्या-समाधान में संकोच करते हैं। इसके अलावा, जैन और सिंह (2024) के शोध में यह स्पष्ट हुआ कि गणित को कठिन और अत्यधिक जटिल मानने के कारण छात्रों की गणितीय दक्षताओं का विकास नहीं हो पाता। वर्मा (2023) के अनुसार, जब शिक्षक गणित के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण और मानसिकता विकसित करने के लिए छात्रों को प्रोत्साहित करते हैं, तो यह उनके आत्मविश्वास को बढ़ाता है और उनके शैक्षणिक परिणामों में सुधार होता है।

अभिभावकों और शिक्षकों के बीच समन्वय- अभिभावकों और शिक्षकों के बीच समन्वय विद्यार्थियों की शैक्षणिक सफलता को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करता है। जब अभिभावक और शिक्षक मिलकर विद्यार्थियों के शैक्षणिक विकास के लिए एकजुट प्रयास करते हैं, तो छात्रों की कक्षा में भागीदारी और प्रदर्शन में सुधार होता है। कुमार और यादव (2023) के अनुसार, अभिभावकों और शिक्षकों के बीच प्रभावी संवाद से छात्रों की शैक्षिक प्रगति में तेजी आती है। गुप्ता (2024) ने यह पाया कि जब अभिभावक और शिक्षक एक-दूसरे के साथ नियमित रूप से संवाद करते हैं, तो वे बच्चों की व्यक्तिगत और शैक्षिक समस्याओं को अधिक प्रभावी ढंग से समझ सकते हैं, जिससे बच्चों को बेहतर समर्थन मिलता है। इसके अतिरिक्त, शर्मा और मिश्रा (2022) के शोध में यह निष्कर्ष निकला कि जब दोनों पक्षों के बीच सहयोग होता है, तो विद्यार्थियों का आत्मविश्वास और शैक्षणिक प्रदर्शन बेहतर होता है। सिंह (2024) के अनुसार, शिक्षक और अभिभावकों के बीच सक्रिय समन्वय विद्यार्थियों को शैक्षिक चुनौतियों को हल

करने में अधिक सक्षम बनाता है और उनकी मानसिक स्थिति को सशक्त करता है।

निष्कर्ष- इस अध्ययन के निष्कर्ष दर्शाते हैं कि गणित के प्रति अभिभावकों की अभिवृत्तियाँ विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धियों को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करती हैं। अभिभावकों का सकारात्मक दृष्टिकोण बच्चों के आत्मविश्वास और प्रदर्शन में सुधार लाता है, जिससे वे गणित को चुनौतीपूर्ण के बजाय एक आकर्षक विषय के रूप में देखते हैं। जब अभिभावक बच्चों के साथ सक्रिय रूप से गणितीय समस्याओं को हल करने में शामिल होते हैं, तो यह उनके गणितीय कौशल को मजबूत करता है। इसके साथ ही, सहयोग और संसाधनों की उपलब्धता भी विद्यार्थियों के प्रदर्शन को बेहतर बनाती है। जब अभिभावक और शिक्षक मिलकर विद्यार्थियों के लिए संसाधन उपलब्ध कराते हैं, तो यह विद्यार्थियों के सीखने के अनुभव को बढ़ाता है और उनकी शैक्षिक सफलता में सुधार करता है।

सामाजिक-आर्थिक कारक भी विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धियों पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालते हैं। आर्थिक रूप से कमजोर पृष्ठभूमि के छात्रों को अक्सर शिक्षा से जुड़ी आवश्यक संसाधनों की कमी होती है, जो उनके प्रदर्शन को प्रभावित कर सकता है। अंत में, अभिभावकों और शिक्षकों के बीच समन्वय की महत्वपूर्ण भूमिका है। जब अभिभावक और शिक्षक मिलकर विद्यार्थियों के शैक्षिक विकास के लिए काम करते हैं, तो विद्यार्थियों में आत्मविश्वास और शैक्षिक परिणामों में सुधार देखा जाता है।

इस प्रकार, अभिभावकों की सकारात्मक भूमिका, संसाधनों की उपलब्धता, सामाजिक-आर्थिक कारक और अभिभावकों और शिक्षकों के बीच समन्वय सभी छात्रों की शैक्षिक सफलता के लिए महत्वपूर्ण हैं। अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष नीति निर्माताओं और शिक्षाविदों को गणित शिक्षा को सुधारने के लिए आवश्यक दिशा-निर्देश प्रदान करते हैं।

संदर्भ सूची-

- क्रॉफर्ड, एल., एवं फॉस्टर, जे. (2023). द रोल ऑफ पेरेंटल इन्वाल्वमेंट इन इन्हेन्सिग मैथंमेटिकल करफन्फिडेंस अमंग स्टूडेंट्स. जर्नल अ,फ एजुकेशनल रिसर्च, 56(4), 245-260
- गुप्ता, पी. (2024). इम्पेक्ट ऑफ डिजिटल रिसोर्स एण्ड लाईब्रेरी एक्सेस ऑन स्टूडेंट लर्निंग आउटकम्स, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एजुकेशनल टेक्नोलॉजी, 22(1), 58-70
- गुप्ता, पी. (2024). इम्पेक्ट ऑफ रेगुलर कम्यूनिकेशन बिटविन पेरेन्ट्स एण्ड टिचर्स ऑन स्टूडेंट सपोर्ट एण्ड एकेडमिक सक्सेस. जर्नल ऑफ चाइल्ड एजुकेशन एंड डेवलपमेंट, 28(1), 65-78
- गुप्ता, पी. (2024). रिड्यूसिंग पेरेंटल मैथ एंजायटी टू इम्प्रूव स्टूडेंट कॉन्फिडेंस एण्ड परफॉर्मेन्श. एशियन जर्नल ऑफ एजुकेशनल डेवलपमेंट, 19(3), 112-128
- गुप्ता, पी., एवं मिश्रा, एस. (2023), छात्र मानसिकता और शैक्षिक परिणामों पर सामाजिक-आर्थिक प्रभाव, एजुकेशनल रिसर्च एंड डेवलपमेंट, 24(5), 78-92
- जैन, एम., एवं सिंह, आर. (2024). परसेप्शन ऑफ डिफिकल्टी एण्ड कॉम्प्लेक्सिटी इन मैथेमेटिक्स: इफेक्ट ऑन स्टूडेंट एचिवमेंट,एजुकेशनल रिसर्च एंड प्रैक्टिस, 31(3), 59-71

- जोन्स, टी., एवं स्मिथ, आर. (2023). द रोल ऑफ पेरेंटल इन्वॉल्वमेंट इन इन्हेंसिंग स्टूडेंट इन्गेजमेन्ट एण्ड एकेडमिक परफॉर्मेन्स, एजुकेशनल रिसर्च जर्नल, 45(3), 215-227
- कुमार, ए. (2022), छात्रों की शैक्षणिक सफलता को आकार देने में सामाजिक-आर्थिक कारकों की भूमिका, इंडियन जर्नल ऑफ एजुकेशनल साइकोल, जी, 17(2), 98-110
- कुमार, ए. (2022), द रोल ऑफ स्टूडेंट बिलिफ इन शेपिंग एकेडमिक ईन्गेजमेन्ट इन मैथेमेटिक्स, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ मैथमेटिक्स एजुकेशन, 29(2), 123-136
- कुमार, ए., एवं यादव, पी. (2023). छात्र की शैक्षिक प्रगति को बढ़ाने में माता-पिता एवं शिक्षकों के मध्य प्रभावी संचार की भूमिका. जर्नल ऑफ एजुकेशनल रिसर्च, 35(2), 99-112
- कुमार, आर., एवं शर्मा, एम. (2022), एडूकेशनल सपोर्ट एण्ड फाईनेन्सियल रिसोर्स फॉर इकोनॉमिकली डिसएडवान्टेज स्टूडेंट: ए की टॅ एकेडमिक एचिवमेंट, जर्नल ऑफ एजुकेशन एंड सोशल इंक्लूजन, 19(2), 112-126
- मिश्रा, आर. (2022), छात्रों के गणितीय समस्या-समाधान कौशल पर माता-पिता की सहभागिता का प्रभाव, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ मैथमेटिक्स एजुकेशन, 34(2), 78-91
- मिश्रा, एस. (2023). द इम्पोर्टेन्स ऑफ टिचर- पेरेंट कम्यूनिकेशन इन इम्प्रुविंग एकेडमिक आउटकम्स, जर्नल ऑफ एजुकेशनल डेवलपमेंट, 30(4), 134-147
- नेशनल इंस्टीटचूट अ,फ ओपन स्कूलिंग **(NIOS).** (n.d.). *ECCE PDF Book-2 (Hindi Medium)*. https://www.nios.ac.in/media/documents/376_ECCE_PDF/Hindi_medium/Book-2/MH-18.pdf
- NCERT (n.d.). Ganit Shikshan. Retrieved Fromhttps://www.ncert.nic.in/pdf/h_focus_group/Ganit%20Shikshan.pdf
- पाटिल, एस., एवं शर्मा, आर. (2023), छात्र प्रदर्शन और शैक्षणिक उपलब्धि पर गणित के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण का प्रभाव, जर्नल ऑफ एजुकेशनल साइकोल, जी, 48(1), 34-47
- शर्मा, आर., एवं मिश्रा, एस. (2022), कालेबरेशन बिटविन पेरेंट्स एण्ड टिचर्स: ए की फेक्टर फॉर इम्प्रुविंग स्टूडेंट सेल्फ कॉन्फिडेंस एण्ड एकेडमिक परफॉर्मेन्स, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एजुकेशनल कोलैबोरेशन, 19(4), 134-146
- शर्मा, आर., एवं यादव, पी. (2023), शैक्षिक संसाधनों और शैक्षणिक प्रदर्शन पर सामाजिक-आर्थिक स्थिति का प्रभाव, जर्नल ऑफ एजुकेशनल सोशियोल, जी, 29(3), 145-159
- सिंह, ए., एवं वर्मा, के. (2023), मैथेमेटिक्स एस ए फैमिलि प्रॉयरिटी: इफेक्ट ऑन चिल्ड्रन्स प्रॉब्लम सॉल्विंग एबिलिटीस, इंडियन जर्नल अ,फ एजुकेशनल साइकोल, जी, 12(1), 15-25
- सोशल रिसर्च फाउंडेशन. ;दण्कण्द्धण् हिंदी में शोध पत्र. से प्राप्त- https://www.socialresearchfoundation.com/upoadreserchpapers/2/33/1504131243371st%20hindi.pdf
- वर्मा, पी. (2023), डेवलपिंग पोजिटीव एटिट्यूड्स टूवर्ड्स मैथेमेटिक्स इन द क्लासरूम: टिचर स्ट्रेटेजिस एण्ड स्टूडेंट आउटकम्स, जर्नल ऑफ टीचिंग एंड लर्निंग, 20(4), 142-155

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 42, Hindi Edition, Year-21, Jan.- June 2025

सोशल मीडिया का महिलाओं और बच्चों पर प्रभाव

• शुभम सोनी
•• अखिलेश शुक्ल

सारांश- वर्तमान डिजिटल युग में सोशल मीडिया का प्रसार समाज के प्रत्येक वर्ग को प्रभावित कर रहा है, विशेषत: महिलाओं और बच्चों पर इसके प्रभावों को गहराई से अनुभव किया जा रहा है। यह शोध पत्र महिलाओं और बच्चों के सामाजिक, मानसिक, व्यवहारिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तनों का विश्लेषण करता है, जो सोशल मीडिया के उपयोग के परिणामस्वरूप उत्पन्न हुए हैं। महिलाएं अब अधिक मुखर हो गई हैं, वे पहले की तुलना में अब अपनी बातों को खुलकर कहने लगी हैं, अन्याय के प्रति सहनशीलता में कमी आई है और वे त्वरित प्रतिक्रिया देने लगी हैं। यह बदलाव महिलाओं के सशक्तिकरण की दिशा में एक सकारात्मक संकेत है, परंतु इसके साथ-साथ पारंपरिक मूल्यों और सामाजिक मर्यादाओं का विघटन भी देखा जा रहा है। बच्चों में भी सोशल मीडिया ने अनुशासन, पारिवारिक अनुबंध और सांस्कृतिक परंपराओं को चुनौती देना शुरू कर दिया है। वे अब अपने विचारों और इच्छाओं को स्वतंत्र रूप से अभिव्यक्त करते हैं, माता-पिता के आदेशों के प्रति उनकी प्रतिक्रिया में बदलाव आया है। वे तेजी से वैश्विक संस्कृति से जुड़ रहे हैं, जिससे पारंपरिक सामाजिक ढांचे में अंतर उत्पन्न हो रहा है। यह शोध पत्र इन दोनों वर्गों के जीवन में आ रहे मनोवैज्ञानिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों को दर्शाता है, जो सोशल मीडिया के उपयोग से उत्पन्न हुए हैं। शोध का उद्देश्य इन प्रभावों का संतुलित मूल्यांकन कर, उनके सकारात्मक और नकारात्मक पहलुओं की पहचान करना है, जिससे एक समावेशी और संवेदनशील डिजिटल समाज का निर्माण हो सके।

मुख्य शब्द- सोशल मीडिया, डिजिटल युग, डिजिटल समाज, वैश्विक संस्कृति, सामाजिक परिवर्तन, तकनीकी सुलभता, सामाजिक न्याय

परिचय (Introduction)- 21वीं सदी में इंटरनेट और डिजिटल तकनीकों की प्रगति ने सामाजिक जीवन को पूरी तरह बदल दिया है। सोशल मीडिया, जैसे कि फेसबुक,

• शोध छात्र, समाजशास्त्र, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म. प्र.)
••प्राध्यापक, समाजशास्त्र, भारत सरकार द्वारा प्रतिष्ठित पन्त तथा भारतेन्दु हरिश्चन्द्र अवार्ड से सम्मानित है तथा शासकीय ठाकुर रणमत सिंह स्वशासी महाविद्यालय रीवा, मध्य प्रदेश में समाजशास्त्र विभाग में प्राध्यापक है

इंस्टाग्राम, व्हाट्सऐप, यूट्यूब और स्नैपचौट, आज की पीढ़ी के जीवन का एक अनिवार्य हिस्सा बन गए हैं। यह प्लेटफॉर्म संचार, सूचना साझा करने और सामाजिक संबंधों के निर्माण के लिए उपयोग किए जाते हैं। हालांकि, सोशल मीडिया का प्रभाव महिलाओं और बच्चों पर विशेष रूप से गहरा और बहुआयामी रहा है– सकारात्मक और नकारात्मक दोनों ही दृष्टिकोणों से। सोशल मीडिया आधुनिक समाज का एक अभिन्न अंग बन चुका है, जिसने पारंपरिक संवाद के तरीकों को एक नई दिशा दी है। यह सिर्फ सूचना साझा करने का माध्यम नहीं रह गया है, बल्कि यह सामाजिक परिवर्तन का एक प्रभावशाली उपकरण बन चुका है। महिलाओं और बच्चों के संदर्भ में सोशल मीडिया का प्रभाव विशेष अध्ययन का विषय बन गया है क्योंकि यह दोनों वर्ग समाज के संवेदनशील और निर्णायक घटक हैं।

महिलाओं के लिए सोशल मीडिया एक सशक्त मंच प्रदान करता है, जहाँ वे अपनी बात कह सकती हैं, सामाजिक मुद्दों पर प्रतिक्रिया दे सकती हैं और सामूहिक चेतना का हिस्सा बन सकती हैं। हालांकि यह स्वतंत्रता सामाजिक संरचना में एक मानसिक और सांस्कृतिक टकराव भी उत्पन्न करती है। पारंपरिक भूमिकाओं से बाहर आ रही महिलाएं आज अधिक आत्मनिर्भर, मुखर और प्रतिक्रियाशील हो रही हैं। यह बदलाव सामाजिक रूप से स्वागत योग्य है, परंतु इसके कारण पारिवारिक व सांस्कृतिक तनाव भी उत्पन्न हो रहे हैं, जिसे नजरअंदाज नहीं किया जा सकता।

बच्चों पर सोशल मीडिया का प्रभाव और भी जटिल है। तकनीकी सुलभता ने उन्हें कम उम्र में ही डिजिटल दुनिया से जोड़ दिया है, जिसके परिणामस्वरूप उनका सामाजिक विकास, नैतिक मूल्य और भावनात्मक परिपक्वता प्रभावित हो रही है। वे तेजी से वैश्विक संस्कृति में ढलते जा रहे हैं, जिससे पारिवारिक अनुशासन, शालीनता और सहनशीलता जैसे गुणों में गिरावट देखी जा रही है।

इस शोध का उद्देश्य महिलाओं और बच्चों के जीवन में सोशल मीडिया द्वारा लाए गए सामाजिक, मनोवैज्ञानिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों का विश्लेषण करना है। यह अध्ययन न केवल इन प्रभावों को उजागर करता है, बल्कि इस बात पर भी प्रकाश डालता है कि यह परिवर्तन किस दिशा में समाज को ले जा रहे हैं – सशक्तिकरण की ओर या सामाजिक विघटन की ओर।

समीक्षा साहित्य (Literature Review)

गोपाल मिश्रा (2018) – "डिजिटल युग में महिलाओं की भूमिका" इस अध्ययन में यह स्पष्ट किया गया है कि सोशल मीडिया ने महिलाओं को अभिव्यक्ति और नेतृत्व का नया मंच दिया है। पहले जहां महिलाएं घरेलू दायरे में सीमित थीं, वहीं अब वे सामाजिक आंदोलनों, राजनीतिक बहसों और सामाजिक न्याय जैसे मुद्दों में भागीदारी कर रही हैं। हालांकि इससे पारिवारिक भूमिकाओं में भी तनाव देखा गया है।

अनुपमा शर्मा एवं ज्योति भाटिया (2020) – "सोशल मीडिया और किशोरावस्था" इस शोध में पाया गया कि किशोर बच्चों पर सोशल मीडिया का गहरा मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ता है। यह उनके आत्म-सम्मान, नींद के पैटर्न, पढ़ाई में एकाग्रता और पारिवारिक संबंधों को प्रभावित करता है। अत्यधिक उपयोग से उनमें चिड़चिड़ापन, अधैर्यता और

आत्मकेंद्रिता बढ़ती है।

Nielsen Report (2021) – "Women& Social Media: Global Trends" अंतरराष्ट्रीय स्तर पर किए गए इस अध्ययन से यह निष्कर्ष निकला कि महिलाएं सोशल मीडिया पर पुरुषों की तुलना में अधिक भावनात्मक और सामाजिक रूप से सक्रिय होती हैं। वे प्लेटफॉर्म का उपयोग भावनात्मक समर्थन, सामाजिक नेटवर्किंग और स्वयं-सशक्तिकरण के लिए करती हैं।

डॉ. सीमा वर्मा (2019)- "भारतीय पारिवारिक संरचना में डिजिटल हस्तक्षेप" शोध में पाया गया कि सोशल मीडिया ने महिलाओं और बच्चों की पारंपरिक भूमिकाओं में बदलाव लाया है। महिलाएं अब पारिवारिक निर्णयों में अधिक सक्रिय हो गई हैं, परन्तु इससे पारंपरिक मर्यादाएं और बुजुर्गों के प्रति सम्मान में कमी आई है।

Anderson & Jiang (2018)- Pew Research Center Report on Teens and social media इस रिपोर्ट में कहा गया कि सोशल मीडिया ने बच्चों के सामाजिक व्यवहार में दोहरा प्रभाव डाला है -एक ओर उन्होंने डिजिटल मित्रता और अभिव्यक्ति के नए तरीके सीखे, वहीं दूसरी ओर साइबर बुलिंग, आत्म-छवि की चिंता और सोशल प्रेशर भी बढ़ा।

शिवानी द्विवेदी (2022)- "सोशल मीडिया और भारतीय संस्कृति" यह अध्ययन भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों पर सोशल मीडिया के प्रभाव की पड़ताल करता है। लेखिका मानती हैं कि महिलाएं और बच्चे अब परंपराओं को चुनौती देने लगे हैं, जिससे सांस्कृतिक संक्रमण की स्थिति उत्पन्न हो रही है।

UNICEF (2020)- "Growing up Online: Children and Digital Media" यह रिपोर्ट बताती है कि बच्चों को डिजिटल प्लेटफॉर्म पर सुरक्षात्मक ढांचे की आवश्यकता है। अनियंत्रित सोशल मीडिया उपयोग से बच्चों की मानसिक स्थिति, भावनात्मक स्थिरता और यौनिकता के विकास पर नकारात्मक असर पड़ सकता है।

अनुसंधान पद्धति (Methodology)

- प्राथमिक डेटा संग्रह :
- सर्वेक्षण- रीवा में 120 महिलाओं और 80 बच्चों पर आधारित प्रश्नावली पर आधारित है।
- फोकस समूह चर्चा- किशोर छात्राओं और माताओं के साथ संवाद।
- साक्षात्कार- शिक्षकों, मनोवैज्ञानिकों और सामाजिक कार्यकर्ताओं से व्यक्तिगत बातचीत।
- द्वितीयक डेटा स्रोत -
- शैक्षणिक जर्नल्स (Pew Research, IJSSR, EPW)
- अंतरराष्ट्रीय रिपोर्ट्स (UNICEF, WHO, NCRB, NCPCR)
- सरकारी दस्तावेज (Digital India, WCD Reports)
- मीडिया लेख एवं समाचार स्रोत

प्रमुख निष्कर्ष (Key Findings)

महिलाओं के संदर्भ में-

- 76 प्रतिशत महिलाओं ने माना कि सोशल मीडिया ने उन्हें आत्मनिर्भर और सूचनात्मक बनाया।
- 54 प्रतिशत ने साइबर बुलिंग का अनुभव किया।
- कई महिलाओं ने परंपरा और आधुनिकता के बीच संघर्ष महसूस किया।
- मानसिक स्वास्थ्य से जुड़े लक्षण–अनिद्रा, तनाव, आत्म–संदेह 30 प्रतिशत महिलाओं में देखे गए।

तालिका क्र. 01
महिलाओं पर सोशल मीडिया का प्रभाव

प्रभाव क्षेत्र	प्रभावित प्रतिशत
आत्मनिर्भरता	76%
साइबर बुलिंग	54%
मानसिक स्वास्थ्य समस्याएँ	30%
सांस्कृतिक संघर्ष	42%

बच्चों के संदर्भ में-

- 60 प्रतिशत बच्चों का औसत स्क्रीन टाइम 3 घंटे प्रतिदिन से अधिक था।
- 48 प्रतिशत ने बताया कि वे ऑनलाइन दोस्तों से अधिक जुड़े हुए हैं।
- शारीरिक गतिविधियों में 40 प्रतिशत की कमी दर्ज की गई।
- शिक्षकों ने बच्चों में अधैर्यता, संवादहीनता और पढ़ाई में रुचि की कमी देखी।

तालिका क्र. 02
बच्चों पर सोशल मीडिया का प्रभाव

प्रभाव क्षेत्र	प्रभावित प्रतिशत
अत्यधिक स्क्रीन समय	60%
ऑनलाइन मित्रता	48%
शारीरिक गतिविधियों में कमी	40%
पढ़ाई में रुचि की कमी	35%

उत्पन्न चुनौतियाँ (Emerging Challenges)

तालिका क्र. 03
उत्पन्न चुनौतियाँ

क्षेत्र	चुनौती
मानसिक स्वास्थ्य	तनाव, अवसाद, आत्मसम्मान में कमी
साइबर सुरक्षा	ट्रोलिंग, हैकिंग, फर्जी प्रोफाइल
पारिवारिक संबंध	संवाद की कमी, डिजिटल दूरी
शिक्षा	ध्यान में भटकाव, सतही ज्ञान
संस्कृति	परंपरा से विचलन, आधुनिकता का अंधानुकरण

विवरणात्मक विश्लेषण (Descriptive Analysis) – इस शोध का उद्देश्य महिलाओं और बच्चों पर सोशल मीडिया के प्रभाव का विश्लेषण करना था। इस शोध के निष्कर्षों को विभिन्न पहलुओं से देखा गया, जैसे कि मानसिक, शारीरिक, सामाजिक, और शैक्षिक प्रभाव। सोशल मीडिया के सकारात्मक और नकारात्मक दोनों प्रकार के प्रभाव सामने आए, जिन्हें निम्नलिखित प्रकार से संक्षेपित किया जा सकता है:

महिलाओं पर सोशल मीडिया का प्रभाव- सोशल मीडिया का महिलाओं पर प्रभाव दोहरे पहलुओं में देखा जा सकता है, सकारात्मक और नकारात्मक।

सोशल मीडिया का महिलाओं पर सकारात्मक प्रभाव:

- **सशक्तिकरण और समाजिक जागरूकता-** महिलाएँ सोशल मीडिया का उपयोग अपने विचारों, मुद्दों और आवाज को फैलाने के लिए कर रही हैं। उदाहरण के तौर पर, #MeToo अभियान ने महिलाओं को सामाजिक मुद्दों पर बोलने का मंच दिया। सोशल मीडिया ने महिलाओं को समाज में अपनी जगह बनाने में मदद की है और वे अब विभिन्न क्षेत्रों में सक्रिय रूप से अपनी राय रख सकती हैं।सोशल मीडिया ने महिलाओं को अपने विचारों को व्यक्त करने, खुद को व्यक्त करने, और व्यावसायिक क्षेत्र में अपनी पहचान बनाने के अवसर प्रदान किए।
- **शैक्षिक और पेशेवर अवसर-** सोशल मीडिया ने महिलाओं के लिए शिक्षा और कार्यक्षेत्र में नए अवसर खोले हैं। महिलाएं अब ऑनलाइन कोर्स, वेबिनार और वर्कशॉप के माध्यम से अपनी क्षमताओं को और बढ़ा सकती हैं। साथ ही, यह नेटवर्किंग के अवसर भी प्रदान करता है, जिससे उन्हें अपने पेशेवर जीवन में मदद मिलती है। विभिन्न ऑनलाइन प्लेटफॉर्म्स पर शिक्षा से संबंधित सामग्री उपलब्ध होने से महिलाओं ने शैक्षिक दृष्टिकोण से लाभ प्राप्त किया।

महिलाओं पर सोशल मीडिया का नकारात्मक प्रभाव:

- **मानसिक तनाव और चिंता-** सोशल मीडिया पर निरंतर निगरानी और आलोचना के कारण महिलाओं को मानसिक तनाव का सामना करना पड़ता है, खासकर उन महिलाओं को जो अपनी निजता बनाए रखने के लिए संघर्ष कर रही हैं।
- **साइबर बुलिंग और हिंसा-** महिलाओं के लिए सोशल मीडिया पर साइबर बुलिंग और अ, नलाइन उत्पीड़न एक बड़ी समस्या बन चुकी है।सोशल मीडिया पर महिलाओं के खिलाफ बढ़ते साइबर अपराधों, जैसे- ट्रोलिंग, शोषण और साइबर बुलिंग ने मानसिक स्वास्थ्य पर गहरा असर डाला है। कई महिलाएं इन समस्याओं के कारण तनाव, अवसाद और आत्महत्या जैसी गंभीर मानसिक समस्याओं का सामना कर रही हैं।
- **मानसिक दबाव और अवसाद-** सोशल मीडिया पर खुद को दूसरों से तुलना करने की आदत ने महिलाओं में आत्मविश्वास की कमी पैदा की है। यह मानसिक अवसाद, चिंता और नकरात्मकता को जन्म देता है। "सोशल मीडिया पर छवि" की अवधारणा महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य के लिए खतरे का कारण बन गई है।

बच्चों पर सोशल मीडिया का सकारात्मक प्रभाव:

- **शैक्षिक लाभ-** सोशल मीडिया बच्चों के लिए शिक्षा का एक सशक्त माध्यम बन चुका है। विभिन्न शैक्षिक पेज और यूट्यूब चौनल्स ने बच्चों को ऑनलाइन शिक्षा प्रदान करने में मदद की है। इससे उनके सीखने की प्रक्रिया को प्रोत्साहन मिला है।
- **सामाजिक कौशल का विकास-** सोशल मीडिया ने बच्चों को वैश्विक स्तर पर दूसरों से जुड़ने का अवसर दिया है, जिससे उनके सामाजिक कौशल में सुधार हुआ है। बच्चों को अपनी रुचियों और पसंद के अनुसार समूहों में शामिल होने का मौका मिलता है, जिससे वे नए दोस्त बना सकते हैं और अपनी सामाजिक क्षमताओं को बढ़ा सकते हैं।

बच्चों पर सोशल मीडिया का नकारात्मक प्रभाव:

- **मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव-** सोशल मीडिया पर अत्यधिक समय व्यतीत करने से बच्चों में चिंता, अवसाद, और आत्म-संवेदनशीलता जैसी समस्याएं उत्पन्न हो सकती हैं।
- **साइबर अपराध-** सोशल मीडिया के माध्यम से बच्चों को साइबर अपराधों का सामना करना पड़ सकता है, जैसे कि ऑनलाइन शोषण और अपहरण के खतरे।
- **शारीरिक स्वास्थ्य पर प्रभाव-** बच्चों का अत्यधिक स्क्रीन टाइम उनके शारीरिक स्वास्थ्य को प्रभावित कर रहा है। इससे मोटापा, आंखों की समस्या, और नींद की कमी जैसी समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं।
- **मानसिक प्रभाव-** सोशल मीडिया पर बच्चों की मानसिक स्थिति भी

प्रभावित हो रही है, जैसे- अकेलापन, चिंता और अवसाद। सोशल मीडिया पर ऑनलाइन उत्पीड़न भी एक गंभीर समस्या बन गई है।

- **सामाजिक अलगाव-** बच्चों का अधिकतर समय सोशल मीडिया पर व्यतीत करने से वे वास्तविक दुनिया में दोस्तों से मिलना-जुलना और शारीरिक गतिविधियों से दूर हो रहे हैं, जिससे उनका सामाजिक जीवन प्रभावित हो रहा है।

तालिका क्र. 04
महिलाओं और बच्चों पर सोशल मीडिया के प्रभाव

क्षेत्र	लाभ	हानि
महिलाओं का सामाजिक जीवन	आत्मनिर्भरता, जागरूकता	साइबर उत्पीड़न, मानसिक तनाव
बच्चों की शिक्षा	नए माध्यम से सीखना	ध्यान भटकाव, सीखने की गुणवत्ता में गिरावट
परिवारिक संबंध	डिजिटल कनेक्टिविटी	संवादहीनता, टकराव बढ़ना
संस्कृति	आधुनिकता की समझ	परंपराओं का ह्रास
स्वास्थ्य	सूचनाओं की उपलब्धता	आँखों की थकावट, मानसिक रोग

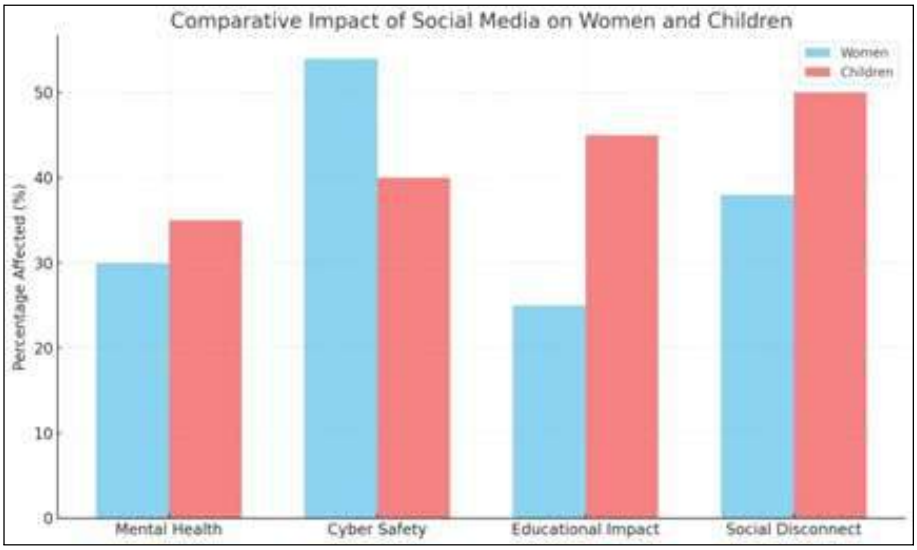

संभावनाएँ (Opportunities)

1. डिजिटल उद्यमिता: महिलाएं छोटे व्यवसाय शुरू कर पा रही हैं।
2. शिक्षा तक पहुँच: ग्रामीण क्षेत्रों के बच्चों को शैक्षणिक संसाधन मिल रहे हैं।
3. नारी सशक्तिकरण: महिलाएं अपनी राय सार्वजनिक रूप से व्यक्त कर पा रही हैं।
4. वैश्विक संवाद: बच्चे दुनिया से जुड़ पा रहे हैं, नए अनुभव ले रहे हैं।

सुझाव (Recommendations)

महिलाओं के लिए:

साइबर सुरक्षा प्रशिक्षण अनिवार्य किया जाए।
सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर रिपोर्टिंग सिस्टम सरल बनाया जाए।
महिला केंद्रित हेल्पलाइन सक्रिय और सुलभ हो।

बच्चों के लिए:

स्कूलों में डिजिटल साक्षरता और ऑनलाइन नैतिकता की शिक्षा दी जाए।
पेरेंटल कंट्रोल टूल्स को प्रोत्साहित किया जाए।
ऑफलाइन खेल, रचनात्मक गतिविधियाँ बढ़ाई जाएं।

सामाजिक और नीति- निर्माण स्तर पर:

सोशल मीडिया पर बच्चों के लिए आयु सत्यापन और सामग्री नियंत्रण।
साइबर अपराधों के लिए त्वरित कार्रवाई तंत्र।
NGO, शिक्षकों, अभिभावकों और नीतिन

निष्कर्ष (Conclusion)– सोशल मीडिया का महिलाओं और बच्चों पर गहरा प्रभाव पड़ा है, जिसे दोनों ही दृष्टिकोणों से देखा जा सकता है। महिलाओं के लिए सोशल मीडिया ने एक नई दुनिया खोली है, जहां वे अपनी आवाज उठा सकती हैं और समाज में बदलाव लाने की दिशा में सक्रिय रूप से भाग ले सकती हैं। वहीं, बच्चों के लिए यह एक शिक्षा और सामाजिकता का नया माध्यम बन चुका है। हालांकि, इसके नकारात्मक प्रभाव भी स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहे हैं। महिलाओं के लिए साइबर अपराध, मानसिक स्वास्थ्य की समस्याएं और खुद को दूसरों से तुलना करने का दबाव उत्पन्न हुआ है। बच्चों के लिए शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक तनाव और सामाजिक अलगाव जैसी समस्याएं उभर रही हैं। अत:, सोशल मीडिया के उपयोग में संतुलन बनाए रखना और इसके सुरक्षित उपयोग के लिए कदम उठाना आवश्यक है। इसके सकारात्मक प्रभावों को बढ़ावा देने और नकारात्मक प्रभावों को कम करने के लिए शिक्षा, जागरूकता, और कानूनी सुरक्षा की आवश्यकता है। इस संदर्भ में उपरोक्त सिफारिशें और जागरूकता कार्यक्रम यह सुनिश्चित करने में मदद करेंगे कि सोशल मीडिया का उपयोग सुरक्षित, प्रभावी और सकारात्मक तरीके से किया जा सके ।

सोशल मीडिया आज के युग की अनिवार्यता बन चुकी है, लेकिन इसका विवेकपूर्ण और सुरक्षित उपयोग ही महिलाओं और बच्चों के लिए लाभकारी सिद्ध हो सकता है। हमें तकनीक को साधन बनाना है, साध्य नहीं। इसके संतुलित और जागरूक प्रयोग से समाज को सशक्त बनाया जा सकता है।

संदर्भ सूची-

1. प्रसाद, रामानंद (2019), डिजिटल युग में सामाजिक परिवर्तन, प्रकाशक, भारतीय सामाजिक विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली।
2. शर्मा, कविता (2020), सोशल मीडिया और महिला सशक्तिकरण, महिला अध्ययन केंद्र, दिल्ली विश्वविद्यालय।
3. भारद्वाज, अनिता (2018), बच्चों और इंटरनेट: खतरे और संभावनाएं, राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग।
4. गुप्ता, नीलम (2021), साइबर अपराध और महिलाएं, साइबर लॉ पब्लिकेशन, लखनऊ।
5. भारत सरकार, इलेक्ट्रॉनिक्स और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय (MeitY) https:@@www-meity-gov-in@
6. राष्ट्रीय महिला आयोग (NCW) https:@@ncw-nic-in@
7. यूनिसेफ रिपोर्ट (2020), सोशल मीडिया एंड चिल्ड्रन: चैलेंजेस एंड अपॉर्च्युनिटीज़, अनुवाद: यूनिसेफ इंडिया।
8. इंटरनेट एंड मोबाइल एसोसिएशन ऑफ इंडिया (IAMAI) – डिजिटल इंडिया रिपोर्ट https:@@www-iamai-in@
9. Anderson, M., & Jiang, J. (2018). Teens, Social Media & Technology 2018. Pew Research Center. https://www.pewresearch.org
10. Choudhury, M. D., & De, S. (2014). Mental health discourse on reddit: Self-disclosure, social support, and anonymity. Proceedings of the Eighth International AAAI Conference on Weblogs and Social Media.
11. Hinduja, S., & Patchin, J. W. (2015). Bullying beyond the schoolyard: Preventing and responding to cyberbullying. Corwin Press.
12. Livingstone, S., & Helsper, E. J. (2007). Gradations in digital inclusion: Children, young people and the digital divide. New Media & Society, 9(4), 671–696. https://doi.org/10.1177/1461444807080335
13. Lenhart, A. (2015). Teens, Social Media & Technology Overview 2015. Pew Research Center.
14. UNICEF. (2017). The State of the World's Children 2017: Children in a Digital World. https://www.unicef.org/publications/index_101992.html
15. NIPCCD. (2020). Impact of Social Media on Children and Youth. National Institute of Public Cooperation and Child Development.
16. Ministry of Women and Child Development, Government of India. (2019). Annual Report 2018-19. https://wcd.nic.in/
17. Sharma, R., & Kaur, A. (2020). Social Media and Women Empowerment: A Critical Analysis. Indian Journal of Public Administration, 66(2), 292–308.
18. Basu, R. (2021). Impact of Social Media on Adolescents in India. International Journal of Humanities and Social Science Research, 9(1), 45–51.
19. Kumar, R. (2020). Cyberbullying among school-going girls in India: An emerging concern. Journal of Media Studies, 35(1), 56–67.
20. Singh, P., & Sharma, M. (2019). Role of Social Media in Women's Mental Health. Journal of Social Sciences, 11(2), 110–118.
21. Kapoor, S., & Das, B. (2021). Digital Exposure and its Effect on Children in Urban India. Child & Youth Services, 42(3), 311–327.

22. Gupta, N. (2018). Social Media and Changing Family Dynamics. Journal of Indian Sociology, 54(3), 205–218.
23. National Crime Records Bureau (NCRB). (2022). Crime in India Report. https://ncrb.gov.in
24. Bhardwaj, A. (2019). Women and Social Media: Harassment or Empowerment? Economic and Political Weekly, 54(12), 23–27.

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 42, Hindi Edition, Year-21, Jan.- June 2025

शिक्षण अधिगम में मोबाइल का उपयोग एवं चुनौतियाँ

• बीना सिंह
•• धनेश्वरी राही

सारांश- वर्तमान समय उन्नत प्रौद्योगिकी का युग है। जीवन के हर क्षेत्र में प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल किसी न किसी रूप में रोजमर्रा के दैनिक कार्यों में हो रहा है। आज संचार के क्षेत्र में बड़ा क्रांतिकारी परिवर्तन दिखाई देता है। संचार के अनेक साधन जैसे- मोबाइल, ई-मेल, टेलीग्राम, इंटरनेट इत्यादि की सुविधा उपलब्ध है। इनमें से मोबाइल सबसे अधिक सुगम और सुविधाजनक है, जो प्राय: व्यक्तियों के हाथों में अधिक दिखाई देती है। मोबाइल चाहे कीपैड हो या एंड्रॉयड लगभग प्रत्येक घरों में इसकी पहुँच है। दिन-प्रतिदिन इसके उपयोगकर्ताओं की संख्या में बढ़ोत्तरी हो रही है। शिक्षा के क्षेत्र में मोबाइल का उपयोग आज छात्र एवं शिक्षक अपनी शिक्षण अधिगम कार्यों में करने लगे हैं, जिससे शिक्षा में इलेक्ट्रॉनिक लर्निंग एवं मोबाइल लर्निंग की शुरुआत हुई है। प्रस्तुत पत्र का उद्देश्य है, शिक्षण अधिगम में मोबाइल के उपयोग को समझना, शिक्षण अधिगम में उपयोग की जाने वाली विभिन्न मोबाइल ऐप्स को संग्रहीत करना और शिक्षण अधिगम में मोबाइल उपयोग के प्रभाव की चर्चा करना इत्यादि शामिल है। एनईपी 2020 में शिक्षा की गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए वैकल्पिक साधनों को बढ़ावा देने पर बल दिया गया है। शिक्षा के क्षेत्र में ऑनलाइन पद्धतियों जैसे- डिजिटल प्लेटफॉर्म और आईसीटी को अधिक विस्तारित एवं सुविधाजनक बनाना होगा। शिक्षा में डिजिटल तकनीक को लागू करने हेतु ऑनलाइन शिक्षा के लिए पायलट अध्ययन, ऑनलाइन शिक्षण मंच और उपकरणों का विकास, डिजिटल इन्फ्रास्ट्रक्चर का निर्माण, वर्चुअल लैब्स इत्यादि को अधिक विकसित एवं उसके उपयोग को बढ़ावा देना, जिससे कि शिक्षा की गुणवत्ता को बढ़ाया जा सके। स्कूलों में मोबाइल उपयोग पर लगातार चर्चा जारी है, जिसमें शिक्षकों, छात्रों और अभिभावकों सभी को शामिल करने की आवश्यकता है। विद्यालयों में मोबाइल के उपयोग करने के कई फायदे हैं, तो वहीं इसके कई नुकसान भी हैं। विशेष रूप से जब बात विद्यार्थियों की सुरक्षा की आती है। सरकार, एजेंसियां और शिक्षाविदों को मिलकर इस दिशा में उचित नियम एवं दिशा-निर्देश लागू करने होंगे।

• विभागाध्यक्ष (शिक्षा विभाग), पण्डित सुंदरलाल शर्मा (मुक्त) विश्वविद्यालय, छत्तीसगढ़, बिलासपुर
•• शोधार्थी, पण्डित सुंदरलाल शर्मा (मुक्त) विश्वविद्यालय, छत्तीसगढ़, बिलासपुर

मुख्य शब्द- शिक्षण, अधिगम, मोबाइल उपयोग

परिचय- वर्तमान समय संचार क्रांति का युग है। संचार के अनेक साधन उपलब्ध हैं, जैसे- रेडियो, टेलीवीजन, इंटरनेट, ई-मेल, लैंडलाइन, मोबाइल, टेलीग्राम, पेजर, फैक्स, वीडियो कॉलिंग, वीडियो कान्फ्रेंसिंग इत्यादि जिनमें सबसे अधिक सुगम और सुविधाजनक मोबाइल है। आज दस में से नौ आदमियों के हाथों में मोबाइल की पहुँच है, चाहे मोबाइल कीपैड हो या एंड्रायड। गरीब व्यक्तियों के घरों तक मोबाइल की रिंगटोन सुनाई देती है। मोबाइल का बटन दबाते ही सूचनाओं का आदान-प्रदान संभव हो जाता है। इसने हमारे सामने जानकारी और ज्ञान का पिटारा खोल दिया है। किसी भी प्रकार का प्रश्न मन में आते ही उससे संबंधित जानकारी गूगल के माध्यम से पलक झपकते ही हमारे सामने आ जाता है। घर बैठे ही देश और दुनिया में क्या हो रहा है, इसकी जानकारी मिल जाती है। यूं कहें कि मोबाइल रोजमर्रा की जरूरी संसाधन के रूप में हमारे लिए उपयोगी सिद्ध हो रहा है।

अधिगम या सीखना मानव जीवन की महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। मनुष्य जन्म से ही नहीं अपितु गर्भावस्था से सीखना आरंभ कर देता है और जीवन भर सीखते हुए अपना समय व्यतीत करता है। अधिगम मानव की जन्मजात प्रवृत्ति है, जो मृत्युपर्यंत तक चलती रहती है। व्यक्ति प्रतिदिन अपने जीवन में नवीन ज्ञान और नए अनुभव से व्यवहार में वृद्धि तथा संशोधन करता रहता हैं। इन नवीन ज्ञान और अनुभव का उपयोग करना ही सीखना या अधिगम कहलाता है। जी. डी. बोआज ने कहा कि अधिगम एक ऐसी प्रक्रिया है जिससे व्यक्ति विभिन्न आदतें, ज्ञान एवं –ष्टिकोण को अर्जित करता है, जो कि सामान्य जीवन की मांगों को पूरा करने के लिए आवश्यक होता है। ब्लेयर, जोन्स और सिम्पसन ने कहा है कि अनुभवों के परिणाम से व्यवहार में जो परिवर्तन होता है जिसके कारण व्यक्ति भविष्य में परिस्थितियों का भिन्न प्रकार से सामना करना सीखता है, अधिगम कहलाता है।

शिक्षण सीखने की प्रक्रिया का महत्वपूर्ण गतिविधि है। शिक्षण शब्द की उत्पत्ति शिक्षा से हुई है जिसका तात्पर्य शिक्षा प्रदान करना होता है। शिक्षण प्रक्रिया द्वारा मानव के व्यवहार में परिवर्तन किया जाता है, जिससे निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति हो सके। निश्चित उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए जब शिक्षक अपने कक्षा में अध्यापन करता है, तो वह शिक्षण सार्थक माना जाता है। अधिगम एवं शिक्षण में सिखाने वाला शिक्षक सीखने वाले विद्यार्थो को किसी निश्चित लक्ष्य की ओर आगे बढ़ाने के लिए नवीन ज्ञान और कौशल की जानकारी देता है, जिससे उसके अनुभवों में वृद्धि होती है, परिणामस्वरूप उसके व्यवहार में वांछित परिवर्तन आता है।

आज भारत में मोबाइल के उपयोगकर्ताओं की संख्या 117 करोड़ के पार हो गई है और यह प्रतिदिन बढ़ रही है। इनमें से अधिकतर स्मार्टफोन का उपयोग कर रहें हैं, जिससे इन्टरनेट उपभोक्ताओं की संख्या में वृद्धि हुई है और यह संख्या बढ़कर 95 करोड़ तक पहुँच गई है (हर्ष. हर्षित, 2024, 25 सितम्बर)।

मोबाइल का उपयोग दैनिक संचार के अलावा शिक्षा के क्षेत्र में हो रहा है। शिक्षा के क्षेत्र में मोबाइल का प्रयोग लगभग 2008 से माना जा सकता है, जब ब्रुकलिन के स्कूलों ने छात्रों को सेल फोन वितरित करना शुरू किया और 2010 तक शैक्षिक उपकरण के रूप में सेल फोन को अपनाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण बदलाव आया। छात्रों को उनके स्कूलों से जोड़े रखने के लिए टेक्स्ट मैसेजिंग के लिए उपयोग करने से लेकर, सेल फोन धीरे-धीरे व्यापक शैक्षिक उद्देश्यों को प्राप्त करने का साधन बन गया। प्रौद्योगिकी छात्रों के सीखने और शिक्षकों के पढ़ाने के तरीके में बदलाव ला रही है तथा मोबाइल फोन जैसे उपकरण कक्षा में और घर पर सीखने के बीच के अंतर को पाटने में उपयोगी सिद्ध हो रहें हैं (लवलेस. बेकटन, 2024, अक्टूबर 27)।

आज नई तकनीक पुरानी शिक्षण पद्धतियों को बदल रही है, जिससे अधिगम करने के कई माध्यम छात्रों के लिए उपलब्ध हो रहे हैं। हमारा जीवन मोबाइल फोन और डिजिटल डिवाइस के चारों ओर घूम रहा है, मनोरंजन और संचार के साधनों से लेकर हमारे सीखने के तरीके तक। एक अध्ययन से पता चलता है कि आज 86 प्रतिशत कॉलेज छात्रों के पास स्मार्ट डिवाइस है और उनमें से लगभग आधे छात्र काम के लिए अपने मोबाइल का उपयोग करते हैं। इसके अतिरिक्त ऑफकॉम की एक रिपोर्ट में यह बात सामने आई है कि स्मार्टफोन और टैबलेट सहित हैंडहेल्ड डिवाइस अब इंटरनेट तक पहुंचने के लिए सबसे पसंदीदा गैजेट हैं, जो दुनिया भर में 50 प्रतिशत से अधिक ब्राउज़िंग गतिविधि के लिए जिम्मेदार है। ये आँकड़े बताते हैं कि वर्तमान समय में शिक्षा के क्षेत्र में मोबाइल के द्वारा सीखने की प्रक्रिया की शुरुआत हो गई है। स्मार्टफोन और टैबलेट जैसी मोबाइल तकनीक का उपयोग करके शैक्षिक सामग्री का आदान-प्रदान विशेष रूप से शिक्षा के क्षेत्र में तेजी से लोकप्रियता हासिल कर रही है (शर्मा. नीतिन, 2024, जुलाई 03)।

ऑनलाइन कक्षा एक ऐसी तकनीक है, जो पारंपरिक कक्षा प्रशिक्षण को वेब-आधारित तत्वों और सीखने के वातावरण के साथ जोड़ती है। किसी भी समय कहीं से भी जानकारी प्राप्त करना सीखने की प्रक्रिया को सुविधाजनक और आसान बनाता है। आधुनिक शिक्षा की जरूरतों को पूरा करने के लिए एप्लिकेशन डेवलपमेंट फ़र्म द्वारा बनाए गए सर्वश्रेष्ठ शैक्षिक ऐप की जरूरत होती है। बदलते समय के साथ मोबाइल ऐप का महत्व और भूमिका बढ़ गई है।

शिक्षण अधिगम में विभिन्न मोबाइल ऐप का उपयोग

स्वयम्- यह ऐप भारत सरकार द्वारा शुरू किया गया एक प्रोग्राम है, जिसमें कक्षा-9वीं से स्नातक तक के विद्यार्थियों को पढ़ने के लिए गुणवत्तापूर्ण अधिगम सामग्री उपलब्ध कराना है (टीवी 9 भारतवर्ष, 2024, सितम्बर)।

ई-पाठशाला- यह भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय (MoE) और राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (NCERT) के सहयोग से बना है, जो शैक्षिक ई-संसाधनों का मंच है। इसमें पाठ्यपुस्तकें, ऑडियो, वीडियो, पत्रिकाएँ और कई अन्य डिजिटल सामग्रियाँ शामिल हैं (भारत सरकार)।

दीक्षा ऐप- यह एक डिजिटल प्लेटफॉर्म है, जो भारत सरकार द्वारा स्कूल शिक्षा के लिए बनाया गया है। इसे डिजिटल इंडिया, आत्मनिर्भर भारत और पी एम ई विद्या प्रोग्राम के सहयोग से तैयार किया गया है। यह एंड्राइड एप्लीकेशन है, जिसे (NCTE) National Council for Teachers Education से जारी किया गया है। विद्यार्थो इसे मोबाइल में इंस्टॉल करके घर बैठे ही पढ़ाई कर सकते हैं। इस ऐप से विद्यार्थी NCERT, CBSE स्टेट बोर्ड की पढ़ाई कर सकते है। इसमें कक्षा पहली से लेकर कक्षा 10वीं तक के विद्यार्थी ऑनलाइन पढ़ाई कर सकते हैं। इसे अंग्रेजी, हिंदी, तमिल, तेलुगु और मराठी भाषा में उपलब्ध कराया गया है। इसे कोई भी शिक्षक ज्वाइन करके बच्चों को पढ़ा सकता है। इससे अध्ययन सामग्री डाउनलोड कर सकते हैं (वर्मा. सौरभ, 2021, जुलाई)।

गूगल क्लासरूम- यह विद्यार्थियों को उनकी ज़रूरतों के अनुसार सिखाने, क्लास को मैनेज करने और परफॉर्मेंस का आकलन करने में सहायक होती है। Google Classroom, Google Workspace for Education का ही भाग है। यह विद्यार्थियों को सीखने और उनको बेहतर भविष्य के लिए तैयार करता है। इसका उपयोग शिक्षकों को ट्रेनिंग देने, रिफ्रेशर कोर्स, सेमिनार, वेबिनार और वर्कशॉप इत्यादि में किया जा रहा है।

वेदान्तु जेईई-नीट- यह जेईई-नीट की तैयारी कराने के लिए ऑनलाइन लाइव कक्षाएँ आयोजित करता है। इसमें विद्यार्थियों का शंका समाधान भी किया जाता है। इसमें कक्षा पहली से लेकर बारहवीं कक्षा तक के बच्चों को शामिल किया जाता है।

माय सीबीएसई गाइड- इस मोबाइल ऐप में कक्षा 9वीं से कक्षा 12वीं तक के सीबीएसई पाठ्यक्रम को शामिल किया गया हैं। जिसे अध्याय के क्रमानुसार मुफ्त में नोट्स और महत्वपूर्ण प्रश्नों के संशोधित उत्तर प्राप्त कर सकते हैं। myCBSEguide esa CBSE, NCERT, JEE इत्यादि से सम्बंधित पाठ्यक्रम को सम्मिलित किया गया है। यह छात्रों को रिवीजन नोट्स, सैंपल पेपर और ऑनलाइन टेस्ट भी उपलब्ध करता है।

मेरिट नेशन ऐप- यह कक्षा 6वीं-12वीं के छात्रों के लिए एक ही ऐप में पाठ्यक्रम से सम्बंधित सभी समस्याओं का समाधान है। चाहे होमवर्क हो, शंका-समाधान हो, पाठ्यपुस्तक से सम्बंधित समाधान हो, वीडियो-लेक्चर, नमूना-पेपर, मॉक-टेस्ट हो सभी को शामिल किया गया है। इसमें कक्षा 6-12वीं के लिए रिवीजन नोट्स, पिछले साल के बोर्ड पेपर और राष्ट्रीय ओलंपियाड के लिए भी अध्ययन सामग्री उपलब्ध है। इसमें आईआईटी-जेईई, एनईईटी, सीए सीपीटी जैसी प्रवेश परीक्षाओं और बीबीए तथा एनडीए जैसी अन्य परीक्षाओं के लिए पाठ्यक्रम भी हैं।

बायजू लर्निंग ऐप- इसे सर्वश्रेष्ठ शिक्षा ऐप में से एक माना जाता है। इसमें बहुत ही आकर्षक वीडियो पाठ हैं, जो छात्रों को सीखने में मदद करते हैं। इसमें कक्षा 7वीं-12वीं तक के लिए पूर्ण मॉक टेस्ट और सैंपल पेपर हैं। यह IIT, JEE, CAT और NEET जैसी प्रतियोगी परीक्षाओं की भी तैयारी कराते हैं।

विद्याकुल लर्निंग ऐप- यह ट्यूटर्स पर आधारित ऐप है। यह ऐप छात्रों को ऑनलाइन प्रसिद्ध शिक्षकों से पढ़ने में मदद करता है। यह छात्रों, अभिभावकों और शिक्षकों को ऑनलाइन सीखने और पढ़ाने से संबंधित उनकी सभी समस्याओं को हल करने के लिए एक आदर्श प्लेटफॉर्म प्रदान करने का काम करता है।

टॉपर लर्निंग ऐप- टॉपर एक शिक्षा ऐप है। यह छात्रों को एक टाइम टेबल भी प्रदान करता है, जिसे छात्र अपनी सुविधा अनुसार लाइव क्लास कर सके और अपने पाठ्यक्रम से सम्बंधित शंकाओं को दूर कर सके। यह कक्षा-12वीं के छात्रों को कई तरह के पाठ्यक्रम प्रदान करता है।

डाउटनट लर्निंग ऐप- यह विशिष्ट अवधारणा पर आधारित एक शिक्षा ऐप है। यदि किसी छात्र को गणित के किसी प्रश्न में संदेह है, तो वह एक तस्वीर क्लिक करके उसे अपलोड कर सकता है और कुछ ही सेकंड में उसे अपने प्रश्न से सम्बंधित वीडियो समाधान मिल जाएगा। इसमें NCERT (कक्षा 6-12वीं) और IIT-JEE के लिए गणित के पाठ्यक्रम उपलब्ध हैं, जिनमें वीडियो, किताबें और PDF भी शामिल हैं।

खान अकादमी लर्निंग ऐप- इस ऐप का एकमात्र उद्देश्य छात्रों को बेहतर शिक्षण उपकरण प्रदान करना है। इस ऐप में विभिन्न शैक्षणिक विषयों पर 10,000 से अधिक वीडियो व्याख्यान हैं, जो मुख्य रूप से गणित और विज्ञान पर केंद्रित हैं। विद्यार्थियों को सशक्त बनाने हेतु विशेष सामग्री के लिए नासा, एमआईटी, आधुनिक कला संग्रहालय जैसे संस्थानों के साथ भागीदारी है।

डॉ. मेंटर मेडिकल पीजी लर्निंग ऐप- यह मेडिकल की तैयारी के लिए बनाया गया ऐप है। इसमें 600+ घंटे के वीडियो लेक्चर हैं, 10,000 से ज्यादा पावर पॉइंट स्लाइड और नोट्स भी हैं। टेस्ट सीरीज, मॉक टेस्ट और मेंटर भी हैं जो छात्रों की मदद करते हैं।

सीए क्लब इंडिया लर्निंग ऐप- यह एजुकेशन ऐप सीए ड्रॉपआउट विवेक जैन ने बनाया है। इस ऐप में 1500 घंटे की ई-लर्निंग सामग्री, टेस्ट की तैयारी और कौशल-आधारित पाठ्यक्रम शामिल हैं। इसमें CA, CS, CMA, BCom और MCom पाठ्यक्रमों के लिए ऑनलाइन वीडियो उपलब्ध हैं। इस प्लेटफ़ॉर्म पर उपयोगकर्ता एक-दूसरे से बातचीत कर सकते हैं और सवाल पूछ सकते हैं। इसमें विभिन्न पेशेवर प्रोफाइल, विभिन्न लेख और अपडेट की सूचनाएँ भी शामिल हैं।

इंडिगोलर्न सीए कक्षाएं- यह ऐप पेशेवर, वाणिज्यिक और वित्त पाठ्यक्रमों के लिए बनाया गया है। इसे CA, CS और CM। छात्रों के लिए बनाया गया है।

टेस्टबुक- यह सरकारी परीक्षाओं की तैयारी कराने वाला एक मंच है, जो बैंक, सरकारी परीक्षा, यूपीएससी परीक्षा जैसी परीक्षाओं के लिए पाठ्यक्रम उपलब्ध कराता है। इसमें रिकॉर्ड की गई वीडियो और लाइव कक्षाओं के लिए वेबसाइट और ऐप दोनों ही सुविधा शामिल किया गया है।

अनएकेडमी ऐप- इस ऐप में भारत की पहली महिला IPS अधिकारी किरण बेदी के साथ कुछ बेहतरीन शिक्षक हैं। इसमें विभिन्न प्रतियोगी परीक्षाओं से सम्बंधित 2400 से अधिक वीडियो व्याख्यान और विशेष पाठ्यक्रम शामिल हैं, जिससे लगभग 300,000 से अधिक छात्रों को लाभ हुआ है। इस ऐप से छात्रों को उनके लेखन कौशल, बोलने की क्षमता और उनके ज्ञान को बढ़ाने में मदद मिली है।

अड्डा 247 लर्निंग ऐप- यह ऐप 2016 में स्थापित हुआ है। यह बैंक परीक्षा SBI, RBI, IBPS, रेलवे, कर्मचारी चयन आयोग परीक्षा, शिक्षण परीक्षा और रक्षा परीक्षाओं की तैयारी पर आधारित है। इस ऐप में ऑनलाइन लाइव क्लासेस, ऑन-डिमांड वीडियो

कोर्स, मॉक टेस्ट, ई-बुक और किताबें उपलब्ध कराई जाती है। यह ऐप विद्यार्थिओं की किसी भी सरकारी परीक्षा के पूरे चक्र में मदद करता है।

ग्रेडअप लर्निंग ऐप- इस ऐप में छात्रों और सलाहकारों का एक समुदाय है। जिनमें SSC बैंकिंग, रेलवे, टीचिंग, JEE, GATE, NEET, UPSC डिफेंस और राज्य स्तरीय परीक्षाओं को शामिल किया गया हैं। इनमें उपयोगकर्ता सामूहिक रूप से सीख सकते हैं और एक-दूसरे की समस्याओं का समाधान कर सकते हैं। उनके पास क्विज़, मॉक टेस्ट, टेस्ट-सीरीज, लाइव वीडियो क्लास इत्यादि की एक विस्तृत श्रृंखला है।

कोर्सेरा लर्निंग ऐप- यह ऐप दुनिया भर के 140+ से अधिक बेहतरीन कॉलेजों और यूनिवर्सिटीज़ द्वारा विकसित किए गए लगभग 1000 कोर्स उपलब्ध कराता है। इसमें कंप्यूटर साइंस, डेटा साइंस, साइंस, बिज़नेस, फोटोग्राफी, म्यूजिक और क्रिएटिव राइटिंग सहित कला इत्यादि के एडवांस कोर्स उपलब्ध हैं। यह सर्टिफिकेट भी प्रदान करता है। अगर आपको किसी विषय में स्पेशलाइजेशन करना है, तो भी आप सर्टिफिकेशन हासिल कर सकते हैं।

सिंपललर्न लर्निंग ऐप- यह ऐप साइबर सुरक्षा, क्लाउड कंप्यूटिंग, प्रोजेक्ट मैनेजमेंट, डिजिटल मार्केटिंग और डेटा साइंस जैसे विषयों में प्रशिक्षण प्रदान करता है। इनके पाठ्यक्रमों लगभग 2000 से अधिक विशेषज्ञों द्वारा डिज़ाइन किया गया है। इस ऐप से लगभग 1,000,000 से अधिक पेशेवरों ने प्रशिक्षण प्राप्त कर लिया है।

उडेमी लर्निंग ऐप- उडेमी में लगभग 150 हजार कोर्स, 57 हजार प्रशिक्षक और 50 मिलियन से ज्यादा छात्र हैं। ये न केवल व्यक्तियों की मदद कर रहे हैं बल्कि कंपनियों को भी भविष्य के लिए तैयार रहने में सहयोग दे रहे हैं।

सोलोलर्न लर्निंग ऐप- यह कोडिंग सिखाने वाला ऐप है। इसमें शुरुआत से लेकर प्रो तक के लिए कोड सीखने की सामग्री का विशाल संग्रह है। यह पूरी तरह से मुफ़्त है। यह ऐप HTML5, CSS3, JavaScript, JQuery, Python, Java, C#, C, C++, PHP, SQL, Algorithms & Data Structures, Ruby, Machine Learning, Design Patterns, Swift आदि जैसी भाषाएँ सीखने में मदद करता है।

कोडिंग निंजा ऐप- यह ऐप डेवलपर्स को प्रशिक्षित करने और तकनीकी शिक्षा प्रदान करके नए तरीकों से लगातार अवगत कराना है। इन्होंने पहले ऑफलाइन पाठ्यक्रम शुरू की फिर बाद में ऑनलाइन कक्षाएँ भी शुरू की हैं। इनकी ऑनलाइन कक्षाएँ बहुत प्रभावशाली हैं और कोड को तुरंत जज करती हैं। ये साप्ताहिक संदेह-सत्र वेबिनार और संदेह समाधान-सत्र आयोजित करते हैं।

जिगस, अकादमी लर्निंग ऐप- इसे 2011 में गौरव वोहरा और सरिता दिगुमत्री ने शुरू किया था। जो करियर के किसी भी चरण में अपने कौशल को उन्नत करना चाहते हैं, ऐसे लोगों के लिए एक उत्कृष्ट मंच है। यह ऐप डेटा साइंस, मशीन लर्निंग, साइबर सिक्योरिटी, एनालिटिक्स, क्लाउड कंप्यूटिंग और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस आदि के क्षेत्रों में विशेषज्ञों की मदद से फ्रेशर्स और पेशेवरों को प्रशिक्षण प्रदान करता है।

डुओलिंगो लर्निंग ऐप- यह एक लर्निंग ऐप है, जो अंग्रेजी, स्पेनिश, फ्रेंच, जर्मन, रूसी, पुर्तगाली, तुर्की, डच, ग्रीक, हंगेरियन, नॉर्वेजियन, हिब्रू, वेल्श, स्वाहिली, आयरिश,

डेनिश, स्वीडिश, इतालवी, यूक्रेनी, एस्पेरांतो, पोलिश और रोमानियाई जैसी विभिन्न भाषाओं को सीखने में मदद करता है। इसे गेम के माध्यम से खेलकर अपने लेखन और संचार कौशल को बेहतर बना सकते हैं। यह पूरी तरह से मुफ्त है।

मास्टरक्लास ई-लर्निंग ऐप- यह ऐप सर्वश्रेष्ठ कलाकारों, संगीतकारों, लेखकों, अभिनेताओं, और अन्य लोगों से ऑनलाइन रचनात्मक पाठ्यक्रम प्रदान करता है, जिसके लिए उन्हें सदस्यता लेना पड़ता है, जिसके लिए कुछ चार्ज चुकाना होता है (+17.4/माह वार्षिक बिल)। इसे सब्सक्राइब करने वाले सब्सक्राइबर्स को 9 श्रेणियों को कवर करने के लिए 100+ कोर्स मिलते हैं, जिनमें संगीत, विज्ञान, स्वास्थ्य, तकनीक, कला, मनोरंजन, लेखन, भोजन और भी बहुत कुछ शामिल हैं। इसके अलावा जेम्स कैमरून से फिल्म निर्माण, गॉर्डन रामसे से खाना पकाने की कक्षाएं, रॉबिन अर्ज़ोन द्वारा मानसिक शक्ति इत्यादि वीडियो-आधारित कक्षाएं शामिल है, इसके अतिरिक्त अन्य विषयों से सम्बंधित वीडियो कक्षाएं भी प्रदान की जाती है। प्रत्येक वीडियो-आधारित कक्षा में औसतन लगभग 10 मिनट के 20 पाठ होते हैं, जिनमें ऑफ़लाइन डाउनलोड करने की सुविधा के साथ अन्य सुविधाएं जैसे- कार्यपुस्तिकाएं, पीडीएफ कार्यपुस्तिकाएं, टीवी, स्मार्टफोन, डेस्कटॉप ऐप्स तथा इनके गतिशील समुदाय के सदस्यों के साथ स्ट्रीमिंग प्लेयर करने जैसी सुविधाएं शामिल होती है।

आईटी प्रो टीवी ई-लर्निंग ऐप- ITProTV टॉक शो प्रशिक्षण के साथ IT कौशल विकास के लिए बनाया गया ऐप है। इसमें एक 'एडुटेनर' है जो होस्ट करता है और ऑनलाइन दर्शकों के लिए कक्षा जैसा प्रशिक्षण माहौल बनाता है। IT विशेषज्ञों से नवीनतम IT कौशल सीखकर आप प्रमाणपत्र प्राप्त कर सकते हैं। यह 5800 घंटे से अधिक के वीडियो, कॉम्पटिया, आईटीआईएल, सिस्को, अमेज़ॅन जैसे प्रमुख पाठ्यक्रमों और लिनक्स, टेक स्किल्स, साइबरसेक जैसे अन्य पाठ्यक्रमों को कवर करते हैं। इसमें व्यक्तिगत चार्ज प्रति माह +29 से शुरू है और व्यावसायिक योजनाएँ भी हैं। यह कुछ पाठ मुफ़्त भी प्रदान करता है।

डेटाकैंप ई-लर्निंग ऐप- डेटाकैंप ऑनलाइन लर्निंग प्लेटफ़ॉर्म नॉन-कोडिंग एसेंशियल से लेकर मशीन लर्निंग और डेटा साइंस तक के स्किल पावर प्रदान करता है। इसे व्यक्तिगत और व्यावसायिक दोनों तरह उपयोग करने की सुविधा है। यह 270 से अधिक विशेषज्ञ प्रशिक्षकों के 350 से अधिक वीडियो, इंटरैक्टिव पाठ्यक्रम, सीखने के तरीके, कौशल मूल्यांकन तथा वास्तविक जीवन की परियोजनाएँ प्रदान करता है।

स्किल शेयर ई-लर्निंग ऐप- स्किल शेयर एक लोकप्रिय ऑनलाइन प्लेटफॉर्म है, जो रचनात्मक कौशल विकसित करने पर केंद्रित है। इनके अधिकतर कोर्स में विजुअल आर्ट्स, फ़िल्म, फ़ोटोग्राफ़ी, इंटीरियर डिज़ाइन और लेखन जैसी रचनात्मक शिक्षा शामिल हैं, इसके अतिरिक्त मार्केटिंग और बिज़नेस क्लास भी हैं। स्किल शेयर विशेषज्ञों से 20-60 मिनट की वीडियो कक्षाएं प्रदान करता है। कुछ वीडियो पाठ निःशुल्क हैं, जबकि अन्य सदस्यता-आधारित हैं। इनके पास 'स्किलशेयर ओरिजिनल्स' नाम से एक टीम भी है।

प्लुरल साइट ई-लर्निंग ऐप- यह पेशेवरों के लिए बनाया गया है, जो वेब डेवलपमेंट, साइबर सिक्यूरिटी, आईटी ऑप्स, मैन्युफैक्चरिंग तथा डिज़ाइन और भी बहुत से कोर्स प्रदान करता है। कोर्स लाइब्रेरी में 7000 से ज्यादा कोर्स शामिल किया गया हैं, जिनके लिए स्टैंडर्ड और प्रीमियम प्लान प्रदान करती है।

कोड एकेडमी ई-लर्निंग ऐप- कोड एकेडेमी एक प्रसिद्ध ऑनलाइन कोडिंग प्लेटफार्म है, जिसे अगस्त 2011 में ज़ैक सिम्स और रयान बुबिंस्की द्वारा स्थापित किया गया है। यह छात्रों को 14 अलग-अलग प्रोग्रामिंग भाषाएँ प्रदान करता है, जिसमें पायथन, जावास्क्रिप्ट, जावा, SQL, बैश/शेल, रूबी, C++, R, C#, PHP, HTML तथा CSS इसके अतिरिक्त और भी विभिन्न फ्रेमवर्क व लाइब्रेरीज़ पर आधारित पाठ्यक्रम शामिल किया गया है। पाठ्यक्रम मुख्य रूप से पाठ-आधारित होते हैं। कोडिंग प्लेटफॉर्म में मुफ्त और सशुल्क दोनों तरह की योजनाएँ हैं (प्रति माह +20) और व्यवसायों के लिए संपूर्ण पैकेज प्राप्त करने की सुविधाएं प्रदान करता है।

स्किल क्रश ई-लर्निंग ऐप- यह एक ऑनलाइन बूटकैंप है, जो वेबसाइट विकास और वेब डिज़ाइन सीखाकर लोगों को नौकरी खोजने के लिए कौशल सीखने की सुविधाएं प्रदान करता है। छात्र तीन महीने के कौशल पाठ्यक्रम को चुन सकते हैं या टेक कोर्स पैकेज ले सकते हैं, जिससे उन्हें व्यक्तिगत सीखने का अनुभव मिलता है। यह पाठ्यक्रम सामग्री, विशेषज्ञ सहायता, ऑफलाइन देखने की सुविधा, समय का लचीलापन देता है। स्किलशेयर छात्र समुदाय का हिस्सा बनने के लिए आजीवन पहुँच प्रदान करता है। यदि नामांकित पाठ्यक्रम से संतुष्ट नहीं है, तो 14 दिनों की 100 प्रतिशत मनी-बैक गारंटी भी है।

अध्ययन ई-लर्निंग ऐप- यह सदस्यता-आधारित ऑनलाइन शिक्षण प्लेटफॉर्म है, जिसमें 30,000 से ज्यादा वीडियो पाठ और अन्य सहायक संसाधन हैं। यह मिडिल स्कूल, कॉलेज, ग्रैजुएट, पोस्ट-ग्रैजुएट, व्यावसायिक विकास और शिक्षकों के लिए पाठ्यक्रम प्रदान करता है। वेबसाइट में शिक्षकों, स्कूलों, विद्वानों और कॉलेज क्रेडिट को पूरा करने के लिए 220 से ज्यादा ऑनलाइन कॉलेज कोर्स उपलब्ध है, जिन्हें 1500+ कॉलेजों में स्थानांतरित किया जा सकता है।

क्रिएटिव लाइव ई-लर्निंग ऐप- क्रिएटिवलाइव 700+ मास्टर क्रिएटर्स का ऑनलाइन समूह है। इसमें ग्रैमी विजेता, फोटोग्राफर, बेस्ट-सेलर सहित कुछ प्रसिद्ध प्रशिक्षक हैं, जो 1500+ क्लासेस प्रदान करते हैं। इस ऐप के माध्यम से कक्षाओं तक 24/7 घंटे पहुँच की सुविधा, 1900+ ऑन-डिमांड कक्षाएँ, प्रभावशाली व्यक्तियों, छात्रों, विशेषज्ञों, कर्मचारियों और संस्थापकों से प्रेरणा और रचनात्मक विचार प्राप्त करने हेतु एक समूह है।

एडुरेका ई-लर्निंग ऐप- यह क्लाउड कंप्यूटिंग, एप्लीकेशन डेवलपमेंट, प्रोग्रामिंग, डेटा साइंस, डेवऑप्स और भी बहुत कुछ पाठ्यक्रम प्रदान करता है। पाठ्यक्रम पेशेवरों द्वारा स्व-गति ऑनलाइन प्रशिक्षण और ऑन-प्रिमाइस कक्षा प्रशिक्षण की सुविधा प्रदान करता है। इनमें 24/7 की सहायता तथा आजीवन पहुँच की सुविधा है। यह बिजनेस, क्लाउड लैब्स, कोर्स कस्टमाइजेशन, लर्निंग एनालिटिक्स, सर्टिफिकेशन और कॉर्पोरेट प्रशिक्षण प्रदान करता है।

शिक्षण अधिगम में मोबाइल का प्रभाव- मोबाइल विद्यार्थियों के शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया को बढ़ाकर उन्हें अपने भविष्य के लिए तैयार करने में मदद करता है। आजकल मोबाइल का उपयोग जीव विज्ञान, रसायन विज्ञान और इंजीनियरिंग सहित कई अन्य क्षेत्रों में भी किया जा रहा है, क्योंकि मोबाइल फोन से शिक्षण प्रक्रिया को अधिक रुचिकर, प्रभावशाली और आसान बनाने के लिए गतिविधि आधारित, खेल आधारित और कई अन्य फीचर्स द्वारा सरल एवं मनोरंजक बनाया जा रहा है, जिससे बच्चे अधिक आकर्षित होते हैं और सरलता से सीख जाते हैं। स्मार्टफोन न केवल छात्रों अपितु शिक्षकों के लिए भी बहुत उपयोगी हैं। कोई भी व्यक्ति एक क्लिक से अपनी शंकाओं का समाधान कर सकता है। मोबाइल फोन का एक और लाभ यह है कि विद्यार्थी उन चीजों को सीख सकते हैं, जिन्हें सीखने में वे सहज महसूस करते हैं। चूंकि आजकल बच्चों के बीच फोन बहुत लोकप्रिय हैं, इसलिए किसी पुस्तक के पन्नों को पढ़ने की अपेक्षा फोन से छात्रों को समझाना अधिक आसान हो जाता है, क्योंकि इससे उपयोगी सामग्री खोजकर इंटरैक्टिव और शैक्षिक वीडियो से बेहतर तरीके से सीखा जा सकता है। साथ ही मोबाइल फोन में न केवल गेमिंग ऐप बल्कि विभिन्न प्रकार के ऐसे ऐप भी होते हैं, जिनसे कई प्रकार की सूचनाएं मिलती हैं, जो छात्रों के लिए उपयोगी हो सकते हैं। मोबाइल से सीखना शिक्षार्थियों के लिए एक रोचक संसाधन हैं। यह शिक्षण–अधिगम को आकर्षक और सरल बनाता है। मोबाइल से सीखने के कई सकारात्मक पक्ष हैं–

- मोबाइल फ़ोन इंटरनेट से जुड़ता है, इस नेट के जरिए बहुत सारी जानकारी पा सकते हैं। यदि तथ्य, लेख या रोचक अध्ययन सामग्री चाहिए, तो वह सब कुछ मोबाइल से उपलब्ध हो जाएगा।
- मोबाइल में कई ऐसे ऐप्स हैं, जो पढ़ाई को मज़ेदार बनाते हैं। चाहे गणित, भाषा या विज्ञान में रुचि रखते हों, ये ऐप्स पढ़ाई को रोचक बनाने में मदद करते हैं।
- इसमें किताबें रखने की कोई ज़रूरत नहीं, फ़ोन में ही ई–बुक पढ़ने और डिजिटल लाइब्रेरी की सुविधा होती है। जहाँ जरूरत की हर पाठ्य सामग्री मौजूद होती है।
- मोबाइल फ़ोन पर मौजूद वीडियो और पॉडकास्ट शिक्षक की तरह हैं, वे चीजों को सरल एवं रोचक तरीके से समझाते हैं, जिसे समझने में आसानी होती है।
- मोबाइल से पढ़ाई करते समय रिमाइंडर सेट कर सकते हैं और उसे अपने फोन पर व्यवस्थित रख सकते हैं। ऐसे कई ऐप हैं, जो पढ़ाई के समय की योजना बनाने और यह देखने में मदद करते हैं कि आप कितना अच्छा कर रहे हैं।
- अपने मोबाइल फ़ोन से नोट्स बनाना अब आसान है। अब कागज़ और पेन की जरूरत नहीं, बस टाइप कीजिए। आप जब चाहें अपने नोट्स ढूँढ़ सकते हैं और उनका उपयोग कर सकते हैं।
- मोबाइल में नई भाषा बोलने और सीखने के लिए कई ऐप मौजूद हैं, जो भाषा सीखने को मज़ेदार गतिविधियों के द्वारा खेल–खेल में सीखा देता है।
- मोबाइल में मैसेजिंग ऐप का इस्तेमाल करके दोस्तों और शिक्षकों से जुड़कर अपने विचार साझा करने, असाइनमेंट के बारे में बात करने और साथ मिलकर

प्रोजेक्ट पर काम करने इत्यादि की सुविधाएं मौजूद हैं।

कुछ अध्ययन जो शिक्षण–अधिगम में मोबाइल उपयोग की सार्थकता को दर्शाते हैं–

- परवीन, आर., (2021). मोबाइल फोन की सहायता से विद्यार्थी इण्टरनेट के माध्यम से कोई भी जानकारी आसानी से प्राप्त कर सकते हैं। इनके परिणाम से यह स्पष्ट हुआ कि 88.58% किशोर तथा 85.72% किशोरियों ने यह माना कि मोबाइल फोन उनकी पढ़ाई में सहायक है तथा वे इसके माध्यम से कोई भी जानकारी सरलतापूर्वक प्राप्त कर सकते हैं।
- यूनिवर्सिटी ऑफ टेक्नोलॉजी सिडनी में शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम के एसोसिएट प्रोफेसर मैथ्यू कियर्नो कहते हैं, यदि स्कूल के छात्र जांच करना, डेटा एकत्र करना, व्यक्तिगत और तत्काल प्रतिक्रिया प्राप्त करना, मीडिया रिकॉर्ड करना, रचना करना या कक्षा के अंदर और बाहर साथियों के साथ संवाद करना चाहते हैं, तो मोबाइल ऐप का उपयोग करना आदर्श है।
- वेस्टर्न सिडनी यूनिवर्सिटी में टेक्नोल,जी और लर्निंग शोधकर्ता जोआन अ,रलैंडो कहती हैं, 'हमें स्कूलों में मोबाइल फोन पर प्रतिबंध नहीं लगाना चाहिए, क्योंकि बच्चों को उस युग में अच्छी तरह से जीने के लिए शिक्षित करना महत्वपूर्ण है, जिसमें वे बड़े हो रहे हैं। वह आगे कहती हैं, आज छात्रों के लिए अच्छी शिक्षा यह है कि सीखने, संवाद करने और विचारों के साथ काम करने के लिए प्रौद्योगिकी का उपयोग कैसे किया जाए?
- मेलबर्न विश्वविद्यालय में बाल रोग विशेषज्ञ और किशोर स्वास्थ्य की प्रोफेसर सुसान एम सॉयर कहती हैं, स्कूलों को कक्षा के समय में मोबाइल फोन के इस्तेमाल के बारे में नीतियाँ विकसित करने की ज़रूरत है। मोबाइल
- दुनिया की गतिशील प्रकृति को देखते हुए, छात्रों और अभिभावकों को नियमित रूप से इन नीतियों की समीक्षा और संशोधन में शामिल करना सभी के सीखने का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है।

शिक्षण अधिगम में मोबाइल उपयोग करने में आ रहीं चुनौतियाँ- एनईपी 2020 में कहा गया है कि जहाँ पर शिक्षण अधिगम के पारंपरिक साधन उपलब्ध ना हो, वहाँ शिक्षा की गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए वैकल्पिक साधनों को तैयार करना होगा। साथ ही ऑनलाइन शिक्षा की हानियों को कम करते हुए इससे कैसे लाभ उठा सकते हैं? इसके लिए डिजिटल प्लेटफॉर्म और आईसीटी आधारित सभी पक्षों को विस्तारित और सुविधाजनक बनाना होगा। डिजिटल प्रौद्योगिकी को उन्नत बनाकर शिक्षा के सभी स्तरों पर लागू करने हेतु अध्ययन करना, जैसे– ऑनलाइन शिक्षा के लिए पायलट अध्ययन, डिजिटल इंफ्रास्ट्रक्चर का निर्माण करना, ऑनलाइन शिक्षण मंच और उपकरण का विकास करना, डिजिटल अंतर को कम करना, वर्चुअल लैब्स (दीक्षा, स्वयं और स्वयंप्रभा जैसे– ई लर्निंग प्लेटफॉर्म) के विकास और उपयोग को बढ़ावा देना ताकि सभी विद्यार्थियों को गुणवत्तायुक्त शिक्षा प्राप्त हो सके। आने वाले समय में शिक्षकों को ऑनलाइन प्रशिक्षक बनने के लिए उपयुक्त प्रशिक्षण देना होगा। ताकि वे ऑनलाइन कक्षा के लिए एक अच्छे शिक्षक बन पाए। ऑनलाइन परीक्षा लेने में आने वाली चुनौतियों,

जैसे- नेटवर्क, बिजली की समस्या, ऑनलाइन परिवेश में पूछने वाले प्रश्नों से सम्बंधित सीमाएं और इण्टरनेट से सम्बंधित अनैतिक प्रथाओं को रोकना इत्यादि समस्याओं को कम करने का प्रयास करना होगा। शिक्षण अधिगम में मोबाइल उपयोग करने में कई प्रकार की चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है-

- मोबाइल लर्निंग के लिए यह आवश्यक है कि सभी तकनीकी सुविधाएँ उनके स्थानों पर ही प्राप्त हो जाए।
- अपेक्षित कुशलता के अभाव में मोबाइल द्वारा सीखने से विद्यार्थियों को वांछित लाभों की प्राप्ति नहीं होती है।
- मोबाइल लर्निंग के उपयोग के लिए शिक्षण प्रशिक्षण कार्यक्रमों का कोई उचित व्यवस्था नहीं है।
- विद्यार्थियों को परंपरागत कक्षा शिक्षण की तरह यहाँ भौतिक रूप से मिलने-जुलने के अवसर प्राप्त नहीं होते हैं।
- हमारे अधिकतम विद्यालयों में पर्याप्त साधन उपलब्ध नहीं है, जिनसे मोबाइल से सीखने के लिए उपयुक्त अनुदेशन और अधिगम की व्यवस्था की जा सके।
- मोबाइल लर्निंग को परंपरागत कक्षा शिक्षण की तुलना में निम्न कोटि का अधिगम समझा जाता है।
- इसे कंप्यूटर द्वारा प्रोन्नत किया जाता है जिसमें बिजली और इण्टरनेट की सुविधा उपलब्ध होना आवश्यक होता है। इण्टरनेट एक महंगी व्यवस्था है।

राष्ट्रीय शिक्षा संघ (NEA) के 2024 के सर्वेक्षण से पता चला है कि 90% शिक्षक शिक्षण समय के दौरान फोन पर प्रतिबंध लगाने का समर्थन करते हैं, जबकि 75% पूरे स्कूल के दिन के लिए प्रतिबंध लगाने के पक्ष में हैं। डकोटा ल, सन और ब्रूस बी. हेंडरसन ने 2015 में कक्षा में मोबाइल फोन के उपयोग और सूचना समझ के बीच संबंधों की जांच के लिए एक अध्ययन किया। अध्ययन में 120 छात्र शामिल थे, जिनमें से अधिकतर प्रथम वर्ष के छात्र थे। परिणाम से पता चला कि जो छात्र कक्षा में टेक्स्टिंग कर रहे थे, उनके स्कोर काफी कम थे। भले ही प्रस्तुत की गई सामग्री सरल थी। कक्षा में मोबाइल फोन का उपयोग छात्रों की समझ और प्रदर्शन को प्रभावित करता है। यह अध्ययन अतीत में कई समान अध्ययनों के बाद किया गया था और यह उनके परिणामों की पुष्टि करता है।

एप्लाइड कॉग्निटिव साइकोल, जी द्वारा प्रकाशित 2017 के सामूहिक अध्ययन ने संकेत दिया कि कॉलेज के छात्रों को व्याख्यान के दौरान फोन का उपयोग करने देने उनके ज्ञान व ध्यान में कमी पायी गई। प्रयोग के समय जिन छात्रों का फोन तक पहुँच नहीं थी, उनका परीक्षण उन छात्रों की तुलना में बेहतर था, जिनके पास फोन था।

यह तर्क दिया जाता है कि कक्षा में, फ़ोन लगातार व्यवधान पैदा कर सकते हैं और उनका अनुचित तरीके से उपयोग किया जा सकता है, जैसे कि परीक्षणों में नकल करना, अनुचित तस्वीरें लेना और मोबाइल गेम खेलना। फ़ोन शिक्षक पर जाने वाले ध्यान को भटका सकता है।

यूनाइटेड स्टेट्स सर्जन जनरल ने 2023 में, एक चेतावनी जारी कि सोशल मीडिया बच्चों और किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य और कल्याण को नुकसान पहुँचा सकता है। नेशनल कॉलेज हेल्थ असेसमेंट से लिए गए शोध से पता चलता है कि 2008 और 2018 के बीच लगभग दोगुने स्नातक छात्रों में चिंता और अवसाद का निदान किया गया था।

अपनी पुस्तक 'द एंग्जियस जेनरेशन' में सामाजिक मनोवैज्ञानिक डॉ. जोनाथन हैडट ने प्रस्ताव दिया है कि अत्यधिक सुरक्षात्मक माता-पिता और फोन के बढ़ते उपयोग के कारण युवा पीढ़ियों के बीच मानसिक बीमारी में वृद्धि हुई है।

शोध के निष्कर्ष मूल्यवान जानकारी प्रदान करते हैं। सरकार द्वारा मोबाइल फोन संबंधी सख्त नियम लागू करना चाहिए। वर्तमान समय में स्कूलों को एक जटिल मुद्दे से जूझना पड़ रहा है। चुनौती एक संतुलित दृष्टिकोण खोजने की है, जो मोबाइल फोन के संभावित हानिकारक प्रभाव और आपातकालीन स्थितियों में छात्रों की अपने अभिभावकों एवं शिक्षकों से संवाद करके उचित समाधान निकाला जा सके। स्कूलों में मोबाइल फोन को लेकर बहस आज चर्चा का विषय है। छात्रों के व्यवहार, शैक्षणिक उपलब्धि और स्कूली वातावरण पर इन नीतियों के प्रभाव को लेकर चिंता बनी हुई है। कक्षा में मोबाइल फोन के उपयोग के लाभ और नुकसान के बीच संतुलन बनाना एक चुनौती है, जिसे स्कूलों, अभिभावकों और नीति-निर्माताओं को सावधानीपूर्वक हल करना चाहिए।

निष्कर्ष- वर्तमान समय में प्रौद्योगिकी के विकास के साथ हमारे शिक्षा जगत में कई परिवर्तन हो रहे हैं। आज पारंपरिक शिक्षा के साथ दूरस्थ शिक्षा और ई-लर्निंग का प्रचलन बढ़ा है, जिससे शिक्षण-अधिगम में मोबाइल लर्निंग की शुरुआत हुई। मोबाइल लर्निंग से तात्पर्य शैक्षिक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए स्मार्टफोन, टैबलेट और लैपट,प जैसे उपकरणों के उपयोग करने से है। छात्र, शिक्षक और अभिभावक सभी ने इन पर भरोसा किया, जिससे कि संकट के समय भी शिक्षा की लौ जलती रही। भारत का ऑनलाइन लर्निंग ऐप नवाचार और विकास की कहानी है। जैसे-जैसे देश डिजिटल तकनीक को अपना रहा है, गुणवत्तापूर्ण शैक्षिक पद्धतियों में सुधार हो रहा है। आज शिक्षा के लिए विभिन्न मोबाइल ऐप उपलब्ध हैं, जो शिक्षण-अधिगम को रुचिपूर्ण, मनोरंजक और ज्ञानवर्धक बनाते हैं।

भले ही मोबाइल फोन सीखने के लिए बहुत अच्छा साधन है, लेकिन उनका बुद्धिमानी से उपयोग किया जाना चाहिए। ध्यान भटकाने वाली चीज़ों से बचना चाहिए एवं अध्ययन की सीमाएँ निर्धारित की जानी चाहिए। फोन को स्मार्ट बनाने पर ध्यान देना चाहिए। एक स्मार्ट प्लान मोबाइल फोन को विद्यार्थियों के लिए अच्छा अध्ययन साथी बना सकता है, जो उन्हें सीखने और अच्छा प्रदर्शन करने में मदद करेगा।

शिक्षण अधिगम में मोबाइल का उपयोग बहुआयामी है। एक तरफ मोबाइल लर्निंग की सहायता से हम विभिन्न प्रकार की गतिविधि और जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। नए-नए ज्ञान प्राप्त कर अपनी ज्ञान पिपासा को तृप्त कर सकते हैं। वहीं दूसरी तरफ इनकी नकारात्मक प्रभाव को भी अनदेखा नहीं किया जा सकता। वर्तमान समय में विद्यार्थी के

हाथ में मोबाइल है, वह अपनी शिक्षण कार्यों के अलावा भी विभिन्न मोबाइल ऐप्स और गतिविधियों में संलिप्त रहता है। अभिभावकों एवं शिक्षकों के सामने ये चुनौतियां उत्पन्न हो रही है कि बच्चों को किस प्रकार नियंत्रित किया जाए? मोबाइल का उचित उपयोग करना उन्हें कैसे सिखाया जाए? मोबाइल जितना लाभप्रद है, उतना ही हानिप्रद। अगर विद्यार्थो को मोबाइल या अन्य आधुनिक लर्निंग उपकरण नहीं दे रहे हैं, तो उनके ज्ञान के साथ समझौता करना पड़ रहा है और अगर उनको यह आधुनिक गैजेट दे रहे हैं, तो इनके कई दुष्परिणाम भी सामने आ रहे हैं। अब सरकार एवं नीति-निर्माताओं को इस दिशा में उचित नियम और दिशा-निर्देश लागू करना चाहिए, जिसमें बच्चों के लिए हानिकारक ऐप्स को प्रतिबंधित किया जाए तथा जो ऐप्स छात्र हित में है, उन्हें प्रोत्साहित किया जाए, ताकि बच्चों को नित नई जानकारी व ज्ञान मिल सके। विभिन्न ऐप्स को उपयोग करने के लिए उम्र सीमा का निर्धारण, गाइडलाइन, नियम व शर्तें इत्यादि को लागू किया जाना चाहिए, जिससे विद्यार्थियों में मोबाइल से होने वाले नुकसान को कम किया जा सके।

निश्चित रूप से शिक्षण अधिगम में मोबाइल का उपयोग सकारात्मक है। मोबाइल लर्निंग में आने वाली कुछ चुनौतियों को दूर कर लिया जाए और उससे होने वाले नुकसान को यदि कम कर दिया जाए, तो स्पष्ट रूप से मोबाइल हमारे शिक्षण अधिगम को रोचक, प्रभावशाली और सुविधाजनक बना सकता है। सरकार, एजेंसियां और शिक्षाविद् मिलकर मोबाइल लर्निंग को उन्नत और समृद्ध बनाने की दिशा में काम कर रही है। स्पष्टत: शिक्षा में मोबाइल उपयोग के महत्त्व को स्वीकार किया जा सकता है।

संदर्भ सूची-

- एसेक्स, एन. एल. (2013), शिक्षकों के लिए 200 सबसे अधिक पूछे जाने वाले कानूनी प्रश्न, साइमन और शूस्टर. 64-66. आईएसबीएन 978-1-62087-520-9.
- गुप्ता, एन., इरविन, जे. डी. (2016). इन-क्लास डिस्ट्रैक्शन: फेसबुक की भूमिका और प्राथमिक शिक्षण कार्य. मानव व्यवहार में कंप्यूटर. 55बी : 1165–1178. डी.ओ.आई : 10.1016/जे-सीएचबी.2014.10.022. एस2सीआईडी 17980743.
- रिचटेल, एम., पियर्सन, के., लेवेन्सन, एम. (2023). सर्जन जनरल ने चेतावनी दी है कि सोशल मीडिया बच्चों और किशोरों को नुकसान पहुंचा सकता है. द न्यूयॉर्क टाइम्स. आईएसएसएन 0362-4331. 2024-02-27.
- लॉसन, डी., हेंडरसन, बी. बी. (2015). कक्षा में टेक्स्टिंग की लागत. कॉलेज टीचिंग. 63 (3): 119.124. डी.ओ.आई 10.1080/87567555.2015.1019826. आईएसएसएन 8756-7555. जेएसटीओआर 24760523. एस2सीआईडी 141577071.
- ली, एस., किम, एम. डब्ल्यू., मैकडोनो, ई. एम., मेंडोज़ा, जे. एस., किम, एम. एस. (2017). क,लेज के छात्रों के सीखने पर सेल फोन के उपयोग और भावना-विनियमन शैली के प्रभाव. एप्लाइड कॉग्निटिव साइकोल, जी. 31 (3): 360–366. डी.ओ.आई : 10.1002/एसीपी. 3323.
- हैडट, जे. (2024). द एंग्जियस जेनरेशन: हाउ द ग्रेट रीवायरिंग अ,फ चाइल्डहुड इज़ क,जिंग एन एपिडेमिक अ,फ मेंटल इलनेस. पेंगुइन रैंडम हाउस.
- सिंह, एन. व्ही., राय, जी., त्रिपाठी, व्ही. एन., मिश्र, एस., बहादुर, जे., गर्ग, आर. एवं दहल, पी. एस., (2017). अधिगम एवं शिक्षण. उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय. आईएसबीएन:

13-978-93-85740-70-1.

- "प्रकाशन और रिपोर्ट" . www-acha-org- 2024
- https://www.hurix.com/mobile-learning-in-education-impact/
- https://www.indiatv.in/tech/tech-news/india-has-117-crore-mobile-users-now-internet-penetration-crosses-95-crore-says-jyotiraditya-scindia-2024-09-25-1078206
- https://www.educationcorner.com/cell-phones-learning-tools/
- https://www.ux4g.gov.in/case-studies/ux4g-ePathshala.php
- https://www.tv9hindi.com/technology/online-government-e-learning-apps-vedantu-jee-neet-swayam-see-in-hindi-2079696.html
- https://www.jagran.com/technology/apps-digital-india-diksha-app-student-gets-free-online-education-till-10th-this-government-app-will-help-you-21788890.html
- https://play.google.com/store/apps/details?id=in.techchefs.MyCBSEGuide&hl=hi
- https://edu.google.com/intl/hi_in/workspace-for-education/classroom/
- https://www.vdocipher.com/blog/2020/02/education-apps-india-2020/
- https://www.thinkific.com/blog/types-of-mobile-learning/
- https://www.hrishiblogbuddhi.com/online-education/advantages-of-smartphone-in-education/#
- https://bsd.education/why-mobile-phones-are-a-powerful-learning-tool/

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 42, Hindi Edition, Year-21, Jan.- June 2025

युवाओं मे मादक द्रव्य व्यसन की प्रकृति एवं प्रभाव का समाजशास्त्रीय अध्ययन

•विपाशा चौधरी
•• चांदनी मरकाम

सारांश- वर्तमान मे युवाओं मे मादक द्रव्य व्यसन की प्रकृति तेजी से बढती जा रही है, जो समाज के लिए एक गंभीर चुनौती बन गई है। यह शोध पत्र मादक द्रव्यों के व्यसन की प्रकृति, सामाजिक, मानसिन, आर्थिक एवं पारिवारिक प्रभावों का विश्लेषण करता है। प्रस्तुत शोध अध्ययन के लिए दुर्ग जिले के भिलाई नगर क्षेत्र को लिया गया है भिलाई नगर की कुल जनसंख्या 1064222 है। भिलाई मे कुल 83 कॉलेज है जिसमे से प्रस्तुत शोध के उद्देश्यों को ध्यान मे रखते हुए 4 कॉलेजों का चयन रूंगटा कॉलेज, छत्तीसगढ़ स्वामी विवेकानंद कॉलेज, छत्तसिगढ़ इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी, श्री शंकराचार्य टेक्निकल केम्पस का चयन किया गया है तथा प्रत्येक कॉलेज मे से 20-20 उत्तरदाताओं का चयन उद्देश्यपूर्ण निदर्शन पद्धति द्वारा किया गया है। इस प्रकार कुल 80 उत्तरदाओं का चयन प्रस्तुत शोध के लिए किया गया है।समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से इस समस्या की जड़ों को समझने का प्रयास किया गया है साथ ही इसके समाधान हेतु संभावित सुझाव दिये गए है। प्रस्तुत शोध अध्ययन मुख्य रूप से साक्षात्कार अनुसूची और अवलोकन के माध्यम से प्राथमिक तथ्य संग्रह पर आधरित है। प्राप्त तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि मादक द्रव्य व्यसन व्यसनियों के स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डालता है। जहाँ एक ओर मादक द्रव्यों के से उत्तरदाताओं को मानसिक तनाव तथा डिप्रेशन की समस्या होती है वहीं उनमे भूख की कमी और शारीरिक कमजोरी की भी समस्या उत्पन्न होती है तथा मादक द्रव्य पारिवारिक जीवन को नष्ट करता है और समाज के सदस्य भी एक तरह से उनसे दूरी बना लेते है। अत: मादक द्रव्य न केवल व्यसनियों शारिरिक और मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करता है बल्कि उनके सामाजिक और पारिवारिक संबंधों पर भी नकारात्मक प्रभाव डाल रहा है।

मुख्य शब्द- युवा, मादक द्रव्य व्यसन, मानसिक तनाव, डिप्रेशन

प्रस्तावना- वह पदार्थ जिसे मनुष्य द्वारा सेवन करने पर उनकी सामान्य कार्य प्रणाली पर

• शोधार्थी , पीएचडी शोधार्थी समाजशास्त्र विभाग, गवर्मेंट वी. वाई. टी. ऑटोनॉमस कॉलेज दुर्ग छत्तीसगढ
••शोध निर्देशक, इंदिरा गांधी गवर्मेंट कॉलेज, वैशालीनगर भिलाई, छत्तीसगढ़

प्रभाव पड़ता है वह पदार्थ मादक द्रव्य या नारकोटिक औषधी कहलाते है। यह वह मनोसक्रिय औषधी है जिसका सेवन करने के बाद नींद आती है। नारकोटिक औषधी जैसे- भांग, चरस, गांजा, अफीम आदि जो पेड़-पौधों से प्राप्त किये जाते है और जो परिष्कृत एवं कच्ची होती है कुछ नारकोटिक औषधियां अर्ध संश्लेषित नारकोटिक औषधियां कहलाती है। इनमें आने वाली नारकोटिक औषधियां - मार्फीन, हेरोइन, ब्राउन शुगर आदि है। कुछ ऐसी भी नारकोटिक औषधियां होती है जो पूरी तरह मानव निर्मित होती है। कुछ ऐसी भी नारकोटिक औषधियां होती है जो पूरी तरह से मानव द्वारा निर्मित होती है। यह औषधियां प्रारंभिक तत्व जैसे नाइट्रोजन, हाइड्रोजन, कार्बन आदि रसायनो के उपयोग से बनाई जाती है। नारकोटिक औ'धियां वह दवाई होती है जो निंद्रा तथा मुर्च्छा उत्पन्न कर दर्द से राहत दिलाती है। अफीम, चरस, गांजा, हेरोइन, मार्फिन आदि यहि सब कार्य कर शरीर को दर्द से राहत दिलाते है इसलिए इन्हें मादक द्रव्य या नारकोटिक औषधियां कहते है।[1] व्यसन शब्द का शाब्दिक अर्थ दवाओं पर शारीरिक निर्भरता है। व्यसनी इन पदार्थो का सेवन शरीर के संचालन के लिए करता है, अन्यथा उसके शरीर के संचालन मे बाधा उत्पन्न होने लगती है। व्यसन के तीन प्रमुख लक्षण है-

1. नशीली दवाओं के दुरूपयोग की उत्कृष्ट इच्छा और उन्हें किसी भी तरह से प्राप्त करने का प्रयास।
2. नशीली दवाओं के सेवन की मात्रा मे लगातार वृद्धि की प्रवृति।
3. इन पदार्थों के प्रभाव के परिणाम स्वरूप शारीरिक और मानसिक निर्भरता।

अत: यह स्पष्ट है कि व्यसन शब्द मुख्य रूप से मादक द्रव्यों पर शारीरिक निर्भरता को सूचित करता है तथा इसके दुष्प्रभाव के कारण यह शारीरिक एवं मानसिक रूप से हानिकारक है। इसे न केवल विचलित व्यवहार बल्कि एक गंभीर सामाजिक समस्या के रूप मे भी देखा गया है।[2]

उद्देश्य-

- मादक द्रव्य व्यसनियों की शारीरिक एवं मानसिक पर मादक द्रव्यों के पड़ने वाले प्रभावों को ज्ञात करना।
- व्ययन के कारण मादक द्रव्य व्यसनियों के पारिवारिक-सामाजिक जीवन पर पड़ने वाले प्रभावों को ज्ञात करना।

उपकल्पना-

1. व्यसनियों के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य पर मादक द्रव्य का दुष्प्रभाव पड़ता है।
2. मादक द्रव्य का व्यसनियों के सामाजिक एवं पारिवारिक संबंधों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

अध्ययन क्षेत्र एवं उत्तरदाताओं का चयन- प्रस्तुत शोध अध्ययन के लिए छत्तीसगढ के दुर्ग जिले भिलाई नगर क्षेत्र को लिया गया है भिलाई नगर की कुल जनसंख्या 1064222 है जिससे पुरूष 545926 तथा 518306 महिलाएं है। भिलाई की औसत साक्षरता दर 86.63 प्रतिशत है जिसमे पुरूष साक्षरता 92.22 प्रतिशत तथा महिला साक्षरता 80.71 प्रतिशत है। भिलाई मे कुल 83 कॉलेज है जिसमे से प्रस्तुत शोध के

उद्देश्यों को ध्यान मे रखते हुए 4 कॉलेजों का चयन रूंगटा कॉलेज, छत्तीसगढ़ स्वामी विवेकानंद कॉलेज, छत्तीसगढ़ इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी, श्री शंकराचार्य टेक्निकल कैम्पस का चयन किया गया है तथा प्रत्येक कॉलेज मे से 20-20 उत्तरदाताओं का चयन उद्देश्यपूर्ण निदर्शन पद्धति द्वारा किया गया है। इस प्रकार कुल 80 उत्तरदाओं का चयन प्रस्तुत शोध के लिए किया गया है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन मुख्य रूप से साक्षात्कार अनुसूची और अवलोकन के माध्यम से प्राथमिक तथ्य संग्रह पर आधारित है। एकत्रित तथ्यों को कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर प्रोग्राम (spss) द्वारा वर्गीकरण एवं सारणीयन किया गया है।

तथ्यों का विश्लेषण- चयनित उत्तरदाताओं से उद्देश्यों के आधार पर प्राप्त तथ्यों के विश्लेषण को निम्नलिखित तालिकाओं मे प्रदर्शित किया गया है-

तालिका क्रमांक - 01
उत्तरदाताओं की आयु

क्रमांक	आयु वर्षों में	आवृति	प्रतिशत
1	16-20	24	30
2	21-25	30	38
3	26-30	17	21
4	31-35	09	11
	कुल	80	100

तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि कुल चयनित उत्तदाताओं मे से सर्वाधिक 38 प्रतिशत उत्तरदाता 21-25 वर्ष आयु वर्ग के है तथा सबसे कम 11 प्रतिशत उत्तरदाता 31-35 वर्ष आयु वर्ग के है। अत: स्पष्ट है कि मादक द्रव्यों का सेवन मध्यम आयु वर्ग के है।

तालिका क्रमांक - 02
नशे की प्रवृति

क्रमांक	नशे की प्रवृति	आवृति	प्रतिशत
1	हॉ	56	70
2	नही	24	30
	कुल	80	100

उपर्युक्त तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट है कि समस्त उत्तदाताओं मे से 70 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे है जिन्हे नशे की लत लगी हुई है तथा 30 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे है जो नशा नही करते है।

तालिका क्रमांक - 03
पहली बार नशा करने की आयु

क्रमांक	पहली बार नशा करने की आयु	आवृति	प्रतिशत
1	16–18 वर्ष	32	40
2	18–21 वर्ष	24	30
3	21–25 वर्ष	16	20
4	25 वर्ष के बाद	08	10
	कुल	80	100

उपर्युक्त तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि अधिकांश 40 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने सर्वप्रथम नशा 16–18 वर्ष की आयु मे प्रारंभ किया था और केवल 10 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे है जिन्होने 25 वर्ष की आयु के पश्चात् नशा करना प्रारंभ किया है। अत: स्पष्ट है कि मादक द्रव्यों का सेवन किशोर अवस्था मे अधिक प्रारंभ होता है।

तालिका क्रमांक - 04
नशे की आवृति

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि सबसे अधिक 40 प्रतिशत उत्तरदाता प्रतिदिन

क्रमांक	नशे की आवृति	आवृति	प्रतिशत
1	प्रतिदिन	32	40
2	कभी–कभी	24	30
3	विशेष अवसरों पर	24	30
	कुल	80	100

मादक द्रव्यों का सेवन करते है 30–30 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे हैं जो कभी–कभी और कुछ विशेष अवसरों पर ही मादक द्रव्यों का सेवन करते है। अत: स्पष्ट है कि मादक द्रव्य व्यसनि प्रतिदिन ही मादक द्रव्यों का सेवन करते है।

तालिका क्रमांक - 05
मादक द्रव्यों का उपयोग

क्रमांक	मादक द्रव्य	आवृति	प्रतिशत
1	सिगरेट	25	31
2	शराब	30	38
3	भांग–गांजा	10	12
4	अन्य	15	19
	कुल	80	100

उपर्युक्त तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि सर्वाधिक उत्तरदाता नशीले पदार्थों मे से शराब का सर्वाधिक उपयोग करते है जबकि 31 प्रतिशत उत्तरदाता मात्र सिगरेट का सेवन करते है 12 प्रतिशत उत्तरदाता भांग गांजा का सेवन करते है तथा 19 प्रतिशत उत्तरदाताओं का कहना है कि वे इसके अतिरिक्त अन्य मादक द्रव्यों जैसे हेरोइन, मार्फिन, कोकिन आदि का भी सेवन करते है। अत: तालिका से स्पष्ट है कि मादक द्रव्यों मे से सबसे अधिक प्रचलित मादक द्रव्य शराब है।

तालिका क्रमांक - 06

नशे का सामाजिक जीवन पर प्रभाव

क्रमांक	नशे का सामाजिक जीवन पर प्रभाव	आवृति	प्रतिशत
1	नौकरी पर नकारात्मक प्रभाव	40	50
2	आत्मविश्वास मे कमी	08	10
3	समाजिक दूरी	20	25
4	कोई विशेष प्रभाव नही	12	15
	कुल	80	100

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि चयनित उत्तरदाताओं मे से सर्वाधिक उत्तरदाताओं का कहना है कि नशे की लत का उनकी नौकरी पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा है जबकि 25 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार नशे के कारण सामाजिक दूरी बढ़ी है 10 प्रतिशत के आत्मविश्वास मे कमी आई है तथा मात्र 10 प्रतिशत का कहना है कि उनके जीवन पर नशे का कोई विशेष प्रभाव नही पड़ा है अत: स्पष्ट है कि नशे की लत का व्यसनियों के जीवन पर नकारात्मक प्रभाव ही पड़ता है।

तालिका क्रमांक - 07

नशे का पारिवारिक जीवन पर प्रभाव

क्रमांक	नशे का पारिवारिक जीवन पर प्रभाव	आवृति	प्रतिशत
1	हाँ	48	60
2	नहीं	32	40
	कुल	80	100

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि समस्त उत्तरदाताओं मे से 60 प्रतिशत उत्तरदाओं के अनुसार मादक द्रव्य का उसके पारिवारिक जीवन पर प्रभाव पड़ा है जबकि 40 प्रतिशत उत्तरदाताओं का कहना है कि मादक द्रव्यों के सेवन से उनके पारिवारिक जीवन पर कोई प्रभाव नही पड़ा है।

तालिका क्रमांक - 08
मानसिक शारीरिक स्वास्थ्य पर प्रभाव

.क्रमांक	मानसिक/ शारीरिक स्वास्थ्य पर प्रभाव	आवृति	प्रतिशत
1	मनसिक-तनाव/ डिप्रेशन	40	50
2	शारीरिक कमजोरी/ भूख की कमी	32	40
3	कोई विशेष प्रभाव नही	08	10
	कुल	80	100

उपर्युक्त तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि 50 प्रतिशत मादक द्रव्य व्यसनियों पर मादक द्रव्यों के सेवन करने से उनमे मानसिक तनाव उत्पन्न हुआ है 40 प्रतिशत उत्तरदाताओं को शारीरिक कमजोरी एवं भूख में कमी महसूस होती है तथा 10 प्रतिशत व्यसनियों के अनुसार उनके स्वास्थ्य पर मादक द्रव्यों का कोई विशेष प्रभाव नही पड़ा है।

तालिका क्रमांक - 09
नशा मुक्ति मे व्यक्तियों द्वारा सहायता

क्रमांक	व्यक्तियों द्वारा सहायता	आवृति	प्रति'ात
1	परिवार के सदस्य	40	50
2	मित्रों ने	24	30
3	डॉक्टर ने	12	15
4	अन्य	04	05
	कुल	80	100

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि 50 प्रतिशत मादक द्रव्य व्यसनियों को व्यसन से मुक्त होने मे उनके परिवार के सदस्यों द्वारा सहायता प्रदान की जा रही है जबकि 30 प्रतिशत को मित्रों से 15 प्रतिशत को डॉक्टरों से नशा मुक्त होने में सहायता प्राप्त हो रही है।

उपकल्पना परीक्षण

उपकल्पना (H1) **- व्यसनियों के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य पर मादक द्रव्यों का दुष्प्रभाव पड़ता है।**

परिणाम- उत्तरदाताओं द्वारा एकत्रित तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि अधिकांश उत्तरदाताओं के मानसिक स्वास्थ्य पर मादक द्रव्यों का नकारात्मक प्रभाव पड़ा है। मादक द्रव्यों का सेवन करने से उनमे मानसिक तनाव, डिप्रेशन की समस्या बढ़ी है साथ ही साथ आधे के लगभग उत्तरदाताओं के शारीरिक स्वास्थ्य को भी मादक द्रव्यों ने प्रभावित किया है। उनमे मादक द्रव्यों के सेवन से शारीरिक कमज़ोरी, भूख की कमी

आदि समस्याएं उत्पन्न हुई है। अत: स्पष्ट है कि मादक द्रव्यों का सेवन उत्तरदाताओं के शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव डालती है। अत: उपकल्पना स्वीकृत हुई।

उपकल्पना (H2) – **मादक द्रव्यों का व्यसनियों के सामाजिक एवं पारिवारिक संबंधों पर नकारात्मक प्रभाव पडता है।**

परिणाम- उपर्युक्त शोध विवरण से स्पष्ट है कि आधे से अधिक उत्तरदाताओं के अनुसार मादक द्रव्यों का सेवन करने से उनके पारिवारिक जीवन पर इसका नकारात्मक प्रभाव पडा है तथा मादक द्रव्यों के सेवन ने न केवल उत्तरदाताओं के पारिवारिक जीवन को प्रभावित किया है बल्कि उनके सामाजिक जीवन को भी प्रभावित किया है आधे से अधिक उत्तरदाताओं का कहना है कि मादक द्रव्यों के सेवन से उनकी नौकरी पर नकारात्मक प्रभाव पडा है तथा 50 प्रतिशत का कहना है कि इससे उनके सामाजिक संबंधों मे दूरी आई है। अत: स्पष्ट है कि मादक द्रव्य व्यसनियों के सामाजिक व पारिवारिक जीवन पर नकारात्मक प्रभाव डालता है।

अत: उपकल्पना स्वीकार की जाती है।

संदर्भ सूची-

1. Julien,Robert M.and Matoka M.(2008) "Narcotic" *Journal of General Internal Medicine*. Volume 23:9(ISSN- 1336-1338) https://hi.m.wikipedia.org
2. What is Addiction? Meaning of Addiction.
3. *https://social-work.in/vyasan-kise-kahte-hain.*

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 42, Hindi Edition, Year-21, Jan.- June 2025

महात्मा गाँधी का रचनात्मक कार्यक्रम

• संतोष यादव
•• रश्मि सोमवंशी

सारांश- महात्मा गाँधी भारतीय स्वतंत्रता संगाम के महानायक थे, जिनकी विचारधारा सत्याग्रह और अहिंसा पर आधारित थी। उनकी सोच के मध्यवर्ती सिद्धान्तों के माध्यम से वे रचनात्मक कार्यक्रमों की भूमिका द्वारा प्रायः संचालित रचनात्मक कार्यक्रम भारतीय जनता के जीवन में नैतिकता, संस्कृति, स्वदेशी और स्वयंसेवा को प्रमुखता देते थे। उन्होंने ग्रामीण विकास, खादी उत्पादन, ग्राम स्वराज्य और आर्थिक समृद्धि के लिए विभिन्न योजनाएँ प्रस्तावित की।

मुख्य शब्द- समाज के कार्यक्रम, गाँधी का देश के प्रति प्रेम, समाज का दर्पण, समाज सेवी

महात्मा गाँधी चाहते थे गाँवों का विकास हो। गाँधी–दर्शन ग्रामीण जीवन स्तर में सुधार और सम्पन्नता लाने के लिए चहुँमुखी प्रयासों पर बल देते थे। महात्मा गाँधी के मन में देहातों के लिए अटूट प्रेम था और ग्रामीण भारत की समस्याओं से वे पूरी तरह वाकिफ थे, वे हमेशा देहातों की उन्नति की तरफ ध्यान दिलाते रहे और उनके सब रचनात्मक कार्यों का उद्देश्य गाँवों की गरीबी को दूर करना था। वे चाहते थे कि ग्रामवासी भी स्वतंत्र भारत में रहने वाली आबादी को रोजगार के साधन सुलभ कराके उनका जीवन स्तर ऊँचा उठाया जाये।[1]

महात्मा गाँधी के रचनात्मक कार्यक्रमों से जुड़ी सुश्री आनंदीबेन ने रेलमंत्री को पत्र लिखकर नरसी मेहता के "वैष्णव जन तो तेने कहिय" भजन को रेल सेवाओं में रोक देने पर आपत्ति प्रकट की है कि रेल मंत्रालय ने संतो, महात्माओं, भक्त, कवियों के गीतों, पदों, भजनों के रेलों में प्रसारण पर रोक लगा दी है। उसे कदाचित उनमें साम्प्रदायिकता की अथवा वर्गवाद की मनुवादी गंध आई होगी, आज सभी समाजशास्त्री, चिंतक, सहृदय मनीषी, राजनीतिज्ञों की बड़ी चिंता यह है कि मनुष्य गुणवत्ता, उसका मानव अमिधा सार्थक करने वाला मानववाद, दिन भर दिन क्षीण होता जा रहा है।[2]

एक नये भारत एवं एक नूतन समाज की संरचना की अवधारणा के निर्माण में गाँधी पर विचार आवश्यक हो जाता है। राजनीति एवं अर्थनीति में नैतिकता का समावेश,

• शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, लॉर्ड्स विश्वविद्यालय, चिकानी, अलवर
•• रिसर्च सुपरवाइजर, लॉर्ड्स विश्वविद्यालय, चिकानी, अलवर

धर्म का अभिनव प्रतिपादन, सम्पत्ति संबंधों में अपरिग्रह की अवधारणा, अहिंसक समाज का निर्माण, राष्ट्रवाद की अस्वीकृति एवं मातृभाव पर निर्मित एक विश्व समाज की संरचना, प्रतिस्पर्धा के स्थान पर सहयोग एवं सार रूप में राजनीति के स्थान पर लोकनीति को कतिपय अवधारणाएँ प्रदान करते हैं।[3]

हिन्दुस्तान की औरतें अंधकार में डूबी हुई थी। सत्याग्रह ने उन्हें अपने आप से बाहर आने का मौका दिया है। कोई भी दूसरा अन्य तरीका स्त्रियों में इतनी चेतना नहीं भर सकता है। स्त्रियों के लिए रचनात्मक कार्यक्रम की सबसे अधिक आवश्यकता है, क्योंकि इसी के आधार पर वे पुरूषों के साथ बराबरी का दर्जा पा सकती है। सेवा के धार्मिक कार्यों में स्त्री ही सच्ची सहायक और साथी है, जिन रूढ़ियों और कानूनों के द्वारा स्त्रियों को रोका गया है, उनमें स्त्रियों का कोई योगदान नहीं था, जबकि इन रूढ़ियों और कानूनों ने स्त्रियों पर लगातर जुल्म ढाये हैं और उन्हें कुचला है।[4]

मेरे जीवन का यह पहला भाषण माना जा सकता है। मैंने भाषण की अच्छी तैयारी की थी। मुझे सत्य पर बोलना था। व्यापारियों के मुँह से मैं यह सुनता आ रहा था कि व्यापार में सत्य नहीं चल सकता। मैं इस बात को भी नहीं मानता था, आज भी नहीं मानता। इस तरह के कहने वाले व्यापारी लोग आज भी मौजूद है कि व्यापार के साथ सत्य का मेल नहीं बैठ सकता। वे व्यापार को व्यवहार कहते हैं।[5]

महात्मा गाँधी न तो एक दार्शनिक थे, जिन्होंने गहन अध्ययन एवं मनन के पश्चात् एक सुव्यवस्थित दर्शन प्रस्तुत किया हो, न ही वे एक राजनीतिज्ञ थे, जिन्होंने राजनीति को मानकर एक नेता की भूमिका निभायी हो और न ही वे एक सन्त थे, जिन्होंने इस जगत् को मिथ्या मानकर अपने को ब्रह्म में लीन कर दिया हो, किन्तु अजीब बात है वे ये सब कुछ न होते हुए भी, यही सब कुछ थे। अपने जीवन–दर्शन को व्यवस्थित रूप देने का अवकाश नहीं था, फिर भी दार्शनिक मुद्रा में कठोर सिद्धान्तों का प्रतिपादन उन्होंने किया। राजनीतिज्ञ न होते हुए भी उन्होंने अपने को देश और विदेश की राजनीति से हर क्षण सम्बद्ध किया।[6]

देश की स्वतंत्रता के लिए असहयोग आन्दोलन के प्रति गाँधीजी कितने दृढ़ थे, इसका आभास विशेष कॉग्रेस अधिवेशन के अवसर पर समस्त देश को मिल चुका था। बाद में आपने इस सम्बन्ध में अनेक बार उसका स्पष्टीकरण तथा व्याख्या प्रस्तुत कर लोगों को शंकाओं का समाधान किया। 15 अगस्त सन् 1920 को महात्मा गाँधी असहयोग आन्दोलन का प्रचार करते तथा जनता में नव जागरण की भावना उत्पन्न करने के लिए लखनऊ पहुँचे। यहाँ एक पत्रकार ने उनसे पुछा कि आप सच्चे शासन सुधार का पक्ष लेकर उसका संचालन तथा सरकार से सहयोग क्यों नहीं करते।[7]

गाँधीजी ने एक ऐसे आदर्श समाज की परिकल्पना की है, जो जाति विहीन और वर्ग विहीन रहते हुए अन्याय, शोषण से मुक्त होगा, जिसमें समानता, सहयोग, सहकार, बंधुत्व आदि के भाव निहित होंगे। ऐसे आदर्श समाज का निर्माण समाज के लोगों के द्वारा ही संभव है, समाज के लोगों का चरित्र, आचरण और व्यवहार जिस तरह का होगा उसी आधार पर समाज का भी निर्माण होगा। स्वयं गाँधी के बारे में प्रत्येक व्यक्ति जिम्मेदार होते हैं।[8]

मैं बम्बई में और विलायत में घर बस चुका था, उसमें और नेटाल की व्यवस्था जमाने में फर्क था। नेटाल में कुछ खर्च मैंने केवल प्रतिष्ठा के लिए चला रखा था। मैंने मान लिया था कि नेटाल में हिन्दुस्तानी बैरिस्टर के नाते और हिन्दुस्तानियों के प्रतिनिधि के रूप में मुझे काफी खर्च करना चाहिए, इसलिए मैंने अच्छे मौहल्ले में अच्छा घर लिया था, घर को अच्छी तरह सजाया था। भोजन सादा था पर अंग्रेज मित्रों को न्योतना होता था और हिन्दुस्तानी साथियों को भी न्योता था। इस कारण सम्भवत: वह खर्च भी बढ़ गया था।[9]

मोहनदास कर्मचन्द गाँधी जो प्राय हम लोगों जैसे ही एक साधारण मानव थे, भारत में जन्मे भारतीयों के लिए जीवित रहे, दु:ख सहे तथा शहीद हो गए। वे ने केवल भारत के लिए अपितु पूरी मानवता के लिए एक महान राजनैतिक एवं आध्यात्मिक नेता थे। उनका जीवन न केवल भारत के लिए अपितु पूरे विश्व के लिए महत्वपूर्ण था। वर्तमान एवं आने वाली पीढ़ियाँ उनको न केवल एक देशभक्त, राजनैतिक नेता तथा राष्ट्र निर्माता के रूप में, बल्कि इससे कहीं बढ़कर याद रखेगी। गाँधीजी के जन्म के समय भारत में ब्रिटिश शासन स्थापित हो चुका था।[10]

स्वराज्य शब्द का अर्थ स्वयं और उसकी प्राप्ति के साधन यानी सत्य और अहिंसा जिनका पालन करने के लिए हम प्रतिज्ञाबद्ध हैं, ऐसी किसी संभावना को असंभव सिद्ध करते हैं कि हमारा स्वराज्य किसी के लिए तो अधिक होगा और या कम लाभकारी। मेरे सपने का स्वराज्य तो गरीबों का स्वराज्य होगा। जीवन कि जिन आवश्यकताओं का उपभोग राजा और अमीर लोग करते हैं।[11]

भारत एवं भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के एक प्रमुख राजनैतिक एवं आध्यात्मिक नेता थे। वे सत्याग्रह के माध्यम से अत्याचार के प्रतिकार के अग्रणी नेता थे, उनकी इस अवधारणा की नींव सम्पूर्ण अहिंसा के सिद्धान्त पर रखी गयी थी, जिससे भारत को भारतीय स्वतंत्रता संग्राम दिलाकर पूरे विश्व में जनता के नागरिक अधिकारों एवं स्वतंत्रता के प्रति आन्दोलन के लिये प्रेरित किया। उन्हें संसार में साधारण जनता महात्मा गाँधी के नाम से जानती है। गाँधी को महात्मा के नाम से सबसे पहले 1915 में राजवैध जीतराम कालीदास ने संबोधित किया था।[12]

मेरी मातृभाषा में कितनी भी खामियाँ क्यों न हो, मैं उससे उसी तरह चिपटा रहूँगा जिस तरह अपनी माँ की छाती हो, वही मुझे जीवनदायी दूध दे सकती है। मैं अंग्रेजी को भी उसकी जगह प्यार करता हूँ लेकिन अगर अंग्रेजी उस जगह को हड़पना चाहती हो जिसकी वह हकदार नहीं है, तो मैं उससे सख्त नफरत करूँगा। यह बात मानी हुई है कि अंग्रेजी आज सारी दुनिया की भाषा बन गई है, इसलिए मैं उसे दूसरी जबान के तौर पर जगह दूँगा।[13]

संदर्भ सूची-

1. डॉ. नेमा, जी.पी. "गाँधी का दर्शन", प्रतापसिंह, रिसर्च पब्लिकेशन्स, जयपुर, 1991, पृष्ठ 310.
2. चतुर्वेदी, डॉ. सत्येन्द्र "गाँधीविहिन भारत लोक समाज एवं राजनीति', पं. जवाहर लाल नेहरू, बाल साहित्य अकादमी, राजस्थान, जयपुर, 2022, पृष्ठ-47.
3. के.एल. कमल, "गाँधी चिन्तन", जयपुर पब्लिशिंग हाऊस, जयपुर, 1996, पृष्ठ 07.
4. शर्मा, राजेन्द्र मोहन "महात्मा गाँधी", सर्वोदय दर्शन एवं समग्र सर्वोदय विचार परीक्षा",

पिंकसिटी पब्लिशर्स, जयपुर, 2022, पृष्ठ संख्या 110.

5. डॉ., धर्मवीर चन्देल, "गाँधी चिन्तन के विभिन्न पक्ष", राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2019, पृष्ठ संख्या 23.
6. प्रताप, सिंह, "गाँधी का दर्शन", रिसर्च पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, जयपुर, 2002, पृष्ठ संख्या 2.
7. मिगलानी, (कौया आयेगा) लता
8. डॉ. प्रयोद जोशी, "गाँधी दृष्टि", राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2022, पृष्ठ 21.
9. महात्मा गाँधी, "सत्य के प्रयोग मेरी आत्मकथा", अरिहन्त पब्लिशर्स एवं डिस्ट्रीब्यूटर्स, टोंक फाटक, जयपुर, राजस्थान, 2023, पृष्ठ 137.
10. गाँधी, महात्मा, "जीवनी", दीपक ऑफसेट, दिल्ली, पृष्ठ संख्या 7.
11. गाँधी, महात्मा, "मेरे सपनों का भारत" मदरसा पब्लिकेशन दिल्ली 2014, पेज नम्बर 7.
12. गाँधी मोहनदास कर्मचन्द, "हिन्द स्वराज्य", गाँधी महात्मा, पृष्ठ 7.
13. गाँधी, महात्मा, "मेरे सपनों का भारत" तुलसी साहित्य पब्लिकेशन्स, 1947, पृष्ठ 174.

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 42, Hindi Edition, Year-21, Jan.- June 2025

शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों में सेवारत प्राध्यापकों की कार्य संतुष्टि का समालोचनात्मक अध्ययन

•बलवंत सिंह
••रेखा बिष्ट

सारांश- -यह शोध पत्र शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों में कार्यरत प्राध्यापकों की कार्य संतुष्टि का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। अध्ययन का मुख्य उद्देश्य महिला एवं पुरुष प्राध्यापकों, के बीच कार्य संतुष्टि के स्तर में संभावित अंतर का विश्लेषण करना है। अनुसंधान में सर्वेक्षण पद्धति का प्रयोग करते हुए 200 प्राध्यापकों (100 पुरुष एवं 100 महिला) को नमूना के रूप में चुना गया। कार्य संतुष्टि मापने हेतु एक मान्य एवं विश्वसनीय प्रश्नावली का प्रयोग किया गया। आँकड़ों के विश्लेषण के लिए टी परीक्षण तथा वर्णनात्मक सांख्यिकी का प्रयोग किया गया। अध्ययन के निष्कर्षों से पता चला कि कार्य संतुष्टि के स्तर में लिंग, के आधार पर आंशिक अंतर देखने को मिला। कुछ क्षेत्रों में महिला प्राध्यापक अधिक संतुष्ट पाई गईं, जबकि कुछ संदर्भों में पुरुष प्राध्यापकों की संतुष्टि अधिक थी। शहरी क्षेत्रों के प्राध्यापक कार्य परिवेश, संसाधनों की उपलब्धता एवं व्यावसायिक विकास के अवसरों के कारण अपेक्षाकृत अधिक संतुष्ट पाए गए। यह अध्ययन नीतिनिर्माताओं, शैक्षणिक प्रशासकों एवं महाविद्यालय प्रबंधन को यह समझने में सहायता करता है कि किस प्रकार कार्य परिवेश में सुधार कर प्राध्यापकों की संतुष्टि तथा शैक्षणिक गुणवत्ता में वृद्धि की जा सकती है।

मुख्य शब्द- कार्य संतुष्टि, शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, प्राध्यापक, तुलनात्मक अध्ययन, लिंग भेद

प्रस्तावना– भारत जैसे विकासशील देश में शिक्षा को सामाजिक, आर्थिक, और सांस्कृतिक प्रगति का आधार माना गया है। शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार के लिए शिक्षक की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है, विशेषकर जब बात शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों की हो, जहाँ भावी शिक्षकों का निर्माण किया जाता है। इन महाविद्यालयों में कार्यरत प्राध्यापक न केवल शैक्षणिक सामग्री का संप्रेषण करते हैं, बल्कि भावी शिक्षकों के मूल्य, दृष्टिकोण और व्यवहार को भी आकार देते हैं। ऐसे में

• शोधार्थी, शिक्षा संकाय, लॉड्र्स यूनिवर्सिटी अलवर
••शोध निर्देशिका शिक्षा संकाय, लॉड्र्स यूनिवर्सिटी अलवर

प्राध्यापकों की कार्य संतुष्टि का स्तर न केवल उनकी स्वयं की कार्यक्षमता को प्रभावित करता है, बल्कि संस्था की शैक्षणिक गुणवत्ता और छात्र-शिक्षकों के विकास पर भी गहरा प्रभाव डालता है।

कार्य संतुष्टि एक मानसिक अवस्था है, जो व्यक्ति के कार्य से संबंधित अनुभवों के मूल्यांकन पर आधारित होती है। यह संतुष्टि कई कारकों पर निर्भर करती है, जैसे कार्य का स्वरूप, कार्य का बोझ, वेतनमान, पदोन्नति के अवसर, सहकर्मियों और उच्च अधिकारियों के साथ संबंध, संस्थागत सुविधाएं, तथा कार्यस्थल की सामाजिक और शारीरिक परिस्थितियाँ। विशेष रूप से शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों में कार्यरत प्राध्यापकों के लिए, जहाँ अकादमिक कार्य के साथ-साथ प्रशासनिक और शोध संबंधी जिम्मेदारियाँ भी निभानी होती हैं, कार्य संतुष्टि का महत्व और अधिक बढ़ जाता है।

महाराजा सूरजमल बृज विश्वविद्यालय, भरतपुर से संबंध शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों में कार्यरत महिला और पुरुष प्राध्यापकों की कार्य संतुष्टि का अध्ययन इसलिए भी प्रासंगिक है क्योंकि इससे यह ज्ञात किया जा सकता है कि क्या दोनों लिंगों के प्राध्यापक समान रूप से संतुष्ट हैं या उनके अनुभवों में कोई भिन्नता है। इसके अतिरिक्त, यह अध्ययन इस बात पर भी प्रकाश डाल सकता है कि विश्वविद्यालय से संबद्धता, संसाधनों की उपलब्धता, प्रशासनिक सहयोग, और संस्थागत नीतियाँ प्राध्यापकों की संतुष्टि को किस प्रकार प्रभावित करती हैं।

वर्तमान अध्ययन के माध्यम से यह प्रयास किया जा रहा है कि कार्य संतुष्टि के विभिन्न आयामों जैसे कार्य वातावरण, व्यावसायिक विकास के अवसर, संस्थागत प्रबंधन, शैक्षणिक स्वतंत्रता, और व्यक्तिगत एवं सामाजिक स्वीकृति का विश्लेषण किया जाए। साथ ही यह भी देखा जाए कि महिला और पुरुष प्राध्यापकों के दृष्टिकोण में क्या कोई अंतर परिलक्षित होता है। इस विश्लेषण से प्राप्त निष्कर्ष शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों के प्रशासनिक अधिकारियों और नीति-निर्माताओं को नीतियों के निर्माण और संशोधन में उपयोगी मार्गदर्शन प्रदान कर सकते हैं।

संबंधित शोध साहित्य

सिंह रंजीत 2010 ने जब स्ट्रेस जॉब सेटिस्फेक्शन एंड एडजेस्टमेंट अमोंग फिजिकल एजुकेशन टीचर्स का हरियाणा स्कूल का अध्ययन किया शोध के उद्देश्य- हरियाणा के स्कूलों के शारीरिक शिक्षकों की कार्य संतुष्टि एवं काम के तनाव के स्तर के बीच समायोजन का पता लगाना। न्यादर्श के रूप में हरियाणा राज्य के 300 शारीरिक शिक्षा शिक्षकों को चुना गया प्रदत्त संकलन हेतु श्रीवास्तव एवं सिंह द्वारा निर्मित प्रमापीकृत कार्य तनाव इंडेक्स, सिंह एवं शर्मा द्वारा निर्मित एवं प्रमापीकृत कार्य संतुष्टि स्केल तथा एस के मंगल द्वारा निर्मित एवं प्रमापीकृत शिक्षक समायोजन इन्वेंटरी का प्रयोग किया गया। प्रदत्तो की सांख्यिकीय गणना हेतु मध्य, प्रमाप विचलन सहसंबंध एवं टी टेस्ट का प्रयोग किया गया निष्कर्ष रूप में पाया गया कि काम के तनाव के चर पर हरियाणा में स्थित शारीरिक शिक्षा स्कूलों के पुरुष एवं महिला शिक्षकों में सार्थक अंतर नहीं पाया गया ग्रामीण क्षेत्रों में स्थित स्कूलों के शिक्षकों में शहरी शिक्षकों की तुलना में अधिक अंतर पाया गया।

राय.एन. वी. और कुमारी के.वी. रतना 2016 ने माध्यमिक विद्यालय के शिक्षकों की कार्य संतुष्टि को प्रभावित करने वाले कारकों का अध्ययन किया शोध उद्देश्य – माध्यमिक विद्यालय के शिक्षकों की कार्य संतुष्टि पर लैंगिक प्रभाव, वैवाहिक स्थिति,आयु, अनुभव, पद, विद्यालय के स्थान की स्थिति एवं विद्यालय के अनुदेशन माध्यम के प्रभाव का अध्ययन करनाप्रस्तुत अनुसंधान में यादृच्छिक न्यादर्श विधि द्वारा आंध्र प्रदेश के तीन जिलों श्रीकाकुलम विजयनगर विशाखापट्टनम के माध्यमिक विद्यालयों से 500 कार्यरत शिक्षकों का चयन किया गया। प्रदत्त संकलन हेतु स्वनिर्मित प्रश्नावली का प्रयोग किया गया है शोध से प्राप्त निष्कर्ष माध्यमिक विद्यालय में कार्यरत पुरुष एवं महिला शिक्षकों की कार्य संतुष्टि के बीच सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत पुरुष शिक्षकों की कार्य संतुष्टि महिला शिक्षकों की कार्य संतुष्टि की तुलना में उच्च थी तथा माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत प्रधानाध्यापक एवं विद्यालय सहायकों की कार्य संतुष्टि के बीच सार्थक अंतर पाया जाता है।

मुख्य शब्दों का परिभाषिकरण

कार्य संतुष्टि– से तात्पर्य उस मानसिक स्थिति या भावनात्मक प्रतिक्रिया से है, जो किसी व्यक्ति को अपने कार्य या नौकरी से प्राप्त होती है। जब कोई व्यक्ति अपने कार्य, कार्यस्थल, सहकर्मियों, वेतन, प्रोन्नति की संभावनाओं, कार्य की प्रकृति, और संगठन की नीतियों से संतुष्ट होता है, तो उसे कार्य संतुष्टि अनुभव होती है।

शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों से तात्पर्य ऐसे शैक्षणिक संस्थानों से है जहाँ भावी शिक्षकों को शिक्षण–कला, शैक्षिक मनोविज्ञान, मूल्यांकन तकनीक, पाठ योजना निर्माण, कक्षा प्रबंधन तथा अन्य शैक्षिक एवं व्यावसायिक दक्षताओं का प्रशिक्षण दिया जाता है, जिससे वे कुशल, प्रभावी एवं जिम्मेदार शिक्षक बन सकें। शैक्षिक पाठ्यक्रम: जैसे B.Ed (Bachelor of Education), M.Ed (Master of Education), D.El.Ed (Diploma in Elementary Education) आदि।

प्राध्यापकों से तात्पर्य उच्च शिक्षण संस्थानों– जैसे विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों, या शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों– में शिक्षण, अनुसंधान, मार्गदर्शन और शैक्षणिक प्रशासन से जुड़े उन विद्वान शिक्षकों से है जो विद्यार्थियों को उच्च शिक्षा प्रदान करते हैं।

तुलनात्मक अध्ययन से तात्पर्य ऐसा विश्लेषणात्मक अध्ययन है जिसमें दो या दो से अधिक समूहों (जैसे–महिला और पुरुष प्राध्यापक, सरकारी और निजी महाविद्यालयों के शिक्षक, ग्रामीण और शहरी क्षेत्र के शिक्षक आदि) के बीच नौकरी या कार्य से जुड़ी संतुष्टि के स्तर की तुलना की जाती है।

अध्ययन की उपादेयता- प्राध्यापकों की कार्य संतुष्टि उनके कार्य–प्रदर्शन, प्रेरणा, मानसिक स्वास्थ्य, और संस्थागत विकास से सीधे जुड़ी होती है। यदि वे कार्य से संतुष्ट नहीं हैं, तो इसका सीधा प्रभाव शिक्षण कार्य पर पड़ता है। अत: यह अत्यंत आवश्यक हो जाता है कि हम यह जानें कि वे कार्य से कितने संतुष्ट हैं और किस सीमा तक उनके कार्य वातावरण ने उनकी संतुष्टि को प्रभावित किया है।

समस्या कथन- वर्तमान अनुसंधान कार्य हेतु समस्या का प्रस्तुत शोध विषय "शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों में सेवारत प्राध्यापकों की कार्य संतुष्टि का समालोचनात्मक अध्ययन।"

शोध अध्ययन के उद्देश्य – शोध विषय की प्रकृति के अनुसार प्रस्तुत अध्ययन के उद्देश्यों का निर्धारण निम्न प्रकार से किया गया है।

- राजस्थान के भरतपुर और डीग जिले के संबद्ध शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय में सेवारत प्राध्यापक की कार्य संतुष्टि का स्तर ज्ञात करना।
- राजस्थान के भरतपुर और डीग जिले के संबद्ध शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय में पुरुष व महिला प्राध्यापकों की कार्य संतुष्टि का तुलनात्मक अध्ययन करना।

शोध परिकल्पनाएँ

- राजस्थान के भरतपुर और डीग जिले के संबद्ध शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों में सेवारत महिला प्राध्यापक एवं पुरुष प्राध्यापकों की कार्य संतुष्टि में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है
- राजस्थान के भरतपुर और डीग जिले के संबद्ध शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों में सेवारत प्राध्यापकों की कार्य संतुष्टि का स्तर उच्च है।

न्यादर्श- इस अध्ययन में कुल 200 प्राध्यापक शामिल किए गए, जिनमें 100 पुरुष एवं 100 महिला प्राध्यापक हैं। ये प्राध्यापक भरतपुर और डीग जिले के शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों से लिए गए हैं।

शोध में प्रयुक्त विधि- इस अध्ययन में वर्णात्मक विधि के अंतर्गत आने वाली सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

शोध सीमा- प्रस्तुत शोध के अंतर्गत राजस्थान के भरतपुर जिले में स्थित महाराजा सूरजमल बृज विश्वविद्यालय से संबंध शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों मैं सेवारत महिला व पुरुष प्राध्यापकों को सम्मिलित किया गया है।

प्रयुक्त मापनी- कार्य संतुष्टि मापने हेतु स्वनिर्मित प्रश्नावली तैयार की गई, जिसमें प्रश्नों की कुल संख्या 30 रखे गये हैं। उक्त कथनों का अंकन सकारात्मक कथनों के लिए पूर्णतया सहमत अंक भार 5, सहमत अंक भार 4, उदासीन अंक भार 3 असहमत अंक भार 2 पूर्णतया असहमत अंक भार 1 तथा नकारात्मक कथनों के लिए पूर्णतया सहमत अंक भार 1, सहमत अंक भार 2, उदासीन अंक भार 3, असहमत अंक भार 4, पूर्णतया असहमत अंक भार 5 दिया गया है।

सांख्यिकीय प्रविधियाँ- प्रदत्तों के विश्लेषण द्वारा प्रदत्तों को अर्थपूर्ण बनाने के लिए मध्यमान, मानक विचलन,एवं टी अनुपात सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग किया गया है।

प्रदत्तो का विश्लेषण एवं व्याख्या

परिकल्पना-1 शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय में सेवारत पुरुष व महिला प्राध्यापकों की कार्य संतुष्टि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

तालिका संख्या एक

क्रम संख्या	प्राध्यापक	संख्या	माध्यमान	प्रमाप विचलन	टी मूल्य
01	पुरुष	100	101.15	26.52	0.002
02	महिला	100	101.30	26.37	

df=200−2=198 एवं 0.05 विश्वास के स्तर पर सार्थकता के लिए आवश्यक मान 1.97 है।

उपर्युक्त तालिका का अवलोकन करने से ज्ञात होता है की शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय में सेवारत पुरुष एवं महिला प्राध्यापकों की कार्य संतुष्टि का मध्यमान क्रम शहर 101.15 वह 101.30 है तथा इनका प्रमाप विचलन क्रमशः 26.52 व 26.37 है। सांख्यिकीय गणना करने पर प्राप्त टी- मूल्य 0.002 है जो की डीएफ 198 पर सारणी मूल्य 0.05 स्तर पर 1.97 से बहुत कम है।

अत: प्रयुक्त परिकल्पना शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों में सेवारत पुरुष एवं महिला प्राध्यापकों की कार्य संतुष्टि में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है। आंशिक रूप से स्वीकृत की जाती है। अत: निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है, कि शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय में सेवारत पुरुष एवं महिला प्राध्यापकों की कार्य संतुष्टि में अंतर नहीं है।

परिकल्पना - 2 शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय में सेवारत प्राध्यापकों की कार्य संतुष्टि का स्तर उच्च नही है।

तालिका संख्या - 2

प्राप्तांक	प्राध्यापक	x	fx	x^2	fx^2
31-45	5	38	190	1444	7220
46-60	11	53	583	2809	30899
61-75	20	68	1360	4624	92480
76-90	28	83	2324	6889	192892
91-105	42	98	4116	9604	403368
106-120	44	113	4972	12769	561836
121-135	30	128	3840	16384	491520
136-150	20	143	2860	20449	408980
total	**Σ 200**		**Σ 20245**		**Σ 2189195**

माध्यमान= 101.25

मानक विचलन= 104.37

निष्कर्ष- इस अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए-

प्रयुक्त परिकल्पना शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों में सेवारत पुरुष एवं महिला प्राध्यापकों की कार्य संतुष्टि में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है। आंशिक रूप से स्वीकृत की जाती है। अत: निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है, कि शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय में सेवारत पुरुष एवं महिला प्राध्यापकों की कार्य संतुष्टि में अंतर नहीं है।

परिकल्पना -2 शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय में सेवारत प्राध्यापकों की कार्य संतुष्टि का स्तर उच्च नही है।

प्राध्यापकों का औसत कार्य संतोष स्तर 101.25 पाया गया, जो संतोषजनक स्थिति को दर्शाता है। मानक विचलन 104.37 पाया गया, जो बताता है कि प्राध्यापकों की संतुष्टि में व्यक्तिगत स्तर पर व्यापक अंतर है। इससे यह स्पष्ट होता है कि अधिकांश प्राध्यापक कार्य से संतुष्ट हैं, और कार्य संतुष्टि का स्तर उच्च है अत: परिकल्पना अस्वीकृत की जाती है।

सुझाव

- संस्थागत प्रशासन को कार्य वातावरण को और अधिक सहायक एवं प्रेरणादायक बनाना चाहिए।
- प्राध्यापकों के व्यावसायिक विकास हेतु समय-समय पर कार्यशालाओं एवं सेमिनारों का आयोजन किया जाना चाहिए।
- महिला एवं पुरुष प्राध्यापकों के बीच संतोष के अंतर को दूर करने के लिए समावेशी नीति बनाई जानी चाहिए।

संदर्भ सूची-

1. अग्रवाल, जे. सी. (2010), विकासशील समाज में शिक्षक और शिक्षा (पाँचवाँ संस्करण), नई दिल्ली, विकास पब्लिशिंग हाउस।
2. बेस्ट, जे. डब्ल्यू., एवं कान, जे. वी. (2006), शिक्षा में अनुसंधान (दसवाँ संस्करण)। नई दिल्ली, पियर्सन एजुकेशन।
3. ल, क, ई. ए. (1976). कार्य संतोष की प्रकृति और कारण। एम. डी. डुनेट (संपादक), औद्योगिक और संगठनात्मक मनोविज्ञान का हस्तपुस्तिका (पृष्ठ 1297–1349)। शिकागो: रैंड मैकनेली।
4. राव, वी. एस. पी. (2009), संगठनात्मक व्यवहार। मुंबई: हिमालय पब्लिशिंग हाउस।
5. शर्मा, आर. ए. (2006), शिक्षक शिक्षा: सिद्धांत, विचार और व्यवहार। मेरठरू आर. लाल बुक डिपो।
6. सिंह, ए. के. (2012), व्यवहारिक विज्ञानों में परीक्षण, मापन और अनुसंधान विधियाँ (द्वितीय संस्करण)। पटनारू भारती भवन।
7. यादव, एम. एस. एवं लक्ष्मी, टी. के. एस. (1995). शिक्षक शिक्षा की एक पुस्तिका। नई दिल्ली: एनसीईआरटी।
8. भारत सरकार (1986), राष्ट्रीय शिक्षा नीति। मानव संसाधन विकास मंत्रालय, नई दिल्ली।
9. विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (2019), कैरियर उन्नयन योजना (सीएएस) हेतु दिशानिर्देश। यूजीसी, नई दिल्ली।
10. डैश, बी. एन. (2004). उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक और शिक्षा। हैदराबाद: नीलकमल पब्लिकेशन।
11. कुमार, पी. एवं तिवारी, एस. (2020), 'उच्च शिक्षा में कार्यरत शिक्षकों में कार्य संतोष: एक लिंग आधारित अध्ययन', इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एजुकेशन एंड मैनेजमेंट स्टडीज़, 10(3), 205–210।
12. गुप्ता, आर. (2018), 'महाविद्यालयों के शिक्षकों के कार्य परिवेश और कार्य संतोष का अध्ययन', जर्नल ऑफ एजुकेशनल रिसर्च एंड स्टडीज़, 6(2), 45–52।

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 42, Hindi Edition, Year-21, Jan.- June 2025

छत्तीसगढ़ के ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक सशक्तिकरण में गैर-सरकारी स्वैच्छिक महिला संगठन की भूमिका

•सुधा यादव
••के.एन. दिनेश

सारांश- प्रस्तुत शोध पत्र छत्तीसगढ़ के ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक सशक्तिकरण में गैर-सरकारी स्वैच्छिक महिला संगठन की भूमिका पर आधारित है। भारतीय जनगणना 2011 के अनुसार भारत की ग्रामीण जनसंख्या में 48 प्रतिशत से अधिक महिलाओं की जनसंख्या है। मानव विकास सूचकांक में ग्रामीण महिलओं की स्थिति ग्रामीण पुरुषों की तुलना में कम है यह असमानता शिक्षा, स्वास्थ्य, सुरक्षा और आर्थिक अवसरों के विभिन्न आयामों में देखी जा सकती है। महिला सशक्तिकरण की दिशा में पूरे देश में शासन स्तर, समाज सेवी संस्थाएं, और स्व-सहायता समूहों द्वारा कार्य किया जा रहा है। छत्तीसगढ़ में ग्रामीण महिला सुरक्षा समूह भी महिला सशक्तिकरण में अपना निरंतर सहयोग दे रही हैं। ग्रामीण महिला सुरक्षा समूह निजी स्वैच्छिक संस्था के रूप में कार्य कर रही है जिसमें महिलाएं अपना नि:स्वार्थ योगदान दे रही हैं। महिला सशक्तिकरण के क्षेत्र में इस संस्था का उल्लेखनीय योगदान रहा है। महिलाओं को उनके अधिकारों के प्रति जागरूक करके, स्वरोजगार करने के लिए प्रेरित कर उनको सामाजिक व आर्थिक रूप से सशक्त बनाने हेतु कार्य करती हैं। प्रस्तुत शोध में छत्तीसगढ़ राज्य के बालोद जिले के गुण्डरदेही तहसील के चार गांव खुटेरी, जुनवानी, सिकोसा, व माहुद को उद्देश्यपूर्ण निदर्शन पद्धति के द्वारा ग्रामीण महिला सुरक्षा समूह के 120 उत्तरदाताओं का चयन किया गया तथा तथ्यों के संकलन के लिए साक्षात्कार अनुसूची एवं अवलोकन पद्धति का उपयोग किया गया है। चयनित उत्तरदाताओं से प्राप्त तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट हुआ कि महिला सशक्तिकरण के कार्य के रूप में महिलाओं को उनके अधिकारों के प्रति जागरूक कर, स्वरोजगार के लिए प्रेरित कर, सरकार द्वारा रोजगार के लिए चलाये जा रहै योजनाओं के बारे में बताकर आर्थिक सशक्तिकरण हतु संचालित गतिविधियों में दोना पत्तल, मैट निर्माण के कार्य से सामाजिक परिस्थिति में सुधार हुआ जिसमें निर्णय लेने की क्षमता में वृद्धि हुई, सामाजिक संपर्क बढ़ा व शिक्षा के क्षेत्र में विकास हुआ है।

• ग्राम-ओड़ारसकरी, तहसील-अर्जुन्दा, जिला-बालोद (छ.ग.)
••विभागाध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग, कल्याण स्नातकोत्तर महाविद्यालय भिलाई (छ.ग.)

मुख्य शब्द- महिला सशक्तिकरण, स्वैच्छिक संगठन,महिला सुरक्षा समूह

प्रस्तावना- प्रस्तुत शोध पत्र में छत्तीसगढ़ के ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक–आर्थिक सशक्तिकरण में गैर–सरकारी स्वैच्छिक महिला संगठन की भूमिका का अध्ययन किया गया है। महिला सशक्तिकरण महिलाओं को सामाजिक–आर्थिक रूप से सशक्त बनाने में सहयोग करता है। इस दिशा में शहरी क्षेत्र के साथ ग्रामीण क्षेत्र में भी कार्य किये जा रहे हैं जिसके सकारात्मक परिणाम देखे जा सकते हैं इसी तरह बालोद जिले के गुण्डरदेही तहसील के एक पंजीकृत गैर–सरकारी संस्था ग्रामीण महिला सुरक्षा समूह भी कार्यरत है। ग्रामीण महिला समूह एक समाजसेवी संस्था के रूप में कार्य करती है तथा शासन की योजनाओं को लोगों तक पहुंचाने में सहयोग करती है इन्ही योजनाओं में से एक महिला सशक्तिकरण है जिसके द्वारा महिलाओं को स्वावलम्बन की ओर प्रेरित कर रोजगार व व्यवसाय के क्षेत्र स्थान दिलाया जा सके। ग्रामीण महिला सुरक्षा समूह द्वारा महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए कई तरह के कार्य किये जा रहे हैं जिसमें महिलाओं को उनके अधिकारों के प्रति जागरूक कर, रोजगार के लिए प्रेरित करके, सरकार की योजनाओं को बताकर व रोजगार के लिए ऋण दिलाकर सहयोग करती हैं आर्थिक सशक्तिकरण के लिये भी इनके द्वारा गतिविधि संचालित किया जाता है जिसका परिणाम यह हुआ कि महिलाओं का समाज में सामाजिक संपर्क बढ़ा, शिक्षा के क्षेत्र में विकास हुआ व निर्णय लेने की क्षमता में वृद्धि हुई।

सामान्य तौर पर महिलाओं के महत्वपूर्ण मुद्दों पर आज बदलाव देखे जा सकते हैं जिसमें महिला सशक्तिकरण सबसे प्रमुख है आज की स्थिति काफी विकसित हो गई है और महिलाओं की भागीदारी का दायरा बढ़ गया है जिसने महिलओं को समाज में विशेष स्थान दिलाया है।[1] महिलाओं के हितों की रक्षा के लिये विभिन्न संवैधानिक प्रावधानों को लागू किया गया व उनके उत्थान के लिये अनेक प्रकार के सामाजिक–आर्थिक विकास के उपाय किये गये जो महिला सशक्तिकरण को आगे बढ़ाने में मददगार हैं।[2] महिला सशक्तिकरण को किसी भी देश के समग्र और सतत् विकास के लिए महत्वपूर्ण कारक के रूप में तेजी से पहचाना गया है जिसमें महिलाओं के आर्थिक सुधार को शामिल करके आर्थिक सशक्तिकरण को सफल बनाया जा सकता है।[3] महिलाओं को आगे बढ़ाने व समाज में विशेष स्थान दिलाने में महिला सशक्तिकरण एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।[4] महिलाओं का सशक्तीकरण विकास के महत्वपूर्ण मुद्दों में से एक है। जिसमें दुनिया भर में गरीबी उन्मूलन और महिला सशक्तिकरण के लिये प्रमुख सामाजिक घटना के रूप में विकसित हुआ है। जिसने महिलाओं को सामाजिक–आर्थिक सशक्तिकरण की प्रक्रिया में अपना योगदान दिया है।[5] स्व–सहायता समूह सामाजिक–आर्थिक विकास की श्रृखला पर प्रेरक शक्तियों मे से एक है। इसके द्वारा गरीबी उन्मूलन कार्य संभव हैं।[6]

अध्ययन उद्देश्य-

- महिला सशक्तिकरण कार्य से समाज में हुए प्रभाव को ज्ञात करना ।
- ग्रामीण महिला सुरक्षा समूह द्वारा महिला सशक्तिकरण हेतु किये गये कार्यों एवं योगदान को ज्ञात करना।

उपकल्पना-

- महिला सशक्तिकरण के प्रति समाज में जागरूकता आई है।
- ग्रामीण महिला सुरक्षा समूह के महिला सशक्तिकरण के कार्य से महिलाओं के आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है।

तथ्य संकलन एवं उपकरण प्रविधियां- प्रस्तुत शोध पत्र में छत्तीसगढ़ राज्य के बालोद जिले के गुण्डरदेही तहसील के चार गांव का चयन किया गया है जिसमें चयनित गांव है- खुटेरी, जुनवानी, सिकोसा, व माहुद। गुण्डरदेही तहसील के इन चार गांव में 30-30 उत्तरदाताओं कुल 120 उत्तरदाताओं का चयन उद्देश्यपूर्ण निदर्शन पद्धति के आधार पर किया गया है। साक्षात्कार अनुसूची एवं अवलोकन प्रविधि के द्वारा तथ्यों का संकलन किया गया है।

चयनित उत्तरदाताओं से प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण निम्नानुसार प्रस्तुत है -

तालिका क्रमांक-1
उत्तरदाताओं की आयु

क्र.	आयु वर्षों में	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	25 से 35	42	35
2.	36 से 45	35	29.2
3.	46 से 55	25	20.8
4.	56 से 65	18	15
	योग	120	100

तालिका क्रमांक-2
उत्तरदाताओं की शिक्षा

क्र.	शिक्षा	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	प्राथमिक	25	21
2.	माध्यमिक	20	16.7
3.	उच्चतर माध्यमिक	21	17.6
4.	स्नातक	24	20
5.	स्नातकोत्तर	07	5.9
6.	साक्षर	13	10.4
7.	अशिक्षित	10	8.4
	योग	120	100

तालिका क्रमांक-3
महिला सशक्तिकरण के कार्य

क्र.	कार्य	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	महिलाओं को उनके अधिकार के प्रति जागरूक करके	30	33.3
2.	स्वरोजगार करने के लिए प्रेरित करके	30	25
3.	सरकार द्वारा स्वरोजगार के लिए चलाये जा रहे योजनाओं के बारे में बताकर	31	25.9
4.	स्वरोजगार के लिए बैंक या निजी संस्था से ऋण दिलवाकर	19	15.8
	योग	120	100

तालिका क्रमांक-4
आर्थिक सशक्तिकरण हेतु संचालित गतिविधि

क्र.	संचालित गतिविधि	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	मिनी आटा चक्की	38	31.6
2.	दोना पत्तल, मैट निर्माण	45	37.6
3	आचार, पापड़, बड़ी निर्माण	37	30.8
	योग	120	100

तालिका क्रमांक-5
सशक्तिकरण के कार्य से आर्थिक एवं सामाजिक परिस्थिति में सुधार

क्र.	सुधार	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	आर्थिक विकास हुआ है	23	19.2
2.	सामाजिक संपर्क बढ़ा है	36	30
3.	शिक्षा के क्षेत्र में विकास हुआ है	30	25
4.	निर्णय लेने की क्षमता में वृद्धि हुई है	31	25.8
	योग	120	100

परिणाम एवं विश्लेषण- तालिका–1 में प्राप्त तथ्यो के विश्लेषण से स्पष्ट है कि चयनित महिला सुरक्षा समूह के कुल उत्तरदाताओं मे सबसे अधिक आयु समूह वाले महिलाएँ 35 प्रतिशत है जो कि 25 से 35 वर्ष के हैं 29.2 प्रतिशत महिलाएं 36 से 45 वर्ष तथा 20.8 प्रतिशत महिलाएं 46 से 55 वर्ष की हैं एवं सबसे कम 15 प्रतिशत महिलाएं 56 से 65 वर्ष की हैं। इससे स्पष्ट होता है कि महिला सशक्तिकरण में 25 से 35 वर्ष की महिलाओं का योगदान सर्वाधिक है।

तालिका–2 में उत्तरदाताओं की शिक्षा सम्बन्धी तथ्यों के विश्लेषण से प्राप्त हुआ है कि चयनित कुल महिला उत्तरदाताओं में से अधिकांश उत्तरदाता प्राथमिक, स्नतक, उच्चतर माध्यमिक, माध्यमिक व स्नातकोत्तर उत्तीर्ण है जो क्रमशः 21 प्रतिशत, 20 प्रतिशत, 17.6 प्रतिशत, 16.7 प्रतिशत, व 5.9 प्रतिशत है। कुल उत्तरदाताओं में 10.4 प्रतिशत महिलाएं साक्षर तथा अशिक्षित महिलाएं केवल 8.4 प्रतिशत हैं। तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि महिला सुरक्षा समूह की महिलाओं की शिक्षा की स्थिति सामान्य है।

तालिका–3 में प्राप्त तथ्यो के विश्लेषण से स्पष्ट है ग्रामीण महिला सुरक्षा समूह की महिलाएं महिला सशक्तिकरण के कार्य कर रही हैं जिसमें कुल चयनित उत्तरदाताओं में से 33.3 प्रतिशत महिलाओं को उनके अधिकारों के बारे में जागरूक करके, 25.9 प्रतिशत सरकार द्वारा स्वरोजगार के लिए चलाये जा रहे योजनाओं के बारे में बताकर, 25 प्रतिशत स्वरोजगार करने के लिए प्रेरित करके व, 15.8 प्रतिशत स्वरोजगार के लिए बैंक या निजी संस्था से ऋण दिलवाकर महिलाओं को सहयोग करती है। इससे स्पष्ट होता है कि महिला सुरक्षा समूह द्वारा सशक्तिकरण के कार्य किये जा रहे हैं।

तालिका–4 में आर्थिक सशक्तिकरण हेतु संचालित गतिविधि सम्बन्धी विवरण से स्पष्ट है कि ग्रामीण महिला सुरक्षा समूह की महिलाएं आर्थिक सशक्तिकरण हेतु गतिविधि संचालित करती है जिसमें दोना पत्तल व मैट निर्माण, मिनी आटा चक्की, आचार पापड़ बड़ी निर्माण करती है जिनका प्रतिशत क्रमशः 37.6 प्रतिशत, 31.6 प्रतिशत व 30.8 प्रतिशत है।

तालिका–5 में सशक्तिकरण कार्य से आर्थिक एवं सामाजिक परिस्थिति में सुधार सम्बन्धी तथ्यों का विश्लेषण किया गया है और इससे स्पष्ट है कि लोगों में सामाजिक संपर्क बढ़ा है, निर्णय लेने की क्षमता में वृद्धि हुई है, शिक्षा के क्षेत्र में विकास हुआ है व आर्थिक विकास हुआ है जिसका प्रतिशत क्रमशः 30 प्रतिशत, 25.8 प्रतिशत, 25 प्रतिशत व 19.2 प्रतिशत है इससे स्पष्ट है कि सशक्तिकरण कार्य से आर्थिक एवं सामाजिक परिस्थिति में सुधार हुआ है।

उपकल्पना का परीक्षण-

- महिला सशक्तिकरण के प्रति समाज में जागरूकता आई है।
- तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि ग्रामीण महिलाओं द्वारा किये गए महिला सशक्तिकरण कार्य से समाज में जागरूकता आयी है अतः यह उपकल्पना स्वीकृत की गई।
- ग्रामीण महिला सुरक्षा समूह के महिला सशक्तिकरण कार्य से महिलाओं के आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है।

तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि ग्रामीण महिला सुरक्षा समूह द्वारा महिला सशक्तिकरण के लिये किये गये कार्य से महिलाएं आर्थिक रूप से समृद्ध हुई जिससे समाज में सम्मानित स्थान प्राप्त हुआ है अतः यह उपकल्पना स्वीकृत की गई।

संदर्भ सूची-

1. मालविका करलेकर (1995) भारत में महिला सशक्तिकरण की केस स्टडी, महिला अध्ययन के एशियाई जर्नल 1(1), पेज नं. 127–151।
2. संध्या रानी दास (2010) महिलाओं का सशक्तिकरण एक समग्र दृष्टिकोण, महिला शिक्षा और विकास, 40, Books.google.com
3. देवेन्द्र सिंह (2013) सामाजिक–आर्थिक स्थिति और महिलाओं की भूमिका भारतीय परिदृश्य, आर्थिक मामले 58(2), पेज नं. 155।
4. प्रशन्न कुमार (2014) भारत में ग्रामीण महिला सशक्तिकरण, एशियन जनरल आफ मल्टीडिसिप्लिनरी स्टडीज 2(1), पेज नं. 75–79।
5. मेफिदुल इस्लाम, जयन्त कृष्ण सरमानी (2014) महिलाओं को सशक्त बनाने में स्व–सहायता समूहों का प्रभाव ग्रामीण असम का अध्ययन, सामाजिक परिवर्तन और विकास 11(2), पेज नं. 90–97।
6. पार्टकसन रोमुन (2018) स्व–सहायता समूह की भूमिका और सामाजिक–आर्थिक सशक्तिकरण में इसकी चुनौतियां मणिपुर के लिए विशेष संदर्भ संपादकीय बोर्ड, 39, Jameshedparresearchreview.com

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 42, Hindi Edition, Year-21, Jan.- June 2025

गांधी जी का ग्राम स्वराज्य एवं गाँवों के स्वरूप का अध्यन्न (जिला- सरगुजा के संदर्भ मे)

• बिकलेश कुमार गुप्ता

सारांश- भारत देश में प्राचीन समय से ही छोटे बड़े गांव है। गांव और वहां पर रहने वाले लोग की विचारधारा, सत्यता की झलक, ईमानदारी, सीधा और सरलपन हर किसी को मंत्रमुग्ध व आश्चर्यचकित कर देने वाली होती है। गांव में रहने वाला व्यक्ति छल, कपट से कोसों दूर रहकर समाज में बने हुए नियम कायदे, कानून को अपने जीवन का अभिन्न अंग मान कर देश के विकास में सहयोग करते है। ग्रामीण क्षेत्र में संस्कृति की एक जुटता हमें बहुत कुछ सीखने पर मजबूर कर देती है। किस तरह से गांव क्षेत्र में रहने वाले नागरिक अपने अभाव में भी लोगों की सेवा भक्ति एवं गांव के एकता को बनाकर चलते दिखाई पड़ते हैं । गांव का परिवेश, शहर के परिवेश से भले से अंतर हो किंतु शुद्ध वातावरण, शुद्ध हवा, हरे भरे पेड़ पौधे, लोगों के स्पष्ट विचार हमें और किसी को भी एक बार गांव की ओर जाने पर मजबूर कर देती है। काका, बाबा माता, बहने इन सभी का अपने खेत, खलिहानों में, पशुओं की सेवा कहां देखने को मिल सकती है। बड़े शहरों में कोलाहल से करती हुई सड़के, ऊंची-ऊंची इमारतें भले से विकास की राह में ही जरूरी हो किंतु गांव क्षेत्र से निकला हुआ नागरिक, कारीगर ही इन शहरों में रोजगार की तलाश में जाकर अपने कर्तव्य का, अपने कला का प्रदर्शन करता है एवं शहरों का विकास करने में अपनी अहम भूमिका निभाते हैं।

मुख्य शब्द- गांधीजी, ग्राम स्वराज, स्वावलंबन, सामानता, आत्मनिर्भरता, अहिंसा, गांव, परिवेश ।

शोध लेख का उद्देश्य- गांधी जी के ग्राम स्वराज और गांव के वर्तमान स्थिति का अध्ययन करना है।

प्रस्तावना- गांव जहां पर किसान अपनी मातृ भूमि से प्रेम करते हुए पूरे नागरिकों के लिए अनाज का उत्पादन करते हैं। गांव का परिवेश किसी भी व्यक्ति को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए विवश कर देती है, सुकून, शांति, पक्षियों का जानवरों का व कोमल हृदय रखने वाले ग्रामीण, सुख भम एवं शांत वातावरण ऐसा दृश्य केवल और केवल गांव में ही दिखाई पड़ सकती है और उस गांव में रहने वाला कोई भी प्राणी हो सभी गांव से लगाव बनाते हुए, लगाव रखते हुए, अपने गांव से प्रेम करता है एवं गांव को छोड़ने या बदलने की हिम्मत नहीं करता। गांव में ही तरह-तरह की कलाकार, किसी भी क्षेत्र से क्यों ना हो

• सहायक प्राध्यापक राजनीति विज्ञान शासकीय नवीन महाविद्यालय कमलेश्वरपुर मैनपाट जिला- सरगुजा छत्तीसगढ़ ग्राम सुंदरपुर पोस्ट भिठीकंला

बड़ी–बड़ी इमारत बनाने वाले मिस्त्री, मजदूर, शिल्पकार सभी उपलब्ध रहते हैं। गांधी जी इसी विषय को देखते हुए गांव के प्रतिभा को गांव में ही हुनर देना चाहते थे। उनका यह उद्देश्य कहीं ना कहीं पूरे राष्ट्र के लिए एकता का परिचायक था। एवं ग्राम स्वराज की बात गांधी जी ने अपने विचारों में, लेखो में पूरी जनता के सम्मुख प्रस्तुत किये। देश के लिए गांव कितना महत्वपूर्ण है और गांव में फैली कुरीतियों को सुधार करने के लिए कहते हैं कि "यदि भारत को विनाश से बचाना है तो सीढ़ी के सबसे निचले भाग से शुरू करना होगा यदि निचला भाग सढ़ा हुआ है तो ऊपर और बीच की हिस्सों पर किया गया काम अंत में गिर पड़ेगा"

गांधी जी का ग्राम स्वराज का विचार- गांधी जी के शब्दों में ग्राम स्वराज्य अर्थात वह गांव जहां पर खुद का शासन हो वहां के जनता अपना निर्णय अपने आपसी सहमति के अनुसार और मेल–जोल से लेने के लिए सक्षम हो। उन्हें किसी प्रकार की बाहरी दबाव न हो, वहां पर रहने वाले समस्त स्त्री, पुरुष पर भेदभाव जात–पात, शिक्षा, रोजगार, शोषण रहित यह सारी केवल नाम मात्र का ना हो बल्कि स्वराज में उन सभी की सही रूप से प्रत्येक इंसान को समानता और स्वतंत्रता प्राप्त हो वही स्वराज्य गांधी जी गांव में देखना चाहते थे, गांव का दृश्य किस प्रकार का होता है, गांधी जी का मानना था कि "यदि गांवों का नाश होता है तो भारत भी नष्ट हो जाएगा" इस प्रकार से हम यहां पर समझ सकते हैं कि गांधी जी गांव की स्वराज्य को कितना महत्वपूर्ण मानते थे। गांव ही देश की सब कुछ है इसलिए तो उन्होंने गांव को समृद्धि दिलाने के लिए विकास करने के लिए कुटीर उद्योग, बुनियादी शिक्षा, स्वच्छता संबंधित बातें अपनी विषयों में हमेशा रखा करते थे। कुटीर उद्योग जो गांव में विद्यमान होती है। उसे हमेशा जीवित रखना चाहते थे क्योंकि यही वह आजीविका का माध्यम गांव में रहने वाले नागरिकों के लिए अनिवार्य होती है। जो उन्हें कभी भी गरीबी होने पर विवश नहीं कर सकती उनकी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ आवश्यक रूप से सहायक होती है। यही कुटीर उद्योग जिसके अंतर्गत छोटे–मोटे व्यवसाय शामिल होते हैं। जिनका संचालन करके लोगों के हाथों में रोजगार के अवसर निश्चित रूप से रहेंगे, और हर एक गांव का रहने वाला आदमी आर्थिक रूप से सबल हो, उनका मानना था। कि गांव का विकास करना बहुत जरूरी है । क्योंकि गांव से ही इस देश का निर्माण होता है। गांव के परिवेश में सुधारात्मक परिवर्तन लाकर अवश्य ही क्रांतिकारी निर्णय देश के लिए जा सकते है। गांव में उचित शिक्षा व्यवस्था होने पर गांव में रहने वाला व्यक्ति चाहे वह पुरुष हो या फिर महिला सभी अपनी जन सहयोगिता इस देश के लिए दे सकते हैं। जब कभी विपरीत परिस्थितियां उत्पन्न हो तो उनमें एकता की भावना सदा विद्यमान रह सकती है। गांधी जी गांव में स्वरोजगार के अवसर उत्पन्न करना चाहते थे। ताकि गांव में ही रोजगार लोगों को मिल सके और उनके पीछे का मकसद तो यही था कि गांव का विकास किया जा सके, गांधी जी गांव में उन छोटे–छोटे व्यवसाय को यथावत रखना चाहते थे। जो कई हजारों सालों से चली आ रही थी अर्थात कहां जाए तो गांधी जी गांव में वह सारे सभी सुख सुविधा रखना चाहते थे जो गांव में रहने वाला प्रत्येक इंसान को प्राप्त हो। गांधी जी के ग्राम स्वराज में रह रहे प्रत्येक परिवार के सदस्य किसी भी तरह से खाली ना हो गरीबी, की भावना उसमें ना रहे, बेरोजगार ना बन सके, इसके लिए ग्राम क्षेत्र में ही

छोटे-बड़े व्यवसाय जैसे टोकरी बुनना, काष्ठ शिल्प, हथकरघा, चरखा, मधुमक्खी पालन, मत्स्य पालन मशरूम, इन व्यवसाय पर ध्यान दिए,जंगल में उपस्थित औषधियां, मधुमक्खी पालन करके मधुरस से आय प्राप्त करना, बास से टोकरियाँ बनाकर बाजारों में विक्रय करना, ऐसे अन्य अत्यंत सरल और आसानी से प्राप्त किए जाने वाले सामानों से ग्राम के निवासी आय के जरिया तैयार कर सकते हैं और अपनी आवश्यकताओं को पूर्ति करने के साथ-साथ ग्राम में रहने वाले लोगों की भी आवश्यकताओं को पूर्ण करने का कार्य भी कर सकते हैं । इस कार्य में उन्हें अवश्य ही आर्थिक रूप से मजबूती प्राप्त होगी। चूँकी गांव में रहने वाला किसान सिर्फ खेती करके ही अपनी जीविकोपार्जन नहीं कर सकता, बल्कि खेती किसानी से शेष अवधि में खेती के साथ-साथ अन्य यह कुटीर उद्योग का व अन्य व्यवसाय का सहारा लेकर अपनी बुद्धिमत्ता के साथ सुदृढ़ होता चला जाएगा। गांधी जी की दूरदर्शिता इसी बात पर संकेत करती है, कि गांधी जी ग्राम में रहने वाले लोगों को बेरोजगार होने से बचाना चाहते थे एवं ग्राम वासियों की ऊर्जा को देश के लिए ही प्रयोग करना या सदुपयोग करना उचित समझते थे। इतने बड़े देश में प्रत्येक लोगों को रोजगार प्राप्त होना असंभव के समान है अर्थात उस वक्त भी गांधीजी इस केंद्रीय करण के विचार को नकार दिए थे। एवं केंद्रीयकरण के दुष्परिणामों से परिचित थे। कुटीर उद्योग से व्यवसाय करके किसान, शिल्पकार, मिस्त्री, पुरुष या महिला और उनके परिवार कम पूंजी में ही अधिक लाभ प्राप्त कर सकते थे।गांधी जी इस बात पर जोर दिया करते थे कि मनुष्य खुद से परिश्रम करें, खुद से मेहनत करके कामकाज करके अपना एवं अपने परिवार का भरण पोषण कर सके, जिससे उनमें गरीबी देखने की कभी अवसर प्राप्त नहीं होगी यदि वह लगातार परिश्रम करके आय अर्जित करते रहेंगे। तो उनमें संकोच की भावना भी नहीं रहेगी क्योंकि इन कार्यों में अपनी परिश्रम का, अपनी मेहनत का, अपने शारीरिक क्षमता से इन व्यवसाय को करेगा, जिस कारण से उनमें नैतिकता और आध्यात्मिकता तथा स्वअनुशासन जैसे तत्व भी बलवान होंगे। उनमें पारिवारिक समझ विकसित होगी, जिस कारण से वह कभी गलत रास्ते पर विचलित नहीं हो सकते। गांधी जी पंचायती व्यवस्था को सुदृढ़ करना चाहते थे। उनका यही उद्देश्य और लक्ष्य भी रहा कि भारत देश के प्रत्येक गांव में पंचायती व्यवस्था यदि मजबूती से खड़ी हो जाती है। तो देश का हर एक नागरिक उच्च स्तर से लेकर निम्न तक अर्थात गांव से लेकर शहर तक सभी इस मजबूती की आधार शिला में शामिल रहेंगे। उनमें हीनता की भावना कभी उत्पन्न नहीं होगी पंचायती व्यवस्था का अधिनियम गांधी जी के ही दूरदर्शिता के परिणाम रहा है। जिसे संवैधानिक दर्जा प्रदान कर सशक्त बना दिया गया है। गांधी जी अपने ग्रामीण स्वराज में महिलाओं को भी पूर्ण स्वतंत्रता प्रदान करते हैं। उनका मानना था, कि महिलाओं को भी प्रत्येक कार्य में और प्रत्येक क्षेत्र में शामिल करना चाहिए। महिलाओं को प्रशासन की बुनियादी ढांचे से अवगत कराना चाहिए। इसलिए महिलाओं की स्थिति को इस संविधान व ग्राम पंचायत में मजबूत करने के लिए समानता का अधिनियम और आरक्षण जैसे प्रावधान किए गए हैं। चाहे वह किसी भी वर्ग की महिला पिछड़ी हुई जनजातीय समाज से आई हुई क्यों ना हो उनके सहयोग के बिना इस ग्राम स्वराज में परिवर्तन नहीं किया जा सकता। क्योंकि महिलाएं पुरुषों के कार्यों में बढ़-चढ़कर,अपनी

भूमिका निर्वाह करती हैं। गांव क्षेत्र में रहने वाली स्त्रियां जलाऊ लकड़ी, लघुवनोपज, खेती किसानी, वनों से प्राप्त औषधियां और उन्हें बाजारों में विक्रय करना इन सभी में सक्रिय रूप से भागीदारी निभाती है।

वर्तमान में गांव का स्वरूप- वर्तमान समय में प्रत्येक गांव के संबंध में गांधी जी का जो स्पष्ट दृष्टिकोण था। एक ऐसा गांव जो आदर्श ग्राम पंचायत हो जहां पर सभी उस गांव में निवास करने वाले ग्रामीण शांति भाव से परस्पर सहयोग प्रदान करते हुए आपसी भाईचारा के साथ जीवन निर्वाह करें उनमें एकता की भावना के साथ इस तरह का कार्य संपन्न हो, ताकि गांव का विकास आसानी से किया जा सके । जिला सरगुजा छत्तीसगढ़ का उत्तरी क्षेत्र में स्थित है यह जिला पर्वतों, पठारो, नदियों आदिवासी जनजातियों बाहुल्य, उनकी संस्कृति, उनके सभ्यताओं, एवं दुर्गम क्षेत्रों से भरी पड़ी हुई है। जिला सरगुजा प्रशासन के वेबसाइट के अनुसार, सरगुजा जिला में 439 ग्राम पंचायतें हैं। ऐसे बहुत सारे गांव हैं, जो शहर क्षेत्र से बहुत दूर स्थित है फिर भी उन क्षेत्रों में गांधी जी के स्वराज्य का दर्शन अवश्य देखने को मिल जाता है, तथा गांधी जी के गांव के संबंध में जो विचार थे वह भी जिला के विभिन्न गांवो में देखने को मिलते हैं। गांधी जी की स्वच्छता अभियान जो उनका साफ सफाई के प्रति दृष्टिकोण था। आज वह देखने को अवश्य ही मिलता है। चूंकि मैं अपने कार्य के लिए बहुत सारे गांव से होकर गुजरता हूं। तो घरों में शौचालय, पेयजल, अच्छी सड़क, लोगों के बात-व्यवहार, छोटे बड़े कार्य, गांव मे रहने वाले शिल्पकार, कारीगर, मिस्त्री, गांव का शांत वातावरण, खेती से प्राप्त अनाज, खलिहान, ग्रामीणों का अपने खेत में किया गया सेवा भाव, अवश्य देखने को मिल जाती है, लोग साफ सफाई के प्रति जागरूक हुए हैं, गंदगी से होने वाले रोगों के प्रति सजग हो चुके हैं। साथ ही साथ सरकार के द्वारा इन सभी गांव में जन जागरूकता अभियान दीवारों पर स्वच्छता के नारे लिखे हुए मिलते हैं। उनके जीवन में रोग से संबंधित होने वाली घटनाएं तथा सड़क दुर्घटना जैसे आपदाओं से निपटारा के लिए ग्राम पंचायत में ही सामुदायिक चिकित्सालय का निर्माण किया गया है जहां पर ग्रामीण एवं आम-जन आसानी से चिकित्सक से इलाज एवं परामर्श ग्रहण कर सकते हैं। गांव वासी अपनी वेशभूषा, संस्कृति बचाकर रखे हुए हैं, शिक्षा के प्रति उनकी ललक बढ़ी है। आज गांव में रहने वाला प्रत्येक व्यक्ति इस आधुनिकता के साथ अपने विचार को रख रहा है। अपने संतान को पढ़ने लिखने में पीछे बिल्कुल भी हटाना नहीं चाहता है। किस प्रकार से अशिक्षा से मनुष्य का पतन होता है। वह अपराध की ओर अग्रसर होता है। उसे दूर करने का पूरी प्रयास बच्चों के पालक शिक्षा के मंदिर स्कूल में भेज कर यह सब दूर करना चाहते हैं। गंदगी से एक पुरातन समय में जो हैजा फ्लैग बीमारियां फैलती थी। वह आज के समय में लगभग कम के बराबर ही देखने को मिलती है। छोटे-छोटे व्यवसाय ग्राम उद्योग में ग्रामीणों द्वारा कर रह रहे हैं। मत्स्य पालन, कुक्कुट पालन, छोटे-बडे अपने घरों में संचालित किए जाने वाले दुकान,बकरी पालन, शुकर पालन यह सारे कार्य आज गांव में देखने को मिल रहा है। गांधी जी का जो स्वराज्य का दर्शन था। गांव के विषय में वह ग्रामीण क्षेत्रों में देखने को मिल रही है। माता एवं बहने राष्ट्रीय आजीविका मिशन से व स्वयं सहायता समूह से ऋण लेकर बहुत से अनेकों कार्य कर रही है और आत्मनिर्भर तथा सशक्त बन रही है, किंतु

गांधी जी ने जो सत्य और अहिंसा की बात कही थी। वह आज आधुनिकता के लालसा के कारण गांव क्षेत्र में कमी देखने को मिलती है। अपराध तो अवश्य ही विभिन्न समाचार पत्रों में आसपास के गतिविधियों में देखने को और सुनने को मिल जाती है। बच्चों का माता–पिता से विरोध करना, भाई–भाई से विवाद,पड़ोसी का पड़ोसियों से विवाद यह सारे घटनाएं नहीं समाप्त हुई है। इसे भी समाप्त होना ही गांधी जी के वास्तविक लक्ष्य का परिणाम रहेगा गांधी जी जो स्वशासन की बात करते थे। वह ग्रामीण क्षेत्रों में विद्यमान है। भारतीय संविधान में महिलाओं को,पिछड़े हुए जातियों को यह अधिकार प्रदान किया गया है। ताकि गांव में ही और गांव को अच्छे तरीके से जानने वाला समझने वाला व्यक्ति यदि सभी की राय को मानकर शासन करता है। तो वही सच्चे मायने में एक गांधी जी की स्वराज की धारणा को पूर्ण करता है। आज वर्तमान समय में गांव में ही एक कुशल उम्मीदवार महिला या पुरुष के रूप में प्राप्त हो जाती है। चाहे सरपंच हो वार्ड पंच हो या उपसरपंच हो जो उन समस्त ग्रामीणों की जिम्मेदारियां को पूर्ण करने का वचन देते हैं व गांव की जनता अपने उम्मीदवार से भली भाती परिचित होते हैं और उन्हें पूर्ण विश्वास उनके ऊपर रहता है, कि उनके दुखों का उनकी कष्टों का गांव की समस्याओं का निपटारा उनके इन चहेते उम्मीदवारों के द्वारा किया जाएगा, उनके लिए मताधिकार का प्रयोग करते हुए स्थानीय शासन में अपने जिम्मेदारी की मोहर लगाते हैं तथा वास्तव में ग्रामीणों की समस्याओं को इन उम्मीदवारों को द्वारा दूर भी किया जा रहा है। महिलाएं अपनी समस्याओं को अपने पंच के पास और पंच उस समस्याओं को सरपंच के पास रखता है और यदि यह कार्य सरपंच के द्वारा या पंच के द्वारा नहीं की जाती है। तो जनता स्थानीय शासन में जो उम्मीदवार है प्रतिनिधि है। उन्हें सत्ता से बाहर कर देती है। जहां पर हमें इस स्वराज में एक जुट और एकता देखने को आसानी से मिल जाती है। आज गांव के विभिन्न–2 क्षेत्र में देखें तो रोजगार के अवसर शासन के द्वारा शुरू किए जाते हैं। रोजगार गारंटी योजना, राष्ट्रीय महिला आजीविका मिशन, युवाओं के लिए ऋण सुविधा, किसान लोन, महतारी वंदन से प्राप्त राशि का प्रयोग करके स्वयं के होटल, छोटे–मोटे बाजारों में सब्जी मंडी में संबंधित व्यवसाय खेती किसानी अनाजों का विक्रय किया जा रहा है और शासन के द्वारा युवाओं के लिए स्किल कौशल का विकास कर उस क्षेत्र में रोजगार के अवसर देने का प्रयास किया जा रहे हैं। साथ–साथ आज गांव के क्षेत्र में रहने वाले बच्चे लड़का हो या लड़की सही रोजगार की तलाश में शहरी क्षेत्रों में जाते हैं। उच्च शिक्षा से या व्यावसायिक शिक्षा का अध्ययन प्राप्त करके ग्रामीण क्षेत्र के बच्चे इंजीनियर, पटवारी, डॉक्टर, प्रशासनिक अधिकारी, सैनिक ऐसे बड़े पदों में चयनित होकर अपने गांव को गोरवान्वित कर रहे हैं एवं पढ़ा लिखा युवक, युवतिया ग्राम क्षेत्र में जाकर कार्य भी कर रहे हैं। सामुदायिक चिकित्सालय, आंगनबाड़ी केंद्र, प्राथमिक पाठशाला, पुलिस चौकियां में अपनी जिम्मेदारी और कर्तव्य का पालन कर रहे हैं।

गांव के आधुनिकता- गांधी जी गांव को शहरीकरण और औद्योगिक निर्माण पर जोर नहीं दिए, किंतु आज के आधुनिकता को देखते हुए गांव भी धीरे–धीरे शहरीकरण की ओर को होता चला जा रहा है। शहर के समान भौतिकवादिता के लक्षण गांव में भी देखने को मिल रहे हैं। चाहे वह रहन–सहन घर, उद्योग, व्यापार, धंधे, क्यों ना हो, सत्य और अहिंसा वह

आज कहा देखने को मिलती है। अपराध माता–पिता, परिवार, भाई–भाई, पड़ोसी पड़ोसी में सामान्य से बात हो गई है। ईमानदारी जो एक युग में थी। आज बहुत कम ही रह गई है। भ्रष्टाचार ग्रामीण क्षेत्र में भी पहुंच चुका है। गांव क्षेत्र में शहर निर्माण के लिए जमीनों की खरीद फरोक, छोटे–बड़े जो व्यापार थे। वह भी लोगों की रुचि से हटते चले जा रहे हैं, गांव के शहरीकरण से गांव का पर्यावरण निश्चित रूप से परिवर्तन देखने को मिल जा रही है।

निष्कर्ष- इस प्रकार उपयुक्त अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है। कि गांधी जी स्वशासन संबंधी ज्ञान देकर गांव के मूलवासियो को शासन सत्ता में शामिल करना चाहते थे। एवं समाज को सुधार के साथ–साथ गांव और देश को मिलाकर तथा इन सब में रहने वाले सभी जनता को एकता के सूत्र में बांधना उनका उद्देश्य रहा, एक प्रकार से कहां जाए तो गांव को सदैव जीवित रखना चाहते थे। क्योंकि गांव ही प्रदेश के निर्माण करने में सहयोग प्रदान करता है। गांधी जी के अनुसार ग्रामीण विकास का मजबूत दायित्व वहां के रहने वाले नागरिकों के पास होती है। चाहे वह स्त्री हो चाहे पुरुष वह सभी उस दायरे में आकर गांव का विकास करते हैं। गांधी जी यहां तक तो स्त्री और पुरुष में जो अंतर थी। उसे समाप्त कर समानता की बात अपने स्वराज में करते हैं ।उनका समानता का –ष्टिकोण समाज के समस्त प्राणियों के लिए एक था। गांव को इस योग्य बनाकर गांव में ही विकास की संभावनाएं तैयार करना उनकी दूरदर्शिता का परिचायक रही है। इस प्रकार से गांधी जी का मार्गदर्शन हम सभी के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। उनका विचार शांति प्रिय,अहिंसा, सत्य हम सब के अपनी समस्याओं से उबरने के लिए एक रास्ता प्रदान करता है। और निश्चित ही उनका दिया गया मार्गदर्शन का प्रयोग जनता के द्वारा किया जाता रहेगा।

संदर्भ सूची-

1. https://www.google.com/amp/s/www.bbc.com/hindi/india-58765123.amp
2. गांधी दर्शन वैश्विक जगत और समता मूलक समाज की रचना में इसकी प्रमुख भूमिका–डी. आर. शर्मा(जून 2021) मध्य प्रदेश सामाजिक विज्ञान अनुसंधान जर्नल।
3. बिकलेश कुमार गुप्ता–सहायक प्राध्यापक राजनीति विज्ञान शासकीय नवीन महाविद्यालय कमलेश्वरपुर मैनपाट
4. पांडे, डॉ. पीयूष कुमार (2014) "गांधी जी और ग्राम स्वराज" इंटरनेशनल जनरल आफ रिव्यू एंड रिसर्च इन सोशल साइंस
5. गाबा, ओमप्रकाश–राजनीति विचारक विश्व कोश, नेशनल पेपर वैक्स प्रकाशक नई दिल्ली पृष्ठ क्र 63
6. अत्री, डॉ. राजेश कुमार "महात्मा गांधी संपूर्ण विचारों का संग्रह" सरला पब्लिकेशन शिमला
7. आर. के. प्रभु तथा यू.आर.राव "महात्मा गांधी के विचार" प्रकाशक नेशनल बुक ट्रस्ट ऑफ इंडिया
8. https://www.loknitikendra.com/village-self-sufficiency-in-gandhi-philosophy/
9. https://www.drishtiias.com/hindi/be-mains-ready-daily-answer-writing-practice-10.question/papers/2019/be-mains-ready-day-37-idea-of-gram-swaraj

10. https://rashtriyashiksha.com/mahatma-gandhi-and-the-concept-of-gram-swaraj/
11. यंग इंडिया
12. https://www.mkgandhi.org/articles/Gandhi-and-Swaraj-in-ideas.ph
13. https://www.google.com/amp/s/www.patrika.com /opinion/your-opinion-what-harms-are-being-caused-by-rapidly-increasing -urbanization-19301279%3famp=1
14. https://rashtriyashiksha.com/mahatma-gandhi-and-the-concept-of-gram-swaraj/
15. .https://www.gaonjunction.com/vishesh/village-and-gandhi-why-does-gandhi-repeat-the-talk-of-returning-back-to-villages-why-does-he-say-that-villag
16. https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%B8%E0%A5%8D%E0%A4%B5%E0%A4%B0%E0%A4%BE%E0%A4%9C
17. https://surguja.gov.in/
18. https://dprcg.gov.in/news/district-news/02e74f10e0327ad868d138f2b4fdd6f0
19. छत्तीसगढ़ जनसंपर्क विभाग
20. https://www.etvbharat.com/hindi/chhattisgarh/city/ ambikapur/dhibari-has-started-extinct-from-the-village-of-surguja/ct20210711225051057
21. दैनिक भास्कर

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 42, Hindi Edition, Year-21, Jan.- June 2025

स्वाधीनता आंदोलन में महिलाओं की भूमिका

•मंजू भट्ट
••प्रज्ञा शर्मा

सारांश- समाज की इकाई जहां परिवार होता है वहीं परिवार की धुरी महिला होती है यह महिला जिस मानसिकता के अक्ष पर केंद्रित होती है परिवार इस मानसिकता को आत्मसात करते हुए विकसित होता है। यही मानसिकता देश और समाज की दिशा और दशा निर्धारित करती है। किसी भी देश और समाज का मूल्यांकन उसे समाज की महिलाओं की स्थिति के आधार पर करते हैं। शक्ति के बगैर कोई कुछ नहीं कर सकता, जिस प्रकार किसी मानव निर्मित यंत्र को चलाने के लिए शक्ति की जरूरत होती है, ठीक उसी प्रकार समाज को चलायमान रखने के लिए शक्ति व प्रेरक की जरूरत होती है। वह शक्ति प्रेरक का काम महिला करती है और जरूरत पड़ने पर कभी मां सरस्वती बनाकर मां दुर्गा बनकर या काली बनकर उद्देश्यों को पूर्ण करती है। 15 अगस्त 1947 भारत आजाद हुआ एक निरंतर लंबे संघर्ष असंख्य वीर देशभक्ति की स्वतंत्रता की बलि दी। पर जीवन आहुति देने के बाद राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन की लड़ाई केवल पुरुषों की हिस्सेदारी से फतह नहीं ली गई बल्कि इस महायज्ञ में महिलाओं का काफी योगदान रहा, उनके योगदान को नजर नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। बहुत सी साहसी महिला ने ब्रिटिश शासन के खिलाफ आवाज उठाई अंग्रेजों के विरुद्ध पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर देश की महिला ने जो किसी की मां थी, बेटी थी ,पत्नी, बहन थी। सभी ने अपना कर्तव्य निभाया। कई महिलाएं सड़कों पर उतरी जुलूस का नेतृत्व किया। व्याख्यान और प्रदर्शनों में शामिल हुई। साहित्य लेखन में महिला साहित्यकारों का योगदान जीवन के सभी क्षेत्रों में महिला ने पुरुषों का साथ दिया है। साहित्य के क्षेत्र में जहां महा कवियो ने साहित्य को एक नई दिशा प्रदान की है वहीं महिला साहित्यकारों ने भी अपनी विशेष उपस्थिति दर्ज कराई अपनी अमूल्य कृतियों से हिंदी साहित्य के क्षेत्र में विशेष योगदान दिया। आजादी की लड़ाई के समय जो स्वर साहित्य में भारत उसमें देशकालीन परिस्थितियों है, और देश प्रेम की अभिव्यक्ति स्पष्ट प्रकटहोतीहैं।महादेवी वर्मा, सरोजिनी नायडू ,सुभद्रा कुमारी चौहान ,उषा देवी अनेक लेखिकाओं के सशक्त लेखन का योगदान हिंदी साहित्य को प्राप्त हुआ ।हिंदी साहित्य में महिलाओं की भागीदारी जितनी तेजी से हुआ उसे देखते हुए नई अभिव्यक्ति का समर्थ पर हैरानी

• सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, डॉ. सी वीं रमन विश्वविद्यालय करगी रोड कोटा बिलासपुर छत्तीसगढ़
•• सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, डॉ. सीवी रमन विश्वविद्यालय करगी रोड कोटा बिलासपुर छत्तीसगढ़

होने जैसी कोई बात नहीं रहेगी। आज महिलाओं में बढ़ती हुई चेतना और जागरूकता ने उनके पारंपरिक छवि को तोड़ा है।

मुख्य शब्द- परिवार, महिला, मानसिकता, देशभक्ति, स्वतंत्रता

असहयोग आंदोलन में महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका रही है गांधी जी असहयोग आंदोलन में महिलाओं की भागीदारी के पूर्ण पक्षधर थे उनके अनुसार जब महिलाएं सत्याग्रह आंदोलन में शामिल होगी ,तब पुरुष भी आंदोलन में पूरा योगदान दे पाएंगे मध्य वर्गोय अनुयायियों को उन्होंने याद दिलाया कि 85 प्रतिशत भारतीय महिलाएं निर्धनता और अंधकार में डूबी हुई है, उन्होंने महिला नेताओं से आग्रह किया कि उन्हें सामाजिक सुधार, महिला शिक्षा एवं महिला अधिकारों के लिए कानून बनाने का काम करना चाहिए। जिससे उन्हें बुनियादी अधिकार मिल सके, गांधी जी ने विचार व्यक्त किया कि सत्य और अहिंसा के माध्यम से मानव विकास में स्त्रियां उचित स्थान प्राप्त कर लेगी तब उनके अंदर से हीन भावना समाप्त हो जाएगी और महिलाएं भी जानती थी कि हमारे व्यक्तित्व और आवाज को प्रतिध्वनित कर हमारी शक्ति को महात्मा गांधी ही मजबूत कर सकते हैं।

प्रस्तावना- महिलाओ ने जब से धरती पर पदार्पण किया तभी से उसे प्रकृति या अपने वातावरण के साथ द्वंद या संघर्ष करना पड़ा है। वह अपने इस द्वंद्व को कम करने के लिए अपने वातावरण के साथ समझौता करती है, या तो वह अपने आप में परिवर्तन कर लेती है या अपने वातावरण में कोई परिवर्तन करने का प्रयास करती है। यदि वह इन दोनों में से किसी एक में भी परिवर्तन कर लेती है तभी वह अपना जीवन सुख पूर्वक जी सकती है। यदि वह इन दोनों में से किसी एक भी परिवर्तन नहीं कर पाती तो उसका जीवन तनाव पूर्ण हो जाता है भारत में महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए सबसे पहले समाज में उनके अधिकारों और मूल्यों को मारने वाले उन सभी राक्षसी सोच को मारना जरूरी है, जैसे अशिक्षा, दहेज प्रथा, यौन, असमानता, भ्रूण हत्या बलात्कार और भेदभाव जो देश को पीछे की ओर धकेलता है और हमारी महिलाओं को आसुरक्षा प्रदान करते हैं ,किसी भी समाज के महत्व संपूर्ण विकास के लिए आवश्यक है कि उसके नागरिकों में सामाजिक संवेदना तथा समाज के प्रति दायित्व बोध की भावना जागृत कर उसे विकसित किया जा सके। आज की परिस्थितियों में इस बात का महत्व और भी बढ़ गया है।

भारतीय भारतीय शिक्षा में महिलाओं की भागीदारी की स्थिति में पिछले कुछ सर्दियों में कई बड़े बदलाव का सामना किया है आधुनिक भारत की महिलाएं राष्ट्रपति प्रधानमंत्री लोकसभा अध्यक्ष प्रतिपक्ष की नेता आदि जैसे शीर्ष पदों पर आसीन है।

भारत सरकार ने सन 2001 को महिलाओं के सशक्तिकरण वर्ष के रूप में घोषित किया था महिलाओं के सशक्तिकरण की राष्ट्रीय नीति सन 2001 में पारित की गई थी वैश्विक परिदृश्य में नारी की एक छवि उभर कर सामने आ रही है पुरानी जंजीरों को तोड़कर वह अपनी नई पहचान बनाने में संलग्न है आज नारी अबला नहीं रही वह पुरुष से दुर्बल नहीं है, बल्कि अपेक्षाकृत सक्षम और सफल है। सामाजिक कार्यक्रमों में भाग

लेकर वर्तमान में महिला गृह कार्यों तक ही नहीं रही वे अपनी उपस्थिति हर क्षेत्र में दर्ज कराकर जीवन मूल्यों का विकास कर रही है महिलाएं किसी भी कार्य को करने में सक्षम है महिलाएं नर्स, डॉक्टर, इंजीनियर तथा पत्रकारिता जैसे क्षेत्रों को अपना रही है। आर्थिक क्रियाकलापों में महिलाओं की सहभागिता लगभग शून्य हो गई। हमारे समाज में यह सोच पनपने लगी की महिलाओं को सिर्फ घरेलू कार्य ही करना है,इसलिए उन्हें अधिक शिक्षा की आवश्यकता नहीं। शिक्षा राजनीति अर्थव्यवस्था पर पुरुष समाज का एकाधिकार हो गया। राजनीति और अर्थव्यवस्था जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्रों को महिलाओं से पूर्णता वंचित रखने का प्रयास किया गया। ऐसे नकारात्मक वातावरण में भी कुछ महिलाओं ने समाज को नारी शक्ति का एहसास करवाया रानी लक्ष्मीबाई ,सुचेता कृपलानी, सरोजिनी नायडू जैसी महिलाओं ने न सिर्फ देश के स्वतंत्रता आंदोलन में बढ़ चढ़कर भाग लिया बल्कि देश की राजनीति और अर्थव्यवस्था में भी सक्रिय भूमिका निभाई। पंडित रमाबाई ने आर्य महिला सभा की स्थापना करके महिलाओं को समाज में उचित स्थान दिलवाने में महत्वपूर्ण सफलता प्राप्त की स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात हमारी सरकारों ने भी अनुभव किया कि महिला श्रम के सहयोग के अभाव में हम विश्व आर्थिक मंच पर प्रतिस्पर्धा नहीं कर पाएंगे विगत सरकारों ने महिलाओं को समाज एवं विकास की मुख्य धारा से जोड़ने के लिए उल्लेखनीय कार्य किए हैं। जिसके उत्साहवर्धक परिणाम हमारे समाज और अर्थव्यवस्था में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होते दिख रहे हैं। हमारे देश में महिला व्यवसाय के क्षेत्र में अपने धैर्य और मेहनत के बल पर पुरुषों की तरह सफलता के नए अध्याय लिख रही है,वे सभी सामाजिक बाधाओं और रूढ़ियों को तोड़कर व्यवसाय क्षेत्र में अपना कदम मजबूती से जमा कर अपनी वित्तीय सुरक्षा और स्वतंत्रता सुनिश्चित कर रही है।

अंग्रेजी साम्राज्य को उखाड़ने के लिए स्त्रियों में सबसे पहला नाम रानी लक्ष्मीबाई का आता है जिसने एक मां होने के साथ-साथ वीरांगना होने का भी गौरव प्राप्त किया ।इतिहास में सदैव इनका नाम हमेशा के लिए दर्ज हो गया। सरोजिनी नायडू ने कई आंदोलन में गांधी जी का साथ दिया और देश की आजादी के लिए जेल भी गई। भारत कोकिला के नाम से प्रसिद्ध सरोजिनी बहुत समय तक कांग्रेस की प्रवक्ता रही। यह गांधी जी के व्यक्तित्व से काफी प्रभावित थी। अज़ीज़ान बेगम कानपुर में अपनी नर्तकी के लिए प्रसिद्ध थी विद्रोह की ज्वाला जब कानपुर पहुंची तो इस नर्तकी ने अपना रूप बदल लिया तथा वीरांगना बन गई।अज़ीज़ान बेगम के योगदान को बुलाया नहीं जा सकता है। स्वाधीनता आंदोलन की लड़ाई लड़ने के लिए दुर्गा भाभी का नाम प्रमुख रहा दुर्गा भाभी भगवती बाबू महान कांतिकार की पत्नी थी जो क्रांतिवीर को पूरा सहयोग किया करती थी। सरला देवी एक लेखिका, गायिका, राजनीतिक कार्यकर्ता, तथा महिला नेता थी अंग्रेजों के विरुद्ध आंदोलन की भी वह नेता रही। भारत माता की भक्ति करने वाली सरला बहुत महान स्त्री और बंगाल की होने पर वह गर्व महसूस किया करती थी ।लक्ष्मी सहगल इतिहास में स्वर्णिम अक्षरों में अपना नाम लिख देने वाली लक्ष्मी सहगल सुभाष चंद्र बोस को अपना आदर्श मानती थी स्वतंत्रता आंदोलन में बढ़-चढ़कर हिस्सा लेने वाली लक्ष्मी एक प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी थी उषा मेहता

स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने वाली यह सबसे कम उम्र की वीरांगना थी अंग्रेजी सरकार के खिलाफ इन्होंने अपने एक रेडियो चैनल भी चलाया था, परंतु अंग्रेजों को यह बात हजम नहीं हुई इसलिए इन्हे जेल जाना भी पड़ा। आधुनिक युग की मीरा के नाम से जाने जाने वाली हिंदी कवित्री महादेवी वर्मा ने भी नारी की समस्याओं को इंगित नहीं किया बल्कि उन्होंने नारी जगत के भारतीय संदर्भ में मुक्ति का संदेश दिया वे भारतीय नारी को जागृत करते हुए सदियों से चली आ रही पुरातन परंपराओं को तोड़कर आगे लाने को प्रेरित करती थी।

निष्कर्ष- स्वतंत्रता आंदोलन से जुड़े हर कार्य में महिलाओं ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।प्राचीन काल के बाद महिलाओं की दशा पुरुषों के मुकाबले में कुछ सही नहीं थी। परंतु जब देश की स्वतंत्रता की बात आई तो भारत की महिलाओं ने कई स्थानों पर ऐसे उदाहरण प्रस्तुत किए हैं, कि पुरुषों को भी पीछे छोड़ दिया तथा अंग्रेजों की ईट से ईंट बजाकर उनको भारत से भागने पर मजबूर कर दिया।आंदोलन चाहे अहिंसा वादी हो या फिर उग्र हो हमारी माता- बहने कभी पीछे नहीं हटती। क्योंकि यह भारत की महिला है यह अपने अधिकार के लिए लड़ना जानती है, बात घर चलाने की हो या देश को आजाद करने की हो या शासन व्यवस्था को चलाने की भारत की महिला हर क्षेत्र में आगे है, और इस बात के उदाहरण भी समय-समय पर भारतीय महिलाओं द्वारा प्रस्तुत किए जा रहे हैं, तभी तो आज भारत की मातृ शक्ति का लोहा पूरा विश्व मानता है हम कह सकते हैं कि स्वाधीनता आंदोलन में महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। व्यक्ति परिवार समाज तथा राष्ट्र के निर्माण में महिला अहम भूमिका निभाती है वह हर क्षेत्र में अपना परचम लहरा रही है अगर नारियों का विकास नहीं होगा तो निश्चित तौर पर देश उन्नति पर प्रश्न चिन्ह लग जाएगा। आज महिला शिक्षित है और हर फैसले खुद लेने में सक्षम है, आधुनिक युग में जन जागृति के परिणाम स्वरुप लोगों की सोच में अनापेक्षित परिवर्तन आया है उनका दृष्टिकोण बदला है। तत्पश्चात आज नारी के प्रति लोगों की धारणा साकाररूप ले रही है ,इसलिए वह विविध क्षेत्रों में अपनी भूमिका सार्थक रूप से निभा रही है।सरकार ने भी नारियों की उन्नति के लिए कई कार्य किए हैं, मोदी सरकार ने 'बेटी -बचाओ और बेटी- पढ़ाओ' जैसे सफल अभियान चलाए हैं। आज जीवन का ऐसा कोई क्षेत्र नहीं जहां महिला अपनी सतत भूमिका न निभा रही हो। इसका सर्वोत्तम उदाहरण नारी का सैन्य क्षेत्र में योगदान है।

संदर्भ सूची-

1. डॉ. अल्पना सिंह-'स्वतंत्र भारत में महिलाओं की भागीदारी', विकास प्रकाशन कानपुर
2. डॉ. कोकिल, 'स्वाधीनता आंदोलन में महिलाओं की भूमिका", स्नातकोत्तर महाविद्यालय दनकौर गौतम बुद्ध नगर उत्तर प्रदेश
3. रिजवान अहमद, 'स्वाधीनता आंदोलन खिलाफत एवं असहयोग आंदोलन में महिलाओं की गतिशीलता", राजकीय महाविद्यालय सहमो बस्ती उत्तरप्रदेश
4. श्रीमती रंजू सिंह, 'स्वतंत्र भारत की सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था में महिला भागीदारी', महिला पीजी कॉलेज धामपुर बिजनौर
5. कुमारी वंदना, 'भारत में नारी शिक्षा की स्थिति'

6. रेखा पटेल, 'आधुनिकता के दौर में शिक्षा और महिलाएं', रावत प्रकाशन
7. शालिनी सक्सेना, 'स्वाधीनता आंदोलन में मध्य प्रांत की महिलाएं'
8. विपिन चंद्र, 'भारत का स्वतंत्रता संघर्ष'
9. अशोक यादव, 'राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन में योगदान देने वाली स्त्रियां'

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 42, Hindi Edition, Year-21, Jan.- June 2025

भारतीय ज्ञान परंपरा में महिलाओं के पैतृक संपत्ति में अधिकार एवं वर्तमान कानूनी स्थिति

• सीमा अग्रवाल

सारांश- शोध सारांश- यह शोध पत्र प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा में महिलाओं के आर्थिक अधिकार विशेष रूप से पैतृक संपत्ति के अधिकार से संबंधित है। यह पत्र भारतीय ज्ञान परंपरा के विभिन्न कालों में स्त्री के पैतृक संपत्ति में अधिकारों के साथ आधुनिक भारत में महिलाओं के संपत्ति में अधिकार से संबंधित हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम 1956 एवं हिंदू उत्तराधिकार संशोधन अधिनियम 2005 की विवेचना से संबंधित है। यह लेख वर्तमान हिंदू विधि में धर्म शास्त्रीय एवं मिताक्षरा कानून के प्रभाव का विश्लेषण करता है। पत्र यह विश्लेषण करता है कि प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा पैतृक संपत्ति में स्त्रियों के उत्तराधिकार के संदर्भ में जागरुक तो है किंतु उनके समुचित जीवन यापन एवं सुख सुविधाओं के संदर्भ में अधिक सचेत है। यह शोध पत्र संपति के लैंगिक भेदभाव को समाप्त करने में सामाजिक मानसिकता एवं भेदभावपूर्ण परंपराओं में परिवर्तन की भी आवश्यकता प्रतिपादित करता है।

मुख्य शब्द- सहदायक, दायभाग, पैतृक संपत्ति, उत्तराधिकार, हिंदू विधि, मिताक्षरा

शोध का उद्देश्य- शोध का प्रमुख उद्देश्य प्राचीन एवं आधुनिक भारत में महिलाओं के पैतृक संपत्ति में अधिकारों की विवेचना करना है तथा भारतीय समाज में स्त्री के आर्थिक अधिकारों के सन्दर्भ में लैंगिक दृष्टिकोण का विश्लेषण करना है।

शोध प्रविधि- यह शोध प्त्र मुख्यत: विविध संस्कृत ग्रंथों में स्त्री के पैतृक संपत्ति के अधिकारों संबंधी विचारों के अनुशीलन और विश्लेषण पर आधारित है साथ ही आधुनिक संदर्भ में विविध विधि संबंधी पुस्तकों में संपत्ति के उत्तराधिकार संबंधित शोध कार्यों, विधि संबंधी पुस्तकों की विवेचना पर आधारित है। शोध पत्र में मुख्यत: द्वितीयक स्रोतों का प्रयोग किया गया है।

किसी भी देश, समाज और संस्कृति को समझने के लिए यह देखना आवश्यक है कि उस समाज और संस्कृति में स्त्रियों की क्या स्थिति है? तथा स्त्री की सुदृढ़ एवं सम्मानजनक स्थिति एक उन्नत, समृद्ध तथा प्रगतिशील समाज की द्योतक है। इसी संदर्भ में यदि हम भारतीय संस्कृति और उसकी ज्ञान परंपरा का आकलन करें तो देखते हैं कि

• एसोसिएट प्रोफेसर, केंद्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, जयपुर परिसर

जहां सिंधु घाटी सभ्यता में समाज मातृ प्रधान थे वहीं वैदिक काल एवं उसके बाद में विकसित होने वाली संस्कृति और परंपराओं में भी मातृ पूजा, देवी पूजा, मातृशक्ति के अनेक उल्लेख है। इन सभी संदर्भों और उल्लेखों में स्त्री को सम्मानित स्थिति एवं सभी प्रकार के सुख और सुविधाएं प्रदान करने का भाव निहित था। भारतीय ज्ञान परंपरा में महिलाओं को सम्मानजनक स्थान प्राप्त होने के साथ-साथ उनको आर्थिक सुदृढ़ता भी प्राप्त थी। उपनिषद काल, महाकाव्य काल में वर्णित स्त्री पात्रों के व्यक्तित्व एवं विभिन्न विषयों संबंधी ज्ञान को देखते हुए प्रतीत होता है कि उस समय की स्त्रियां सुशिक्षित एवं अनेक विधाओं में निपुण थीं। भारतीय ज्ञान परंपरा के इस काल के संस्कृत ग्रंथों में अयोग्य पुत्र की अपेक्षा श्रेष्ठ गुणों वाली पुत्री का जन्म माता और पिता दोनों के कुल को पवित्र कर देने वाला बताया गया है। भारतीय परंपरा में बेटी को भी बेटे के समान प्रिय माना गया है तथा कन्याओं को कुल का आभूषण माना है। सुसंस्कृत माता-पिता पुत्र प्राप्ति के लिए जितने उत्सुक रहते थे उतने ही पुत्री के लिए भी रहते थे तथा पुत्री प्राप्ति के लिए यज्ञ कर्म करने के भी कुछ उदाहरण मिलते है। भारतीय ज्ञान परंपरा में महिलाओं को कन्या के रूप में, पत्नी के रूप में तथा माता के रूप में बहुत अधिक श्रेष्ठ स्थान प्राप्त था। पूर्व वैदिक काल एवं वैदिक काल में महिलाओं के सुशिक्षित होने के संकेत मिलते हैं। इस काल में अनेक विदुषी महिलाओं का उल्लेख मिलता है परंतु उनके आर्थिक और संपत्ति के अधिकारों के विषय में बहुत कम संदर्भ मिलते हैं। प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा में पैतृक संपत्ति में अधिकार को दायाधिकार कहा गया है। यह दायाधिकार या पैतृक संपत्ति में अधिकार किसे प्राप्त होने चाहिए इसके संदर्भ में अनेक प्रमाण भारतीय ज्ञान परंपरा में दिए जाते रहे हैं। वेदों में संपत्ति में कन्या को अधिकार नहीं है क्योंकि संपत्ति पर अधिकार की कसौटी पिंडदान को माना जाता था परंतु भाई के अभाव में जब पुत्री अपने पुत्र द्वारा माता-पिता का पिंडदान करवाती थी तो वह पिता की संपत्ति के अधिकारी होती थी। इस प्रकार अभातृमती कन्या को (दायाद) संपत्ति में अधिकारी माना गया है। बौद्ध साहित्य की थेरी गाथा में भी बिना भाई वाली पुत्री को पैतृक संपत्ति में अधिकार मिलने के संकेत मिलते हैं। जिसमें सुंदरी नाम की कन्या की माता उसे भिक्षुणी होने से यह कहकर रोकती है कि वह पिता की संपत्ति की उत्तराधिकारी है क्योंकि उसका कोई भाई नहीं है। भारतीय ज्ञान परंपरा के इस काल में विवाह के समय पुत्री को अपने पिता से पर्याप्त संपत्ति प्राप्त होती थी एवं विवाह के पश्चात भी उसका इस स्त्री धन पर पूर्ण अधिकार होता था इस प्रकार वह प्रत्यक्ष रूप से पैतृक संपत्ति में उत्तराधिकारी नही होने के बाबजूद भी पिता की संपत्ति में से एक भाग इस स्त्री धन के रूप में प्राप्त कर लेती थी। इसी प्रकार अविवाहित पुत्री जिसके पास स्त्री धन नहीं होता एवं पिता की मृत्यु के पश्चात जिसका भरण पोषण संभव नहीं हो उसे भी पैतृक संपत्ति में अधिकार दिलाने हेतु धर्म शास्त्रों में समर्थन दिया गया है। अविवाहित पुत्री के पैतृक संपत्ति में भाग प्राप्त करने का उल्लेख ऋग्वेद में हुआ है तथा महाभारत में भी अविवाहित कन्या के पैतृक संपत्ति में अधिकारों का समर्थन दिखाई देता है। कन्या को पैतृक संपत्ति में अधिकार का प्रथम तर्क यह दिया गया है कि प्रत्येक संतान में चाहे पुत्र हो या पुत्री दोनों ही माता-पिता के शरीर से प्रादुर्भूत और आत्मरूप हुए हैं इसलिए दोनों ही संताने संपत्ति में बराबर की भागीदार है। याज्ञवल्क्य

स्मृति में याज्ञवल्क्य ने विधवाओं को अपने दाय संबंधी अधिकार दिए हैं। मनुस्मृति में इस संदर्भ में अस्पष्ट एवं विरोधी व्यवस्थाएं देखने को मिलती हैं। मनु के अनुसार कन्याओं को संपत्ति में भाइयों द्वारा अपने-अपने अंश में से चतुर्थ भाग दिया जाना चाहिए। महाभारत में कन्या को औरस पुत्र के अभाव में अन्य पुत्रों की अपेक्षा ऊंचा स्थान प्राप्त है। महाभारत के अनुसार पुत्र आत्मा के समान एवं पुत्री भी पुत्र के समान है इसलिए आत्म स्वरूपी पुत्री के रहते हुए दूसरा पुरुष किस प्रकार धन प्राप्त कर सकता है। वेदव्यास अभातृका कन्या को पूरी संपत्ति की अधिकारणी मानते हैं परंतु कन्या को पैतृक संपत्ति में अधिकार दिलाने का वास्तविक श्रेय कौटिल्य को है। कौटिल्य के अनुसार पुत्रविहीन मृत व्यक्ति के द्रव्य को सगे और इकट्ठे रहने वाले भाई और कन्याएं प्राप्त करें। पुत्रों वाले व्यक्ति की संपत्ति के अधिकारी धर्म विवाहों से उत्पन्न पुत्र एवं पुत्री बने। अधिकांश स्मृतिकार एवं धर्मशास्त्रकारों ने स्त्री धन पर कन्याओं को सर्वप्रथम अधिकार दिया है जिससे पुत्र और पुत्री में संपत्ति का विभाजन न्याय पूर्ण हो सके। इस प्रकार कन्याओं को संपत्ति के अधिकार के विकास को मुख्यत: चार कालों में बांट सकते हैं। प्रथम काल वैदिक युग से उत्तर वैदिक काल तक है जिसमें सामान्यत: कन्या को पैतृक संपत्ति में उत्तराधिकारी नहीं माना गया परंतु उनके पर्याप्त भरण पोषण की व्यवस्था तथा पुत्र और पुत्री में सौहार्द स्थापित करने का प्रयत्न किया गया है। महिलाओं के संपत्ति में अधिकारों का द्वितीय काल चौथी शताब्दी ईसा पूर्व से 20 वीं शताब्दी के पूर्वार्ध तक है जिसमें धीरे-धीरे कन्या को संपत्ति में उत्तराधिकार मिला इनमें मुख्य रूप से मनु,याज्ञवल्क्य, बृहस्पति कौटिल्य तथा अन्य अनेक स्मृतिकारो और तात्कालीन परिस्थितियों का महत्वपूर्ण योगदान रहा। वास्तव में भारतीय ज्ञान परंपरा के इन धर्म शास्त्रों के नियम तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था में समन्वय एवं सौहार्द स्थापित करने में महत्वपूर्ण थे। भारतीय ज्ञान परंपरा के ये आर्थिक एवं सामाजिक नियम और मूल्य समाज को समृद्ध न्यायपूर्ण एवं नैतिक बनाने के लिए आवश्यक थे एवं इनमें महिलाओं की शिक्षा एवं उनकी आर्थिक आत्मनिर्भरता के पर्याप्त उपाय किए गए थे। धर्म शास्त्रों में संपत्ति के अधिकार को दायभाग कहा गया है। पिता या पितामह का धन पुत्रों या पोत्रों आदि को स्वामित्व संबंध से जो धन प्राप्त होता था उसे दाय कहते थे। सामान्यत: इस दाय भाग में महिलाओं का उल्लेख नहीं मिलता है परंतु सभी स्थानों पर महिलाओं के आवश्यक भरण पोषण और स्त्री धन पर उनके संपूर्ण नियंत्रण का पर्याप्त प्रावधान प्किया गया है। स्त्री धन के अंतर्गत पिता, माता, पति या भाई द्वारा दिया गया धन, विवाह के समय कन्यादान में प्राप्त धन ,यदि पति दूसरा विवाह करें तो उससे प्राप्त धन इत्यादि आते हैं। स्त्री धन के उत्तराधिकार में सर्वप्रथम कन्या को स्थान प्राप्त हुआ है। और कन्याओं के अभाव में स्त्री धन पर पुत्रों का अधिकार माना गया। यह कहा गया कि पिता का धन पुत्रगामी और माता का धन पुत्रीगामी होता है। यदि बेटी नहीं हो तो वह बेटों को प्राप्त होता है। इसी प्रकार पुत्री के समान ही पत्नी, माता और विधवा को भी अपने भरण पोषण के अधिकार प्राप्त थे। तैतरिय संहिता, काठक संहिता, कपिष्ठल संहिता और मैत्रायणी संहिता में पत्नी को घर की वस्तुओं की स्वामिनी कहा गया है । वेद, स्मृतियां, लोकाचारों में पत्नी को पति का आधा शरीर कहा गया है। इसीलिए बृहस्पति द्वारा पति की मृत्यु के बाद विधवा को पति की

संपत्ति का उत्तराधिकारी मानने का समर्थन किया गया। बृहस्पति के ही समान कात्यायन ने भी पत्नी को दायाद बनाया है किंतु साथ ही यह भी कहा है कि पति की मृत्यु के बाद उसकी संपत्ति का साध्वी स्त्री अपने जीवन काल में उपभोग करे परंतु उसकी मृत्यु के बाद वह संपत्ति पति के अन्य दायादों को प्राप्त हो। यद्यपि प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा में पुत्र की तुलना में पुत्री को संपत्ति में कम अधिकार प्राप्त थे तथा उसे भाइयों को प्राप्त संपत्ति का चौथा भाग ही प्राप्त था तथापि पुत्री को भी पुत्र के समान समझा गया तथा उसकी आर्थिक सुरक्षा के लिए विशेष परिस्थितियों में पैतृक संपत्ति के उत्तराधिकार को भी सुनिश्चित किया गया।। पुत्री को पुत्र, पौत्र, प्रपौत्र तथा विधवा के अभाव में पिता की संपत्ति प्राप्त होती थी। उत्तराधिकारियों में उसका पांचवा स्थान था। इस प्रकार महिलाओं को विशेष परिस्थितियों में पैतृक संपत्ति में उत्तराधिकार, स्त्री धन पर महिलाओं का पूर्ण अधिकार, दत्तक पुत्र से श्रेष्ठ स्थान तथा भाई के न रहने पर पिता की संपत्ति की उत्तराधिकारी माने जाने के प्रमाण भारतीय ज्ञान परंपरा को प्रगतिशील, तर्कशील और उदार दृष्टिकोण की तरफ संकेत करते हैं जिसमें अत्यंत सहज भाव से महिलाओं के विशेष परिस्थितियों में संपत्ति के अधिकारों को स्वीकार किया गया है तथा महिलाओं की आर्थिक सुरक्षा के लिए व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाया गया है। आधुनिक समय में जीवन, स्वतंत्रता और संपत्ति के अधिकारों को प्राकृतिक अधिकारों एवं मानव अधिकारों के रूप में सबसे अधिक महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया है। स्वतंत्र भारत के संविधान में भी स्त्री पुरुष दोनों को समान रूप से स्वतंत्रता, जीवन एवं समानता के साथ-साथ संपत्ति की स्वतंत्रता और अधिकार प्रदान किया गया। संपत्ति के अधिकारों में लैंगिक समानता स्थापित करने के लिए विभिन्न कानून बनाए गए जिन्हें 1956 के हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम तथा 2005 के संशोधन अधिनियम द्वारा कानून के रूप में मान्यता प्रदान की गई। संपत्ति में उत्तराधिकार की तृतीय काल अवस्था हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम 1956 से मानी जाती है। दायाद या संपत्ति के उत्तराधिकार, विवाह, तलाक, विरासत पारिवारिक मामले इत्यादि से संबंधित अधिनियम आधुनिक भारत में हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम 1956 के नाम से जाना जाता है इसमें संपत्ति के उत्तराधिकार से संबंधित नियम है।

भारतीय ज्ञान परंपरा के वेद- वेदांग(श्रुति), याज्ञवल्क्य स्मृति, नारद स्मृति, मनुस्मृति, पराशर स्मृति (स्मृतियां), टीकाएं और रीति रिवाज इत्यादि आधुनिक हिंदू विधि के प्रमुख धर्मशास्त्रीय पारंपरिक स्रोत है। टीकाओं में दो टीका प्रमुख है।

मिताक्षरा- विज्ञानेश्वर द्वारा याज्ञवल्क्य स्मृति पर संकलित टीका तथा जीमूतवाहन द्वारा लिखित दायभाग ग्रंथ मुख्य रूप से वंशानुगत प्रक्रिया पर केंद्रित है। इनमे भी वर्तमान हिंदू विधि मुख्य रूप से मिताक्षरा से प्रेरित है। इनके अतिरिक्त भारतीय हिंदू विधि में रीति-रिवाज़ों और प्रथाओं को भी मान्यता दी गई है क्योंकि रीति रिवाज और परंपराओं ने विश्व स्तर पर विधिक प्रणालियों के विकास को प्रमुख रूप से प्रभावित किया है। परंतु ये रीति रिवाज और परम्परा, विद्या और न्याय संगत होनी चाहिए। आधुनिक समय में समानता, निष्पक्षता, अच्छे विवेक का नियम, न्यायिक निर्णय, विधायन आदि कानून के मुख्य स्रोत है।पुत्री को संपत्ति में समान उत्तराधिकार की इस तीसरी अवस्था के 1956

का हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम में समानता के अधिकार (14-18) का विलोपन था और लैंगिक आधार पर भेदभाव किया गया था। हिंदू कानून की मिताक्षरा धारा को ही हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के रूप में संहिताबद्ध किया गया। हिंदू विवाह, तलाक एवं पैतृक संपत्ति के वारिस एवं उत्तराधिकार को इसी अधिनियम के तहत प्रबंधित किया गया। मिताक्षरा कानून के तहत जन्म से ही संयुक्त परिवार की पैतृक संपत्ति में पुत्र की हिस्सेदारी होती है। इस कानून में भी पिता की सम्पत्ति के कानूनी उत्तराधिकारी के रूप में केवल पुत्र (पुरुषों) को मान्यता दी गई। इस कानून में बेटियां पिता के घर पर रह तो सकती थी लेकिन पिता की संपत्ति एवं भूमि पर उसे स्वामित्व का अधिकार नहीं था। मिताक्षरा कॉपर्सनरी (Mitakshara coparcenary 1956) कानून की लैंगिक असमानता के आधार पर आलोचना हुई एवं इसे चुनौती प्रस्तुत की गई। कई राज्यों जैसे आंध्रप्रदेश, कर्नाटक, महाराष्ट्र और तमिलनाडु ने इस कानून में बदलाव कर दिया। महिलाओं के पैतृक संपत्ति में समान उत्तराधिकार की चतुर्थ अवस्था 2005 के संशोधन अधिनियम से प्रारंभ होती है। 1956 के अधिनियम को विधि आयोग की 174 वीं रिपोर्ट के आधार पर सितंबर 2005 में संशोधित किया गया और वर्ष 2005 से संपत्ति विभाजन के मामले में महिलाओं को सह्दायक/कॉपर्सेनर के रूप में मान्यता दी गई। जिसके द्वारा 1956 के हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 6 में निहित लैंगिक भेदभाव को समाप्त किया गया एवं पुत्री को भी पुत्र के समान पैतृक संपत्ति में उत्तराधिकार प्रदान किया गया। 2005 का यह संशोधन अधिनियम एक समता मूलक कानून है जो पैतृक संपत्ति का पुत्र और पुत्री में बराबर विभाजन करता है। अधिनियम की धारा 6 में संशोधन करते हुए एक कॉपर्सेनर की पुत्री को भी जन्म से ही पुत्र के समान कॉपर्सेनर माना गया। इस कानूनी प्रावधान के बावजूद स्त्री के द्वारा पैतृक संपत्ति में हिस्सा प्राप्त करने का अनुपात कम रहा है। परंतु यह नया कानून 20 दिसंबर 2004 से पूर्व हुई संपत्ति के बंटवारे पर लागू नहीं होता। किसी भी हिंदू की मृत्यु यदि इस संशोधन कानून के बाद हुई है तो पैतृक संपत्ति के उत्तराधिकार का निर्धारण नई प्रावधानों के अनुसार ही होगा वसीयत नही होने की स्थिति में बेटी बराबर की संपत्ति की अधिकार नहीं होगी तथा बेटी अपनी संपत्ति के बारे में सारे निर्णय अपने अनुसार कर सकती है।

11अगस्त 2020 को सर्वोच्च न्यायालय ने हिंदू महिलाओं के पैतृक संपत्ति में उत्तराधिकारी और सहदायक (संयुक्त कानूनी उत्तराधिकारी) के अधिकार का और विस्तार किया है। सर्वोच्च न्यायालय के अनुसार एक हिंदू महिला को पैतृक संपत्ति में संयुक्त उत्तराधिकारी होने का अधिकार जन्म से प्राप्त है, यह इस बात पर निर्भर नहीं करता है कि उसका पिता जीवित हैं या नहीं। इस प्रकार इस निर्णय के बाद महिलाओं के संपत्ति के अधिकारों का और अधिक विस्तार हो गया है तथा वह बराबर रूप से संपत्ति की उत्तराधिकारी बन गई है। इस प्रकार वर्तमान समय में महिलाओं के पैतृक संपत्ति में उत्तराधिकार को संवैधानिक तथा कानूनी स्वीकृति प्राप्त है परंतु आर्थिक अधिकारों एवं पैतृक संपत्ति में उत्तराधिकार को कानूनी मान्यता के बावजूद आज भी व्यावहारिक सफलता नहीं है। संवैधानिक गारंटी एवं कानूनी सुधारो के बावजूद आज भी महिलाओं के पैतृक संपत्ति के अधिकारों की उपलब्धता में अनेक चुनौतियां है। पितृसत्तात्मक

मानदंड, भेदभावपूर्ण सामाजिक मान्यताओं, अपर्याप्त प्रवर्तन तंत्र, लंबी कानूनी प्रक्रियाएं तथा कानून के क्रियान्वयन संबंधी कर्मियों के कारण आज भी अधिकांश महिलाएं पैतृक संपत्ति में उत्तराधिकार से वंचित है। पैतृक संपत्ति में उत्तराधिकार की व्यवहारिक क्रियान्विति मुख्य रूप से पारिवारिक सहमति पर अधिक निर्भर है। हिंदू समाज की बुनियादी इकाई परिवार है एवं इसमें किसी भी अधिकार की उपलब्धता पारिवारिक सहमति पर आधारित है। आज भी हिंदू परिवारों में सामान्यत बेटियां अपना अधिकार नहीं मांगती है क्योंकि उन्हें परिवार या भाइयों के साथ संबंध टूटने की आशंका रहती है। आज भी पुत्री का संपत्ति में उत्तराधिकार मांगना समाज में सम्मानजनक नहीं माना जाता है तथा परिवार में सौहार्द बनाए रखने की जिम्मेदारी भी स्त्री की ही मानी जाती है। इसलिए महिलाओं को संपत्ति, भूमि और समानता के अधिकारों की मान्यता और उससे उपजे प्रश्नों का प्रथम समाधान वास्तव में परिवार की बुनियादी और सबसे व्यावहारिक इकाई में ही संभव है। नियम, अधिनियम एवं कानून बनाने से कोई वास्तविक परिवर्तन नहीं आ सकता अपितु सामाजिक मान्यताओं, मानदंडों एवं मानसिकता में भी परिवर्तन होना चाहिए तभी यह अधिकार वास्तविकता में बदल पाएंगे।

शोध परिणाम और निष्कर्ष- भारतीय ज्ञान परंपरा के विविध स्त्रोत, धर्म शास्त्रीय ग्रंथो और स्मृतियों इत्यादि के विश्लेषण से स्पष्ट है कि प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा में स्त्रियों को सम्मानजनक स्थान प्राप्त था तथा स्त्रियों के संपत्ति के अधिकारों के संदर्भ में सचेतता थी। दाय भाग में कन्याओं के अधिकारों के संदर्भ में अनेक सूत्र प्राचीन भारत में दिखाई देते हैं । वर्तमान कानूनों पर भी भारतीय ज्ञान परंपरा की स्मृतियों का प्रभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। वर्तमान हिंदू विधि में महिलाओं को पैतृक संपत्ति में सैद्धांतिक रूप से समान अधिकार प्राप्त हैं परंतु उसकी व्यावहारिक क्रियान्विति के लिए समाज की रूढ़िवादी मानसिकता में परिवर्तन, अधिकारों के प्रति जागरूकता एवं सामाजिक समर्थन की आवश्यकता है। संपत्ति का उत्तराधिकार महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण से जुड़ा हुआ है तथा महिलाओं का आर्थिक सशक्तिकरण समावेशी विकास एवं राष्ट्र की प्रगति के साथ घनिष्ठ रूप से संबंधित है अत: संपत्ति के अधिकारों की व्यवहारिक उपलब्धता अत्यंत आवश्यक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ-

1. अथ य इच्छेद् दुहिता मे पण्डिता जायेत। तिलौदनौ पाचयित्वा अश्नीयातामिति। बृहद आरण्यक उपनिषद , 4.4.18
2. कन्या कुलभूषणत्वम, विक्रमार्कदेव चरितम, अनुवादक पंडित विश्वनाथ शास्त्री भारद्वाज हिंदी विश्वविद्यालय अनुसंधान समिति बनारस।
3. शर्मा मंजू, संस्कृत महाकाव्य में नारी के अधिकार एवं कर्तव्य, ईस्टर्न बुक लिंकर्स दिल्ली 2003 पृ 5
4. शर्मा मालती, वैदिक संहिता में नारी, संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी
5. अभ्रातेव पुंसएति प्रतीचि गर्तारुगिव सनये घनानाम् ।। ऋग्वेद, 1.124.7 गीता प्रेस गोरखपुर
6. https%@@www-socialresearch foundationcom@upoadreserchpapers@ 7@166@1708261158181stþ20jitendraþ20singh-pdf

7. याज्ञवल्क्य स्मृति (मिताक्षरा टीका) निर्णय सागर प्रेस मुंबई
8. स्वेभ्योऽशेभ्यस्तु कन्याभ्य: प्रदद्युर्भातर: पृथक् । स्वात्रस्वादंशाच्चतुर्भागं पतिता स्युरदित्स्व: ।। मनुस्मृति, 9.118, शास्त्री हरगोविंद चोखंबा संस्कृत सीरीज बनारस
9. यथैवात्मा तथा पुत्र: पुत्रेण दुहिता समा। तस्यामात्मनि तिष्ठन्त्यां कथमन्यो धनं हरेत् ।। महाभारत, 13.45.12, शास्त्री पांडे, गीता प्रेस गोरखपुर
10. द्रव्यमपुत्रस्य सोदर्या भ्रातर: सहजीविनो वा हरेयु: कन्याश्च रिक्थम्। पुत्रवत: पुत्रा: दुहितरो वा धर्मिष्ठेषु विवाहेषु जाता ।। अर्थशास्त्र, 3.5.8-9, गैरोला वाचस्पति, चौखंबा विद्या भवन, बनारस
11. शर्मा मंजू, संस्कृत महाकाव्य में नारी के अधिकार एवं कर्तव्य, ईस्टर्न बुक लिंकर्स दिल्ली 2003
12. मातुर्धनं दुहितरो विभजेरन् । - युक्तं चैतत्-'पुमान्पुंसोऽधिके शुक्रेस्त्री भवत्यधिके स्त्रिया:' इति स्त्र्यवयवानां दुहितृषु बाहुल्यात् स्त्रीधनं दुहितृगामि। पितृधनं पुत्रगामि पित्रवयवानां पुत्रेषु बाहुल्यादिति। याज्ञवल्क्य स्मृति 2.117 पर मिताक्षरा टीका।
13. https%@@www-drishtijudiciary-com@hin@to&the&point@ ttp&hindu &law@sources&of&hindu&law
14. https%@@www-drishtijudiciary-com@hin@to&the&point@ttp&hindu& law@sources&of&hindu&law
15. "Ibid"

अन्य संदर्भ ग्रंथ एवं सूत्र

1. शास्त्री पंडित हरगोविंद, मनुस्मृति, चौखंबा संस्कृत सीरीज, वाराणसी
2. शर्मा मालती, वैदिक संहिता में नारी, संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी
3. वेदालंकार हरिदत्त हिंदू परिवार मीमांसा सरस्वती सदन मसूरी
4. अलतेकर ,ए एस, द पोजीशन ऑफ वीमेन इन हिंदू सिविलाइजेशन मोतीलाल बनारसी दास दिल्ली 1982
5. हिंदू विधि, इलाहाबाद लॉ पब्लिकेशन
6. सक्सेना आलोक, भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, इलाहाबाद
7. अमाजूरिव पित्रो: सचा सती समानादा सदसस्त्वामिये भगम्।
8. कृधि प्रकेतमुप मास्याभर दद्धि भांग तन्वो... येन मामह: ।। ऋग्वेद, 2.17.7
9. यथैवात्मा तथा पुत्र: पुत्रेण दूहिता समा।। मनुस्मृति
10. दुहितान्यत्र जाताद्धि पुत्रादपि विशिष्यते ।। महाभा०, 13.80.11
11. पुत्राभावे य: प्रत्यासन्न: सपिण्ड: ।। तदभावे आचार्य: । आचार्याभावे अन्तेवासी। ह्रत्वा तदर्शेषु धर्मकृत्येयु। वोपयोजयेत् । दुहिता वा ।। आपस्तंब ^० सू०, 2.14.2,4, सुदर्शनाचार्य, गवर्नमेंट ओरिएंटल लाइब्रेरी मैसूर
12. कुमारो नास्ति येषां च कन्यास्तत्रभिषेचय। कामाशयो हि स्त्रीवर्ग: शोकमेव प्रहास्यसि ।। महाभारत, 12.33.45
13. पुत्रवत: पुत्रा: दुहितरो वा धर्मिष्ठेषु विवाहेषु जाता: ।। अर्थशास्त्र, 3.5.9
14. https%@@www-drishtijudiciary-com@hin@to&the&point@ttp &hindu&law@sources&of&hindu&law

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 42, Hindi Edition, Year-21, Jan.- June 2025

आधुनिक तकनीकी पर्यटन व्यवस्था चुनौतियॉं एवं अवसर

• निशान्त सक्सेना

सारांश- राष्ट्र के विकास में पर्यटन न केवल महत्वपूर्ण आर्थिक क्रिया है, बल्कि विश्व के विभिन्न राष्ट्रों में आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तन लाने का महत्वपूर्ण माध्यम भी है। विश्व स्तर पर भारत एक ऐसा देश है जो अपनी दीर्घकालीन, अनवरत एवं सतरंगी उपलब्धियों से युक्त इतिहास पर गर्व करता रहा है। प्राचीन काल से ही भारत एक अत्यन्त ही विविधता सम्पन्न देश रहा है और यह विशेषता आज भी समय की घड़ी पर अंकित है। यहाँ प्रारम्भ से अनेक अध्यावसायों का अनुसरण होता रहा है। यहां पृथक-पृथक मान्यताएं है लोगों के रीति रिवाज और दृष्टिकोंण के विभिन्न रगों से सुसज्जित हमारा भारत देश अतीत को भूत, वर्तमान एवं भविष्य की आंखों से देखने के लिए आवाहन कर रहा है किन्तु बहुरंगी सभ्यता एवं संस्कृति वाले देश के सभी आयामों को समझने का प्रयास इतना आसान नहीं है। भारत में पर्यटन सबसे बड़ा सेवा उद्योग है भारत के सकल घरेलू उत्पाद में 6.23 प्रतिशत एवं कुल रोजगार में 8.78 प्रतिशत योगदान पर्यटन का है। भारत सरकार का पर्यटन क्षेत्र में 9.4 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि के साथ 18502.58 करोड़ रूपये तक पर्यटन क्षेत्र को बढ़ाने का लक्ष्य है। भारत में पर्यटन के विकास और उसे बढ़ावा देने के लिए पर्यटन मंत्रालय नोडल एजेन्सी है और अतुल्य भारत अभियान की देख रेख कर रहा है। विभिन्न रूकवटों के बावजूद भी भारत में पर्यटन सेवा क्षेत्र में 42 प्रतिशत् (लगभग) की वृद्धि हुई है। परन्तु अन्य देशों की तुलना में भारत का पर्यटन क्षेत्र अत्यधिक विकास नहीं कर सका है क्योंकि भारत में पर्यटन क्षेत्रों में आधुनिक तकनीकी विकास का अभाव है। अभी भी पर्यटन क्षेत्र को रेलवे परिवहन से पूर्ण रूप से नहीं जोड़ा जा सका है तथा विदेशी पर्यटकों की सुरक्षा हेतु प्रयास किए जाने की आवश्यकता है। पर्यटन क्षेत्रों को आधुनिक संचार व्यवस्था जैसे इन्टरनेट, वाई-फाई से जोड़े जाने की आवश्यकता है तथा पर्यटन क्षेत्रों में नगद रहित लेन देनों को बढ़ावा देने हेतु बैंकों का विकास, ए.टी.एम. की स्थापना, एवं प्रत्येक पर्यटन स्थल में स्वैप मशीन की स्थापना ताकि पर्यटक बिना नकद के भी आसानी से दार्शनिक पर्यटन स्थलों में भ्रमण कर सकें। प्रस्तुत शोध पत्र में पर्यटन उद्योग से जुड़ें विभिन्न पहलुओं, विमुद्रीकरण तथा डिजिटल पेमेन्ट के परिप्रेक्ष्य में पर्यटन उद्योग में होने वाले प्रभाव एवं परिवर्तनों का विवेचन किया गया है तथा भारत के पर्यटन स्थलों के

• शोधार्थी, वाणिज्य, जीवाजी विश्वविद्यालय ग्वालियर (म.प्र.)

पर्यावरण में आधुनिक तकनीकीकरण से पर्यावरण उद्योग से होने वाले संभावित आर्थिक विकास एवं समद्धि का वर्णन किया गया है एवं पर्यावरण संरक्षण एवं पर्यटन स्थलों की स्वच्छता हेतु तकनीकी उपायों को गम्भीरता से शोध पत्र में स्थान दिया गया है।

मुख्य शब्द- विश्व पर्यटन संगठन, सकल घरेलू उत्पाद, नकद रहित लेनदेन, संयुक्त राष्ट्र संघ

1.परिचय(प्रस्तावना)- पर्यटन का महत्त्व प्रत्येक देश में स्वीकार किया जा चुका है। पाश्चात्य जगत् के प्रख्यात विचारक मांटेन का कथन है कि पर्यटन के अभाव में कोई व्यक्ति पूर्ण शिक्षित नहीं कहा जा सकता। आधुनिक युग में प्रत्येक शिक्षा-प्रणाली में पर्यटन की योजना अनिवार्य रूप से सन्निविष्ट है। आदिकाल से मनुष्य पर्यटन का प्रेमी रहा है। मनुष्य की प्रकृति में पर्यटन का बीज परमपिता ने बोया। मानवीय सभ्यता उसी के प्रस्कुटन का परिणाम है। जैसा कि नाम से स्पष्ट है, पर्यटन का तात्पर्य देश-विदेश में परिभ्रमण है। पर्यटन निरुद्देश्य नहीं होता। पर्यटन की प्रेरणा राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, व्यावसायिक, व्यापारिक आदि अनेक कारणों से प्राप्त हो सकती है । इनके अतिरिक्त मनोरंजन, अनुसंधान, अध्ययन, स्वास्थ्य-लाभ अथवा अन्य व्यक्तिगत कारण भी पर्यटन के मूल में हो सकते हैं। सांस्कृतिक आदान-प्रदान के लिए संसार के सभी सभ्य देशों के बीच नागरिकों की यात्रा अब नित्य की दिनचर्या है। विद्याध्ययन के लिए एक देश के छात्र दूसरे देश में जाते हैं। ऐसी यात्राओं से व्यक्तिगत उद्देश्यों के साथ-साथ राष्ट्रीय उद्देश्यों की पूर्ति भी होती है। पर्यटन में देश-दर्शन की भावना सर्वोपरि होती है। प्रकृति की विविध मनोहारी छटाओं को चुरा-चुराकर हृदय में रखते जानाय उसकी सुषमा से नेत्र और मन को तृप्त करते जानाय मार्ग में आनेवाले नगरों, भवनों, वन-प्रांतरों आदि की शोभा और ग्रामश्री का आस्वादन करते जाना चाहिए। संयुक्त राष्ट्र संघ ने सन् 1967 को 'अंतरराष्ट्रीय पर्यटन वर्ष' घोषित किया था। संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा ने 4 नवंबर, 1966 को यह निर्णय लिया। इस प्रकार प्रथम बार अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पर्यटन को बहुत महत्त्व दिया गया। हमारे लिए एक और दृष्टि से भी इसका महत्त्व है। इसमें विकासशील देशों में पर्यटन को प्रोत्साहन देने पर विशेष बल दिया गया था। इसलिए पर्यटन को उद्योग के रूप में अपनाने और उसका प्रचार करने का सन् 1967 में हमें बड़ा सुअवसर प्राप्त हुआ। कारण, भारत बहुत बड़ा देश है और यहाँ पर्यटन के विकास की काफी संभावनाएँ हैं। विदेशी पर्यटकों के लिए भारत में अनेक आकर्षण हैं। विगत पंद्रह-सोलह वर्षों में विदेशी पर्यटकों की संख्या में 80 प्रतिशत की वृद्धि हुई है, फिर भी अभी और वृद्धि की संभावना है । परंतु इसमें हमारे सीमित साधन बाधक हैं, जिसके कारण यहाँ पर्यटकों के ठहरने के स्थान, परिवहन, मनोरंजन आदि की सुविधाएँ बहुत अधिक नहीं बढ़ाई जा सकतीय किंतु संगठित प्रयत्न करके कम-से-कम समय में उसे दूर किया जा सकता है। सरकार की ओर से कोलकाता, मुंबई, वाराणसी, उदयपुर, बंगलौर तथा अन्य महत्त्वपूर्ण स्थानों में होटलों के निर्माण और विस्तार की योजना है।

जैसा कि नाम से स्पष्ट है, पर्यटन का तात्पर्य देश-विदेश में परिभ्रमण है। पर्यटन निरुद्देश्य नहीं होता। पर्यटन की प्रेरणा राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, व्यावसायिक, व्यापारिक आदि अनेक कारणों से प्राप्त हो सकती है। इनके अतिरिक्त मनोरंजन, अनुसंधान, अध्ययन, स्वास्थ्य-लाभ अथवा अन्य व्यक्तिगत कारण भी पर्यटन के मूल में हो सकते हैं। सांस्कृतिक आदान-प्रदान के लिए संसार के सभी सभ्य देशों के बीच नागरिकों की यात्रा अब नित्य की दिनचर्या है। विद्याध्ययन के लिए एक देश के छात्र दूसरे देश में जाते हैं। ऐसी यात्राओं से व्यक्तिगत उद्देश्यों के साथ-साथ राष्ट्रीय उद्देश्यों की पूर्ति भी होती है। पर्यटन में देश-दर्शन की भावना सर्वोपरि होती है। पर्यटन दुनिया भर में एक आरामपूर्ण गतिविधि के रूप में लोकप्रिय हो गया है। विश्व में सन् 2007 में, 90 करोड़ तीस लाख से अधिक अंतरराष्ट्रीय पर्यटकों के आगमन के साथ, 2006 की तुलना मे 6.6 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई। सन् 2007 में अंतर्राष्ट्रीय पर्यटक प्राप्तियां 856 अरब डॉलर थी। विश्व अर्थव्यवस्था में अनिश्चितताओं के बावजूद, सन् 2008 के पहले चार महीनों में पर्यटन व्यवसाय में 5 प्रतिशत की वृद्धि हुई, यह सन् 2007 में समान अवधि में हुई वृद्धि के लगभग समान थी। कई देशों जैसे इजिप्ट, थाईलैंड और कई द्वीप राष्ट्रों जैसे फिजी के लिए पर्यटन बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि अपने माल और सेवाओं के व्यापार से ये देश बहुत अधिक मात्रा में धन प्राप्त करते हैं और सेवा उद्योग में रोजगार के अवसर पर्यटन से जुड़े हैं। इन सेवा उद्योगों में परिवहन सेवाएँ जैसे क्रूज पोत और टैक्सियाँ, निवास स्थान जैसे होटल और मनोरंजन स्थल और अन्य आतिथ्य उद्योग सेवाएँ जैसे रिजोर्ट शामिल हैं।

2. पर्यटन से आशय- संयुक्त राष्ट्र ने सन् 1941 में पर्यटन को इस प्रकार से परिभाषित किया "पर्यटन गैर निवासियों की यात्रा और उनके ठहरने से उत्पन्न सम्बन्ध और प्रक्रियाओं का योग है, ये लोग यहाँ स्थायी रूप से निवास नहीं करते हैं और यहाँ पर कमाई की किसी गतिविधि से नहीं जुड़े हैं।" सन् 1976 में, इंग्लैंड की पर्यटन सोसायटी ने पर्यटन को इस प्रकार से परिभाषित किया "पर्यटन लोगों का किसी बाहरी स्थान पर अस्थायी और, अल्पकालिक गमन है, प्रत्येक गंतव्य स्थान में ठहरने के दोरान पर्यटक सामान्यतया यहाँ रहते हैं और काम करते हैं। इसमें सभी उद्देश्यों के लिए गमन शामिल है।" सन् 1981 इंटरनेशनल असोसिएशन ऑफ साईंटिफिक एक्सपर्ट्स इन टूरिज्म ने पर्यटन को घर के वातावरण के बाहर चयनित विशिष्ट गतिविधि के रूप में परिभाषित किया।

3.पर्यटन के प्रकार- संयुक्त राष्ट्र ने 1994 में पर्यटन आंकड़ों के अनुसार पर्यटन को तीन रूपों में वर्गीकृत किया है।

1. घरेलू पर्यटन- जिसमें किसी देश के निवासियों की केवल उनके देश के अन्दर यात्रा शामिल है,

2. इनबाउंड पर्यटन- जिसमें गैर निवासियों की किसी देश में यात्रा शामिल है।

3. आउटबाउंड पर्यटन- जिसमें निवासियों की दूसरे देश में यात्रा शामिल है।

संयुक्त राष्ट्र ने पर्यटन के तीन बुनियादी रूपों को मिलाकर इसकी तीन विभिन्न श्रेणियां व्युत्पन्न की, ये हैं घरेलू पर्यटन, इनबाउंड पर्यटन और राष्ट्रीय पर्यटन। जिसमें घरेलू पर्यटन, आउटबाउंड पर्यटन और अंतरराष्ट्रीय पर्यटन शामिल है, जो इनबाउंड

पर्यटन और आउटबाउंड पर्यटन से बना है। इंट्रा बाउंड पर्यटन कोरिया पर्यटन संगठन के द्वारा दिया गया एक शब्द है और इसे कोरिया में व्यापक रूप से स्वीकार किया जाता हैं। इंट्राबाउंड पर्यटन, घरेलू पर्यटन से नीति निर्माण प्रक्रिया तथा राष्ट्रीय पर्यटन नीतियों के कार्यान्वयन में भिन्न है। हाल ही में, पर्यटन उद्योग इन बाउंड पर्यटन से इंट्राबाउंड पर्यटन की और स्थानांतरित हो गया है क्योंकि कई देश इनबाउंड पर्यटन के लिए कठिन प्रतियोगिता का अनुभव कर रहे हैं। कुछ राष्ट्रीय नीति निर्माताओं ने स्थानीय अर्थव्यवस्था में योगदान करने के लिए इंट्रा बाउंड पर्यटन को बढ़ावा देने को प्राथमिकता दी है। ऐसे कुछ उदहारण हैं।

1. भारत में "अतुल्य भारत"
2. संयुक्त राज्य में "सी अमेरिका"
3. मलेशिया में "मलेशिया टूरिली एशिया"
4. कनाडा में "गैट गोइंग कनाडा"
5. फिलीपींस में "वॉव फिलिपींस"
6. सिंगापुर में "युनीकली सिंगापुर"
7. न्यूजीलैण्ड में "प्योर न्यूजीलैण्ड"

4. भारत में पर्यटन- भारतीय के प्राचीन ग्रंथों में स्पष्ट रूप से मानव के विकास, सुख और शांति की संतुष्टि व ज्ञान के लिए पर्यटन को अति आवश्यक माना गया है। हमारे देश के ऋषि मुनियों ने भी पर्यटन को प्रथम महत्व दिया है। प्राचीन गुरुओं (ब्राह्मणों, ऋषि-तपस्वियों) ने भी यह कह कर कि "बिना पर्यटन मानव अन्धकार प्रेमी होकर रह जायेगा।" पाश्चात्य विद्वान् संत आगस्टिन ने तो यहाँ तक कह दिया कि "बिना विश्व दर्शन ज्ञान ही अधूरा है।" सेल्युकस के दूत मेगास्थनीज ने अपनी पुस्तक इंडिका में मौर्यकालीन भारत का बड़ा अच्छा वर्णन किया है। इसी तरह हवेनसांग, क्रिस्टोफर कोलंबस आदि व्यक्तियों की यात्राएँ भी इतिहास में बड़ी प्रसिद्ध रही हैं। जहाँ तक भारत के लोगों की बात है, हमारे यहाँ धार्मिक दृष्टि से की गई यात्राओं की बड़ी महत्ता रही है। भारत में लोग धर्मस्थानों की यात्रा को बहुत महत्व देते रहे हैं। आदि शंकराचार्य अल्प आयु में ही पूरे देश का भ्रमण कर देश के चार कोनों में चार धर्मपीठों की स्थापना की। इन धर्मपीठों की व्यवस्था आज भी कायम है। सम्राट अशोक ने बौद्ध धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए अपने विभिन्न दूत एशियाई देशों में भेजे। उनका यह धार्मिक अभियान इतिहास में काफी सफल माना गया। परंतु मध्य युग में स्थिति में काफी बदलाव आ गया। विश्व स्तर पर भारत एक ऐसा देश है जो अपनी दीर्घकालीन, अनवरत एवं सतरंगी उपलब्धियों से युक्त इतिहास पर गर्व करता रहा है। प्राचीन काल से ही भारत एक अत्यन्त ही विविधता सम्पन्न देश रहा है और यह विशेषता आज भी समय की घड़ी पर अंकित है। यहाँ प्रारम्भ से अनेक अध्यावसायों का अनुसरण होता रहा है। यहॉ प्रथक-प्रथक मान्यताएँ है, लोगों के रीति रिवाज और दृष्टिकोणों के विभिन्न रगों से सुसज्जित हमारा भारत देश अतीत को भूत, वर्तमान एवं भविष्य की आंखो से देखने के लिए आवाहन कर रहा है किन्तु बहुरंगी सभ्यता एवं संस्कृति वाले देश के सभी आयामों को समझने का प्रयास इतना आसान नही है।

भारत में पर्यटन सबसे बड़ा सेवा उद्योग है, जहां इसका राष्ट्रीय सकल घरेलू

उत्पाद में 6.23 प्रतिशत और भारत के कुल रोजगार में 8.78 प्रतिशत योगदान है। भारत में वार्षिक तौर पर 50 लाख विदेशी पर्यटकों का आगमन और 5 करोड़ 62 लाख घरेलू पर्यटकों द्वारा भ्रमण परिलक्षित होता है। सन् 2008 में भारत के पर्यटन उद्योग ने लगभग 100 करोड़ डॉलर जनित किया और 2018 तक 9.4 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि दर के साथ, इसके 275.5 करोड़ डॉलर तक बढ़ने की उम्मीद है। भारत में पर्यटन के विकास और उसे बढ़ावा देने के लिए पर्यटन मंत्रालय नोडल एजेंसी है और "अतुल्य भारत"अभियान की देख-रेख करता है। विश्व यात्रा और पर्यटन परिषद के अनुसार, भारत, सर्वाधिक 10 वर्षीय विकास क्षमता के साथ, 2009-2018, से पर्यटन का आकर्षण केंद्र बन जाएगा। यात्रा एवं पर्यटन प्रतिस्पर्धा रिपोर्ट 2007 ने भारत में पर्यटन को प्रतियोगी कीमतों के संदर्भ में 6वां तथा सुरक्षा व निरापदता की दृष्टि से 39वां दर्जा दिया है। लघु और मध्यमावधि रुकावट के बावजूद, 2007 से 2017 तक पर्यटन राजस्व में 42 प्रतिशत उछाल की उम्मीद है।

भारत में पर्यटन का महत्व- भारत जैसे देशों के लिए पर्यटन का खास महत्व होता है। भारत जैसे देश की पुरातात्विक विरासत या संस्कृति केवल दार्शनिक स्थल के लिए नहीं होती है, इसे राजस्व प्राप्ति का भी स्रोत माना जाता है और साथ ही पर्यटन क्षेत्रों से कई लोगों की रोजी-रोटी भी जुड़ी होती है। आज भारत जैसे देशों को देखकर ही विश्व के लगभग सभी देशों में पुरानी और ऐतिहासिक इमारतों का संरक्षण दिया जाने लगा है। भारत असंख्य अनुभवों और मोहक स्थलों का देश है। चाहे भव्य स्मारक हो, प्राचीन मंदिर या मकबरे हो, इसके चमकीले रंगों और समृद्ध सांस्कृतिक विरासत का प्रौद्योगिकी से चलने वाले इसके वर्तमान से अटूट संबंध है। केरल, शिमला, गोवा, आगरा, राजस्थान, मध्यप्रदेश, मथुरा, काशी जैसी जगहें तो अपने विदेशी पर्यटकों के लिए हमेशा चर्चा में रहती हैं। भारत में अपने लोगों के साथ लाखों विदेशी लोग प्रतिवर्ष भारत घूमने आते हैं। भारत में पर्यटन की उपयुक्त क्षमता है। यहां सभी प्रकार के पर्यटकों को चाहे वे साहसिक यात्रा पर हो, सांस्कृतिक यात्रा या वह तीर्थयात्रा करने आए हो या खूबसूरत समुद्री-तटों की यात्रा पर निकले हो, सबके लिए खूबसूरत जगहें हैं। दिल्ली, मुंबई, राजस्थान, मध्यप्रदेश जैसे राज्यों में तो लोगों को घूमते-घूमते महीना बीत जाता है। एक समय ऐसा आया जब भारत के पर्यटन स्थल खतरे में नजर आने लगे और लगने लगा कि शायद अब भारत पर्यटक स्थल के नाम पर पर्यटकों की पहली पसंद नहीं रहेगा। दुनिया में आई आर्थिक मंदी और आतंकवाद के चलते ऐसा लगने लगा कि पर्यटक अब भारत का रुख करना पसंद नहीं करेंगे पर ऐसा नहीं हुआ। भारत की सांस्कृतिक और प्राकृतिक सुंदरता इतनी ज्यादा है कि पर्यटक ज्यादा समय तक यहां के सुंदर नजारे देखने से दूर नहीं रह सके। यही वजह है कि भारत में विदेशी सैलानियों को आकर्षित करने के लिए विभिन्न शहरों में अलग-अलग योजनाएं भी लागू की गई हैं। भारतीय पर्यटन विभाग ने सितंबर 2002 में 'अतुल्यभारत' नाम से एक नया अभियान शुरू किया था। इस अभियान का उद्देश्य भारतीय पर्यटन को वैश्विक मंच पर प्रमोट करना था जो काफी हद तक सफल हुआ। इसी तरह राजस्थान पर्यटन विकास निगम ने रेलगाड़ी की शाही सवारी कराने के माध्यम से लोगों को पर्यटन का लुत्फ उठाने का मौका दिया। जिसे 'पैलेस ऑन व्हील्स'

नाम दिया गया। राजस्थान पर्यटन विकास निगम की यह पहल दुनिया के पर्यटन मानचित्र पर भारत का नाम रोशन करने वाला माना गया है। देश की पर्यटन क्षमता को विश्व के समक्ष प्रस्तुत करने वाला यह अपने किस्म का यह पहला प्रयास था। पर्यटन के क्षेत्र में विकास इसके पहले राज्य सरकारों के अधीन हुआ करता था। राज्यों में समन्वय के स्तर पर भी बहुत थोड़े प्रयास दिखते थे। देश के द्वार विदेशी सैलानियों के लिए खोलने का काम यदि सही और सटीक विपणन ने किया तो हवाई अड्डों से पर्यटन के सीधे जुड़ाव ने पर्यटन क्षेत्र के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। आज सैलानी पर्यटन के लिहाज से सुदूर स्थलों की सैर भी आसानी से कर सकते हैं। निजी क्षेत्रों की विमान कंपनियों को देश में उड़ान भरने की इजाजत ने भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। सिमटती दूरियों के बीच लोग बाहरी दुनिया के बारे में भी जानने के उत्सुक रहते हैं। यही कारण है कि आज दुनिया में टूरिज्म एक फलता–फूलता उद्योग बन चुका है।

5. वर्तमान में भारत का पर्यटन व्यवसाय- विदेशी पर्यटकों की संख्या में दिसंबर 2016 में 13.6 प्रतिशत की वृद्धि हुई और इससे देश को एक खरब 68 अरब पांच करोड़ रुपए की विदेशी मुद्रा की आय हुई। पर्यटन मंत्रालय आंकड़ों के अनुसार, दिसम्बर 2016 में 10 लाख 37 हजार विदेशी पर्यटक भारत आए जबकि दिसंबर 2015 में यह संख्या नौ लाख 13 हजार और दिसंबर 2014 में आठ लाख 85 हजार थी। इस तरह दिसंबर 2015 की तुलना में पिछले वर्ष इसमें 13.6 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई। जनवरी 2016 से दिसंबर 2016 के दौरान 88 लाख 90 हजार विदेशी पर्यटक आए और उनकी संख्या में 10.7 प्रतिशत की बढ़ोतरी दर्ज की गई। दिसंबर 2016 में अमेरिका से सबसे ज्यादा 18.33 प्रतिशत पर्यटक भारत आए। उसके बाद बांग्लादेश (13.02 प्रतिशत), ब्रिटेन (11.7 प्रतिशत), आस्ट्रेलिया (5.43 प्रतिशत), रूसी संघ (4.18 प्रतिशत), कनाडा (4.1 प्रतिशत), मलेशिया (3.38 प्रतिशत), जर्मनी (2.80 प्रतिशत), चीन (2.53 प्रतिशत), श्रीलंका (2.25 प्रतिशत), सिंगापुर (2.12 प्रतिशत), फ्रांस(2.01 प्रतिशत), जापान(1. 79 प्रतिशत), अफगानिस्तान (1.38प्रतिशत) और नेपाल (1.34 प्रतिशत) का स्थान रहा।

6. अध्ययन के उदेश्य- पर्यटन सिर्फ हमारे जीवन में खुशियों के पल को वापस लाने में ही मदद नहीं करता है बल्कि यह किसी भी देश के सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक और आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आज के समय में जहां हर देश की पहली जरूरत अर्थव्यवस्था को मजबूत करना है वहीं आज पर्यटन के कारण कई देशों की अर्थव्यवस्था पर्यटन उद्योग के इर्द–गिर्द घूमती है। यूरोपीय देश, तटीय अफ्रीकी देश, पूर्वी एशियाई देश, कनाडा, आस्ट्रेलिया आदि ऐसे देश हैं, जहां पर पर्यटन उद्योग से प्राप्त आय वहां की अर्थव्यवस्था को मजबूती प्रदान करता है। अतः भारत को भी पर्यटन उद्योग से देश की अर्थव्यवस्था को मजबूत करने के लिए निम्न उदेश्यों को पूरा करना होगा।

1. पर्यटन स्थलों को साफ–सुथरा रखना।
2. पर्यटन स्थलों तक पहुँच को सुगम एवं आकर्षक बनाना।
3. पर्यटको के निवास भोजन आदि की उत्तम व्यवस्था करना।
4. पर्यटन स्थलों को मनोरंजन से भरपूर बनाना।

5. सड़क एवं संचार व्यवस्था का आधुनिक तकनीकीकरण करना।
6. पर्यटन स्थलो में आधुनिक वित्तीय संस्थाओ की सुविधा उपलब्ध कराना।
7. पर्यटन स्थलो में आधुनिक सुरक्षा तकनीकों का होना।
8. 'अतुल्य भारत' अभियान के प्रगति की जॉच करना।

7. परीक्षण की जाने वाली परिकल्पनाएँ-

1. पर्यटन स्थलों को साफ-सुथरा रखने के लिए के केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकार द्वारा पर्याप्त उपाय किये गये है।
2. पर्यटन स्थलों तक पहुँचने के लिए रेल यातायात, वायु यातायात ,सड़क यातायात संसाधनो का पर्याप्त विकास किया गया है।
3. पर्यटको के निवास हेतु आधुनिक तकनीको से परिपूर्ण पर्यटक निवास स्थलो का निर्माण केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकारो द्वारा कराया गया है।
4. केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकारो द्वारा पर्यटन स्थलों में संचार व्यवस्था, वित्तीय संस्थाओ, आधुनिक सुरक्षा तकनीको का पर्याप्त विकास किया गया है।
5. 'अतुल्य भारत' अभियान, से पर्यटन व्यावसाय का पर्याप्त विकास हुआ है।

8. शोध प्रविधि एंव संमको का संग्रहण- अध्ययन हेतु शोध विधि प्रमुखतया सैद्वान्तिक अपनायी गयी है। अध्ययन मुख्यत: द्वितीयक संमको पर आधारित है, जिसे आर्थिक पुस्तकों, जर्नल, शोधपत्रो से संग्रहित किया गया है।

9. केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकार द्वारा पर्यटन विकास हेतु संचालित योजनायें-

9.1 अतुल्य भारत- अतुल्य भारत,भारतीय पर्यटन विभाग एक अभियान है, जो देश विदेश में भारत का प्रतिनिधित्व करता है। इस अभियान का उद्देश्य है भारतीय पर्यटन को वैश्विक मंच पर पदोन्नत करना। अतुल्य भारत शीर्षक को आधिकारिक तौर पर अमिताभ कांत द्वारा ब्रांडेड किया गया और फिर, केन्द्रीय पर्यटन मंत्रालय के तहत संयुक्त सचिव द्वारा वर्ष-2002 में प्रोत्साहित किया गया था। भारत विश्व के पाँच शीर्ष पर्यटक स्थलों में से एक है। इसीलिए भारतीय पर्यटन विभाग ने सितंबर 2002 में "अतुल्य भारत" नाम से एक नया अभियान शुरू किया था। सरकार और एक्सपीरियेंस इंडिया सोसायटी ने शुरुआती चरण के पहले तीन माह का खर्च वहन किया था। यह संस्था ट्रैवेल एजेंट्स से जुड़ी हुई है। इस अभियान के तहत हिमालय, वन्य जीव, योग और आयुर्वेद पर अंतर्राष्ट्रीय समूह का ध्यान खींचा गया। देश के पर्यटन क्षेत्र के लिए इस अभियान से संभावनाओं के नए द्वार खुले हैं। देश की पर्यटन क्षमता को विश्व के समक्ष प्रस्तुत करने वाला अपने किस्म का यह पहला प्रयास था। पर्यटन के क्षेत्र में विकास इसके पहले राज्य सरकारों के अधीन हुआ करता था। राज्यों में समन्वय के स्तर पर भी बहुत थोड़े प्रयास दिखते थे। देश के द्वार विदेशी सैलानियों के लिए खोलने का काम यदि सही और सटीक विपणन ने किया तो हवाई अड्डों से पर्यटन स्थलों के सीधे जुड़ाव ने पर्यटन क्षेत्र के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। आज सैलानी पर्यटन के लिहाज से सुदूर स्थलों की सैर भी आसानी से कर सकते हैं। निजी क्षेत्रों की विमान कंपनियों को देश में उड़ान भरने की इजाजत ने भी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की है।

उल्लेखनीय प्रगति- भारत में केवल गोवा, केरल, राजस्थान, उड़ीसा और मध्यप्रदेश में ही पर्यटन के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति नहीं हुई है, बल्कि उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश, झारखंड, आंध्र प्रदेश और छत्तीसगढ़ के पर्यटन को भी अच्छा लाभ पहुँचा है। हिमाचल प्रदेश में पिछले वर्ष 6.5 मिलियन पर्यटक गए थे। यह आंकड़ा राज्य की कुल आबादी के लगभग बराबर बैठता है। इन पर्यटकों में से 2.04 लाख पर्यटक विदेशी थे। आंकड़ों के लिहाज से देखें तो प्रदेश ने अपेक्षा से कहीं अधिक सफल प्रदर्शन किया। भारत के बारे में जितना भी कहा जाए उतना ही कम है। उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम तक इसकी खूबसूरती की कहीं कोई मिसाल नहीं है। इसीलिए यहां आने वाले सैलानी भारत को अपने दिलों दिमाग में बसा लेते हैं। भारत में अनगिनत ऐसी जगह हैं जहां पर प्रकृति ने अपनी बेहतरीन छटा को खूब बिखेरा है फिर चाहे वो ऊंची चोटियों पर मौजूद चर्च हो या फिर घाटी में बने चाय के बागान या फिर खूबसूरत हरी भरी वादियां सभी को देखकर अर्न्तआत्मा उत्साहित हो जाती है। भारत की इन्हीं धरोहरों पर तो आखिर कहा जाता है। अतुल्य भारत....।"

''अतुल्य भारत !, भारतीय पर्यटन विभाग का अभियान''

9.2- म.प्र. राज्य पर्यटन विकास निगम- मध्यप्रदेश के पर्यटन स्थलों का विकास करने की दृष्टि से वर्ष 1978 में म.प्र. राज्य पर्यटन विकास निगम का गठन किया गया। निगम कार्य पर्यटन स्थलों पर आवासीय, गैर आवासीय इकाइयों का संचालन, पर्यटकों को पर्यटन स्थलों की जानकारी सुलभ कराना, पर्यटन स्थलों पर साहित्य का प्रकाशन तथा पर्यटकों को परिवहन सुविधा उपलब्ध कराना है। निगम के अन्य कार्यों में शामिल हैं- आवासीय इकाइयों में आरक्षण, राज्य के बारह निगम के सेटेलाइट कार्यालयों से पर्यटकों के लिए विभिन्न रूचि, अवधि एवं दरों के पैकेज टूरों का संचालन, पर्यटन स्थलों का अखिल भारतीय स्तर पर प्रचार-प्रसार, पर्यटन क्षेत्र से जुड़े ट्रेवल एजेंट्स, लेखक, फोटोग्राफर्स, विशिष्ट व्यक्तियों के लिए टूर का आयोजन, प्रदेश के पर्यटन स्थलों की व्यापक मार्केटिंग तथा प्रचार-प्रसार की दृष्टि से अंतरराष्ट्रीय पर्यटन सम्मेलनों तथा ट्रेवल मार्ट आदि में भागीदारी, पर्यटन विभाग की परामर्शदात्री समिति, संभागीय समिति तथा शासन की पर्यटन संबंधी समितियों द्वारा लिए गए निर्णयों पर कार्यवाई। निगम द्वारा प्रदेश के पर्यटन स्थलों पर आवास, खानपान, परिवहन सुविधा आदि उपलब्ध कराई जाती है।

निगम द्वारा वर्ष 1996 में पर्यटकों को अधिक से अधिक सुविधाएँ मुहैया कराने की दिशा में महत्वपूर्ण निर्णय लिए गए। निगम द्वारा अमरकंटक में केंद्रीय लोक निर्माण विभाग द्वारा 30 बिस्तरों की क्षमता वाली इकाई हालि डे होम्स लीज पर प्राप्त की गई है। नई पर्यटन नीति के तहत निजी निवेशकों को आकर्षित करने की दृष्टि से राजस्व विभाग द्वारा खजुराहो, ओरछा, बाँधवगढ़, जबलपुर तथा मंदसौर जिले में गाँधी सागर तथा बस्तर जिले में चित्रकूट में आवंटित शासकीय भूमि का आधित्य ग्रहण कर लिया गया है। पर्यटकों को पर्यटन स्थलों तक पहुँचाने के लिए भोपाल -इंदौर-भोपाल, भोपाल-पंचमढ़ी-भोपाल,सतना-खजुराहो-सतना,पिपरिया-पंचमढी-पिपरिया,जबल पुर-कान्हा-जबलपुर,जबलपुर-भेड़ाघाट-जबलपुर,भोपाल-साँची-उदयगिरी-भोपाल

,इंदौर–महेश्वर–मंडलेश्वर–इंदौर,इंदौर–उज्जैन बस सेवा निगम द्वारा शुरू की गई है। निगम द्वारा भोपाल में संचालित जलक्रीड़ा संबंधी संबंधी सुविधाओं में व्यापक विस्तार किया गया है। भोपाल के बोट क्लब में नई स्वान बोट, शिकारा मोटर बोट, पैडल बोट बढ़ाई गई हैं। भोपाल–दर्शन, ग्वालियर–दर्शन, पचमढी–दर्शन के अलावा भोपाल से झाँसी–उदयगिरि एवं इंदौर के समीप मुख्य पर्यटन स्थलों के लिए परिचालित भ्रमण शुरू किया गया है। नई पर्यटन नीति के तहत हेरिटेज होटल की योजना प्रदेश में लागू की गई है। इस योजना के अंतर्गत पुराने महल, हवेलियाँ तथा किलों को होटलों में परिवर्तित किया जाना है। इनमें छतरपुर स्थित राजगढ़ पैलेस को होटल का स्वरूप दिए जाने का निर्णय लिया जा चुका है। इसके अलावा पचमढ़ी स्थित शेखर, सुमन एवं डी.आई.बी.बंगले को हेरिटेज होटल में परिवर्तित किया जाएगा। पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए निजी निवेशकों की भागीदारी को प्रोत्साहन दिया जा रहा है। निजी निवेशकों को राज्य शासन की ओर से सरकारी जमीन निर्धारित नियमों के तहत उपलब्ध कराई जाएगी। राजस्व विभाग ने खजुराहो, छिंदवाड़ा, रायपुर, मंदसौर, ओरछा, ब, धवगढ़, चित्रकूट में सरकारी जमीन पर्यटन विकास निगम को दे दी है। इन स्थलों का भूमि आधिपत्य निगम द्वारा ग्रहण किया जा चुका है।

9.3-उत्तर प्रदेश पर्यटन नीति-2016- राज्य मंत्रिपरिषद ने उत्तर प्रदेश पर्यटन नीति–2016 को मंजूरी दे दी है। रणनीतिपरक एवं सुनियोजित पर्यटन गतिविधियों की अपरिमित सम्भावनाओं के सम्यक सदुपयोग के दृष्टिगत प्रदेश को एक प्रमुख पर्यटन राज्य के रूप में स्थापित करने उद्देश्य से एक नई पर्यटन नीति बेहद जरूरी थी। उल्लेखनीय है कि उत्तर प्रदेश पर्यटन विभाग द्वारा 1998 में प्रदेश के पर्यटन उद्योग के बहुमुखी विकास के उद्देश्य से पहली पर्यटन नीति घोषित की गई थी।

प्रमुख बिंदु-

- नए पर्यटक गंतव्यों एवं कांसेप्ट को चिन्हित कर उन्हें पर्यटकों के समक्ष प्रस्तुत किया जाएगा।
- मानव संसाधन विकास हेतु विशेष प्रयास किए जाएंगे। पर्यटन क्षेत्र को प्रशिक्षित कार्मिक उपलब्ध कराने हेतु बजट में पृथक से व्यवस्था की जाएगी।
- प्रमुख पर्यटन मार्गों पर आवश्यकतानुसार मार्गीय सुविधाओं का निजी क्षेत्र के सहयोग से विकास किया जाएगा।
- प्रदेश के सभी धार्मिक स्थलों पर पर्यटक अवस्थापना सुविधाएं, जैसे–जल, विद्युत, सम्पर्क मार्ग, सफाई व्यवस्था आदि को सुदृढ़ करते हुए उच्चीकृत किया जाएगा।
- हेरिटेज जोन्स की व्यवस्था के तहत ऐसे क्षेत्र को हेरिटेज जोन के रूप में चिन्हित किया जाएगा, जहां विरासत भवनों की बहुतायत हो।
- प्रदेश में स्थित पर्यटन की दृष्टि से महत्वपूर्ण हेरिटेज स्मारकों, अविकसित पर्यटन स्थलों के रख–रखाव व उनके विकास के लिए विरासत विकास कोष की स्थापना की जाएगी।
- पर्यटन विकास से सम्बन्धित अन्तर्विभागीय समस्याओं के निराकरण तथा

पर्यटन से सम्बन्धित विभागों से परामर्श तथा उनसे आने वाली समस्याओं के निवारण हेतु अन्तर्विभागीय मंत्री समूह की स्थापना की जाएगी।

- पर्यटन को उद्योग का दर्जा दिया जाएगा एवं उद्योगों को अनुमन्य समस्त सुविधाएं उपलब्ध कराई जाएंगी।
- पर्यटन पुलिस की संख्या बढ़ाकर सभी महत्वपूर्ण पर्यटन स्थलों पर इनकी तैनाती की जाएगी।
- अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर होने वाले पर्यटन आयोजनों में विभाग की उपस्थिति सुनिश्चित की जाएगी, साथ ही प्रदेश की छवि निखारने हेतु व्यापक प्रचार प्रसार किया जाएगा।
- प्रदेश के पर्यटन विकास को गति देने हेतु मौजूदा पर्यटन संगठन के ढाँचे को सु–ढ़ किया जाएगा।
- पर्यटन निगम की अलाभकारी व बन्द पड़ी इकाइयों को निजी क्षेत्र को लीज पर दिया जाएगा।
- निगम की लाभप्रद एवं महत्वपूर्ण इकाइयों का उच्चीकरण किया जाएगा।
- टूर पैकेजिंग को पर्यटन निगम की मुख्य गतिविधि बनाया जाएगा।
- पर्यटन निगम के कार्मिकों के लिए विशेष प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाएगी।

उत्तर प्रदेश देश के राज्यों में सबसे अधिक पर्यटन आगमन प्राप्त करने वाला राज्य बन चुका है। 1998 में प्रदेश में आने वाले विदेशी पर्यटकों की संख्या 7.27 लाख थी, जो 2014 तक बढ़कर लगभग 29.09 लाख हो चुकी है। इंटरनेट तथा डिजिटल मीडिया इंटरनेट तकनीकी के विकास के फलस्वरूप पर्यटन जगत में एक बड़ा परिवर्तन आया है। पर्यटन विभाग की भूमिका एक सेवा प्रदाता की भूमिका में बदल गई है। इन तमाम बदलावों को देखते हुए गतिशील, व्यवहारिक और परिणामपरक पर्यटन नीति की आवश्यकता के मद्देनजर इस नीति को लागू करने का फैसला लिया गया है।

9.4- भारत पर्यटन विकास निगम (आईटीडीसी)- भारत पर्यटन विकास निगम अक्टूबर, 1966 में अस्तित्व में आया और इसने देश में पर्यटन के उत्तरोत्तर विकास, संवर्धन और विस्तार में प्रमुख भूमिका निभाई है । व्यापक रूप से निगम के मुख्य उद्देश्य निम्न प्रकार हैं।

- होटलों का निर्माण, वर्तमान होटलों का अधिग्रहण और प्रबंध तथा होटलों, तट विहारों, ट्रैवल्स लॉज/रेस्टोरेंटों का विपणन।
- परिवहन, मनोरंजन, खरीददारी और सम्मेलन सेवाएं प्रदान करना।
- पर्यटक प्रचार सामग्री की प्रस्तुति एवं वितरण।
- भारत व विदेश में परामर्शी व प्रबंध सेवाएं प्रदान करना।
- संपूर्ण मनी चेंजर्स (एफएफएमसी) प्रतिबंधित मनी चेंजर्स आदि के रूप में व्यवसाय करना।

पर्यटन विकास और इंजीनियरिंग उद्योग, जिसमें परादर्शी सेवाएं देना व परियोजना कार्यान्वयन शामिल हैं, की आवश्यकताओं के लिए नवीन, विश्वसनीय

सेवाएं देना तथा पैसे का पूरा मूल्य प्रदान करना निगम की प्राधिकृत पूंजी 75 करोड़ रूपए है और दिनांक 31.03.2015 की स्थिति के अनुसार प्रदत्त पूंजी 67.52 करोड थी। निगम की प्रदत्त साम्य पूंजी का 89.9748 प्रतिशत भारत के राष्ट्रपति के नाम से रखा गया है। निगम पर्यटकों के लिए विभिन्न स्थानों पर होटल, रेस्टोरेंट चला रहा है और साथ ही परिवहन सेवाएं प्रदान कर रहा है। इसके अतिरिक्त निगम पर्यटक प्रचार साहित्य की प्रस्तुति, वितरण एवं बिक्री में कार्यरत है और पर्यटकों को मनोरंजन व शुल्क मुक्त खरीददारी सुविधाएं प्रदान कर रहा है। निगम ने संपूर्ण मनी चेंजर्स (एफएफएमसी) सेवाओं, इंजीनियरिंग संबंधित परामर्शी सेवाओं आदि नए क्षेत्रों/नवीन सेवाओं में पदार्पण किया है। निगम का अशोक आतिथ्य व पर्यटन प्रबंध संस्थान पर्यटन व आतिथ्य क्षेत्र में प्रशिक्षण एवं शिक्षा प्रदान करता है। इस समय भारत पर्यटन विकास निगम के नेटवर्क में अशोक होटल समूह के 8 होटल, 6 संयुक्त उद्यम होटल, 2 रेस्टोरेंट, (एक एयरपोर्ट रेस्टोरेंट सहित) 12 परिवहन एकक,एक पर्यटक सेवा केन्द्र, अंतर्राष्ट्रीय एवं घरेलू कस्टम एयरपोर्टों पर स्थित 37 शुल्क मुक्त दुकानें, एक कर-मुक्त आउटलेट एवं 2 ध्वनि व प्रकाश शो शामिल हैं। इसके अतिरिक्त भारत पर्यटन विकास निगम भरतपुर स्थित एक होटल और कोसी स्थित एक रेस्टोरेंट का प्रबंधन पर्यटन विभाग की ओर से भी कर रहा है। इसके अलावा निगम वैस्टर्न कोर्ट, विज्ञान भवन, हैदराबाद हाउस और शास्त्री भवन, नई दिल्ली में नेशनल मीडिया प्रेस सेंटर में खानपान सेवाओं का प्रबंध भी कर रहा है।

10.परिकल्पना का सत्यापन-

1. वर्ष 2002 में शुरू किया गया 'अतुल्य भारत' अभियान, देश को एक पर्यटन स्थल बनाने में मददगार साबित हुआ। इसके बाद बड़ी संख्या में पर्यटक भारत की तरफ रुख कर रहे हैं। लेकिन एक क्षेत्र ऐसा भी है, जो महसूस करता है कि वो इस सुअवसर से वंचित रह गया है। "उत्तरपूर्व 'अतुल्य भारत' अभियान का हिस्सा नहीं बन पाया। "विचार ये है कि अगर आपने उत्तरपूर्व नहीं देखा, तो स्वर्ग नहीं देखा," टाटा कंसल्टेंसी सर्विसेज की प्रिया एम.वर्गीस ने कहा, जो इस परियोजना पर काम कर रही हैं। वो दावा करती हैं कि ये क्षेत्र ठीक वैसा है, जिसकी चाह पर्यटकों को रहती है। उत्तरपूर्व भारत में, पर्यटन उद्योग निम्न आधार से शुरुआत कर रहा है। सरकारी आंकड़े दिखाते हैं कि भारत में 2002 में आए विदेशी पर्यटकों की संख्या 2.38 मिलियन थी, लेकिन जब 'अतुल्य भारत' अभियान शुरू किया गया, पिछले वर्ष ये आंकड़ा बढ़कर रिकार्ड 6.29 मिलियन हो गया, इसके बावजूद उत्तरपूर्व में पर्यटकों की संख्या अब भी नगण्य है। उदाहरण के लिए, महज 389 विदेशी पर्यटकों ने ही 2010 में उत्तरपूर्वी राज्य मणिपुर का दौरा किया, ताजातरीन वर्ष जिसके लिए राज्यों के आंकड़े उपलब्ध हैं- ये आंकड़े देश के बाकी राज्यों के मुकाबले सबसे कम हैं। कुल मिलाकर, इस क्षेत्र ने 0.3 फीसदी अंतर्राष्ट्रीय और 0.9 फीसदी घरेलू पर्यटकों को आकर्षित किया। मशहूर ट्रेकिंग स्थल और रहस्यमय ढंग से आकर्षित करने वाले सिक्किम में 2010 में करीब 90,000 पर्यटक आए, जिसमें 20,000 से ज्यादा विदेशी थे। लेकिन बाकी बचे सात राज्य, जो सिक्किम से ज्यादा दूरस्थ हैं, उनके लिए मार्केटिंग संबंधी चुनौती ज्यादा बड़ी हैं। केरल में एक तुलनीय ब्रांडिग पहल (गाड्स ओन

कंट्री, भगवान का अपना देश) ने दक्षिण भारतीय इस राज्य को अंतर्राष्ट्रीय पर्यटन मानचित्र पर पहुंचाने में मदद की, उत्तरपूर्व भारत के लिए इसे दोहराना एक कठिन पहेली साबित हो सकता है। जबकि, इस क्षेत्र में काफी–कुछ चल रहा है– अनछुई प्रकृति और विविधतापूर्ण देशज संस्कृति प्रचार हेतु इसके मजबूत मार्केटिंग बिंदु हैं– इसके कुछ नकारात्मक पहलू भी हैं। यो लोनली प्लानेट गाइड पुस्तक में संक्षेप में कहा गया है "गुस्सा दिलाने वाले (पर्यटन) परमिट .और 'जरूर देखने ' वाले स्थलों की कमी के अलावा, यहां जरूरत से ज्यादा सुरक्षा संबंधी चिंताएं हैं, जो ज्यादातर पर्यटकों को उत्तरपूर्व से दूर रखती हैं।"

2. भारत में प्रदूषण ने भारतीय पर्यटन को बड़े स्तर पर प्रभावित किया है, उदाहरण के लिए, हम आगरा के ताजमहल की वर्तमान स्थिति को देख सकते हैं, सिर्फ संबंधित अधिकारियों की लापरवाही की वजह से मथुरा रिफाइनरी के अपशिष्ट आगरा में ताजमहल के पत्थरों को प्रभावित कर रहे हैं। दूसरा उदाहरण, भारत में सुन्दर समुद्रीय तट है जो अब पर्यटकों द्वारा छोड़े गए बोतलों के कचरें और अपशिष्टों से धीरे–धीरे कचरें के मैदानों में बदल रहे हैं।

3. मध्यप्रदेश में पर्यटकों के लिए अदभुत आकर्षण है। यहां देश के कुछ अति सुंदर और आकर्षक अभयारण्य हैं, जहां विविध प्रकार के जीव रहते हैं। जिनमें बाघ से लेकर पक्षियों तक सभी हैं। यह भूमि रंग–बिरंगे मेलों और त्यौहारों के लिए भी जग प्रसिद्ध है। खजुराहो और उज्जैन की शिवरात्रि, चित्रकूट की रामनवमी और दीपमालिका का त्यौहार भी अति लुभावन है।

म.प्र. सरकार ने राज्य की पर्यटन क्षमताओं के विकास हेतु तीन मुख्य बिन्दुओं का चुनाव किया है।

1. पर्यटन रूचि वाले क्षेत्रों में रहने की उत्तम व्यवस्था, 2. यातायात की सुगम व्यवस्था और 3. टूर पैकेज की घोषणा आज के परिप्रेक्ष्य में राज्य सरकार ने अपनी नीतियों में आमूलचूल परिवर्तन किया है। सुविधा प्रदायक की भूमिका से सरकार सुविधा नियोक्ता की ओर बढ़ रही है। इस कदम से पर्यटन क्षेत्र में निजी हिस्सेदारी भी उत्तरोत्तर बढ़ रही है। राज्य ने पर्यटन को उद्योग का दर्जा दिया है। इससे यह बात जाहिर होती है कि उद्योगों को मिलने वाली सुविधाएं, पर्यटन को भी मिलेगी।

1. पर्यटन परिक्षेत्र में यातायात हेतु 100 प्रतिशत कर छूट।
2. तीन सितारा और उससे ऊपर के होटलों को न्यूनतम गारंटी राशि में 20 प्रतिशत तक छूट।
3. रीवा के पास गोविंदगढ़ का किला, रेजीडेंसी कोठी, इंदौर मे हेरिटेज होटलों की श्रृंखला विकसित की जा रही है।
4. मध्य प्रदेश पयर्टन विकास निगम निजी क्षेत्र के साथ 228 एकड़ भूमि पर संयुक्त उद्यम स्थापित करेगा।

निष्कर्ष एवं सुझाव- हमारे पास पर्यटकों को आकर्षित करने की तकनीक जरूर है किन्तु इससे भविष्य में उपजने वाली अनेकानेक समस्याओं का सामना करने और उनसे निपटने की तकनीक उपलब्ध नही है। सवाल यह है कि इस समस्या से उबरने के क्या

उपाय हैं? यह स्पष्ट हो चुका है कि इस समस्या के घनीभूत होने के कारण क्या हैं? वहाँ आवश्यकता इस बात की है कि पर्यटन के क्षेत्र में विद्यमान समस्याओं को दूर करने हेतु ठोस कदम उठाये जायँ ताकि पर्यटन के विकास के साथ-साथ मानव जीवन एवं पर्यावरण के सत्य खिलवाड़ न हो सके।

पर्यटन के विकास हेतु सुझाव- सड़कें, पुल और रोप-वे सबसे पहला कदम सड़कों और पुलों की हालत को सुधारना है, जिससे यातायात में आने वाली कठिनाइयों और दुर्घटनाओं को कम किया जा सकता है। अति दर्शनीय स्थलों के लिए रोप-वे का निर्माण भी महत्त्वपूर्ण है। इनकी दशा में सुधार और निर्माण सबसे पहला सार्थक काम है।

यातयात के साधन- राज्य पर्यटकों को उचित किराए के साथ यातायात के अच्छे साधन उपलब्ध करवा सकता है। अगर ऐसे वाहन पर्यटन विभाग के पास पंजीकृत हों तो पर्यटक बिना किसी डर से अपनी यात्रा का पूरा लुत्फ उठा सकेंगे, क्योंकि उन्हें पता होगा कि सब कुछ नियमों के तहत होगा।

ठहराव के स्थान- विभाग को चाहिए कि पर्यटकों के ठहरने के लिए उचित स्थान उपलब्ध करवाए, जिससे पर्यटकों को बढिया रिहायश के साथ अच्छा खाना और बढिया माहौल पर्यटकों को मिले। निजी होटल, रेस्टोरेंट, गेस्टहाउस आदि पर विभाग की नजर होनी चाहिए ताकि ये पर्यटकों से मनमानी न कर सकें।

गाइड और चेतावनी बोर्ड- अगर पर्यटक ऐसी जगह देखना चाहते हों, जो दुर्गम हो अथवा जहां खतरा हो, विभाग को उनके लिए गाइड का प्रावधान करना चाहिए। कम खतरे वाले स्थानों पर भी चेतावनी बोर्ड लगाना आवश्यक है, ताकि पर्यटक समय रहते सावधान हो सके।

पंजीकरण और सलाह- विभाग को ऐसे दिशा निर्देश जारी करने चाहिए, जो पर्यटक पर्यटन विभाग के पास पंजीकरण करवाता है, उसे सभी स्थानों की उचित जानकारी, दुर्गम स्थानों के लिए गाइड, यातायात के लिए वाहन या अन्य जानकारी, होटल आदि की सभी प्रकार की जानकारी पर्यटन विभाग लिखित अथवा मौखिक रूप में उपलब्ध करवाए। साथ ही पर्यटन विभाग पर्यटकों को एक टोल फ्री सहायता नंबर भी प्रदान करे।

सन्दर्भ सूची-

पुस्तकें

- रावत ताज, पर्यावरण, पर्यटन, एवं लोक न्यू अकेडमिक पब्लिशर्स
- कोसंबी दामोदर धर्मानंद, प्राचीन भारत की संस्कृति और सभ्यता राजकमल प्रकाशन
- गुप्ता वेद प्रकाश, भारतीय उत्सव और पर्व जीवन ज्योति प्रकाशन, दिल्ली-6
- सिन्हा बी.जी., व्यवसायिक पर्यावरण
- ऋशीश्वर विनय, व्यापारिक पर्यावरण
- गांगुली विनय, जनसंख्या एवं विकास

पत्रिकाएँ-

1. कुरूक्षेत्र पत्रिका विशेषांक अप्रैल 2016
2. बुन्देलखण्ड पत्रिका विशेषांक प्रथम संस्करण
3. योजना पत्रिका विशेषांक मार्च

4. भारतीय जनसंख्या 2011 भारत सरकार द्वारा प्रकाशित
Website-

- Goa Trip Website
- Andhra Pradesh Official Tourism Website
- Assam Tourism Official Website
- Bihar Official Tourism Website
- Delhi Tourism Official Website
- Goa Tourism Official Website
- Himachal Pradesh Official Website
- Jammu & Kashmir Official Tourism Website
- Karnataka Official Tourism Website
- Kerala Tourism Official Website
- Madhya Pradesh Offical Tourism Website
- Maharashtra Tourism Official Website
- Orissa Official Tourism Website
- Puducherry Official Tourism Website
- Punjab Official Tourism Website
- Rajasthan Official Tourism Website
- Sikkim Official Tourism Website
- Tamil Nadu Tourism Official Website
- Uttarakhand Official Tourism Website
- West Bengal Official Tourism Website
- Uttar Pradesh Official Tourism Website

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 42, Hindi Edition, Year-21, Jan.- June 2025

विद्यार्थियों के मानसिक योग्यता पर अध्ययन

• आस्था सिजारिया

सारांश- प्रस्तुत शोध अध्ययन का मुख्य उद्देश्य दुर्ग जिले के शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों के माध्यमिक स्तर के विद्यालयों के कक्षा आठवीं के विद्यार्थियों की मानसिक योग्यता का अध्ययन करना है। प्रस्तुत अध्ययन हेतु दुर्ग जिले के शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों से माध्यमिक स्तर के विद्यालयों से कक्षा आठवीं के 140 विद्यार्थियों जिसमें शहरी क्षेत्र के विद्यालयों से 70 (35 छात्र एवं 35 छात्राएँ) तथा ग्रामीण क्षेत्र के विद्यालयों से 70 (35 छात्र एवं 35 छात्राएँ)को यादृच्छिक रूप से चयन किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में मानसिक योग्यता के मापन हेतु एस. जलोटा ग्रुप टेस्ट ऑफ जनरल मेन्टल एबिलटी स्केल उपकरण का प्रयोग किया गया है। चयनित विद्यार्थियों पर उपरोक्त उपकरण का प्रशासन करने हेतु उनके प्राप्तांक ज्ञात किये गये तथा परिकल्पनाओं के सत्यापन के लिए टी-परीक्षण ज्ञात किया गया। अध्ययन के निष्कर्ष दर्शाते है कि दुर्ग जिले के शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के कक्षा आठवीं के विद्यार्थियों में मानसिक योग्यता पर सार्थक अंतर पाया गया।

मुख्य शब्द- माध्यमिक स्तर, विद्यार्थी, ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों के विद्यालय, मानसिक योग्यता

प्रस्तावना- शिक्षा क्या है शिक्षा के संदर्भ में अनेक प्रकार के विचार उत्पन्न होते हैं जिसकी उत्पत्ति एवं व्याख्या की दृष्टि से देखा जाए तो संस्कृत भाषा में "शिक्षयते इति शिक्षा" कहा गया है। शिक्षा उसके लिए एक विशेष प्रकार से अपनी संपत्ति और मानव विकास को पूर्ण कर पाना आवश्यक हो जाता है। जिससे शिक्षा को एक ऐसा साधन माना गया है कि जिसमें अंतर्निहित भावनाओं को प्रकट कर उसके स्वरूप के स्तर को प्रकाशित करने के लिए छुपे हुए ज्ञान को शिक्षा की सहयोग से प्रस्फुटित होकर व्यक्ति एवं समाज को लाभान्वित किया जाता है जिससे शिक्षा का माध्यम से ही मानव का संपूर्ण विकास संभव हो जाता है। शिक्षा के माध्यम से व्यक्ति का ज्ञान एवं उसका उचित आचरण और तकनीकी दक्षता में शिक्षण और विद्या की प्राप्ति का समावेश पाया जाता है जिसमें विभिन्न कौशलों को व्यापारियों, व्यवसाय एवं मानसिक स्तर, नैतिक कार्य को शिक्षा एवं समाज से जोड़ते हुए उसको आगे पीढ़ी की ओर आगे बढ़ाते हुए अपने ज्ञान को हस्तांतरण करने का कार्य किया जाता है। किसी व्यक्ति की मानसिक योग्यता उसके बुद्धिमान

• एम.एस.सी (गणित), एम.ए.(मनोविज्ञान), एम.ए. क्लिनिकल, एम.ए, पी.जी.डी.सी.ए. पी.एच.डी. (शिक्षा)सहायक प्राध्यापक (शिक्षा संकाय), घनश्याम सिंह आर्य कन्या महाविद्यालय दुर्ग (छ.ग.)

व्यवहार से प्रदर्शित होती है। विशिष्ट बौद्धिक क्षमता वाले व्यक्ति देखने, समझने, सीखने, तर्क करने, याद रखने और घटनाओं से कुशलतापूर्वक निपटने में सक्षम होंगे। मानसिक क्षमता जानकारी सीखने और याद रखने की योग्यता है। कानून में, यह तथ्यों और आपके कार्यों के निहितार्थों को समझने की क्षमता है। शैक्षणिक उपलब्धि से तात्पर्य उस मात्रा से है, जिस तक किसी व्यक्ति ने कुछ ऐसे उद्देश्यों को पूरा किया है, जो शैक्षणिक सेटिंग्स, जैसे स्कूल, कॉलेज और संस्थान में गतिविधियों का जोर थे। मानसिक योग्यता को मानवीय बुद्धिमत्ता या किसी अन्य व्यक्ति से बहुत अधिक निर्देश या सहायता के बिना पर्यावरण में समस्याओं को रचनात्मक रूप से हल करने की व्यक्तिगत क्षमता के रूप में संदर्भित किया जा सकता है। छात्रों की मानसिक क्षमता का मापन किसी व्यक्ति की बुद्धिमत्ता या संज्ञानात्मक क्षमता को मापने की एक प्रक्रिया है क्योंकि मस्तिष्क में अलग-अलग डिब्बें होते हैं, जिनमें से प्रत्येक एक विशिष्ट क्षमता से जुड़ा होता है जिस पर एक परीक्षण मापा जा सकता है। किसी भी छात्र की मानसिक क्षमता को संज्ञानात्मक क्षमता परीक्षण आयोजित करके मापा जा सकता है। संज्ञानात्मक क्षमता परीक्षण उन क्षमताओं का आकलन करते हैं जिनमें सोच शामिल होती है (जैसे तर्क, धारणा, स्मृति, मौखिक और गणितीय क्षमता, और समस्या समाधान)। ऐसे परीक्षण ऐसे प्रश्न पूछते हैं जो आवेदकों की मानसिक प्रक्रियाओं का उपयोग करके कार्य संबंधी समस्याओं को हल करने या नई नौकरी का ज्ञान प्राप्त करने की क्षमता का अनुमान लगाने के लिए डिजाइन किए गए हैं (यू.एस. ऑफिस आफ पर्सनेल मैनेजमेंट, 2016) परंपरागत रूप से, संज्ञानात्मक क्षमता परीक्षणों द्वारा मापी जाने वाली सामान्य विशेषता को "बुद्धिमत्त" या "सामान्य मानसिक क्षमता" कहा जाता है। हालाँकि, एक बुद्धि परीक्षण में अक्सर विभिन्न आइटम प्रकार शामिल होते हैं जो अलग-अलग और अधिक विशिष्ट मानसिक कारकों को मापते हैं जिन्हें अक्सर 'विशिष्ट मानसिक योग्यता कहा जाता है।

मानसिक योग्यता- मानसिक योग्यता से तात्पर्य किसी व्यक्ति की तर्कसंगत निर्णय लेने और खुद को अभिव्यक्त करने की क्षमता से है। योग्यता को जानकारी से अर्थ और बुद्धिमत्ता प्राप्त करने की प्राकृतिक मानसिक क्षमता के रूप में जाना जाता है। यह किसी गतिविधि या क्षेत्र में व्यक्ति का कौशल या जन्मजात प्रतिभा है। इसमें तरल तर्क, नई स्थितियों में समस्याओं को हल करने के लिए नई जानकारी को अवशोषित करने की क्षमता शामिल है। अच्छी बुरी सभी परिस्थितियों में मानसिक रूप से मजबूत बने रहना, मानसिक योग्यता होती है।

संबंधित शोध अध्ययन-

ए.सी.लालकुमार (2016)- ने उच्चतर माध्यमिक छात्रों की मानसिक क्षमता का अध्ययन किया। इस शोधपत्र का उद्देश्य तमिलनाडु के वेल्लोर जिले में उच्चतर माध्यमिक छात्रों की मानसिक क्षमता का निर्धारण करना है। परिणामों से पता चलता है कि मानसिक क्षमता के प्रति लिंग, स्कूल के प्रकार, स्कूल के इलाके, स्कूल के माध्यम, स्कूल की प्रकृति, माता-पिता की शिक्षा, माता-पिता के व्यवसाय, जन्म क्रम और परिवार के प्रकार के बीच कोई सार्थक अंतर नहीं है।

देवेन्द्र सिंह एवं मुरारी सिंह (2016)-ने किशोरों की सामान्य मानसिक योग्यता का अध्ययन लिंग एवं अध्ययन के विषय के आधार पर किया गया है। अध्ययन के आधार पर यह निष्कर्ष प्राप्त हुये कि:-छात्र-छात्राओं की सामान्य मानसिक योग्यता में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है। विज्ञान तथा कला वर्ग के विद्यार्थियों की सामान्य मानसिक योग्यता में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।

प्रमिला सिंह (2017)- ने उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत् विद्यार्थियों की बुद्धि एवं शैक्षिक उपलब्धि में सहसंबंध का अध्ययन विशेष पर शोध किया। परिणाम में पाया गया कि छात्र एवं छात्राओं की बुद्धि एवं शैक्षिक उपलब्धि में कोई विशेष अन्तर नही है और जो कुछ भी अन्तर देखने में आया है उसके बारे में कहा जा सकता है कि वह अन्तर भाषा के माध्यम के कारण नहीं बल्कि रीवा जनपद की सांस्कृतिक, सामाजिक, परिवारिक पृष्ठभूमि एवं आदिवासी बहुल क्षेत्र व शहरीकरण के बीच रहन-सहन शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति व जागरूकता में अन्तर का परिणाम है।

सुरेश (2018)- ने माध्यमिक विद्यालय के छात्रों की मानसिक योग्यता और सामाजिक-आर्थिक स्थिति के संबंध में शैक्षणिक उपलब्धि का अध्ययन किया। इस अध्ययन के निष्कर्षों से पता चलता है कि मानसिक योग्यता और शैक्षणिक उपलब्धि, तथा सामाजिक-आर्थिक स्थिति और शैक्षणिक उपलब्धि के बीच मध्यम सहसंबंध है, तथा मानसिक योग्यता और शैक्षणिक उपलब्धि के विभिन्न स्तरों और एसईएस और शैक्षणिक उपलब्धि के बीच महत्वपूर्ण अंतर है।

अपराजिता सिंह (2018)- ने छात्रों की मानसिक क्षमता और शैक्षणिक उपलब्धि के बीच संबंध पर एक अध्ययन विषय पर अध्ययन किया। उदयपुर जिले के विभिन्न उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के 150 विद्यार्थियों का न्यादर्ष के रूप में चुना गया। अध्ययन से अन्वेषक ने पाया कि उत्तरदाताओं के विभिन्न आयु समूहों के बीच संख्यात्मक क्षमता कारक, क्रमिक सीखने और समस्या-समाधान क्षमता कारक के लिए उनकी मानसिक योग्यता के प्रति सार्थक अंतर है।

लोरेन डी. लारेजो (2020)- के निष्कर्षों से पता चला कि छात्रों का शैक्षणिक प्रदर्शन उनके जीपीए और अंग्रेजी और गणित में उनके ग्रेड के आधार पर उच्च है। इसी तरह, उन्हें अपनी मानसिक क्षमता और आलंकारिक और मात्रात्मक तर्क के क्षेत्रों में औसत स्तर मिला। हालांकि, उन्हें अपनी मौखिक समझ और मौखिक तर्क में औसत से नीचे का स्तर मिला। इसके अलावा, अध्ययन के परिणाम से पता चला कि छात्रों की मानसिक क्षमता और अंग्रेजी में उनके शैक्षणिक प्रदर्शन के बीच एक महत्वपूर्ण संबंध मौजूद है। इसके अलावा, छात्रों की मानसिक क्षमता और गणित में उनके शैक्षणिक प्रदर्शन के बीच एक महत्वपूर्ण संबंध है।

लैंग, जोनास डब्ल्यू. बी एवं केल, हैरिसन जे. (2020)- कार्य-संबंधी परिणामों में सामान्य मानसिक योग्यता (General Mental Ability) और विशिष्ट योग्यताओं की भूमिका पर हाल ही में किए गए शोध से पता चला है कि शोधकर्ताओं द्वारा उपयोग किए जाने वाले सैद्धांतिक और वैचारिक दृष्टिकोण के आधार पर परिणाम भिन्न होते हैं। जबकि पहले के शोध में आमतौर पर यह माना जाता था कि विशिष्ट योग्यताओं का

कारण बनता है परिणामों से पता चला कि स्कूल में मापी गई है। और विशिष्ट योग्यताएँ 11 साल बाद मापी गई नौकरी की प्रतिष्ठा, 11 साल बाद मापी गई वेतन और प्रतिभागियों के कार्य जीवन के अंत में 51 साल बाद आय के अच्छे परिणाम होगें।

अभिषेक तिवारी (2021)- ने बी.एड. प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षण अभिवृत्ति पर उनकी मानसिक योग्यता के प्रभाव का अध्ययन विषय पर अध्ययन किया। अध्ययन में न्यादर्श के रूप में 50 छात्राध्यापकों का चयन यादृच्छिक प्रतिचयन विधि से किया। निष्कर्ष में पाया कि उच्च मानसिक योग्यता वाले बी.एड. प्रशिक्षणार्थियों के शिक्षण अभिवृत्ति संबंधी प्राप्तांको का माध्य निम्न यरोग्यता वाले बी.एड. प्रशिक्षणार्थियों के प्राप्तांकों के माध्य से उच्च प्राप्त हुआ। अत: उच्च मानसिक योग्यता वाले बी.एड. प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षण अभिवृत्ति निम्न मानसिक योग्यता वाले बी.एड. प्रशिक्षणार्थियों से ज्यादा है।

जुआनिटो टांडोक एवं अन्य (2022)- मानसिक योग्यता पर कई शोध अध्ययनों में पाया गया कि छात्रों ने भाषा सीखने और अपनी दक्षता में सुधार करने के लिए भाषा कौशल प्राप्त करने में बहु-बुद्धि का उपयोग किया। अध्ययन के परिणामों ने संकेत दिया कि प्रथम और द्वितीय वर्ष के सिविल इंजीनियरिंग के छात्रों में बहु-बुद्धि होती है। ये भाषाई बुद्धि, स्थानिक बुद्धि, तार्किक बुद्धि, शरीर की गतिज बुद्धि, संगीत बुद्धि, पारस्परिक बुद्धि और अंत:वैयक्तिक बुद्धि हैं। अध्ययन में यह भी पाया गया कि उत्तरदाता भाषा सीखने में बहुत अच्छे हैं।

पैट्रिक फ्राइडे ओबोट (2023)- इस शोधपत्र में छात्रों की गणित उपलब्धि के पूर्वानुमान के रूप में अध्ययन की आदत और मानसिक योग्यता की जांच की गई। परिणामों से पता चला कि अध्ययन की आदत और मानसिक क्षमता योग्यता का बीजगणित में छात्रों की उपलब्धि के साथ सकारात्मक संबंध है। प्रतिभागियों पर किए गए सर्वेक्षण के परिणामों के आधार पर बीजगणित सीखने की दिशा में प्रभावी रणनीतियों पर सिफारिशें और सुझाव दिए गए।

कैगलर सेटिन्काया (2023)- ने तुर्की के माध्यमिक स्तर के सीमित दायरे वाले एवं प्रतिभाशाली व मेधावी विद्यार्थियों के बुद्धि एवं सृजनात्मकता के मध्य संबंध का अध्ययन किया। अध्ययन हेतु तुर्की के माध्यमिक स्तर के 1155 विद्यार्थियों का चयन किया गया। शोध के निष्कर्ष में बुद्धि और सृजनात्मकता के मध्य सार्थक संबंध पाया गया। प्रतिभाशाली मेधावी विद्यार्थियों की सृजनात्मकता उच्च पाई गई।

जयप्रकाश एवं पूनम (2024)- ने माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन किया। शोध के निष्कर्ष में पाया कि माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर ऋणात्मक किन्तु नगण्य प्रभाव पाया गया। शहरी क्षेत्र के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर धनात्मक किन्तु नगण्य प्रभाव पाया गया। ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर ऋणात्मक किन्तु नगण्य प्रभाव पाया गया।

अध्ययन की आवश्यकता- जीवन के हर पहलू में मानसिक योग्यता जरूरी है। शिक्षा में, यह व्यक्तियों को ज्ञान को आत्मसात करने और बनाए रखने, समस्याओं को हल

करने और आलोचनात्मक रूप से सोचने में मदद करती है। मजबूत मानसिक क्षमता वाले छात्र अक्सर नई अवधारणाओं को समझने, विचारों के बीच संबंध बनाने और जो उन्होंने सीखा है उसे लागू करने में अधिक कुशल होते हैं। शोध यह बताता है कि शोध के निष्कर्षों से किसे और कैसे लाभ होगा। यह अध्ययन के संभावित प्रभाव को रेखांकित करता है और यह बताता है कि यह ज्ञान में कैसे योगदान करता है। मानसिक योग्यता समग्र कल्याण का एक महत्वपूर्ण घटक है और इसमें हमारे जीवन के भावनात्मक, मनोवैज्ञानिक और सामाजिक पहलू शामिल हैं। यह हमारे सोचने, महसूस करने और कार्य करने के तरीके को प्रभावित करता है, जिससे तनाव को संभालने, दूसरों से संबंध बनाने और निर्णय लेने की हमारी क्षमता प्रभावित होती है। प्रस्तुत अध्ययन में इन्ही विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए शोधकर्ता के द्वारा दुर्ग जिले के ग्रामीण एवं शहरी विद्यालयों में अध्ययनरत् कक्षा आठवीं के विद्यार्थियों की मानसिक योग्यता पर अध्ययन किया गया है।

अध्ययन का उद्देश्य- प्रस्तुत लघु शोध के निम्नलिखित उद्देश्य है–

- कक्षा आठवीं के विद्यार्थियों के मानसिक योग्यता का परीक्षण करना।
- कक्षा आठवीं के छात्राओं के मानसिक योग्यता का परीक्षण करना।
- कक्षा आठवीं के छात्रों के मानसिक योग्यता का परीक्षण करना।

अनुसंधान विधि- प्रस्तुत अध्ययन के उद्देश्य की प्राप्ति का परिकल्पना के परीक्षण हेतु आंकड़ें एकत्र करने के लिए सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

अध्ययन की परिसीमा- प्रस्तुत लघु शोध अध्ययन दुर्ग जिला तक परिसीमित किया गया है। इस अध्ययन में माध्यमिक स्तर के कक्षा आठवी के विद्यार्थियों तक परिसीमित किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन दुर्ग जिला के चयनित ग्रामीण एवं शहरी विद्यालयों के विद्यार्थियों की मानसिक योग्यता के अध्ययन तक परिसीमित किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन हेतु मानसिक योग्यता के मापन हेतु एस. जलोटा ग्रुप टेस्ट ऑफ जनरल मेन्टल एबिलटी स्केल उपकरण का उपयोग किया गया है।

न्यादर्श- अध्ययन में परिकल्पनाओं के विश्लेषण के लिए दुर्ग जिले के शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र से माध्यमिक स्तर के कक्षा आठवीं के विद्यालयों के 140 विद्यालयों जिसमें शहरी क्षेत्र के विद्यालयों के 70 (35 छात्र एवं 35 छात्राएँ) तथा ग्रामीण क्षेत्र के विद्यालयों के 70 (35 छात्र एवं 35 छात्राएँ) को यादृच्छिक रूप से न्यादर्श हेतु चयन किया गया है।

सांख्यिकीय विश्लेषण- शून्य परिकल्पना से प्राप्त प्रदत्तों को विश्लेषण मध्यमान एवं प्रमाणिक विचलन तथा सार्थकता ज्ञात करने हेतु टी–मूल्य का प्रयोग किया गया है।

परिकल्पना परिणाम व विश्लेषण- प्रस्तुत शोध की समस्या दुर्ग जिले के ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों से माध्यमिक स्तर के कक्षा आठवीं के विद्यालयों के छात्र एवं छात्राओं से प्राप्त आंकड़ों की व्याख्या विश्लेषण एवं निष्कर्ष हेतु परिकल्पना का सत्यापन किया गया।

परिकल्पना H_{01}- कक्षा आठवीं के विद्यार्थियों के मानसिक योग्यता में सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा। उपर्युक्त परिकल्पना की सत्यता की जाँच करने के लिए शोधकर्ता ने दुर्ग जिले के ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों से माध्यमिक स्तर के विद्यालयों के कक्षा आठवीं के विद्यार्थियों की मानसिक योग्यता का मध्यमान, प्रमाणिक विचलन ज्ञात कर टी–मूल्य

ज्ञात किया गया। प्राप्त मध्यमान, प्रमाणिक विचलन व टी–मूल्य को निम्न तालिका में दर्शाया गया है।

सारणी क्रमांक 1.1
ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों के कक्षा आठवीं के विद्यार्थियों से प्राप्त आँकड़ें

समूह	प्रदत्तो की संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	टी–मूल्य
ग्रामीण	70	65.6	8.3	3.8
शहरी	70	73.9	6.1	
df = N1+N2 -2 = 138 (1.96), P < t सार्थक अंतर पाया गया				

इससे यह स्पष्ट होता है कि दुर्ग जिले के ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के कक्षा आठवीं के विद्यार्थियों में मानसिक योग्यता पर सार्थक अंतर पाया गया। अत: यह परिकल्पना $\mathbf{H_{01}}$ अस्वीकृत होती है।

$\mathbf{H_{02}}$– कक्षा आठवीं के छात्राओं के मानसिक योग्यता में सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा। उपर्युक्त परिकल्पना की सत्यता की जाँच करने के लिए शोधकर्ता ने दुर्ग जिले के ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों से माध्यमिक स्तर के विद्यालयों के कक्षा आठवीं के छात्राओं की मानसिक योग्यता का मध्यमान, प्रमाणिक विचलन ज्ञात कर टी–मूल्य ज्ञात किया गया। प्राप्त मध्यमान, प्रमाणिक विचलन व टी–मूल्य को निम्न तालिका में दर्शाया गया है।

सारणी क्रमांक 1.2
ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों के कक्षा आठवीं के छात्राओं से प्राप्त आँकड़ें

समूह	प्रदत्तो की संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	टी–मूल्य
ग्रामीण	35	63.1	7.3	3.11
शहरी	35	68.3	6.7	
df = N1+N2 -2 = 68 (1.99), P < t सार्थक अंतर पाया गया				

इससे यह स्पष्ट होता है कि दुर्ग जिले के ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के कक्षा आठवीं के छात्राओं में मानसिक योग्यता पर सार्थक अंतर पाया गया। अत: यह परिकल्पना $\mathbf{H_{02}}$ अस्वीकृत होती है।

$\mathbf{H_{03}}$– कक्षा आठवीं के छात्रों के मानसिक योग्यता में सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा। उपर्युक्त परिकल्पना की सत्यता की जाँच करने के लिए शोधकर्ता ने दुर्ग जिले के ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों से माध्यमिक स्तर के विद्यालयों कक्षा आठवीं के छात्रों के मानसिक योग्यता का मध्यमान, प्रमाणिक विचलन ज्ञात कर टी–मूल्य ज्ञात किया गया। प्राप्त मध्यमान, प्रमाणिक विचलन व टी–मूल्य को निम्न तालिका में दर्शाया गया है।

सारणी क्रमांक 1.3
ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों के कक्षा आठवीं के छात्रों से प्राप्त आँकड़ें

समूह	प्रदत्तो की संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	टी–मूल्य
ग्रामीण	35	64.1	8.9	3.9
शहरी	35	70.2	6.8	
df = N1+N2 -2 = 68 (1.99), P < t सार्थक अंतर पाया गया				

इससे यह स्पष्ट होता है कि दुर्ग जिले के ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के कक्षा आठवीं के छात्रों में मानसिक योग्यता पर सार्थक अंतर पाया गया। अत: यह परिकल्पना $\mathbf{H_{03}}$ अस्वीकृत होती है।

निष्कर्ष- उपरोक्त परिणामों के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि परिकल्पना H_{01}– कक्षा आठवीं के विद्यार्थियों के मानसिक योग्यता में सार्थक अंतर पाया गया। H_{02}– कक्षा आठवीं के छात्राओं की मानसिक योग्यता में सार्थक अंतर पाया गया तथा H_{03}– कक्षा आठवीं के छात्रों के मानसिक योग्यता में सार्थक अंतर पाया गया। तीनों ही परिकल्पना अस्वीकृत होती है। विद्यार्थियों की मानसिक योग्यता में सार्थक अंतर पाए जाने के कारण हो सकता है कि ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों की पारिवारिक तथा शालेय वातावरण भिन्न होते है जिनका विद्यार्थियों की मानसिक योग्यता पर प्रभाव पड़ता है। विद्यार्थी अपने आसपास जिन चीजों से प्राय: रूबरू होते है वह उनसे प्रभावित होते है। शहरी क्षेत्रों के विद्यालयों में विभिन्न प्रकार गतिविधियों शहरी परिवेश के कारण उनकी मानसिक स्थिति ग्रामीण विद्यालयों के विद्यार्थियों से भिन्न पाई जाती है। इसी कारण उनके मानसिक योग्यता पर अंतर पाया गया है। वर्तमान समय में शहरी छात्र एवं छात्राओं के विचार, स्वास्थ्य, शिक्षा, गृह वातावरण के प्रति सार्थक जागरूकता पाई गई है जिससे वह अपनी अस्तित्व के प्रति सजग पाये गए है इस कारण ग्रामीण एवं शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों की मानिसक योग्यता में सार्थक अंतर पाया गया।

सुझाव- विद्यार्थी किसी न किसी समाज का सदस्य होता है तथा उनके मानसिक विकास को वह समाज काफी प्रभावित करता है। यदि समाज अपने भावी नागरिकों के लिए अच्छे विद्यालय, पुस्तकालय, वाचनालय तथा मनोरंजन के साधनों की व्यवस्था करता है तो बालकों का मानसिक विकास स्वाभाविक ढंग से निरन्तर होता रहेगा। इन सुविधाओं के अभाव में बालकों के मानसिक विकास की गति, दिशा तथा सीमा प्राय: समुचित हो जाता है। प्रस्तुत अध्ययन माध्यमिक स्ता के विद्यार्थियों से संबंधित होने के कारण अत्यंत महत्वपूर्ण है, चूँकि इस स्तर पर विद्याथी तरूण अवस्था में होता है। परिणामस्वरूप भविष्य को लेकर उसमें अनेकानेक चिन्ताएँ, संवेगात्मक अस्थिरताओं तथा कल्पना में बाहुल्य होता है। विद्यार्थियों को नई विचारधारा से जुड़ना आवश्यक होगा जिससे उनकी विचारधारा सुदृढ होगी अतएव मानसिक योग्यता का विकास होगा। चूंकि यह सीखने के लिए महत्वपूर्ण है इसलिए मानसिक स्वास्थ्य सबसे महत्वपूर्ण शैक्षिक लक्ष्यों में से एक है। इन्हें और बेहतर करने हेतु सुझाव निम्नलिखित है–

- शैक्षिक परिणामों को बेहतर बनाने के लिए, स्कूलों को विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य पर ध्यान देना चाहिए।
- कक्षा में शिक्षक को एक अच्छा शैक्षिक और स्वागत करने वाला वातावरण प्रदान करना चाहिए जिसमें छात्र बिना किसी डर के अपने प्रश्नों को खुलकर संबोधित कर सकें।
- बच्चे को मानसिक बीमारी या व्यवहार संबंधी कठिनाइयों से बचाने के लिए शिक्षक को उचित पर्यवेक्षण और परामर्श प्रदान करना चाहिए।
- बच्चों को आवश्यक सहायता प्रदान करने के लिए स्कूल में मानसिक स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध होनी चाहिए।
- बच्चों को अपनी दबी हुई भावनाओं को बाहर निकालने और अपनी हानिकारक ऊर्जा को सकारात्मक तरीके से प्रवाहित करने में मदद करने के लिए सह. पाठचचर्या गतिविधियाँ पाठचक्रम का हिस्सा होनी चाहिए।
- कक्षा में स्वतंत्र अनुशासन बनाए रखा जाना चाहिए। स्कूल में कोई अत्यधिक

प्रतिबंध नहीं होना चाहिए।

- बच्चों के उपलब्धि परीक्षण स्कोर को बढ़ाने के लिए एक स्कूल आधारित सामाजिक और भावनात्मक शिक्षा कार्यक्रम का प्रदर्शन किया गया है।

संदर्भ सूची-

- Aprajita Singh (2018), A Study On Relationship Between Mental Ability And Academic Achievement Of Students, Journal Of Emerging Technologies And Innovative Research (Jetir), 5(3), 817-817
- Laurezo, L. D., & Magallanes , C. I. (2020). Mental Ability Test as Predictor of Academic Performance of Senior High School Students of a Maritime School. Philippine Social Science Journal, 3(2), Pp 111-112. https://doi.org/10.52006/main.v3i2.209
- Lang, J. W. B., & Kell, H. J. (2020). General mental ability and specific abilities: Their relative importance for extrinsic career success. Journal of Applied Psychology, 105(9), 1047–1061. https://doi.org/10.1037/apl0000472
- Lal Kumar A.C. (2016), A Study Of Mental Ability Of Higher Secondary Students, International Journal Of Computational Research And Development (Ijcrd), I(I), Pp 36-39
- Patrick Friday Obot (2023), Study Habit And Mental Ability As Predictors Of Students' Academic Achievement In Algebra, Central Asian Journal Of Mathematical Theory And Computer Sciences, 4(12), Pp 37-45
- Suresh Ukkali (2018), A Study Of Academic Achievement In Relation To Mental Ability And Socio-Economic Status Of Secondary School Students, International Journal Of Creative Research Thoughts (Ijcrt), 6(2), 334-343
- Tandoc, J., & Garnadozo, J. M. (2022). Multiple Intelligences and Level of Mental Ability in Language Learning. International Journal of Linguistics, Literature and Translation, 5(4), Pp 32-41. https://doi.org/10.32996/ijllt.2022. 5.4.5
- Cxaglar Cetinkaya (2023), The Relationship Between Intelligence and CreativityWithin the Threshold Theory Among Gifted and Bright Secondary School Students in Turkey, Sage Open, 13(4), Pp. 1-10
- अभिषेक तिवारी(2021), बी.एड. प्रशिक्षार्थियों की शिक्षण अभिवृत्ति पर उनकी मानसिक योग्यता के प्रभाव का अध्ययन, Research Gate, 14, 2021
- देवेन्द्र सिंह एवं मुरारी सिंह यादव (2016), किशोरों की सामान्य मानसिंह योग्यता का अध्ययन, Asian Journal Of Educational Research & Technology, 6 (3), 85-89
- प्रमिला सिंह (2017), रीवा जिले के उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत् विद्यार्थियों की बुद्धि एवं शैक्षिक उपलब्धि में सहसंबंध का अध्ययन, International Journal of Applied Research, 3(9), Pp :183-186.
- भार्गव, एम. मनोविज्ञान परीक्षण एवं मापन, हर प्रसाद भार्गव, 14/230 कचहरी घाट, आगरा, दसवाँ संस्करण 1995–1996.

- माथुर, एस.एस शिक्षा मनोविज्ञान, आर. ई. आई. ट्रेनिंग कॉलेज, दयालबाग, आगरा, इक्कीसवाँ संस्करण 1991.
- शर्मा, आर.ए. शिक्षा अनुसंधान, आर.लाल. बुक डिपो, निकट गवर्नमेंट कॉलेज, मेरठ संस्करण 2005.
- राय, पारसनाथ, अनुसंधान परिचय, प्रकाशक- लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, हॉस्पीटल रोड, आगरा, अष्टम् संस्करण 1999.

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 42, Hindi Edition, Year-21, Jan.- June 2025

कौटिल्य के अर्थशास्त्र में निहित राजनीतिक दर्शन की प्रासंगिकता: एक अध्ययन

• राजकुमार प्रसाद

•• राहुल कुमार

सारांश- -यह शोधपत्र कौटिल्य के प्रसिद्ध ग्रंथ 'अर्थशास्त्र' में वर्णित राजनीतिक दर्शन का विश्लेषण करता है और उसकी आधुनिक संदर्भ में प्रासंगिकता को स्पष्ट करता है। कौटिल्य द्वारा प्रतिपादित राज्य की अवधारणा, राजधर्म, प्रशासनिक संरचना, गुप्तचर व्यवस्था, दंडनीति, और आर्थिक नियंत्रण जैसे सिद्धांत आज भी शासन और नीतिनिर्माण के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण मार्गदर्शन प्रदान करते हैं। यह अध्ययन यह दर्शाता है कि कैसे अर्थशास्त्र में वर्णित राजनीतिक विचारधारा समकालीन लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं, प्रशासनिक दक्षता और राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए उपयोगी हो सकती है। विशेष रूप से नीति-निर्माण, राजनीतिक स्थिरता, और सुशासन के संदर्भ में कौटिल्य के विचार अत्यंत प्रासंगिक सिद्ध होते हैं। इस शोध में प्राचीन भारतीय राजनीति के दार्शनिक आधार को समझने का प्रयास करते हुए उसे वर्तमान राजनीतिक ढांचे से जोड़ा गया है। इस शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य कौटिल्य के अर्थशास्त्र में निहित राजनीतिक सिद्धांतों का विश्लेषण करना तथा उनकी वर्तमान सामाजिक, राजनीतिक और वैश्विक परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिकता को उजागर करना है।

मुख्य शब्द- अर्थशास्त्र, राजनीतिक दर्शन, प्रशासन, दंडनीति, सुशासन, राजधर्म, आधुनिक प्रासंगिकता, भारतीय राजनीतिक चिंतन, नीतिशास्त्र

प्रस्तावना- भारतीय राजनीतिक चिंतन की परंपरा अत्यंत समृद्ध एवं व्यापक रही है, जिसमें कौटिल्य का अर्थशास्त्र एक ऐतिहासिक एवं बौद्धिक स्तंभ के रूप में स्थापित है। मौर्यकालीन भारत के महान अर्थशास्त्री, राजनीतिज्ञ और कूटनीतिज्ञ कौटिल्य (चाणक्य) द्वारा रचित अर्थशास्त्र न केवल तत्कालीन शासन और प्रशासन की गहराई से व्याख्या करता है, बल्कि उसमें निहित राजनीतिक सिद्धांत आज भी शासन,

• शोध-निर्देशक, एसोसियेट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, जी. बी. क,लेज, नौगछिया, भागलपुर-812007 (बिहार)

•• शोधार्थी, पी० एच०-डी० पंजीयन संख्या: 521/2022 स्नातकोत्तर राजनीति विज्ञान विभाग तिलकामाँझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर-812007 (बिहार)

कूटनीति और राज्य के लिए प्रेरणास्रोत हैं। कौटिल्य का राजनीतिक दर्शन यथार्थवादी दृष्टिकोण पर आधारित है, जिसमें सत्ता के व्यावहारिक प्रयोग, सुशासन, दंडनीति, आंतरिक और बाह्य सुरक्षा, कर व्यवस्था, न्याय प्रणाली तथा गुप्तचर व्यवस्था जैसे विषयों पर विशेष बल दिया गया है। उनका यह दृष्टिकोण यह दर्शाता है कि राजनीति केवल आदर्शों का विषय नहीं, बल्कि व्यावहारिकता, रणनीति और नीति-कुशलता का क्षेत्र है।

आज के लोकतांत्रिक भारत और वैश्विक राजनीतिक परिदृश्य में जहाँ शासन की पारदर्शिता, जवाबदेही, भ्रष्टाचार उन्मूलन, और आंतरिक सुरक्षा जैसे विषय प्रमुख हो गए हैं, वहीं कौटिल्य के विचार अत्यंत प्रासंगिक प्रतीत होते हैं। चाहे वह लोककल्याणकारी राज्य की अवधारणा हो या प्रशासनिक दक्षता का प्रश्न, कौटिल्य के सिद्धांत वर्तमान प्रशासनिक संरचना को एक मजबूत बौद्धिक आधार प्रदान करते हैं। राजनीतिक दर्शन का गहराई से अध्ययन कर यह स्पष्ट करने का प्रयास है कि किस प्रकार कौटिल्य के विचार आधुनिक शासन प्रणाली, नीतिनिर्माण एवं राजनीतिक नैतिकता के संदर्भ में आज भी सार्थक और आवश्यक हैं। साथ ही यह भी विश्लेषण किया गया है कि कैसे प्राचीन भारतीय राजनीति की यह महान परंपरा आज के राष्ट्र-निर्माण में योगदान दे सकती है।

कौटिल्य का परिचय- कौटिल्य, जिन्हें चाणक्य, विष्णुगुप्त और चंद्रगुप्त मौर्य के महामंत्री के रूप में भी जाना जाता है, प्राचीन भारत के एक महान राजनीतिज्ञ, अर्थशास्त्री, कूटनीतिज्ञ, शिक्षाविद और रणनीतिकार थे। वे तक्षशिला विश्वविद्यालय के प्रकांड विद्वान थे और भारतीय राजनीति एवं शासन व्यवस्था के विकास में उनका योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता है। कौटिल्य का जन्म लगभग चौथी शताब्दी ईसा पूर्व में हुआ था। इतिहासकारों का मत है कि वे ब्राह्मण कुल में जन्मे थे और उन्होंने गहन अध्ययन तक्षशिला जैसे विश्वविद्यालयों से प्राप्त किया था। उनकी सबसे प्रसिद्ध कृति अर्थशास्त्र है, जो राज्य संचालन, अर्थव्यवस्था, कूटनीति, युद्धनीति, न्याय और प्रशासन का समग्र दार्शनिक एवं व्यावहारिक दस्तावेज है। कौटिल्य का सबसे बड़ा ऐतिहासिक योगदान मौर्य साम्राज्य की स्थापना में उनकी भूमिका है। उन्होंने नंद वंश के अत्याचार से जनता को मुक्त कराने के लिए चंद्रगुप्त मौर्य को प्रशिक्षित किया, उसका मार्गदर्शन किया और उसे सत्ता तक पहुँचाया। कौटिल्य ने मौर्य साम्राज्य की राजनीतिक नींव इतनी मज़बूती से रखी कि वह पूरे भारतीय उपमहाद्वीप में फैल सका। उनकी विचारधारा अत्यंत यथार्थवादी थी। वे मानते थे कि राज्य की सबसे पहली जिम्मेदारी है – प्रजा की सुरक्षा और समृद्धि सुनिश्चित करना। उन्होंने राजा को 'धर्मपरायण' और 'राजधर्म' का पालन करने वाला बताया, लेकिन साथ ही उसे शक्ति और दंड का प्रयोग करने के लिए भी सक्षम बनाया। उनका मानना था कि दंड और नीति से ही राज्य में शांति, कानून और व्यवस्था बनी रह सकती है।

कौटिल्य का अर्थशास्त्र आज भी राजनीति, प्रशासन, विदेश नीति और आंतरिक सुरक्षा जैसे विषयों पर अध्ययन करने वालों के लिए मार्गदर्शक ग्रंथ के रूप में मान्य है। उनकी विचारधारा में नैतिकता और यथार्थ का अद्भुत समन्वय है।

अर्थशास्त्र का राजनीतिक पक्ष- कौटिल्य द्वारा रचित अर्थशास्त्र केवल एक आर्थिक ग्रंथ नहीं है, बल्कि यह एक बहुआयामी ग्रंथ है जो राजनीति, शासन, कूटनीति, युद्धनीति, न्याय और प्रशासन की संपूर्ण रूपरेखा प्रस्तुत करता है। इसका राजनीतिक पक्ष विशेष रूप से उल्लेखनीय है, क्योंकि यह राज्य की संरचना, कार्यप्रणाली और लक्ष्य को स्पष्ट रूप से परिभाषित करता है। कौटिल्य का राजनीतिक दृष्टिकोण पूर्णत: यथार्थवादी है, जिसमें शक्ति, कूटनीति और राज्य की सुरक्षा को सर्वोपरि माना गया है।

1.राज्य की अवधारणा (Theory of State)- कौटिल्य के अनुसार राज्य पाँच मूल तत्वों से मिलकर बना होता है– स्वामी (राजा), अमात्य (मंत्री), जनपद (प्रजा व क्षेत्र), दुर्ग (सुरक्षा), कोष (धन), सेना और मित्र। राज्य का उद्देश्य है – प्रजा की रक्षा, शांति और समृद्धि।

2. राजा की भूमिका और राजधर्म- कौटिल्य के अर्थशास्त्र में राजा को एक शक्तिशाली, विवेकशील और कर्तव्यपरायण शासक के रूप में चित्रित किया गया है।

- राजा का पहला कर्तव्य है – 'प्रजा को सुखी रखना।'
- राजा को न्यायप्रिय, नीतिकुशल, और दंडप्रयोग में संतुलित होना चाहिए।
- 'राजा को रात-दिन प्रजा की भलाई के विषय में चिंतन करना चाहिए।' (अर्थशास्त्र)

3. दंडनीति (Law and Order)- राज्य व्यवस्था के संचालन हेतु दंडनीति को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है।

- अनुशासन और न्याय सुनिश्चित करने के लिए कठोर दंड आवश्यक है।
- दंड का उद्देश्य केवल सज़ा देना नहीं, बल्कि समाज में व्यवस्था बनाए रखना है।

4. कूटनीति और विदेश नीति (Diplomacy)- कौटिल्य ने मंडल सिद्धांत के माध्यम से राज्य के आस-पास के राज्यों के साथ संबंधों की यथार्थवादी नीति प्रस्तुत की।

- मित्र, शत्रु, उदासीन, मध्यस्थ, विग्रही आदि राज्यों की भूमिका को परिभाषित किया गया।
- 'संधि', 'विग्रह', 'आसन', 'यात्रा', 'द्वैधभव', आदि छह नीतियाँ राजनीतिक कूटनीति के साधन हैं।

5. आंतरिक सुरक्षा और गुप्तचर व्यवस्था- राज्य की स्थिरता हेतु गुप्तचर प्रणाली को अत्यंत महत्वपूर्ण बताया गया है।

- शत्रु की गतिविधियों पर नजर, प्रजा की भावनाओं का आंकलन, और मंत्रियों की निष्ठा की जाँच – ये सब गुप्तचरों के माध्यम से संभव है।

6. मंत्री और प्रशासनिक तंत्र- कौटिल्य ने मंत्रिपरिषद, न्यायालय, कराधान विभाग, सेना आदि के कार्यों और दायित्वों को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया।

- राजा को योग्य, निष्ठावान और परिश्रमी मंत्रियों का चयन करना चाहिए।
- प्रशासनिक नियंत्रण के लिए जासूसों, लेखाकारों, निरीक्षकों आदि की नियुक्ति की जाती है।

राजा की भूमिका और नेतृत्व सिद्धांत- कौटिल्य के अर्थशास्त्र में राजा की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण और केन्द्रीय है। उनके अनुसार, राज्य का संचालन, प्रशासन की दिशा

और प्रजा की स्थिति राजा के गुण, निर्णय क्षमता और नेतृत्व पर निर्भर करती है। कौटिल्य का नेतृत्व सिद्धांत पूरी तरह व्यावहारिक, नीति-कुशल और यथार्थवादी दृष्टिकोण पर आधारित है।

1. राजा की भूमिका- कौटिल्य ने कहा है, 'प्रजा सुखे सुखं राज्ञः, प्रजानां च हिते हितम', अर्थात प्रजा के सुख में ही राजा का सुख निहित है और प्रजा के हित में ही राजा का हित है। राजा को प्रजावत्सल, न्यायप्रिय, नीतिशास्त्र में पारंगत और आत्मसंयमी होना चाहिए।

मुख्य भूमिकाएँ-

- शासन संचालन – नीति निर्माण, कानून व्यवस्था एवं प्रशासनिक नियंत्रण।
- रक्षा एवं सुरक्षा – आंतरिक और बाह्य खतरों से राज्य की रक्षा।
- न्याय व्यवस्था – निष्पक्ष न्याय प्रदान करना, दंडनीति का संचालन।
- अर्थव्यवस्था का प्रबंधन – कर संग्रह, व्यय नियंत्रण, सार्वजनिक कार्य।
- धर्म और नीति का पालन – धर्मानुसार शासन, नैतिक नेतृत्व।

2. नेतृत्व सिद्धांत- कौटिल्य का नेतृत्व सिद्धांत राजा को एक व्यवस्थित, नियंत्रित और नीति-प्रेरित शासक के रूप में प्रस्तुत करता है।

मुख्य तत्व: व्यक्तिगत गुण-

- राजा को सत्यनिष्ठ, धर्मपरायण, साहसी, न्यायप्रिय, ज्ञानवान और विवेकी होना चाहिए।
- स्वभाव में संतुलन, क्रोध पर नियंत्रण और इंद्रिय-निग्रह अनिवार्य हैं।
- कौटिल्य ने कहारू ष्जो राजा इंद्रियों का दास है, वह स्वयं विनाश और राज्य का भी विनाश करता है।

परामर्श और मंत्रिपरिषद-

- अच्छा नेतृत्व वही है जो योग्य मंत्रियों की सलाह लेता है और निर्णय में पारदर्शिता रखता है।
- राजा को अपने मंत्रियों, अधिकारियों और गुप्तचरों से समय-समय पर सलाह लेनी चाहिए।

नेतृत्व में उत्तरदायित्व और अनुशासन-

- राजा को प्रजा के प्रति जवाबदेह माना गया है।
- यदि राजा अन्यायी हो, तो कौटिल्य के अनुसार, उसे गद्दी से हटाया भी जा सकता है।

लोककल्याण पर केंद्रित नेतृत्व-

- राजा का प्रमुख उद्देश्य प्रजाजन का कल्याण है, न कि निजी सुख।
- राजा का जीवन प्रजा की सेवा के लिए समर्पित होना चाहिए।

3. प्रशिक्षण और शिक्षा- राजा को दंडनीति, अर्थनीति, कूटनीति, युद्धकला, धर्म और व्यवहार शास्त्र में प्रशिक्षित किया जाना चाहिए। कौटिल्य ने स्पष्ट कहा है कि राजा बनने से पहले उसे तक्षशिला जैसे गुरुकुलों से कठोर शिक्षा लेनी चाहिए।

4. शासन में नैतिकता और यथार्थवाद का संतुलन- राजा को नैतिकता का पालन करना चाहिए, परन्तु यदि राज्य की सुरक्षा या स्थिरता के लिए कठोर उपाय आवश्यक हों,

तो वह यथार्थवादी नीतियों का भी प्रयोग कर सकता है। कौटिल्य के अनुसार, राजा राज्य का केंद्र होता है। वह नैतिक, विद्वान, धर्मनिष्ठ और प्रजाहितकारी होना चाहिए। उनका मानना था कि राजा को अपने व्यक्तिगत आचरण में भी उच्च आदर्शों का पालन करना चाहिए। यह विचार आज के लोकतांत्रिक नेतृत्व के लिए भी अत्यंत प्रासंगिक है।

राजनीति में नैतिकता और यथार्थवाद- राजनीति में नैतिकता और यथार्थवाद दो ऐसे सिद्धांत हैं जो अक्सर एक-दूसरे के विरोधी प्रतीत होते हैं, परंतु व्यवहारिक राजनीति में दोनों का संतुलन अत्यंत आवश्यक है।

1. राजनीति में नैतिकता (Ethics in Politics)- राजनीतिक नैतिकता का अर्थ है, सत्ता का प्रयोग लोककल्याण के लिए करना। इसमें सत्य, पारदर्शिता, ईमानदारी, उत्तरदायित्व, और न्याय जैसे मूल्यों का पालन शामिल होता है।

उदाहरण-

- गांधीजी की राजनीति पूर्णत: नैतिकता पर आधारित थी, उनका विश्वास था कि साध्य और साधन दोनों पवित्र होने चाहिए।
- आज लोकतांत्रिक व्यवस्था में सार्वजनिक जवाबदेही और भ्रष्टाचार मुक्त शासन भी नैतिकता के पहलू हैं।

महत्त्व-

- जनता का विश्वास बना रहता है।
- लोकतंत्र मजबूत होता है।
- सामाजिक समरसता और न्याय सुनिश्चित होता है।

2. राजनीति में यथार्थवाद- यथार्थवाद राजनीति की वह प्रवृत्ति है जिसमें सत्ता, शक्ति, रणनीति और व्यावहारिकता को प्रमुखता दी जाती है। इसमें नैतिक आदर्शों की तुलना में परिणाम और राष्ट्रीय हित को प्राथमिकता दी जाती है।

उदाहरण-

- कौटिल्य और मैकियावेली दोनों ही यथार्थवादी राजनीतिक चिन्तक माने जाते हैं।
- कौटिल्य ने कहा थारू ष्मत्स्य न्यायष् से बचने के लिए सख्त दंडनीति जरूरी है।

महत्त्व-

- सत्ता की स्थिरता और शासन की प्रभावशीलता सुनिश्चित होती है।
- जटिल परिस्थितियों में व्यावहारिक निर्णय लिए जा सकते हैं।
- राष्ट्रीय सुरक्षा और विदेशी नीति में यथार्थवादी दृष्टिकोण आवश्यक है।

3. नैतिकता और यथार्थवाद का द्वंद् और संतुलन-

- नैतिकता आदर्श प्रस्तुत करती है, जबकि यथार्थवाद व्यावहारिक निर्णय लेने की आवश्यकता को रेखांकित करता है।
- केवल नैतिकता से सत्ता निष्क्रिय हो सकती है, जबकि केवल यथार्थवाद से सत्ता दमनकारी बन सकती है।
- इसीलिए, एक कुशल राजनीतिज्ञ वही होता है जो नैतिक मूल्यों के साथ यथार्थ को समझकर संतुलन बनाए रखे।

समकालीन संदर्भ में- आज के समय में लोकतंत्र, मानवाधिकार और सुशासन के लिए नैतिकता जरूरी है, वहीं राष्ट्रीय सुरक्षा, आर्थिक नीति, और विदेश नीति के लिए यथार्थवादी दृष्टिकोण भी अनिवार्य है।

आज के परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिकता- कौटिल्य का अर्थशास्त्र केवल एक प्राचीन ग्रंथ नहीं, बल्कि शासन, राजनीति, कूटनीति और प्रशासन का एक सुव्यवस्थित और वैज्ञानिक दस्तावेज है, जिसकी शिक्षाएं आज के समय में भी अत्यंत प्रासंगिक हैं। वर्तमान वैश्विक और राष्ट्रीय परिदृश्य में जब शासन व्यवस्था, आंतरिक सुरक्षा, भ्रष्टाचार, आर्थिक असमानता और कूटनीतिक चुनौतियाँ जटिल होती जा रही हैं, तब कौटिल्य के सिद्धांत एक ठोस मार्गदर्शन प्रदान करते हैं।

प्रमुख प्रासंगिकताएँ -

1. राजधर्म और नीति शासन रू आज के लोकतांत्रिक नेताओं और प्रशासकों के लिए कौटिल्य का यह सिद्धांत कि राजा का मुख्य कर्तव्य प्रजा की सेवा है, एक आदर्श मार्गदर्शन है।
2. सुशासन और प्रशासनिक दक्षता रू कौटिल्य ने एक सुव्यवस्थित और जवाबदेह प्रशासनिक तंत्र की आवश्यकता पर बल दिया, जो आज के प्रशासनिक सुधारों और लोक सेवा आयोग जैसी संस्थाओं की नींव बनाता है।
3. राष्ट्रीय सुरक्षा और गुप्तचर तंत्र रू कौटिल्य द्वारा प्रतिपादित गुप्तचर व्यवस्था और सीमाओं की सुरक्षा से संबंधित उपाय आज की आंतरिक और बाहरी सुरक्षा नीतियों के लिए प्रेरणा स्रोत हैं।
4. आर्थिक नीति और कर व्यवस्था रू अर्थशास्त्र में वर्णित कर नीति, आर्थिक संतुलन और व्यापार की स्वतंत्रता जैसे तत्व आज के आर्थिक सुधारों और बजटीय प्रबंधन में अत्यंत उपयोगी हैं।
5. कूटनीति और विदेश नीति रू कौटिल्य की मंडल सिद्धांत और शक्ति-संतुलन की अवधारणाएं आज की अंतर्राष्ट्रीय राजनीति और रणनीतिक गठबंधनों के यथार्थ से मेल खाती हैं।
6. न्याय और दंडनीति रू न्यायपूर्ण और सख्त दंड व्यवस्था की वकालत करने वाला कौटिल्य का दृष्टिकोण वर्तमान में विधि-व्यवस्था को बनाए रखने के लिए एक मजबूत आधार प्रस्तुत करता है।

निष्कर्ष- कौटिल्य का अर्थशास्त्र एक ऐसा कालजयी ग्रंथ है, जो न केवल प्राचीन भारत की राजनीतिक, प्रशासनिक और आर्थिक संरचना का विश्लेषण करता है, बल्कि आज के समय में भी अपने यथार्थवादी दृष्टिकोण, नीति-कुशलता और राज्य संचालन के सिद्धांतों के कारण अत्यंत प्रासंगिक है। इस ग्रंथ में प्रतिपादित विचार केवल तत्कालीन परिस्थितियों तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे सार्वकालिक और सार्वदेशिक हैं। कौटिल्य का राजनीतिक दर्शन सत्ता के प्रयोग, राज्य के कर्तव्यों, प्रजा के कल्याण, न्याय व्यवस्था, कूटनीति, दंडनीति और नेतृत्व की अवधारणाओं पर आधारित है। उनके विचारों में एक ऐसा संतुलन देखने को मिलता है जहाँ नीति और नैतिकता, शक्ति और सेवा, न्याय और दंड सभी को समान महत्व प्राप्त है। आज के लोकतांत्रिक युग में, जहाँ भ्रष्टाचार,

प्रशासनिक अक्षमता, और नीति-निर्णयों की अस्थिरता जैसी समस्याएँ व्याप्त हैं, वहाँ कौटिल्य के सिद्धांत एक मार्गदर्शक के रूप में कार्य कर सकते हैं। उनके द्वारा प्रतिपादित सक्षम नेतृत्व, उत्तरदायित्वपूर्ण शासन, और नीतिपरक प्रशासन की अवधारणाएँ आज भी प्रासंगिक हैं और शासन व्यवस्था को अधिक प्रभावशाली तथा जनकल्याणकारी बनाने की दिशा में प्रेरणा प्रदान करती हैं। इस अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि-

- अर्थशास्त्र का राजनीतिक पक्ष समग्र राज्य संचालन का गहराई से विश्लेषण करता है।
- कौटिल्य का यथार्थवाद आज के प्रशासन और विदेश नीति के लिए मार्गदर्शक है।
- उनका नेतृत्व सिद्धांत आज के राजनीतिक नेतृत्व के लिए एक आदर्श प्रस्तुत करता है।

अतः कौटिल्य का अर्थशास्त्र न केवल प्राचीन भारतीय राजनीति की गौरवशाली धरोहर है, बल्कि वर्तमान और भविष्य की शासन प्रणालियों के लिए एक सशक्त, व्यावहारिक और नैतिक मार्गदर्शन भी है।

संदर्भ सूची-

1. झा, दामोदर (2006), कौटिल्य का अर्थशास्त्र
2. मिश्र, लक्ष्मीधर (2004), अर्थशास्त्र में प्रशासनिक दृष्टिकोण
3. मेहता, वी.आर. (2003), भारतीय राजनीतिक विचारधारा
4. रमण, सी.वी. (2017), भारतीय प्रशासनिक विचार
5. मन्ना, ए. (2005), चाणक्यरू नीति और व्यक्तित्व
6. गोपीनाथ, टी. के., 2012, कौटिल्य के कूटनीतिक विचार
7. काँगले, आर. पी., 1992, द कौटिल्य अर्थशास्त्र
8. सुब्रता, के. मित्रा., 2009 भारत में राजनीति
9. यूएनडीपी रिपोर्ट अ, न गुड गवर्नन्स, 2008
10. सेन, अमर्त्य, 2001 एथिक्स एण्ड पब्लिक पॉलिसी
11. चाणक्य नीति, विजूडम ट्री, 2004
12. बसु, डी. डी., भारतीय संविधान का परिचय
13. सिंह, टी. एन., 2011, प्राचीन भारत में विदेश नीति
14. देसाई, मेघनाद, 2011, पोलिटिकल सिस्टम्स ऑफ इंडिया
15. शर्मा, शंकर, 2010, कौटिल्य का आर्थिक चिन्तन

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 42, Hindi Edition, Year-21, Jan.- June 2025

भारतीय राजनीतिक- प्रशासनिक चिंतन: कौटिल्य की दृष्टि में

• जगदीश प्रसाद

•• राहुल कुमार

सारांश- भारतीय राजनीतिक चिन्तन के इतिहास में आचार्य कौटिल्य को एक उच्च कोटि का दार्शनिक और शासन-कला तथा राजनीति का सबसे महान प्रतिपादक माना जाता है। कौटिल्य का 'अर्थशास्त्र' राजशास्त्र का सबसे महत्वपूर्ण ग्रन्थ है, जिसका एकमेव विषय राजनीति और प्रशासन है। कौटिल्य के अनुसार किसी राज्य के लोगों का चरित्र वहां के राजा के समान होगा। यदि राजा में नेतृत्व, जवाबदेही, बुद्धिमत्ता, ऊर्जा, नैतिक आचरण तथा शारीरिक रूप से स्वस्थ, त्वरित निर्णय लेने की क्षमता आदि गुण होंगे तो वे अपनी प्रजा को इन गुणों को अपनाने के लिए प्रेरित करेंगे। मौर्य शासन काल में राज्य की प्रजा अत्यंत सुखी रही क्योंकि चंद्रगुप्त मौर्य को चाणक्य जैसे विद्वान, कुशल राजनीतिज्ञ तथा कुशल पथ-प्रदर्शक का मार्गदर्शन प्राप्त था, जिसके कारण उनके शासनकाल में राज्य में धार्मिक, राजनीतिक, प्रशासनिक, आर्थिक, सामाजिक तथा बौद्धिक उन्नति के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य किए गए। कौटिल्य के अनुसार किसी भी देश की समृद्धि उसकी वित्तीय स्थिति पर निर्भर करती है। जिस देश के पास अर्थ अर्थात् धन है तथा उसके प्रबंधन व्यवस्था भी कुशल है तो उस देश को आपातकाल जैसी स्थितियों से जनता को सुरक्षित रखने तथा उनका पर्याप्त भरण-पोषण करने में भी मदद मिलती है। प्रस्तुत शोध पत्र का उदेश्य भारतीय राजनीतिक चिंतन में कौटिल्य की प्रासंगिकता और महत्ता को रेखांकित करना है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में दो मुख्य विषय है - राजनीति एवं प्रशासन। जिसका विस्तृत विवेचन उनकी महान रचना अर्थशास्त्र में मिलता है। जिसका विश्लेषण इस शोध पत्र के माध्यम करने करने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द- राजनीतिक चिन्तन, अर्थशास्त्र, जवाबदेही, राजनीति, प्रशासन, प्रजातंत्र, अखंड भारत, नैतिक आचरण, चंद्रगुप्त मौर्य, मौर्य शासनकाल

• विभागाध्यक्ष सह एसोसियेट प्रोफेसर, स्नातकोत्तर राजनीति विज्ञान विभाग, तिलकामाँझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर-812007 (बिहार)

•• शोधार्थी, पी० एच०-डी० पंजीयन संख्या: 521/2022 स्नातकोत्तर राजनीति विज्ञान विभाग तिलकामाँझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर-812007 (बिहार)

प्रस्तावना- कौटिल्य का अर्थशास्त्र पूर्वगामी सभी अर्थशास्त्रों का संग्रह अथवा सार है। कौटिल्य का उद्देश्य पूर्णतया व्यवहारिक था। कौटिल्य वास्तव में यथार्थवादी था और उन्होंने ऐसी समस्याओं के विषय में लिखा है जिनका मनुष्य को इस लोक में सामना करना पड़ता है। राज्य के विषय में लिखने वाले सभी महान लेखकों व शिक्षकों में कदाचित वे अकेले हैं जिन्होंने राजनीति के विषय में स्वतंत्र रूप से अर्थात उसे धर्म से पृथक करके लिखा है। कौटिल्य ने देश को एक सुदृढ़ एवं केंद्रीयकृत शासन प्रदान किया है। वस्तुतः प्राचीन भारत की अर्थशास्त्र की परंपरा का सबसे अधिक लोकप्रिय पूर्णतः वैज्ञानिक और अधिकार पूर्ण निर्वाचन कौटिल्य का अर्थशास्त्र है। यह ग्रंथ राजनीतिक बुद्धिमत्ता का निचोड़ है।

कौटिल्य का अर्थशास्त्र- कौटिल्य का दर्शन विभिन्न साधनों से होकर लक्ष्य प्राप्त करने के लिए साम, दाम, दंड, भेद के सिद्धांत पर आधारित है। ऐसा लगता है कि कौटिल्य को राजतंत्र में शासन चलाने से संबंधित विभिन्न पहलुओं का अथाह ज्ञान था। वे पहलू थे- प्रशासन, राजस्व, कानून, कूटनीति, व्यवसाय, व्यापार, मुद्रा, कृषि, काश्तकारी, श्रम, प्रजा, समाज आदि। वास्तव में अर्थशास्त्र की रचना के वर्षों बाद भी इसमें मौजूद गहरी समझ और इसकी प्रासंगिकता के कारण कौटिल्य के अर्थशास्त्र को ना केवल भारत में बल्कि पूरी दुनिया में पढ़ा जा रहा है। अर्थशास्त्र के सही मूल्यांकन के लिए उस काल को और प्राचीन भारतीय संस्कृति को समझना आवश्यक है। कौटिल्य मगध के रहने वाले थे जो वर्तमान समय में बिहार का दक्षिणी भाग है। मगर उस समय भारत का सबसे बड़ा राज्य था विष्णुगुप्त अथवा कौटिल्य के नाम से प्रसिद्ध कौटिल्य ने विश्व के प्राचीनतम विश्वविद्यालयों में से एक तक्षशिला विश्वविद्यालय में अध्ययन किया था। वहां पर राजनीति, प्रतिरक्षा, वास्तुकला, रसायन और कुछ अन्य विषयों का अध्ययन किया जाता था। उन्होंने मौर्य साम्राज्य में महामात्य के पद पर काम किया जो कि वर्तमान में प्रधानमंत्री के पद जैसा है। इस प्रकार उन्हें राजनीति, प्रशासन और प्रतिरक्षा मामले में व्यापक अनुभव था। कौटिल्य एक मेधावान, विद्वान, निडर चिंतक, सक्षम मंत्री और चालाक राजनेता बन गए। बाद में उन्होंने सक्रिय राजनीति से संन्यास ले लिया और अर्थशास्त्र लेखन के महान कार्य में जुट गए। एक गंभीर विद्वान के रूप में उन्होंने दर्शनशास्त्र धर्म राजनीति और कूटनीति पर उपलब्ध ग्रंथों का अध्ययन किया। लेकिन उनके ग्रंथ अर्थशास्त्र में उनके स्वतंत्र चिंतन के साथ उनकी टिप्पणी प्रकट हुई। यह पुस्तक केवल एक विषय अर्थशास्त्र तक सीमित नहीं है बल्कि एक वृहद ग्रंथ है। इस पुस्तक के रूप में कौटिल्य ने एक वृहद ग्रंथ की रचना की जिसमें राजनीतिक, प्रशासन और प्रतिरक्षा मामलों पर विमर्श है। कौटिल्य ने अपने समय के प्रासंगिक बिंदुओं पर ध्यान केंद्रित किया जो कृषि पशुपालन और व्यापार है। हालांकि प्रशासन से संबंधित अन्य बातों का उल्लेख करते हुए उन्होंने अन्य विभिन्न आयामों का संदर्भ दिया जिनका अर्थव्यवस्था पर प्रबल प्रभाव है। इस प्रकार कौटिल्य ने सार्वजनिक वित्त, सार्वजनिक व्यय, निवेश, मंत्रियों और राज्य के अन्य अधिकारियों की नियुक्ति तथा राज्य के शासन से संबंधित अनेक विषयों पर विस्तार से प्रकाश डाला। वर्तमान समय में किस प्रकार सार्वजनिक निधि का दुरुपयोग किया जाता है और इस पर किस प्रकार अंकुश लगाया

जाए तथा इसे समाप्त कैसे किया जाए, इसकी प्रासंगिकता आज भी अर्थशास्त्र में बनी हुई है। जहां तक कृषि का संबंध है सिंचाई, खेती, कृषि उत्पाद और व्यापार के बारे में कौटिल्य ने छोटी–छोटी बातों का भी विस्तार से वर्णन किया। संपूर्ण ग्रंथ पर–ष्टि डालने से निश्चित तौर पर यह कहा जा सकता है कि आर्थिक और व्यवसाय प्रबंधन में उत्कृष्टता लाने की एक व्यवस्था देने का प्रयास कर रहे थे कौटिल्य।

अर्थशास्त्र के महत्व के संबंध में रामास्वामी का यह मत उल्लेखनीय है कि 'अर्थशास्त्र कौटिल्य से पूर्व की सेनाओं में इधर–उधर फैली राजनीतिक बुद्धिमत्ता और शासन कला के सिद्धांतों का संग्रह है।' कौटिल्य शासन कला को एक पृथक तथा विशिष्ट विज्ञान का रूप देने के प्रयास में उसको नए रूप में वर्णित किया है। कौटिल्य किसी व्यक्ति विशेष का नाम नहीं वरन यह एक राजनीतिक परंपरा का प्रतीक था। गणपति शास्त्री का मत है कि अर्थशास्त्र के रचनाकार को कौटिल्य नाम दिया गया, इसका कारण यह है कि वह कुटल गोत्र का वंशज था। उनका जन्म चमक में हुआ था। इसलिए उसे चाणक्य कहा गया। उसके माता पिता का दिया हुआ नाम विष्णुगुप्त था। एक व्यक्ति के तीन नाम होना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। इसके उदाहरण हमें आज भी मिल सकते हैं। कौटिल्य चंद्रगुप्त का राजगुरु था और उसके परिवार में ठीक उसी प्रकार रहा जिस प्रकार सिकंदर के दरबार में अरस्तु रहा। आचार्य दीपंकर ने तर्क सहित यह स्थापित किया है कि अर्थशास्त्र का रचनाकार कौटिल्य था और वह मौर्यकालीन था। उनका अभिमत उन्हीं के शब्दों में इस प्रकार है, प्राचीन जनश्रुतियों के अनुसार कौटिल्य चंद्रगुप्त मौर्य के समय में हुए थे और उनके साम्राज्य के संस्थापक तथा महामंत्री थे। इस शास्त्र की रचना उस व्यक्ति ने की है जिसने नंद राज्य का नाश किया है। शास्त्रों का उद्धार किया है। मौर्य साम्राज्य की स्थापना की है। पुरान, जैन साहित्य में अनेक स्थान पर इसका उल्लेख है कि कौटिल्य नामक ब्राह्मण ने नंद राज्य का नाश किया एवं मौर्य साम्राज्य की स्थापना की। यह इसलिए भी महत्वपूर्ण है कि पूरे संस्कृत साहित्य में ऐसा अभी तक कहीं प्रकट नहीं किया गया है कि कौटिल्य ने अर्थशास्त्र की रचना नहीं की है तथा उसका रचनाकाल मौर्य काल से भिन्न है। इसके अतिरिक्त संस्कृत विद्वानों की यह परंपरा रही है कि उन्होंने केवल अपवाद स्वरूप में ही अपनी रचनाओं में अपने संबंध में कुछ लिखा है। परंतु महामात्य कौटिल्य ने अपवाद स्वरूप में ही सही प्रत्यक्ष रूप में स्वयं के संबंध में थोड़ा सा उल्लेख किया है। वस्तुत: संपूर्ण भारतीय सांस्कृतिक वांग्मय में सब प्रकार के ज्ञान तथा उनके फलभूत विवेक को विशेष महत्व दिया गया है। ज्ञान एवं विवेक को दो कोटियों में विभक्त किया जा सकता है। आध्यात्मिक एवं व्यवहारिक आध्यात्मिक ज्ञान प्राय: दर्शन का रूप लेता है और मुक्ति प्रदाता है। यह भी मान्यता रही है कि ज्ञान के अभाव में मुक्ति संभव ही नहीं है। प्राय: समस्त दर्शनों में ज्ञान के साथ ही साथ नैतिक शुद्धता को भी मोक्ष हेतु अपरिहार्य स्वीकारा गया है। द्वितीय कोटि का ज्ञान एवं विवेक व्यवहारिक जीवन के लिए अपेक्षित है। प्राचीन भारतीय राजनीतिक चिंतन में नीतिशास्त्र के ग्रंथ इसी प्रकार का विवेक प्रदान करते हैं। अपनी रचना अर्थशास्त्र द्वारा कौटिल्य ने मानव जीवन के विभिन्न पक्षों को सुचारू रूप से संचालित, संयमित एवं निर्देशित करने का सफल प्रयास किया है। उनका स्पष्ट मान्यता है कि अर्थशास्त्र के माध्यम से व्यक्ति को वेद, अर्थ, धर्म और

काम की प्राप्ति संभव होगी एवं मोक्ष प्राप्ति हेतु मार्ग प्रशस्त होगा। आचार्य कौटिल्य के राजनीतिक चिंतन की प्रासंगिकता एवं उपयोगिता निम्नांकित है। प्राचीन भारतीय राजनीतिक चिंतन के बीच यद्यपि वैदिक साहित्य, उत्तर वैदिक साहित्य, ब्राह्मण ग्रंथ आदि उपलब्ध होते हैं परंतु उनमें क्रमबद्धता और निरंतरता का अभाव रहा है। वैदिक युग की समाप्ति के बहुत पश्चात ही प्राचीन भारत में राज्यशास्त्र का अध्ययन प्रारंभ हो सका था। आचार्य कौटिल्य कृत अर्थशास्त्र में तो प्राचीन भारतीय राजनीतिक चिंतन की तीन प्रमुख विचारधाराओं का उल्लेख किया है। धर्म प्रधान विचारधारा, अर्थप्रधान विचारधारा और दंड प्रधान विचारधारा।

अर्थशास्त्र में तत्कालीन जटिल राजनीतिक वातावरण को स्पष्ट करने के लिए कौटिल्य ने अपने निजी शब्दों का प्रयोग किया है। कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र को उस समय स्थित राजनीति के ग्रंथ पर ही आधारित नहीं रखा वरन उस व्यक्तिगत अनुभव एवं ज्ञान पर भी आश्रित रखा जो उन्होंने तत्कालीन राजनीतिक स्थिति और संस्थाओं को अध्ययन करने पर प्राप्त किया था। प्रोफेसर एम वी कृष्णाराव के कथनानुसार 'अरस्तु की भांति उन्होंने अपने सैद्धांतिक ज्ञान को अपने समय की सरकार के रूप एवं व्यवहारों को व्यक्तिगत अनुभवों से सही बनाया'।

कौटिल्य का राजनीतिक चिंतन- कौटिल्य का अर्थशास्त्र मूल रूप से राज्य और राजनीति पर आधारित एक महान ग्रन्थ है। इसकी विषय-वस्तु में जिन अन्य बातों को समाहित किया गया है, वे सभी राजनीति से सम्बद्ध होने के कारण इसमें स्थान पा सकीं। कौटिल्य के प्रमुख राजनीतिक विचार निम्नलिखित हैं

1.राज्य की उत्पत्ति- कौटिल्य ने राज्य की उत्पत्ति के सम्बन्ध में सामाजिक समझौते के सिद्धान्त को स्वीकार किया है। एक स्थान पर कौटिल्य का कथन है कि राज्य के पूर्व समाज में 'मत्स्य न्याय' का प्रभाव था। जिस प्रकार बड़ी मछली छोटी मछली को निगल जाती है, उसी प्रकार समाज के सबल पुरुष निर्बल पुरुषों के विनाश में हमेशा सक्रिय रहा करते थे। इस व्यवस्था से तंग आकर लोगों ने मनु को अपना राजा बनाया। ये लोग अपनी अन्न की उपज का छठवाँ भाग तथा व्यापार द्वारा प्राप्त धन का दसवाँ भाग कर के रूप में राज्य को देने लगे। मनु को राजा नियुक्त करते समय इन लोगों ने यह स्पष्ट कर दिया था कि वे लोग राजा को कर तब दें,जबकि वह उनके क्षेत्र की समुचित व्यवस्था करे। इस प्रकार राज्य की उत्पत्ति एक सामाजिक समझौते का परिणाम थी।

2.राज्य का सावयव स्वरूप- कौटिल्य द्वारा वर्णित राज्य का सावयवी रूप कोई विदेशी आयात नहीं है, वरन् शुद्ध रूप से भारतीय है। वह राज्य की सर्वोच्च कार्यपालिका का मूर्त रूप है। उसके बाद मन्त्री आते हैं, जो राजा को आवश्यक परामर्श देते हैं तथा शासन का संचालन करते हैं। दुर्ग राज्य की प्रतिरक्षा का प्रमुख साधन होते हैं और उनके द्वारा ही जनता की सुरक्षा सम्भव है। जनपद अथवा भूभाग राज्य के अस्तित्व का भौतिक आधार है। राज्य व जनता की सुख-समृद्धि के लिए कोष का होना अत्यन्त आवश्यक है। बिना दण्ड के राज्य में शान्ति और व्यवस्था सम्भव नहीं है। अन्त में मित्र राज्य का होना भी राज्य के अस्तित्व एवं सुरक्षा के लिए आवश्यक है।

3.राज्यों के प्रकार- अर्थशास्त्र के अध्ययन से स्पष्ट है कि कौटिल्य राजतन्त्र का पोषक था और वह समस्त भारत पर एक सशक्त और सम्पन्न राजा का शासन स्थापित करना चाहता था। उसकी मान्यता है कि राजतन्त्र में राज्य शक्ति शक्तिशाली वर्ग के हाथ में रहती है और उपयुक्त अनुशासन द्वारा प्रजा में स्वामी शक्ति की स्थापना की जा सकती है। किन्तु अर्थशास्त्र में अन्य प्रकार के राज्यों का उल्लेख भी मिलता है, क्योंकि उस काल में तथा उससे पूर्व भारत में ऐसे राज्यों का अस्तित्व था व अन्य प्रकार के राज्यों को द्वैराज्य, वैराज्य तथा संघ राज्य कहा जाता.था।

4.राज्य का उद्देश्य- कौटिल्य द्वारा वर्णित राज्य केवल पुलिस राज्य न था अर्थात् राज्य केवल शान्ति व्यवस्था और सुरक्षा बनाए रखना ही अपना कार्य नहीं समझता था। राज्य का उद्देश्य व्यक्ति को उसके पूर्ण विकास में पूरी तरह से सहायता देना है। अच्छा राज्य स्वस्थ और सु–ढ़ अर्थव्यवस्था पर आधारित होता है। राज्य का भूमि क्षेत्र इतना हो कि वह निवासियों की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके और उनकी शत्रुओं से भी रक्षा कर सके। कौटिल्य के अनुसार राज्य के कार्यों का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत होना चाहिए। अच्छे राज्य का आधार सुदृढ़ अर्थव्यवस्था है, जिससे। उसके निवासी अपने जीवन के लक्ष्यों की प्राप्ति कर सकें।

5.सप्तांग सिद्धान्त- प्राचीन भारत में राज्य के सावयव रूप का उल्लेख मिलता है। उस समय के विद्वान् राज्य को एक सजीव प्राणी मानते थे। प्राचीन विचारकों के अनुसार सप्तांग राज्य की कल्पना एक जीवित शरीर की कल्पना है, जिसके सात अंग होते हैं। राज्य के सात अंगों के कारण ही उसके राज्य की प्रकृति सम्बन्धी सिद्धान्त सप्तांग कहलाता है। कौटिल्य के अनुसार राज्य के निम्न सात अंग हैं- (1) स्वामी, (2) अमात्य, (3) जनपद, (4) दुर्ग, (5) कोष, (6) दण्ड, तथा (7) मित्र । प्राचीन भारत में राज्य के इन सात अंगों में से सभी का सु–ढ़ और स्वस्थ सहयोग आवश्यक माना जाता था।

राजा- कौटिल्य ने राज्य रूपी शरीर में राजा को सबसे ऊँचा स्थान प्रदान किया है। उसने राजा की सत्ता को समुदाय के सभी कार्यों की एकमात्र आधारशिला माना है। उसकी समृद्धि से ही राज्य की समृद्धि सम्भव है । राजनीति की सफलता या असफलता तथा राज्य का भविष्य राजा की शक्ति और नीति पर निर्भर है। बी. पी. सिन्हा के अनुसार, "कौटिल्य की प्रणाली में राजा शासन तन्त्र की धुरी है और वह शासन के संचालन में सक्रिय रूप से भाग लेने तथा शासन को गति प्रदान करने का कार्य करता है।" स्वयं कौटिल्य के शब्दों में,"यदि राजा सम्पन्न हो, तो उसकी समृद्धि से प्रजा भी सम्पन्न होती है। राजा का जो शील हो, वह शील प्रजा का भी होता है। यदि राजा उद्यमी और उत्थानशील होता है,तो प्रजा में भी ऐसे गुण आ जाते हैं। यदि राजा प्रमादी हो, तो प्रजा भी वैसी ही हो जाती है। अत: राज्य में केन्द्र–बिन्दु राजा ही है।

राजा के गुण- कौटिल्य ने राजा के गुणों पर बहुत बल दिया है। वह अपने राजा को केवल सत्ता उपयोग करने वाले व्यक्ति के रूप में नहीं देखता, वह उसे राजर्षि बनाना चाहता है। उसके अनुसार राजा को कुलीन, धर्म की मर्यादा रखने वाला, कृतज्ञ, दृढ़ निश्चयी, विचारशील, सत्यवादी, वृद्धों के प्रति आदरशील, विवेकपूर्ण, दूरदर्शी, उत्साही तथा युद्ध में

चतुर होना चाहिए। उसे क्रोध, मद, लोभ, भय आदि से दूर रहना चाहिए। युद्ध के समय प्रजा का निर्वाह करने और शत्रु की दुर्बलता पहचानने की आवश्यक योग्यता होनी चाहिए। राजा को विशेष रूप से कभी भी वृद्ध, अपंग तथा दीन-हीन की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए।

राजा के कर्तव्य- राजा के कर्तव्यों का वर्णन करते हुए कौटिल्य ने लिखा है, प्रजा के सुख में राजा का सुख है, प्रजा के हित में राजा का हित है। राजा के लिए प्रजा के सुख से भिन्न अपना सुख नहीं है। उसके अनुसार राजा और प्रजा में पिता और पुत्र का सम्बन्ध होना चाहिए। जैसे पिता पुत्र का ध्यान रखता है, वैसे ही राजा के द्वारा प्रजा का ध्यान रखा जाना चाहिए।

अमात्य या मन्त्रिपरिषद्- कौटिल्य ने अपने ग्रन्थ अर्थशास्त्र में राजा के लिए मन्त्रिपरिषद् की आवश्यकता पर बहुत बल दिया है। उसके अनुसार राज्य एक रथ है। जिस प्रकार रथ एक पहिये से नहीं चल सकता उसी प्रकार मन्त्रियों की सहायता के बिना अकेला राजा राज्य का संचालन नहीं कर सकता। अत: राजा के लिए यह उचित है कि वह योग्य मन्त्री रखे और उनके परामर्श पर उचित ध्यान दे। कौटिल्य ने बल देते हुए कहा है कि समस्त कार्यों का प्रारम्भ मन्त्रणा कर लेने के उपरान्त ही होना चाहिए। राजा और मन्त्रिपरिषद् के आपसी सम्बन्धों के विषय में कौटिल्य का विचार है कि राजा सामान्यत: मन्त्रिपरिषद् के आधार पर कार्य करे किन्तु मन्त्रिपरिषद् की मन्त्रणा कार्य सिद्धिकर प्रतीत न होने पर राजा अपनी इच्छानुसार कार्य कर सकता है।

चाणक्य का अर्थशास्त्र राजनीति विषय पर एक विलक्षण ग्रंथ है। आचार्य चाणक्य ने अपने ग्रंथ अर्थशास्त्र में राज्य की राजनीतिक नीतियों पर विस्तार से चर्चा की है। उनके अर्थशास्त्र में समाज की सामाजिक नीतियों पर भी अद्‌भुत विचार व्यक्त किए गए हैं। मानव व्यवहार पर उनके विचार इतने स्पष्ट एवं सटीक थे वर्तमान मानव विज्ञान के लिए आज भी अति प्रासंगिक है। यदि वर्तमान सामाजिक परिप्रेक्ष्य में उनके विचारों को तार्किकता से प्रस्तुत किया जाए तो भी उनके कुछ विचारों को छोड़कर वर्तमान समाज के मूल्यों की कसौटी पर खरे उतरेंगे। यह मुख्यतया सूत्र शैली में लिखा हुआ है और संस्कृत के सूत्र साहित्य के काल और परंपरा में रखा जा सकता है। यह शास्त्र विस्तार से रहित, समझने और ग्रहण करने में सरल है। कौटिल्य द्वारा उन शब्दों में रचा गया यह अर्थशास्त्र है जिन का अर्थ सुनिश्चित हो चुका है। किसी भी राज्य के समाज के विकास में वहां की व्यापार व्यवस्था का महत्वपूर्ण योगदान होता है। इसी तथ्य को ध्यान में रखकर आचार्य चाणक्य ने महत्वपूर्ण एवं लाभदायक वाणिज्यिक नीतियों का विवरण प्रस्तुत किया है। क्रय-विक्रय से लेकर ऋण लेने देने एवं अन्य लघु परंतु महत्वपूर्ण तथ्यों का समावेश अपने अर्थशास्त्र जैसे महान ग्रंथ में प्रस्तुत किया है। समाज में स्त्रियों की भूमिका एवं उनके अधिकारों की चाणक्य ने विस्तार से चर्चा की है। चाणक्य ने स्त्री व्यवहार की उत्तम चर्चा की है। चाणक्य का मानना था कि किसी भी राष्ट्र की उन्नति के लिए पुरुष वर्ग के साथ-साथ स्त्रियों की भी उन्नति एवं उनकी भूमिका को सुनिश्चित करना आवश्यक है। चाणक्य स्त्री व पुरुष के समान अधिकारों के पक्षधर थे। उनके इन्हीं अद्‌भुत विचारों के कारण मौर्य साम्राज्य को स्वर्ण युग के रूप

में याद किया जाता है। राज्य समाज की उन्नति में सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व उस राज्य या समाज के नागरिक होते हैं। यह तभी संभव है जब नागरिक अपने कार्य एवं दायित्व का निर्वाह उचित ढंग से करें। इस तथ्य की महत्वपूर्ण आवश्यकता को समझते हुए आचार्य चाणक्य ने नागरिक के कार्यों का दायित्व पूर्ण वर्णन किया है। आचार्य चाणक्य के काल में शिक्षा अपने प्रगति पर थी जिसका प्रभाव उनके ग्रंथ अर्थशास्त्र में भी स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है। आचार्य चाणक्य स्वयं ही तक्षशिला के मेधावी छात्र एवं स्नातक के पश्चात वे निर्विवाद प्रधानाध्यापक हुए। चाणक्य ने ऐसे शिक्षा पर बल दिया जो शिक्षार्थी के बुद्धि कौशल का उत्तम निर्माण करते हुए राष्ट्र की प्रगति में सहायक एवं स्वयं को जीविकोपार्जन से जोड़ सकें।

कौटिल्य के प्रशासनिक चिंतन- कौटिल्य ने शासन की जिस अवधारणा का वर्णन किया है उसे समझना आवश्यक है। उन्होंने राजतंत्र के संदर्भ में शासन के बारे में लिखा और ऐसे ही राज्य के बारे में उन्होंने सिद्धांत दिया। राजा किसी राज्य का प्रमुख होता है और कौटिल्य ने राजा के कर्तव्य उसकी पृष्ठभूमि और राज्य से जुड़े सभी मामलों में राजा के सर्वोच्चता के संबंध में विस्तार से वर्णन किया है। कौटिल्य ने राजा के पूरे दिन की दिनचर्या निर्धारित की है। सुबह से शाम तक इसे सात चरणों में इस प्रकार विभाजित किया है कि प्रशासन को सक्षम रखते हुए राजा का समय प्रभावी ढंग से व्यतीत हो। कौटिल्य के अनुसार राजा को दर्शनशास्त्र, प्राचीन शास्त्रों, राजनीतिक आचार, कूटनीति और अर्थव्यवस्था के संचालन का ज्ञान होना चाहिए। सुशासन के संदर्भ में कौटिल्य ने टिप्पणी की है कि राजा को विधि और न्याय का संचालन करना चाहिए। उन्होंने कहा है कि राजा न्याय का मुख्य संरक्षक होता है और वहां से न्याय प्रवाहित होता है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में दीवानी और फौजदारी जैसे मामलों का उल्लेख है। उन्होंने प्रमाण, प्रक्रिया और साक्षी के परिप्रेक्ष्य में न्याय करने हेतु विस्तृत दिशा निर्देश का उल्लेख किया है। कौटिल्य दंड नीति के प्रबल पक्षधर थे लेकिन वे मानते थे कि दंड उचित एवं न्याय के अनुकूल हो तथा अपराध के अनुपात में हो। जहां तक राज्य के राजनीतिक प्रशासन का संबंध है तो कौटिल्य ने इसके दक्षता पूर्ण संचालन के लिए विस्तार से टिप्पणी की है। उन्होंने राज्य की सुरक्षा, सीमा की सुरक्षा, दुर्ग की सुरक्षा और शत्रुओं पर हमले से निबटने के संबंध में निर्देशों का उल्लेख किया है। उन्होंने राजकुमार, मंत्रियों और राज्य के अन्य अधिकारियों के दैनिक कार्य संपादन को भी निर्धारित करने के संबंध में विस्तार से वर्णन किया है। उन्होंने राज्य की स्थिति के विस्तार और उसे सफल बनाने के संबंध में भी विमर्श किया है। उनके मन में मौर्य साम्राज्य को भारत के केंद्रीय शासन के रूप में स्थापित करने का दिन था और इस लक्ष्य को पूरा करने के बाद उन्हें इस बात का ज्ञान था इसे कैसे पूरा किया जाता है। कौटिल्य लक्ष्य प्राप्त करने में विश्वास करते थे और वे लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए अपनाए जाने वाले साधन के प्रति उतने साकांक्ष नहीं थे। उन्होंने अपने व्यक्तिगत जीवन में नैतिकता और आचार्य का पालन किया। लेकिन उन्होंने राज्य के लक्ष्य को पूरा करने के लिए उचित व अनुचित साधनों की अनुमति दी। वास्तव में अनेक विद्वानों ने इस बात के लिए उनकी आलोचना भी की। सुशासन के एक अन्य पक्ष के प्रति कौटिल्य साकांक्ष थे जो कि राज्य की निधि को अनुचित तरीके से गबन करने से संबंधित

था। उन्होंने अनुचित तरीके से राशि गबन करने तथा अन्य कलाकारों से संबंधित लंबी सूची प्रस्तुत की। उन्होंने स्पष्ट किया कि कदाचार ओं पर कैसे अंकुश लगाया जाए। कदाचित भारत के प्रशासकों के सीखने लायक सबसे बड़ी सीख है। भ्रष्ट आचरण की पहचान और इन्हें रोकने हेतु सख्त एवं कठोर सुधार तथा दंड निर्धारित करना भारत के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती है।

कौटिल्य के प्रशासनिक चिंतन की मूल भावना जनकल्याण, अनुशासन, दक्षता और उत्तरदायित्व पर आधारित है। उन्होंने राज्य की स्थिरता के लिए प्रशासनिक संस्थाओं को संगठित, व्यवस्थित और उत्तरदायी बनाए रखने की आवश्यकता पर बल दिया। उनके अनुसार एक शक्तिशाली राज्य का निर्माण तभी संभव है जब उसमें योग्य अधिकारी, सक्षम मंत्री, समृद्ध अर्थव्यवस्था, कड़ा कानून व्यवस्था और प्रभावशाली गुप्तचर तंत्र हो। उन्होंने प्रशासनिक पदों की स्पष्ट जिम्मेदारियाँ निर्धारित कीं। जैसे – अमात्य (मंत्री) नीति-निर्माण में सहयोग करते हैं, कोशाध्यक्ष वित्त व्यवस्था देखते हैं, दण्डपाल विधि व्यवस्था सुनिश्चित करता है, और गुप्तचर तंत्र समाज एवं राज्य पर निगरानी रखता है। कौटिल्य ने कर्मचारियों के चयन में योग्यता, निष्ठा और कार्यकुशलता को प्राथमिकता दी तथा भ्रष्टाचारियों के लिए कठोर दंड का प्रावधान किया।

उनकी विचारधारा में "राजा की भलाई प्रजा की भलाई में है" जैसी लोक कल्याणकारी भावना निहित है। यह आज के लोकतांत्रिक सिद्धांत गुड गवर्नेंस का आधार बनती है। उन्होंने शासन को नैतिकता के साथ जोड़ते हुए कहा कि राजा को धर्म, न्याय और नीति का पालन करते हुए कार्य करना चाहिए।

कौटिल्य के प्रशासनिक विचारों में गोपनीयता, जवाबदेही, पारदर्शिता, और दण्ड प्रणाली को विशेष स्थान प्राप्त है। उन्होंने 40 प्रकार के भ्रष्टाचारों की पहचान की और उन्हें रोकने के उपाय सुझाए जो आज के लोकपाल जैसी संस्थाओं के सिद्धांत के पूर्वगामी हैं।

कौटिल्य का प्रशासनिक चिंतन केवल प्राचीन भारत की शासन प्रणाली को परिभाषित नहीं करता, बल्कि वह आधुनिक प्रशासनिक ढांचे के मूल सिद्धांतों का आधार भी है। उनका –ष्टिकोण आज के वैश्विक प्रशासन में भी प्रासंगिक और अनुकरणीय बना हुआ है।

खासकर इस दृष्टि से कौटिल्य के अर्थशास्त्र का अध्ययन करने से इन प्रावधानों को लागू करने वाले प्रशासकों को काफी मदद मिलेगी।

कौटिल्य के अर्थशास्त्र का वर्तमान समय में प्रासंगिकता- कौटिल्य के अर्थशास्त्र की गहन समझ से वर्तमान समय के लिए भी महत्वपूर्ण शिक्षा ग्रहण की जा सकती है। यद्यपि कौटिल्य के समय में अलग परिस्थितियां थी फिर भी उनकी शिक्षा का सर्वकालिक प्रभाव है। उन्होंने किसी भी परिस्थिति में संपन्नता प्राप्त करने के लिए उद्यमशीलता और चित्र नीति के संबंध में दिशा निर्देश दिया। कौटिल्य ने महसूस किया कि कल्याणकारी राज्य की स्थापना में धन सृजन की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। उन्होंने राष्ट्र की संपत्ति के सृजन, सुरक्षा और संरक्षण के लिए उचित रणनीति की रूपरेखा तैयार की और इसके पक्ष में तर्क प्रस्तुत किया। सार्वजनिक वित्त और कोष, उत्पादक

परिसंपत्तियों में निवेश, कृषि और पशुपालन के तरीके तथा व्यापार एवं वाणिज्य के संबंध में कौटिल्य की विशिष्ट टिप्पणियां आज के संदर्भ में उपयोगी एवं प्रासंगिक होंगे। नि:संदेह इन रणनीतियों को मौजूदा राजनीतिक और सामाजिक परि–श्य तथा उपलब्ध उन्नत प्रौद्योगिकी के अनुरूप ढालने की आवश्यकता है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में इन विशिष्ट मुद्दों के साथ–साथ सुशासन कला का सार तत्व मौजूद है। सुशासन के वृहद सिद्धांतों के साथ–साथ उन्होंने कानून एवं न्याय लागू करने की तकनीकी पर भी प्रकाश डाला। सिद्धांतों के कार्यान्वयन की उनकी तकनीकी उनकी शिक्षा को शास्वत बनाती है। शोधार्थियों के साथ–साथ राजनेता और कार्यरत प्रबंधकों को उनके शासन के प्रति व्यवहारिक दृष्टिकोण को अपनाने की आवश्यकता है। भारत के पास अर्थशास्त्र सहित सदियों से सहेज कर रखे गए अन्य ग्रंथों के रूप में ज्ञान का विपुल भंडार है। हमारी अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में कौटिल्य की शिक्षा का प्रयोग वर्तमान के अनुकूल करने पर हमारे समकालीन आर्थिक प्रशासकों को काफी लाभ होगा। राजनीतिक, प्रशासन, आर्थिक और व्यवसायिक प्रबंधन में कौटिल्य द्वारा उत्कृष्टता पर जोर देना वर्तमान वैश्वीकृत माहौल में प्रासंगिक है।

इसी प्रकार से आचार्य कौटिल्य द्वारा प्रतिपादित राजनीतिक कर्तव्य मंत्री परिषद की अव्यवस्था तथा प्रशासनिक व्यवस्था के अन्य सभी अंगों से संबंधित विचार आज भी अत्यधिक उपयोगी एवं महत्त्वपूर्ण है। राजा के कार्य को बहुत व्यापक रूप देकर तथा राज्य की संपूर्ण संस्थाओं को उसी सूत्र में पिरोकर एक ऐसे आदर्श दार्शनिक शासक की कल्पना की गई है जैसे प्लेटो द्वारा रचित 'रिपब्लिक' में उल्लिखित दार्शनिक शासक से उच्चतर एवं सर्वथा व्यवहारिक है। कौटिल्य ने कहा है कि अपनी प्रजा के सुख में ही राजा की प्रसन्नता निहित होती है। प्रजा के कल्याण में ही राजा का कल्याण होता है वह केवल उन बातों को अच्छा नहीं मानेगा जो उसे प्रसन्न करती है बल्कि वह उन विषयों पर भी ध्यान देगा जो उसकी प्रजा के लिए लाभकारी है। इसलिए भारत में राजनीतिक नेतृत्व को आत्म निरीक्षण करने और भारत के लोगों के कल्याण के लिए काम करने की आवश्यकता है उन्हें नेतृत्व सहिष्णुता त्याग प्रेम विरोधी नेताओं के लिए सम्मान अखंडता नैतिक जिम्मेदारी जैसे गुणों को विकसित करना चाहिए बाद में यह गुण आम लोगों में भी परिलक्षित होंगे जिससे हम एक नवीन भारत की कल्पना को साकार कर पाएंगे।

निष्कर्ष- कौटिल्य द्वारा रचित महान ग्रंथ अर्थशास्त्र में निहित मुख्य रूप से राज्य–राजनीति, प्रशासन व आर्थिक विचारों का वर्णन किया गया है। उपरोक्त आलेख के अध्ययन से यह पता चलता है कि वर्तमान समय में अगर हम समतामूलक समाज की कल्पना करते हैं तो हमें महान राजनीतिक गुरु आचार्य कौटिल्य द्वारा बताए गए 'यथा राजा तथा प्रजा' के विषयों को अपनाना होगा। जिस तरह से वर्तमान समय में भ्रष्टाचार, लोकतांत्रिक व्यवस्था, प्रजा हित को दरकिनार करना, संप्रदायवाद व भाई–भतीजावाद जैसी स्थिति की झलक देखने के लिए मिल रहे हैं, इन्हीं सारी स्थितियों से निजात पाने के लिए हमें आज वर्तमान समय में आचार्य कौटिल्य द्वारा दिए गए विचारों को अध्ययन करने की नितांत आवश्यकता है। वर्तमान में हमें आवश्यकता है कि महान राजनीतिक,

प्रशासनिक व आर्थिक विचारों पर आधारित धरोहर कौटिल्य कृत अर्थशास्त्र में निहित मूल्यों एवं संकल्पनाओं को अपनाकर वर्तमान व्यवस्था को सुदृढ़, सशक्त एवं सुशासित बनाया जाए। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए वर्तमान आलेख की प्रासंगिकता को दर्शाया गया है।

अतः इस शोध से यह सिद्ध करने का प्रयास है कि कौटिल्य का अर्थशास्त्र न केवल अतीत का दर्पण है, बल्कि वह भविष्य का दिशासूचक भी है। यह ग्रंथ प्रशासनिक विज्ञान, राजनीति विज्ञान एवं नीति-निर्माण के क्षेत्र में एक कालजयी दार्शनिक आधार प्रदान करता है, जिसकी उपयोगिता आज के वैश्विक, डिजिटल, और जटिल प्रशासनिक युग में अत्यंत महत्वपूर्ण है।

संदर्भ सूची-

1- शास्त्री, टीकाकार पाण्डेय रामतेज ; कौटिलीयम अर्थशास्त्रम, प्रकाशक आर्यावर्त संस्कृति संस्थान, प्रकाशन वर्ष 2020, दिल्ली-110094

2- शर्मा, ओमप्रकाश ; कौटिलीय अर्थशास्त्र, मनोज पब्लिकेशन, छठा संस्करण : 2022 दिल्ली - 110095

3- झा, डॉ. ओ. पी. ; कौटिल्य का अर्थशास्त्र, जयको पब्लिशिंग हाउस, तीसरा संस्करण : 2022, मुंबई - 400021

4- शर्मा, डॉ. ब्रह्मदत्त ; कौटिल्य का राजनीतिक चिंतन, प, इन्टर पब्लिकेशन, प्रथम संस्करण : 2012, जयपुर - 302003

5- मेहता, वी. आर. ; भारतीय राजनीतिक चिंतन के आधार, मनोहर पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, प्रथम संस्करण : 2015, न्यू दिल्ली - 110002

6- त्यागी, रुचि ; भारतीय राजनीतिक चिंतन, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2010, दिल्ली - 110007

7- सिंह, डॉ. कमलेश कुमार ; राजनीतिक चिंतक कौटिल्य, राधा पब्लिकेशन्स, प्रथम संस्करण : 2009, न्यू दिल्ली - 110002

8- कुमारी, डॉ. रेनू ; कौटिल्यकालीन भारत की प्रशासनिक व्यवस्था, मीनाक्षी पब्लिकेशन्स, प्रथम संस्करण : 2012, न्यू दिल्ली- 110092

9- मिश्र, अनिल कुमार ; कौटिल्य अर्थशास्त्र, प्रभात पेपरबैक, संस्करण : 2018, न्यू दिल्ली - 110002

10- प्रसून, प्रो. श्रीकांत ; कौटिल्य अर्थशास्त्र, वी एण्ड एस पब्लिशर्स, संस्करण : 2021, न्यू दिल्ली - 110002।

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 42, Hindi Edition, Year-21, Jan.- June 2025

पर्यावरण और मानवाधिकार: एक अध्ययन

• विभा कुमारी

सारांश- पर्यावरण और मानवाधिकार दो ऐसे विषय हैं जो आज के वैश्विक परिप्रेक्ष्य में अत्यंत महत्वपूर्ण हो गए हैं। पर्यावरण की बिगड़ती स्थिति सीधे मानव जीवन को प्रभावित करती है, जिससे जीवन जीने का मूलभूत अधिकार खतरे में पड़ जाता है। यह अध्ययन पर्यावरण संरक्षण और मानवाधिकारों के मध्य संबंधों को उजागर करता है और भारत के संवैधानिक, कानूनी एवं अंतरराष्ट्रीय पहलुओं की चर्चा करता है। भारतीय संविधान का अनुच्छेद 21 ष्जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रताष् की गारंटी देता है। न्यायपालिका ने समय-समय पर यह स्पष्ट किया है कि स्वच्छ जल, साफ हवा और प्रदूषण रहित पर्यावरण, ये सभी जीवन के मौलिक अधिकारों का हिस्सा हैं। जैसे-जैसे पर्यावरणीय स्थितियाँ बिगड़ती जा रही हैं, वैसे-वैसे मानवाधिकारों पर खतरा बढ़ता जा रहा है। पर्यावरणीय क्षति का सबसे अधिक असर समाज के कमजोर, आदिवासी, ग्रामीण और निम्न-आय वर्गों पर पड़ता है। वे न तो अपने स्वास्थ्य की पर्याप्त रक्षा कर सकते हैं, न ही प्रदूषित संसाधनों से बचाव कर सकते हैं। इससे उनके मानवाधिकार जैसे स्वास्थ्य, शिक्षा, जीविका, गरिमापूर्ण जीवन जीने के अधिकार प्रभावित होते हैं। आज के वैश्विक और भारतीय संदर्भ में, पर्यावरण केवल पारिस्थितिकीय चिंता नहीं रह गया है, बल्कि यह मानवीय गरिमा, स्वास्थ्य, और जीवन के अधिकार से सीधे जुड़ गया है। इसलिए इस विषय पर शोध करना अत्यंत आवश्यक हो गया है, ताकि नीति-निर्माण, विधिक सुधार और सामाजिक चेतना को नई दिशा दी जा सके।

मुख्य शब्द- पर्यावरण, मानवाधिकार, न्यायपालिका, मौलिकाधिकार, नीति-निर्माण, सामाजिक चेतना, जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता

भूमिका- वर्तमान समय में पर्यावरण संकट वैश्विक चिंता का विषय बन गया है। जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण, वनों की कटाई, जैव विविधता में गिरावट और प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन न केवल पारिस्थितिकी को प्रभावित कर रहे हैं, बल्कि मानव जीवन को भी संकट में डाल रहे हैं। मानवाधिकारों का उद्देश्य है प्रत्येक व्यक्ति को सम्मानपूर्वक जीवन प्रदान करना। यदि व्यक्ति का पर्यावरण प्रदूषित है, जल और वायु अस्वास्थ्यकर हैं, तो वह अपने मौलिक मानवाधिकारों का उपयोग नहीं कर सकता।

• शोधार्थी, पीएच-डी. पंजीयन संख्या- 569/2022, स्नातकोत्तर राजनीति विज्ञान विभाग, तिलकामांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर - 812001

वर्तमान समय में पृथ्वी गंभीर पर्यावरणीय संकटों का सामना कर रही है, जैसे जलवायु परिवर्तन, ग्लेशियरों का पिघलना, महासागरों में प्लास्टिक प्रदूषण, वनों की कटाई, जैव विविधता में भारी गिरावट, वायु और जल प्रदूषण आदि। ये संकट मानव जीवन की गुणवत्ता को सीधे प्रभावित कर रहे हैं। इसलिए यह अध्ययन आवश्यक है कि यह समझा जा सके कि पर्यावरणीय हानि का प्रभाव मानवाधिकारों पर किस प्रकार पड़ता है। 21वीं शताब्दी के आरंभिक वर्षों में ही संपूर्ण विश्व ने महसूस किया कि प्रगति की अंधी दौड़, औद्योगिकीकरण, शहरीकरण, प्राकृतिक संसाधनों का असीमित दोहन और वैश्वीकरण जैसे तथ्यों ने पर्यावरण को एक गंभीर संकट में डाल दिया है। दूसरी ओर, मानवाधिकार वह मूल सिद्धांत हैं जो प्रत्येक व्यक्ति को सम्मान, सुरक्षा, स्वतंत्रता और गरिमा के साथ जीने का अधिकार प्रदान करते हैं। जब पर्यावरणीय संकट मानवीय जीवन को सीधे प्रभावित करता है, तो यह केवल पारिस्थितिकीय नहीं, बल्कि मानव अधिकारों का भी उल्लंघन बन जाता है। पर्यावरण और मानवाधिकार दो अलग-अलग विषय प्रतीत होते हैं, परंतु वास्तव में ये एक-दूसरे के पूरक हैं। यदि कोई व्यक्ति प्रदूषित वायु में सांस ले रहा है, विषाक्त जल पी रहा है, रासायनिक कचरे से घिरे क्षेत्र में रह रहा है, या जलवायु परिवर्तन के कारण विस्थापन का शिकार हो रहा है, तो उसकी जीवन की गुणवत्ता, स्वास्थ्य और सम्मान प्रभावित होता है। इस प्रकार, एक स्वस्थ पर्यावरण में जीने का अधिकार भी मानवाधिकारों के दायरे में आता है। आज जलवायु परिवर्तन, जैव विविधता में गिरावट, वनों की कटाई, वायु एवं जल प्रदूषण जैसी समस्याएं केवल पर्यावरणीय मुद्दे नहीं रह गई हैं। ये सभी समस्याएं सीधे-सीधे मानव जीवन के बुनियादी अधिकारों को प्रभावित कर रही हैं, जैसे जीवन का अधिकार, स्वास्थ्य का अधिकार, आजीविका का अधिकार, और स्वच्छ जल व आवास का अधिकार।

विशेषत: भारत जैसे देश में, जहां जनसंख्या घनत्व अधिक है और संसाधनों की उपलब्धता सीमित है, वहाँ पर्यावरणीय क्षरण गरीब और वंचित समुदायों पर सबसे अधिक प्रभाव डालता है। आदिवासी, किसान, महिलाएं, और बच्चे पर्यावरणीय असंतुलन के कारण शिक्षा, स्वास्थ्य और सामाजिक न्याय से वंचित हो जाते हैं। प्राचीन भारत में प्रकृति और मानव के संबंध को अत्यंत पवित्र माना गया है। वैदिक ग्रंथों, उपनिषदों और महाकाव्यों में पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश, पंचमहाभूतों की पूजा की परंपरा थी। 'पृथ्वी सप्तपदी माता' जैसे मंत्र यह दर्शाते हैं कि पर्यावरण की रक्षा को धार्मिक और नैतिक कर्तव्य माना गया। परंतु औपनिवेशिक शासन, वैज्ञानिक प्रगति और औद्योगिकीकरण के चलते मानव ने प्रकृति को केवल संसाधन के रूप में देखना शुरू किया। परिणामस्वरूप, प्राकृतिक संसाधनों का दोहन, पर्यावरणीय असंतुलन और पारिस्थितिकी तंत्र का विनाश होने लगा। वर्ष 1972 में स्टॉकहोम में आयोजित संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण सम्मेलन ने पहली बार 'स्वस्थ पर्यावरण में जीवन जीने के अधिकार' को एक मूल मानवाधिकार के रूप में पहचान दी। इसके बाद रियो सम्मेलन (1992), जोहान्सबर्ग सम्मेलन (2002), पेरिस जलवायु समझौता (2015), और UNHRC के 2021 के प्रस्ताव ने इस अधिकार को और सुदृढ़ किया।

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर यह माना जाने लगा कि यदि हम भावी पीढ़ियों के लिए एक

सुरक्षित, स्वच्छ और जैविक रूप से विविध पर्यावरण नहीं छोड़ते, तो यह उनके मानवाधिकारों का उल्लंघन होगा। भारतीय संविधान में प्रत्यक्षत: 'पर्यावरण' शब्द का उल्लेख मूल रूप से नहीं था, परंतु अनुच्छेद 21 (जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार) के तहत सर्वोच्च न्यायालय ने इसे स्वस्थ पर्यावरण में जीने का अधिकार के रूप में विस्तारित किया। अनुच्छेद 48A राज्य को पर्यावरण की रक्षा और सुधार का निर्देश देता है, जबकि अनुच्छेद 51 A(G) नागरिकों का यह मौलिक कर्तव्य निर्धारित करता है कि वे पर्यावरण की रक्षा करें। भारत के न्यायपालिका ने भी पर्यावरणीय अधिकारों को सुदृढ़ करने में अग्रणी भूमिका निभाई है। MC Mehta,Subhash Kumar,Vellore Citizen Welfare Forum जैसे मामलों ने यह स्थापित किया कि प्रदूषण केवल पर्यावरण का मुद्दा नहीं, बल्कि मानव अधिकारों का भी गंभीर उल्लंघन है। पर्यावरणीय अन्याय का सबसे अधिक प्रभाव समाज के हाशिए पर जी रहे वर्गों पर पड़ता है। उदाहरण के लिए, जब कोई उद्योग अपशिष्ट जल को नदियों में छोड़ता है, तो सबसे पहले प्रभावित होते हैं नदी किनारे बसे गरीब समुदाय। झुग्गी बस्तियों में रहने वाले लोगों को शुद्ध हवा, साफ पानी और हरियाली जैसी बुनियादी चीजें उपलब्ध नहीं होतीं। इस प्रकार पर्यावरणीय न्याय, सामाजिक न्याय से गहराई से जुड़ा हुआ है। यदि पर्यावरण सुरक्षित नहीं होगा, तो शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास और जीवन की गरिमा जैसे अन्य अधिकार भी अप्रासंगिक हो जाते हैं आज की सबसे बड़ी चुनौतियाँ हैं–

- जलवायु परिवर्तन
- वनों की अंधाधुंध कटाई
- प्राकृतिक आपदाओं में वृद्धि
- प्रदूषण (वायु, जल, मृदा, ध्वनि)
- क, पोंरेट हितों का प्रभाव
- कानूनी कार्यान्वयन की कमजोरी
- नागरिकों में जागरूकता की कमी

इन चुनौतियों से लड़ना केवल सरकारी या संस्थागत जिम्मेदारी नहीं है, बल्कि प्रत्येक नागरिक, समुदाय और संस्था को मिलकर कार्य करना होगा। इस शोध अध्ययन की आवश्यकता इस बात में निहित है कि यह विषय केवल पर्यावरणीय या विधिक विमर्श तक सीमित नहीं है, बल्कि यह मानव विकास, स्वास्थ्य, नीति निर्माण, न्याय और अंतरराष्ट्रीय संबंधों से भी गहराई से जुड़ा है। आज पर्यावरणीय अधिकारों को मानव अधिकारों के दृष्टिकोण से देखने की आवश्यकता है ताकि हर व्यक्ति को एक सम्मानजनक, सुरक्षित और स्वस्थ जीवन मिल सके। यह अध्ययन इस उद्देश्य से किया गया है कि–

- पर्यावरण और मानवाधिकारों के बीच के संबंधों को स्पष्ट किया जाए।
- भारत के संवैधानिक और कानूनी ढांचे का विश्लेषण किया जाए।
- न्यायिक दृष्टिकोण की समीक्षा की जाए।
- अंतरराष्ट्रीय कानूनों और घोषणाओं की प्रासंगिकता को समझा जाए।
- व्यावहारिक समस्याओं और उनके समाधान की दिशा में सुझाव प्रस्तुत किए जाएं।

पर्यावरण और मानवाधिकारों के बीच का संबंध आज के समय का एक बहु-आयामी, जटिल और संवेदनशील विषय बन चुका है। इस शोध के माध्यम से यह प्रयास किया जा रहा है कि इस जटिलता को समझकर, कानूनी, सामाजिक और नैतिक दृष्टिकोणों से उसका समाधान खोजा जा सके। यह केवल एक शैक्षणिक कार्य नहीं है, बल्कि मानव सभ्यता के अस्तित्व से जुड़ा एक अत्यंत आवश्यक प्रयास है।

पर्यावरण और मानवाधिकार का परस्पर संबंध- पर्यावरण और मानवाधिकार आज के वैश्विक विमर्श में सबसे अधिक चर्चित विषयों में से हैं। परंपरागत रूप से दोनों को अलग-अलग क्षेत्रों में देखा गया, पर्यावरण को प्रकृति और पारिस्थितिकी से जोड़ा गया, वहीं मानवाधिकार को व्यक्ति की गरिमा, स्वतंत्रता और जीवन के अधिकार से। परंतु बीते कुछ दशकों में यह स्पष्ट हो गया है कि स्वस्थ और सुरक्षित पर्यावरण के बिना मानवाधिकारों की प्राप्ति अधूरी है। यह परस्पर संबंध न केवल सैद्धांतिक स्तर पर, बल्कि व्यावहारिक स्तर पर भी दृष्टिगोचर होता है।

परस्पर निर्भरता की अवधारणा- प्रकृति और मानव के बीच संबंध केवल पारिस्थितिकी तक सीमित नहीं, बल्कि जीवन की समग्र गुणवत्ता से जुड़ा हुआ है। एक ऐसा पर्यावरण जहाँ शुद्ध हवा, साफ पानी, हरियाली, जैव विविधता और शांतिपूर्ण वातावरण उपलब्ध हो, वहीं एक व्यक्ति अपने जीवन के अधिकार का वास्तविक उपयोग कर सकता है।

इसलिए, यदि किसी का पर्यावरण अस्वस्थ, विषाक्त या संकटग्रस्त है, तो उस व्यक्ति के मौलिक मानवाधिकारों जैसे जीवन का अधिकार, स्वास्थ्य का अधिकार, स्वच्छता का अधिकार, और सुरक्षित आवास का अधिकार का उल्लंघन होता है।

संयुक्त राष्ट्र की भूमिका- 1972 के स्टॉकहोम सम्मेलन में पहली बार पर्यावरण को मानव अधिकारों से जोड़ा गया। उद्घाटन वक्तव्य में कहा गया-"Man has the fundamental right to freedom, equality and adequate conditions of life, in an environment of a quality that permits a life of dignity and well-being." इस कथन ने यह स्पष्ट किया कि स्वस्थ पर्यावरण में जीना भी मानव का मूल अधिकार है।

इसके बाद के प्रमुख वैश्विक प्रयास-

- रियो डिक्लेरेशन (1992): सतत विकास और भावी पीढ़ियों के लिए पर्यावरणीय संरक्षण पर बल।
- UN Human Rights Council Resolution 48/13 (2021): "Clean, healthy and sustainable environment is a human right" को औपचारिक मान्यता।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में संबंध- भारतीय संविधान में प्रत्यक्ष रूप से 'पर्यावरण' को मूल अधिकारों में नहीं रखा गया था, परंतु न्यायपालिका ने इसकी व्याख्या करते हुए इसे अनुच्छेद 21 (जीवन का अधिकार) के अंतर्गत समाहित कर दिया।

अनुच्छेद 21- "किसी व्यक्ति को उसके जीवन या व्यक्तिगत स्वतंत्रता से विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही वंचित किया जा सकता है।" न्यायालयों ने इसे विस्तारित करते हुए पर्यावरण के अधिकार को भी इसमें शामिल किया।

प्रमुख न्यायिक निर्णय-

- सुभाष कुमार बनाम बिहार राज्य (1991) निर्णय- 'स्वस्थ पर्यावरण में जीना अनुच्छेद 21 के अंतर्गत मौलिक अधिकार है।'
- MC Mehta बनाम यूनियन ऑफ इंडिया (1987) निर्णय- प्रदूषण के विरुद्ध कार्रवाई को पर्यावरणीय अधिकार से जोड़ा।
- Vellore Citizens Welfare Forum केस (1996) निर्णय- सतत विकास और प्रदूषक भुगतान सिद्धांत को अपनाया गया।
- अन्य संवैधानिक प्रावधान- अनुच्छेद 48A राज्य का कर्तव्य, पर्यावरण की रक्षा और सुधार।
- अनुच्छेद 51A(g)- नागरिकों का मौलिक कर्तव्य, प्राकृतिक पर्यावरण की रक्षा।

भारत में पर्यावरण और मानवाधिकार का संवैधानिक परिप्रेक्ष्य- भारतीय संविधान में प्रत्यक्ष रूप से 'पर्यावरण' शब्द का प्रयोग नहीं किया गया है, किंतु निम्नलिखित अनुच्छेदों के माध्यम से इसकी रक्षा सुनिश्चित की गई है-

- अनुच्छेद 21- जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार – न्यायपालिका ने इसे विस्तारित करते हुए 'स्वस्थ पर्यावरण में जीने का अधिकार' माना है। (सुभाष कुमार बनाम बिहार राज्य AIR 1991 SC 420)
- अनुच्छेद 48A- राज्य का कर्तव्य है कि वह पर्यावरण की रक्षा और सुधार का प्रयास करे।
- अनुच्छेद 51A(g)- प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है कि वह प्राकृतिक पर्यावरण की रक्षा करें।

न्यायपालिका की भूमिका- भारत के उच्चतम न्यायालय और विभिन्न उच्च न्यायालयों ने अनेक ऐतिहासिक निर्णयों के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण को मानवाधिकार के रूप में स्वीकार किया है-

- MC Mehta बनाम यूनियन ऑफ इंडिया (1987)- गैस रिसाव और प्रदूषण को लेकर न्यायालय ने पर्यावरणीय सुरक्षा की अनिवार्यता पर बल दिया।
- Vellore Citizen Welfare Forum cuke Union of India (1996)- 'सतत विकास' और 'प्रदूषक भुगतान सिद्धांत' की स्थापना की गई।

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण और मानवाधिकार- वैश्विक स्तर पर पर्यावरणीय संकट और मानवाधिकारों के उल्लंघन की घटनाएँ तेजी से बढ़ी हैं। औद्योगीकरण, जलवायु परिवर्तन, वनों की कटाई, प्रदूषण, जैव विविधता में ह्रास जैसे मुद्दों ने यह सिद्ध कर दिया है कि मानवाधिकारों की रक्षा तब तक संभव नहीं, जब तक पर्यावरण की रक्षा नहीं होती। इसी कारण अंतरराष्ट्रीय मंचों पर पर्यावरण को मानवाधिकारों से जोड़ने की दिशा में अनेक प्रयास किए गए हैं।

स्टॉकहोम सम्मेलन (1972)

- यह सम्मेलन पर्यावरण और मानव के संबंध पर पहला वैश्विक प्रयास था।
- उद्घोषणा का प्रमुख कथन- "Man has the fundamental right to freedom, equality and adequate conditions of life, in an environment of a

quality that permits a life of dignity and well-being."

- इस घोषणा ने यह स्पष्ट कर दिया कि स्वच्छ और सुरक्षित पर्यावरण में जीना मानव का मौलिक अधिकार है।
- इसके परिणाम स्वरूप अधिकांश देशों ने पर्यावरण संबंधी नीतियाँ व कानून बनाए।

रियो सम्मेलन (Earth Summit, 1992)

- रियो डिक्लेरेशन में 27 सिद्धांत पारित किए गए।
- इसमें 'सतत विकास' और 'पर्यावरणीय न्याय' पर बल दिया गया।
- सिद्धांत 1 "Human beings are at the centre of concerns for sustainable development. They are entitled to a healthy and productive life in harmony with nature."
- इस सम्मेलन ने 'Agenda 21' नामक कार्ययोजना प्रस्तुत की, जो स्थानीय और वैश्विक स्तर पर पर्यावरणीय सुधार हेतु रोडमैप थी।

जोहान्सबर्ग सम्मेलन (2002)

- यह सम्मेलन सतत विकास के तीन स्तंभों आर्थिक विकास, सामाजिक समावेशन और पर्यावरणीय संरक्षण को संतुलित करने पर केंद्रित था।
- इसमें जल, ऊर्जा, स्वास्थ्य, कृषि और जैव विविधता को पाँच मुख्य क्षेत्र के रूप में चिह्नित किया गया।
- पेरिस समझौता (2015)
- यह समझौता जलवायु परिवर्तन की रोकथाम हेतु ऐतिहासिक कदम है।
- इसका लक्ष्य- वैश्विक तापमान वृद्धि को 2°C से नीचे रखना (अवधि-पूर्व-औद्योगिक स्तर की तुलना में)।
- इसमें मानव अधिकारों को मान्यता दी गई, विशेषकर कमजोर वर्गों (महिलाओं, आदिवासियों, बच्चों) के संदर्भ में।
- यह समझौता यह दर्शाता है कि जलवायु परिवर्तन मानवाधिकारों के लिए भी खतरा है।
- UN मानवाधिकार परिषद (UNHRC) का संकल्प – 2021
- संकल्प संख्या 48/13 (Resolution 48/13, 2021) "The right to a clean, healthy and sustainable environment is a human right.)"
- यह पहली बार संयुक्त राष्ट्र ने औपचारिक रूप से यह मान्यता दी कि स्वच्छ, स्वस्थ और सतत पर्यावरण मानव का अधिकार है।

पर्यावरण संरक्षण हेतु कानूनी प्रावधान और संस्थाएँ- भारत में पर्यावरण संरक्षण के उद्देश्य से अनेक कानून बनाए गए हैं। ये कानून न केवल प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा करते हैं, बल्कि प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए संस्थागत ढांचा भी प्रदान करते हैं।

पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986- इस अधिनियम को भोपाल गैस त्रासदी (1984) के बाद लाया गया था। यह एक व्यापक अधिनियम है जो पर्यावरण की सुरक्षा और सुधार के लिए बनाया गया है।

- केंद्र सरकार को पर्यावरणीय मानकों को निर्धारित करने, प्रदूषण को रोकने के लिए दिशा-निर्देश जारी करने का अधिकार है।
- औद्योगिक इकाइयों से उत्पन्न अपशिष्टों को नियंत्रित करने का दायित्व।
- किसी भी गतिविधि या परियोजना को पर्यावरणीय मंजूरी (Environmental Clearance) प्राप्त करना अनिवार्य।
- पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन (EIA) की प्रणाली की शुरुआत इसी कानून के तहत हुई।

प्रमुख धारा- धारा 3(1) केंद्र सरकार को सभी आवश्यक उपाय करने का अधिकार देता है ताकि पर्यावरण की गुणवत्ता बनी रहे।

जल (प्रदूषण निवारण और नियंत्रण) अधिनियम, 1974- जल स्रोतों जैसे – नदियाँ, झीलें, तालाब आदि को प्रदूषण से बचाना और स्वच्छ जल उपलब्ध कराना।

- केंद्रीय जल प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (CPCB) और राज्य जल बोर्ड की स्थापना।
- बिना अनुमति के किसी भी उद्योग से जल स्रोतों में अपशिष्ट जल छोड़े जाने पर प्रतिबंध।
- बोर्ड को यह अधिकार है कि वह जल स्रोतों की निगरानी करे और प्रदूषकों पर दंड लगाए।

महत्वपूर्ण पहलू-

- यह अधिनियम जल को 'राष्ट्रीय संसाधन' मानकर उसकी रक्षा करता है।
- बोर्डों को परीक्षण प्रयोगशालाओं की स्थापना का अधिकार भी प्राप्त है।

वायु (प्रदूषण निवारण और नियंत्रण) अधिनियम, 1981- वायुमंडल को प्रदूषित होने से रोकना और वायु की गुणवत्ता बनाए रखना।

- केंद्र और राज्य स्तर पर प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड की स्थापना (यह बोर्ड CPCB और SPCB कहलाते हैं)।
- उद्योगों को अनुमति पत्र (Consent) के बिना कार्य करने की अनुमति नहीं।
- प्रदूषणकारी इकाइयों को बंद करने, दंड लगाने और दिशा-निर्देश जारी करने की शक्ति।

प्रभाव- इस कानून के तहत शहरी और औद्योगिक क्षेत्रों में वायु गुणवत्ता की निगरानी और सुधार के लिए कई कदम उठाए गए।

जैव विविधता अधिनियम, 2002

उद्देश्य- भारत की जैव विविधता की सुरक्षा, स्थानीय समुदायों के परंपरागत ज्ञान की रक्षा और जैव संसाधनों के दोहन को नियंत्रित करना।

मुख्य प्रावधान-

- राष्ट्रीय जैव विविधता प्राधिकरण (NBA) की स्थापना।
- विदेशी नागरिकों या संस्थाओं को जैविक संसाधनों तक पहुँच प्राप्त करने से पूर्व अनुमति आवश्यक।
- स्थानीय जैव विविधता बोर्डों का गठन, जो ग्राम स्तर पर कार्य करते हैं।

महत्वपूर्ण विशेषताएँ-

'लाभ-साझाकरण (Benefit Sharing)' की व्यवस्था, जिससे यदि कोई कंपनी किसी परंपरागत ज्ञान या जैव-संसाधन का लाभ उठाती है, तो उससे स्थानीय समुदाय को लाभ प्राप्त होता है। इन कानूनों के कार्यान्वयन हेतु केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (CPCB) और राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड कार्यरत हैं।

चुनौतियाँ-

1. औद्योगिकीकरण और शहरीकरण के कारण पर्यावरणीय क्षति- आर्थिक विकास की होड़ में भारी मात्रा में प्राकृतिक संसाधनों का दोहन हो रहा है। उद्योगों और शहरों का तेजी से विस्तार जंगलों की कटाई, जलवायु असंतुलन, और प्रदूषण को जन्म देता है।
2. कमजोर कार्यान्वयन तंत्र- भारत में पर्यावरण संबंधी कई सशक्त कानून मौजूद हैं, परंतु इनका प्रभावी कार्यान्वयन आज भी एक बड़ी चुनौती है। नियंत्रण एजेंसियाँ संसाधनों, जनशक्ति और राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी से जूझती हैं।
3. जागरूकता की कमी- आम नागरिकों में पर्यावरणीय अधिकारों और कर्तव्यों के प्रति पर्याप्त जागरूकता नहीं है। इससे जनसहभागिता कमजोर पड़ जाती है और कानूनों का उल्लंघन आम हो जाता है।
4. कॉरपोरेट हितों का प्रभाव- कई बार औद्योगिक घरानों के हितों की पूर्ति के लिए पर्यावरणीय मानकों में ढील दी जाती है। श्पर्यावरणीय मंजूरीश प्रक्रिया में भ्रष्टाचार और पक्षपात भी एक गंभीर समस्या है।

समाधान-

1. पर्यावरण शिक्षा को अनिवार्य बनाना- स्कूल और कॉलेज स्तर पर पर्यावरणीय अध्ययन को अनिवार्य कर विद्यार्थियों में शुरू से ही जागरूकता और जिम्मेदारी विकसित की जा सकती है।
2. न्यायिक सक्रियता (Judicial Activism)- भारतीय न्यायपालिका ने समय-समय पर स्वप्रेरणा (Suo Moto) से पर्यावरणीय मामलों में हस्तक्षेप किया है। ऐसी सक्रियता नीति-निर्माताओं और प्रशासकों पर दबाव बनाती है।
3. सशक्त जन आंदोलन- चिपको आंदोलन, नर्मदा बचाओ आंदोलन जैसे ऐतिहासिक आंदोलनों ने दिखाया है कि संगठित जनशक्ति से पर्यावरण की रक्षा संभव है। स्थानीय स्तर पर जागरूकता और भागीदारी बेहद जरूरी है।
4. तकनीकी नवाचार और हरित ऊर्जा का प्रयोग- स्वच्छ ऊर्जा (जैसे सौर, पवन, जैव गैस) को बढ़ावा देकर पारंपरिक, प्रदूषणकारी ऊर्जा स्रोतों की निर्भरता को कम किया जा सकता है। साथ ही जल और अपशिष्ट प्रबंधन की नई तकनीकों का उपयोग भी आवश्यक है।

पर्यावरणीय संरक्षण की राह में अनेक बाधाएँ हैं, परंतु यदि शासन, न्यायपालिका और समाज तीनों मिलकर समन्वित प्रयास करें, तो इन चुनौतियों पर सफलतापूर्वक विजय पाई जा सकती है।

निष्कर्ष- पर्यावरण और मानवाधिकार एक-दूसरे के पूरक हैं। एक स्वच्छ, सुरक्षित और स्वस्थ पर्यावरण के बिना मानवाधिकारों की कल्पना अधूरी है। भारत में संवैधानिक और न्यायिक ढांचा इस दिशा में सशक्त है, किंतु व्यवहारिक स्तर पर अधिक प्रयासों की आवश्यकता है। पर्यावरण की रक्षा न केवल नीति का विषय है, बल्कि यह मानव अस्तित्व का मूलभूत आधार भी है। आज के वैश्विक परिप्रेक्ष्य में पर्यावरण और मानवाधिकार एक-दूसरे से अभिन्न रूप से जुड़े हुए हैं। मानव का अस्तित्व एक स्वस्थ, संतुलित और सुरक्षित पर्यावरण पर निर्भर करता है, और यदि यह पर्यावरण संकट में है, तो जीवन जीने के अधिकार सहित सभी मौलिक मानवाधिकार खतरे में पड़ जाते हैं।

भारत जैसे विकासशील देश में जहां आर्थिक प्रगति तेज़ी से हो रही है, वहाँ औद्योगिकीकरण, शहरीकरण और प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन से पर्यावरण पर गंभीर दुष्प्रभाव पड़े हैं। इस स्थिति ने सामाजिक न्याय, मानव गरिमा और जीवन की गुणवत्ता को प्रभावित किया है, विशेषत: समाज के कमजोर और हाशिये पर रहने वाले वर्गों के लिए। भारतीय संविधान ने अनुच्छेद 21 के अंतर्गत "स्वस्थ पर्यावरण में जीने का अधिकार" को जीवन के अधिकार का हिस्सा माना है। इसके अलावा अनुच्छेद 48। और 51।(ह) द्वारा राज्य और नागरिक दोनों के पर्यावरणीय उत्तरदायित्व को स्पष्ट किया गया है। न्यायपालिका की सक्रिय भूमिका, जैसे कि MC Mehta बनाम भारत संघ, और Vellore Citizens Welfare Forum जैसे ऐतिहासिक निर्णयों ने पर्यावरण संरक्षण को कानूनी बल प्रदान किया है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी यह मान्यता स्थापित हो चुकी है कि स्वच्छ, सुरक्षित और सतत पर्यावरण एक मौलिक मानव अधिकार है। स्टॉकहोम घोषणा (1972), रियो घोषणापत्र (1992), और 2021 की UNHRC प्रस्ताव ने इस सिद्धांत को वैश्विक समर्थन प्रदान किया है। परंतु केवल संवैधानिक या कानूनी प्रावधान पर्याप्त नहीं हैं। व्यवहारिक क्रियान्वयन, प्रशासनिक इच्छाशक्ति, सामाजिक जागरूकता और जनभागीदारी के बिना पर्यावरणीय संरक्षण एक मात्र औपचारिकता बनकर रह जाएगा।

इसलिए आज आवश्यकता है-

- पर्यावरणीय शिक्षा और जागरूकता को जन-जन तक पहुँचाया जाए।
- सरकार, न्यायपालिका और नागरिक समाज समन्वित प्रयास करें।

सतत विकास को प्राथमिकता दी जाए जिसमें पर्यावरण, समाज और अर्थव्यवस्था के बीच संतुलन बना रहे। पर्यावरण संरक्षण और मानवाधिकार संरक्षण दो अलग-अलग विषय नहीं, बल्कि एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। पर्यावरण की रक्षा करना केवल एक कानूनी या नीतिगत दायित्व नहीं, बल्कि यह मानव जाति के अस्तित्व की रक्षा का प्रश्न है।

संदर्भ सूची-

- भारतीय संविधान, भारत सरकार प्रकाशन
- सुभाष कुमार बनाम बिहार राज्य, ए.आई.आर. 1991 एस.सी. 420
- एम.सी. मेहता बनाम भारत संघ, ए.आई.आर. 1987 एस.सी. 1086
- वेल्लोर सिटीज़न्स वेलफेयर फोरम बनाम भारत संघ, ए.आई.आर. 1996 एस.सी. 2715
- मानव पर्यावरण पर स्टॉकहोम घोषणा, 1972
- पर्यावरण और विकास पर रियो घोषणा, 1992
- संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार परिषद संकल्प 48/13, 2021
- पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986
- गुरदीप सिंह (2005), भारत में पर्यावरण कानून, मैकमिलन पब्लिशर्स
- श्याम दिवान और आर्मिन रोसेनक्रैन्ज़ (2001)
- भारत में पर्यावरण कानून और नीति, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 42, Hindi Edition, Year-21, Jan.- June 2025

श्री कृष्ण की बाल लीलाओं का समाजशास्त्रीय विश्लेषण: श्रीविष्णु पुराण एवं इस्कॉन कृत- कृष्ण द सुप्रीम पर्सनैलिटी ऑफ गॉडहेड के सन्दर्भ में

•प्रमोद कुमार गुप्ता
••उर्वशी नाग

सारांश- भगवान विष्णु ने जब-जब पृथ्वी पर अधर्म और राक्षसी शक्तियों का बोलबाला देखा, तब-तब उन्होंने मानव रूप में अवतार लेकर धर्म की स्थापना और अधर्म का नाश किया। ऐसे ही, अत्याचारी राजा कंस के अत्याचारों और अराजकता से त्रस्त समाज की रक्षा हेतु, विष्णु ने श्री कृष्ण के रूप में अपना आठवाँ अवतार लिया। कृष्ण ने न केवल कंस का वध किया, बल्कि अपने जीवन के माध्यम से धर्म, प्रेम और करुणा के आदर्शों को स्थापित किया। श्री कृष्ण की यह चेतना, जिसे कृष्ण भावनामृत कहा जाता है, आज वैश्विक स्तर पर इस्कॉन (अंतर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ) के माध्यम से प्रचारित हो रही है। 1966 में श्रील ए.सी. भक्तिवेदांत स्वामी प्रभुपाद द्वारा स्थापित इस्कॉन ने श्री कृष्ण के संदेश को दुनिया भर में फैलाया है, जिससे लाखों लोग आध्यात्मिक जीवन की ओर प्रेरित हुए हैं। यह शोध पेपर श्रीविष्णु पुराण तथा इस्कॉन द्वारा प्रचारित ग्रंथ कृष्ण द सुप्रीम पर्सनैलिटी ऑफ गॉडहेड के आधार पर श्री कृष्ण की बाल लीलाओं का समाजशास्त्रीय विश्लेषण प्रस्तुत करता है, जिसमें उनके कार्यों की सामाजिक भूमिका, सामूहिक आस्था का स्वरूप तथा उनके वैश्विक प्रसार (ग्लोबलाइजेशन) की प्रकिया को समझने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द- इस्कॉन, कृष्ण चेतना, अधर्म, आध्यात्मिक जीवन, ग्लोबलाइजेशन, सामाजिक भूमिका, सामूहिक आस्था

परिचय- भारतीय सांस्कृतिक चेतना में श्रीकृष्ण न केवल एक दिव्य व्यक्तित्व हैं, बल्कि एक सच्चे राष्ट्रनायक के रूप में भी प्रतिष्ठित हैं। वे जहाँ एक ओर लोकनायक हैं, वहीं दूसरी ओर द्वारका के न्यायप्रिय शासक भी हैं। जब-जब समाज में अनीति, अन्याय और नैतिक पतन की स्थितियाँ उत्पन्न हुई है, तब-तब श्रीकृष्ण जैसे लोकनायकों की सामाजिक भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। भगवद्गीता में श्रीकृष्ण का यह उद्घोष

• एसोसिएट प्रोफेसर, लखनऊ विश्वविद्यालय शोध छात्रा, लखनऊ विश्वविद्यालय
•• शोध छात्रा, लखनऊ विश्वविद्यालय

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत.., इस तथ्य को रेखांकित करता है कि जब धर्म (सामाजिक संतुलन एवं नैतिक मूल्यों) का ह्रास होता है और अधर्म (सामाजिक विघटन) की प्रवृत्तियाँ प्रबल हो जाती हैं, तब सामाजिक व्यवस्था के संरक्षण हेतु एक चेतना-पुरुष की आवश्यकता होती है। जो समूचे जनमानस को इस तरह चेतना से उद्वेलित कर दे कि जिस अभीष्ट दिशा में वह समूचे समाज को ले जाना चाहता है। श्री कृष्ण ने मनुष्य जाति को नया जीवन-दर्शन दिया। जीने की शैली सिखलाई। उनकी जीवन-कथा चमत्कारों से भरी है, लेकिन वे हमें जितने करीब लगते हैं, उतना और कोई नहीं। वे ईश्वर हैं पर उस से भी पहले सफल, गुणवान और दिव्य मनुष्य है। ईश्वर होते हुए भी सबसे ज्यादा मानवीय लगते हैं। इसीलिए श्री कृष्ण को मानवीय भावनाओं, इच्छाओं और कलाओं का प्रतीक माना गया है। हर युग का समाज हमारे सामने कुछ सवाल रखता है। श्री कृष्ण ने उन्हीं सवालों का जवाब दिए और तारनहार बने। श्री कृष्ण भारतीय संस्कृति के वह अनमोल हीरा हैं, जिनका नाम हर वस्तु और हर विचार में समाहित है, जैसे एक अदृश्य धारा जो हर पथ को प्रकाशित करती है। वे स्वयं भगवान हैं, फिर भी सखा, प्रेमी, पुत्र, गुरु और मार्गदर्शक जैसे अनेक रूपों में लोगो से जुड़े हैं। कृष्ण का व्यक्तित्व जितना विराट है, उतना ही सरल और आत्मीय भी। वह सोलह कलाओं से युक्त, पूर्ण रूप में अवतारित हैं, जिन्होंने अपने बचपन से लेकर अंतिम यात्रा तक, हर कर्म और हर शब्द से मानवता को प्रेम, धर्म और कर्तव्य का सजीव पाठ पढ़ाया। कृष्ण के बालरूप की सहज शरारतें, माखन चोरी, मिट्टी खाना, मित्रों से लड़ाई उनकी मानवता और दिव्यता दोनों को दर्शाती हैं। उनकी बाल लीलाएं सरल होते हुए भी गहन आध्यात्मिक संदेश देती हैं। कृष्ण का बचपन नंदगांव, वृंदावन के चारागाहों, उपवनों में बीता, जहाँ उनकी चेष्टाओं में एक साधारण बालक की सरलता और एक अवतारी पुरुष की लीलामयता समाहित थी। भक्त कवियों, विशेषत: सूरदास ने, उनकी बाल लीलाओं को अपने काव्य में अमर कर दिया। आज भी भारतीय समाज में माँ अपने बालक में लड्डू गोपाल की छवि देखती है। यह उनकी लीलामय उपस्थिति का प्रमाण है। कृष्ण का बचपन न केवल आनंददायक प्रसंगों का संग्रह है, बल्कि यह धर्म, नैतिकता और मानवता की जड़ों को मजबूत करने वाला कालखंड भी है। श्रीकृष्ण की बाल लीलाएं भारतीय धर्म, संस्कृति और साहित्य का एक महत्वपूर्ण अंग हैं। उनका बाल्यकाल केवल एक दिव्य चरित्र का परिचय नहीं कराता, बल्कि एक ऐसी जीवन-यात्रा को चित्रित करता है जिसमें शुद्ध भक्ति, लीलामयी चेतना और सामाजिक मूल्य समाहित हैं। श्रीकृष्ण के बाल रूप में लीला और लौकिकता का ऐसा अद्वितीय समन्वय दिखाई देता है जहाँ वे एक साधारण बालक की भाँति खेलते, माखन चुराते, ग्वाल-बालों के साथ क्रीड़ा करते हैं परंतु साथ ही उनका प्रत्येक कर्म अलौकिक और धर्म-स्थापना का माध्यम होता है। श्रीकृष्ण का जीवन और शिक्षाएं आज भी करोड़ों श्रद्धालुओं के जीवन में मार्गदर्शक भूमिका निभाती हैं विशेषकर उनकी बाल लीलाएँ जो आकर्षण, अलौकिकता और भावनात्मक गहराई का संगम हैं। यह न केवल धार्मिक कथा-साहित्य की धरोहर हैं, बल्कि समाज के नैतिक और सांस्कृतिक ढांचे की नींव भी मानी जाती हैं। इन लीलाओं में बालक श्रीकृष्ण की शरारतों, करुणा, न्यायप्रियता और दैवीय सामर्थ्य का जो समन्वय दिखता है, वह समाज के हर वर्ग को किसी न किसी

रूप में संबोधित करता है। श्रीकृष्ण की बाल लीलाएं धार्मिक दृष्टिकोण से केवल ईश्वर की महिमा का प्रचार ही नहीं करतीं, बल्कि सांस्कृतिक दृष्टि से सामूहिक स्मृति, परंपराओं और सामाजिक संरचनाओं को भी सुदृढ़ करती हैं। श्री कृष्ण की बाल लीलाओं में दो प्रमुख प्रकार की प्रवृत्तियाँ स्पष्ट रूप से देखी जा सकती हैं, एक ओर राक्षसी शक्तियों के वध की लीलाएँ, इन लीलाओं में श्रीकृष्ण एक संघर्ष, रक्षा और अधर्म के विनाशकर्ता के रूप में सामने आते हैं। वे समाज पर आए संकटों का समाधान करते हैं, जिससे यह संदेश मिलता है कि समाज में युवाजन भी साहस, न्याय और शक्ति के प्रतीक हो सकते हैं। और दूसरी ओर हर्षोल्लास, प्रेम और सामाजिक संवाद की लीलाएँ इन लीलाओ में श्रीकृष्ण लोक–संवाद, सहजता, प्रेम और लोक–धर्म को उजागर करते हैं।

श्रीविष्णुपुराण, अष्टादश महापुराणों में सबसे छोटा है और इसमें भगवान विष्णु के चरित्र का विस्तृत वर्णन है। इसके रचयिता महर्षि वेदव्यास हैं, जिनके पिता पराशर मुनि थे। जब राक्षसों ने पराशर के पिता शक्ति को मारा, तो उन्होंने रक्षोघ्न यज्ञ किया। हजारों राक्षस भस्म होने लगे। वशिष्ठ और पुलस्त्य ऋषि के समझाने पर यज्ञ रोका गया। पुलस्त्य प्रसन्न हुए और पराशर को विष्णुपुराण की रचना का आशीर्वाद दिया। विष्णुपुराण छह भागों में विभक्त है पहले भाग में सृष्टि की उत्पत्ति, काल, ध्रुव, पृथु और प्रह्लाद की कथाएँ हैं। दूसरे भाग में लोक, भुवन, ग्रह–नक्षत्र और ज्योतिष का वर्णन है। तीसरे भाग में मन्वन्तर, वेद की शाखाएँ, गृहस्थ धर्म व श्राद्ध विधि है। चौथे भाग में सूर्य और चन्द्र वंश की वंशावलियाँ दी गई हैं। पाँचवे भाग में भगवान कृष्ण का जीवन और लीलाएँ वर्णित हैं। छठे भाग में प्रलय और मोक्ष का वर्णन है।पाँचवे भाग में भगवान कृष्ण का जीवन और लीला मे बताया गया है जहां उनके प्रत्येक कार्य, सृष्टि की रक्षा और अधर्म के विनाश का दिव्य रुप माना गया है। गोकुल, वृन्दावन जैसे ग्रामीण परिवेश में पाली–बड़ी लीलाएं भारतीय ग्राम्य संस्कृति और उस समय के सामाजिक समावेश की झलक प्रस्तुत करती हैं। यह समाज लीलाओं के माध्यम से ईश्वर से जुड़ता है और साथ ही धर्म के मूल तत्व अहिंसा, सत्य, प्रेम को व्यवहार में शामिल करता है। तथा यह दर्शाता है कि कैसे एक बालक के रूप में भी कृष्ण समाज में धर्म की पुनः स्थापना, नैतिक मूल्यों का प्रचार और भक्त समुदाय की संरचना करते हैं।

इसके विपरीत, इस्कॉन द्वारा रचित कृष्ण द सुप्रीम पर्सनैलिटी ऑफ गॉडहेड पुस्तक श्री कृष्ण की बाल लीलाओ की व्याख्या एक आधुनिक, वैश्विक दृष्टिकोण से करता है। श्रील प्रभुपाद द्वारा रचित यह ग्रंथ पश्चिमी समाज के लिए एक ऐसा सांस्कृतिक सेतु प्रस्तुत करता है, जिसमें कृष्ण भक्ति को केवल धार्मिक उपासना नहीं, बल्कि एक विचारधारा, एक सामाजिक आंदोलन का स्वरूप प्रदान किया गया है। इस ग्रंथ में कृष्ण की बाल लीलाएं एक आध्यात्मिक पथ के रूप में प्रस्तुत की गई हैं, जो मनुष्य को मोह और व्यवहार से मुक्त कर आत्मा की शुद्धि की ओर प्रेरित करती हैं। जहाँ कृष्ण चेतना के माध्यम से समाज में भक्ति, सेवा, प्रेम और अध्यात्म का जागरण होता है।

शोध की आवश्यकता एवं प्रासंगिकता- भारतीय समाज में श्रीकृष्ण की बाल लीलाएं केवल अध्यात्मिक ही नही बल्कि बल्कि समाज के नैतिक और सांस्कृतिक ढांचे की नींव भी मानी जाती हैं। श्रीकृष्ण की लीलाए समाज में भक्ति, सेवा, प्रेम का जागरण होता है

और साथ ही सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक मूल्यबोध और सामूहिक चेतना के निर्माण का एक सशक्त माध्यम रही हैं। धार्मिक ग्रंथों का समाजशास्त्रीय पुनर्पाठ जनमानस के लिए अपने जीवन को सुचारु रुप से चलाने के लिए एक मॉडल प्रदान करता है कि कैसे धार्मिक आख्यानों को केवल पौराणिक कथा के रूप में न देखकर, एक सामाजिक दस्तावेज के रूप में भी पढ़ा जा सकता है। दुर्खीम के अनुसार, धर्म सामाजिक जीवन की एक अभिव्यक्ति है जो सामूहिक चेतना को दृढ़ करती है। इसी संदर्भ में श्रीकृष्ण की बाल लीलाओं का अध्ययन धर्म के भीतर समाज की गतिशीलता, सामूहिक आस्था के निर्माण, और सांस्कृतिक प्रतीकों के सामाजिक प्रभाव को समझने के लिए आवश्यक है। तथा वैश्वीकरण और सांस्कृतिक टकराव के युग में श्रीकृष्ण की बाल लीलाएं एक सांस्कृतिक पुल का कार्य करती हैं, जो पूर्व और पश्चिम, परंपरा और आधुनिकता के बीच एक समन्वय स्थापित करती हैं।

सहित्य समीक्षा

कुमार, इन्द्रजीत (2021) ने अपने लेख में बताया है कि श्री कृष्ण के व्यक्तित्व के कई पहलू बताए है उनमें से एक हैं बाल कृष्ण, जो अपनी मां के सामने लीलाएं करते हैं, और दूसरे हैं योगेश्वर कृष्ण, जो अर्जुन को गीता का ज्ञान देते हैं। श्री कृष्ण के प्रेम में सभी का सम्मान है और लोगों के प्रति सम्मान उनके कार्यों से झलकता है। उन्हें हिंदू धर्म के सबसे प्रिय और आराध्य देवताओं में से एक माना गया है। श्री कृष्ण की महिमा और श्रद्धा का मुख्य कारण उनकी बाल लीला है। इसे उनके जन्म से लेकर दस वर्ष की आयु प्राप्त करने तक के विभिन्न प्रसंगों के माध्यम से इस लेख में दर्शाया गया है। श्री कृष्ण अपने जन्म से ही अपने दिव्य होने के लक्षण प्रदर्शित करते हैं। श्री कृष्ण की लीलाएँ न केवल सुंदर और मोहक हैं, बल्कि वे मन और आत्मा को भी बहुत भाती हैं। ऐसे कई प्रसंग हैं जिनके माध्यम से हमें उनकी बाल लीलाओं के बारे में पता चलता है। ऐसे प्रसंगों में बैलगाड़ी पलटना, राक्षसी पूतना का वध और कई अन्य शामिल हैं। आपका प्रस्तुत शोधपत्र अशोक के. बैंकर के गोविंदा के नृत्य में प्रस्तुत श्री कृष्ण के बचपन की विभिन्न लीलाओं पर केंद्रित है। इसका उद्देश्य यह पता लगाना है कि साहित्यिक आख्यानों में श्री कृष्ण को कितना प्यार और सम्मान दिया जाता है। इस शोध पत्र में यह पाया गया है कि श्री कृष्ण का बाल-रूप ख्याल-लीला, अत्यंत मनमोहक है। वे अपनी लीलाओं से किसी को भी मोहित कर सकते हैं - चाहे देवता हों या राक्षस। कोई भी बच नहीं पाता। जैसे-जैसे कृष्ण बड़े होते हैं, उनकी लीलाएँ और भी बढ़ती जाती हैं। लेखक ने बाल कृष्ण की केवल तीन या चार लीलाओं का वर्णन किया है, लेकिन उन्होंने जो भी किया है, वह बहुत अच्छे से किया है। ऐसा लगता है कि उन्होंने कृष्ण की सभी गतिविधियों को देखा है। यह हमारे पास लाइव-स्ट्रीमिंग के रूप में आता है

गुप्त, श्रीमुनिलाल श्रीविष्णुपुराण पुस्तक अष्टादश पुराणों में से इसका एक प्रमुख स्थान है इसके रचयिता पराशरजी है गुप्त श्रीमुनिलाल द्वारा रचित यह संस्करण पुरातन ग्रंथ की शैली, भाव और मर्म को आधुनिक पाठकों के लिए सहज, सरस और बोधगम्य बनाने एवं संस्कृतनिष्ठ हिन्दी में है 'गुप्त श्रीमुनिलाल' द्वारा रचित 'श्रीविष्णुपुराण' छह भागों में विभक्त है पहले भाग में सृष्टि की उत्पत्ति, काल, ध्रुव, पृथु

और प्रह्लाद की कथाएँ हैं। दूसरे भाग में लोक, भुवन, ग्रह–नक्षत्र और ज्योतिष का वर्णन है। तीसरे भाग में मन्वन्तर, वेद की शाखाएँ, गृहस्थ धर्म व श्राद्ध विधि है। चौथे भाग में सूर्य और चन्द्र वंश की वंशावलियाँ दी गई हैं। पाँचवे भाग में भगवान कृष्ण का जीवन और लीलाएँ वर्णित हैं। छठे भाग में प्रलय और मोक्ष का वर्णन है। विष्णु के अवतारों का उद्देश्य पृथ्वी पर धर्म की रक्षा और असुरों का संहार है। अवतारों के माध्यम से धर्म, सत्य, और नैतिकता के पालन का इन अवतारों के माध्यम से समाज में व्याप्त बुराइयों का नाश और अच्छाई की स्थापना की बात की गई है। इस अंश में श्रीकृष्ण के जीवन प्रसंग विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

प्रभुपाद, स्वामी (1970) की पुस्तक कृष्ण द सुप्रीम पर्सनैलिटी ऑफ गॉडहेड एक महान आध्यात्मिक ग्रंथ है, जो भागवतम् पुराण (श्रीमद्भागवत) के दशम स्कंध पर आधारित है। यह पुस्तक कृष्ण भगवान के दिव्य चरित्र, लीलाओं और उनके जीवन दर्शन को विस्तारपूर्वक और भक्तिपूर्वक प्रस्तुत करती है। स्वामी प्रभुपाद ने इसे न केवल एक धार्मिक ग्रंथ के रूप में, बल्कि एक दार्शनिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक शिक्षापुस्तक के रूप में भी रचा है। पुस्तक में भगवान श्रीकृष्ण के बाल्यकाल से लेकर द्वारका लीला और अंततः उनके पृथ्वी से प्रस्थान तक के जीवन का विस्तृत वर्णन है। गोकुल, वृंदावन और मथुरा में घटित उनकी लीलाएँ – जैसे पूतना वध, गोवर्धन धारण, कालिय नाग पर विजय, रासलीला, कंस वध – इन सभी घटनाओं को लेखक ने अत्यंत भावनात्मक, सरस और सरल भाषा में प्रस्तुत किया है, जिससे पाठक उसमें आत्मसात हो जाता है। लेखक की भक्ति भावना और वैष्णव परंपरा की गहरी समझ पुस्तक को आध्यात्मिक ऊँचाइयों तक पहुँचाती है। उनका उद्देश्य है कि पाठक केवल कथा का आनंद न लें, बल्कि कृष्ण के जीवन से प्रेरणा लेकर अपने जीवन को भी धार्मिक, नैतिक और भक्तिमय बनाएँ। स्वामी प्रभुपाद की विद्वता, भक्ति और साहित्यिक क्षमता इस ग्रंथ को एक कालजयी रचना बनाते हैं, जो आधुनिक युग के पाठकों के लिए भी उतनी ही प्रासंगिक और प्रेरक है।

उद्देश्य- श्रीकृष्ण की बाल लीलाओं का श्रीविष्णु पुराण तथा इस्कॉन द्वारा प्रचारित ग्रंथ कृष्ण द सुप्रीम पर्सनैलिटी ऑफ गॉडहेड के आधार समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से विश्लेषण कर उनके सामाजिक प्रभाव और सामूहिक आस्था के स्वरूप को समझना
इस्कॉन द्वारा प्रचारित कृष्ण द सुप्रीम पर्सनैलिटी ऑफ गॉडहेड ग्रंथ के माध्यम से इन लीलाओं के वैश्विक प्रसार आध्यात्मिक जागरूकता फैलाने में इस्कॉन की भूमिका का अध्ययन करना।

श्रीकृष्ण की बाल लीलाएं: एक तुलनात्मक वर्णन-

1.पूतना वध- श्रीकृष्ण की प्रथम प्रसिद्ध लीला पूतना वध है। श्रीविष्णु पुराण के पंचम अंश के पाँचवा अध्याय में पूतना वध की घटना का वर्णन एक महत्वपूर्ण लीला के रूप में किया गया है। बालघाती पूतना ने रात्रि के समय सोये हुए कृष्ण को गोद में लेकर उसे अपना स्तनपान कराने लगी उसी समय उसका शरीर तत्काल नष्ट होने लगा और कृष्ण चन्द्र ने क्रोध पूर्वक उसके स्तन को अपने हाथों से खूब दबाकर पकड़ लिया और उसे उसके प्राणों के सहित पीने लगे तब स्नायु–बन्धनों के शिथिल हो जाने से पूतना घोर शब्द

करती हुई मरते समय महाभयकर रूप धारणकर पृथिवीपर गिर पड़ी उसके घोर नाद को सुनकर भयभीत हुए व्रजवासी गण जाग उठे और देखा कि कृष्ण पूतना की गोद में हैं और वह मारी गयी है। वही कृष्ण द सुप्रीम पर्सनैलिटी ऑफ गॉडहेड छठे अध्याय में पूतना वध को विस्तारपूर्वक बताया गया है कि पूतना ने सुंदर महिला का रूप धारण कर गोकुल में प्रवेश किया और यशोदा के घर पहुंची। वह बहुत सुंदर दिख रही थी और हर किसी की नजरें अपनी ओर खींच रही थीं। गांव की मासूम गोपियाँ उसे देवी लक्ष्मी मान बैठी थीं। इस घटना में यह दिखाया गया है कि भगवान कृष्ण ने पूतना को अपनी माँ की तरह स्वीकार किया, जबकि वह एक राक्षसी थी। कृष्ण ने उसे मृत्यु का शिकार बना दिया, लेकिन साथ ही उसे मोक्ष भी प्रदान किया। पूतना ने अपने जीवन में कई बच्चों को मारा था, लेकिन जब उसने कृष्ण को अपनी छाती पर दूध पिलाने दिया, तो भगवान ने उसे भी मोक्ष दे दिया। कृष्ण की यह कृपा दिखाती है कि वह अपने भक्तों या उन लोगों पर भी दया करते हैं, जो उसके बारे में अनजाने में कुछ अच्छा करते हैं। पूतना वध दोनों ही ग्रंथों में एक महत्वपूर्ण घटना है, श्रीविष्णु पुराण में पूतना के चरित्र का वर्णन यह दिखाता है कि वह एक राक्षसी थी, जिसका उद्देश्य कृष्ण को मारना था। हालांकि कृष्ण द सुप्रीम पर्सनैलिटी ऑफ गॉडहेड में उसकी भूमिका को थोड़ा अलग तरीके से प्रस्तुत किया गया है, जिसमें उसे एक सुंदर और देवी जैसी आकृति में दिखाया गया है, जो पूरी तरह से भ्रमित करने वाली थी और यह पुष्टि की गई है कि उसकी मंशा वास्तव में कृष्ण को मारने की थी, न कि उसे पोषण देने की। कृष्ण द सुप्रीम पर्सनैलिटी ऑफ गॉडहेड में यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि कृष्ण ने पूतना को मोक्ष दिया, भले ही वह एक राक्षसी थी। श्रीविष्णु पुराण में इस संदर्भ में ऐसा विस्तार से वर्णन नहीं मिलता, जो कृष्ण की कृपा को और अधिक गहराई से समझाए। कृष्ण द सुप्रीम पर्सनैलिटी ऑफ गॉडहेड में कृष्ण का भाव यह दिखाया गया है कि उन्होंने पूतना को मां के रूप में स्वीकार किया, भले ही वह एक राक्षसी थी। यह कृष्ण के अद्वितीय दृष्टिकोण को उजागर करता है, जिसमें वे न केवल कर्मों को देखते हैं, बल्कि भक्ति और भावनाओं की गहराई को भी समझते हैं। श्रीविष्णु पुराण में ऐसा रूप नहीं मिलता, जहाँ कृष्ण ने उसे मां के रूप में स्वीकार किया हो, बल्कि वहां उसका नाश और मुक्ति पर ध्यान केंद्रित किया गया है

2 तृणावर्त की मुक्ति बाल लीला- श्रीविष्णु पुराण में कृष्ण की इस लीला का वर्णन नही किया गया है जबकि कृष्ण द सुप्रीम पर्सनैलिटी ऑफ गॉडहेड सातवें अध्याय में तृणावर्त की मुक्ति लीला वर्णन किया गया है। कृष्ण के जन्मदिन समारोह के पश्चात माता यशोदा अपने शिशु कृष्ण को गोद में लेकर सुला रही थीं, परंतु बालक का भार असामान्य रूप से बढ़ गया और उन्हें अनिच्छा से उसे नीचे रखना पड़ा। इसके बाद जब वे घरेलू कार्यों में व्यस्त थीं, तभी कंस के आदेश पर तृणावर्त नामक राक्षस एक विशाल बवंडर का रूप धारण कर वहाँ आया। उसने बालक कृष्ण को उठा लिया और आकाश की ओर उड़ गया। इस बीच पूरे वृंदावन में धूल का भयानक तूफान छा गया, जिससे गहरा अंधकार फैल गया और किसी को कुछ दिखाई नहीं दिया। माता यशोदा अत्यंत व्याकुल हो उठीं और गाय के अपने बछड़े को खो देने जैसी करुण अवस्था में रोने लगीं। सभी गोपियाँ कृष्ण को ढूँढने लगीं, परंतु वे असफल रहीं। उधर तृणावर्त शिशु को आकाश में ले जाने की चेष्टा

कर रहा था, परन्तु भगवान कृष्ण ने अपने को अत्यंत भारी कर लिया जिससे राक्षस और ऊपर नहीं जा सका। कृष्ण ने उसकी गर्दन पकड़ ली और उसे दबाने लगे। राक्षस को लगा जैसे कोई भारी पर्वत उस पर बैठ गया हो। वह छूटने का प्रयास करता रहा, पर असफल रहा और अंततः उसकी आँखें बाहर निकल आईं। भयानक चीत्कार करते हुए वह धरती पर आ गिरा और पत्थर से टकराकर मर गया। उसका शरीर टुकड़ों में बिखर गया, और बालक कृष्ण उसके मृत शरीर पर खेलते हुए पाए गए। गोपियाँ और ग्वाल-बाल अत्यंत प्रसन्न हो गए। उन्होंने कृष्ण को स्नेहपूर्वक उठाया और आभार प्रकट किया कि बालक सकुशल मिल गया। सबने कहा कि पापी राक्षस अपने कर्मों के कारण मारा गया और पवित्र बालक कृष्ण सभी आपदाओं से सुरक्षित रहे। गोपियाँ सोचने लगीं कि अवश्य ही उन्होंने पूर्व जन्मों में पुण्य कार्य किए होंगे, यज्ञ, दान, तपस्या, वृक्षारोपण और कुएँ खुदवाने जैसे, जिनके फलस्वरूप उन्हें यह दिव्य बालक प्राप्त हुआ। इन अद्भुत घटनाओं को देखकर नन्द महाराज को वासुदेव द्वारा पूर्व में कहे गए वचन स्मरण हो आए, जिसमें उन्होंने संकेत किया था कि यह बालक कोई साधारण शिशु नहीं, अपितु दिव्य स्वरूप है। इस प्रकार तृणावर्त का वध एक अलौकिक लीला के रूप में सबके सामने प्रकट हुआ।

3. धेनुकासुर वध बाल लीला- श्रीविष्णु पुराण के पंचम अंश के आठवें अध्याय में धेनकासुर वध का वर्णन किया गया है जिसमें बताया गया है कि एक दिन श्रीकृष्ण और बलराम गौएँ चराते हुए रमणीय तालवन पहुँचे, जहाँ धेनुक नामक गधे के रूप वाला दैत्य निवास करता था। यह दैत्य मांसाहारी था और वन में किसी को फल तोड़ने नहीं देता था। गोपों ने पके फलों की ओर संकेत कर कृष्ण-बलराम से उन्हें झाड़ने का अनुरोध किया। बलरामजी ने फल झाड़े और श्रीकृष्ण ने भी कुछ फल गिराए। गिरते फलों की आवाज सुनकर धेनुकासुर क्रोधित होकर आया और बलरामजी पर वार किया। बलरामजी ने उसके पैर पकड़ उसे आकाश में घुमा कर वृक्ष पर पटक दिया। वह मारा गया और उसके साथ आए अन्य गर्दभासुरों को भी श्रीकृष्ण और बलराम ने मार डाला। इस प्रकार पूरा तालवन असुरों से मुक्त हो गया। फल गिरने लगे और गौएँ बिना भय के वहाँ चरने लगीं। तबसे तालवन सुरक्षित और सुंदर बन गया, और गोप-गोपियाँ भी वहाँ आनंदपूर्वक विचरण करने लगे। कृष्ण द सुप्रीम पर्सनैलिटी ऑफ गॉडहेड पंद्रहवें अध्याय में श्री कृष्ण और बलराम अपनी बाल्यावस्था के पश्चात वृंदावन में ग्वालबालों के साथ गायों की देखभाल के दायित्व में लगे। वे बांसुरी बजाते हुए फूलों-फलों से भरे दिव्य वनों में विचरण करते। पक्षियों की चहचहाहट, ठंडी हवाएँ और झीलें वातावरण को पावन बनाती थीं। वृक्ष झुककर उनके चरणस्पर्श करते, जो पूर्व जन्मों के साधक थे। भौंरे कीर्तन करते, मोर नाचते, मृग स्वागत करते। सम्पूर्ण वृंदावन उनकी उपस्थिति से पवित्र हो जाता। यमुना तट पर वे गायों संग आनंद से खेलते, मित्रों संग हँसते, विश्राम करते। कृष्ण का व्यवहार सरल ग्वालबाल जैसा था, किंतु उनकी दिव्यता हर क्रिया में प्रकट होती थी। श्रीकृष्ण ने स्वयं को सामान्य ग्वालबाल की तरह प्रस्तुत किया, परंतु समय-समय पर अपनी दिव्यता और शक्ति का परिचय भी दिया। तालवन के फलों की बात सुनकर जब मित्रों ने राक्षस धेनुकासुर के भय को बताया, तब कृष्ण-बलराम ने समाज की रक्षा हेतु उस संकट को स्वीकारा। वे मित्रों संग तालवन पहुँचे, जहाँ बलराम ने पेड़ हिलाए। इससे क्रोधित होकर

धेनुकासुर आया और बलराम पर हमला किया। बलराम ने उसे पकड़कर पेड़ पर पटक दिया, जिससे उसकी मृत्यु हो गई। बलराम की यह अद्भुत शक्ति उनके अनंत शेषनाग अवतार रूप को दर्शाती है। कृष्ण और बलराम ने धेनुकासुर के सभी गधे रूपी साथियों को पराजित कर ताड़ के पेड़ों पर फेंक दिया। देवताओं ने पुष्पवर्षा की और स्तुति की। कुछ ही समय में तलवन फिर से सुरक्षित हो गया, लोग फल लेने और जानवर घास चरने आने लगे। इस लीला का कीर्तन पुण्यदायक है।

4. कालिय नाग बाल लीला- श्रीविष्णु पुराण के पंचम अंश के सातवें अध्याय में कालिय नाग दमन की कथा वर्णित है। श्रीकृष्ण, बलराम के बिना, वृंदावन में यमुनातट पहुँचे, जहाँ कालिय नाग का विषैला कुण्ड था। यमुना का जल अत्यंत विषाक्त था, जिससे वृक्ष जल रहे थे और पक्षी मर रहे थे। श्रीकृष्ण ने विचार किया कि यह दुष्ट नाग गरुड़ से पराजित होकर यहाँ आकर यमुना को विषैला बना चुका है, जिससे ब्रजवासियों के लिए जल अनुपयोगी हो गया है। उन्होंने उसका दमन आवश्यक समझा और कदम्ब वृक्ष से कुण्ड में कूद पड़े। कृष्ण के कूदते ही यमुना का जल उछला, और वृक्ष जल उठे और नागराज अपनी सेना व पत्नियों सहित प्रकट हुआ। नागों ने कृष्ण को घेर लिया, विषैले दाँतों से काटा और अपने फनों से कसकर बाँध लिया। यह देखकर गोपियाँ घबरा गईं और गोकुल लौटकर यशोदा, नन्द बाबा व अन्य गोपों को खबर दी। सभी व्याकुल होकर दौड़े और देखा कि कृष्ण नाग के बंधन में मूर्छित हैं। यशोदा, नन्द बाबा स्तब्ध रह गए और गोपियाँ विलाप करने लगीं कि कृष्ण के बिना गोकुल व्यर्थ है। तब बलरामजी ने कहा– "हे देवेश! आप अनन्त व वेदस्वरूप हैं। आप मानव-भाव त्यागकर इस दुष्ट नाग का दमन कीजिए और अपने दुखी बंधुओं की रक्षा कीजिए।" बलरामजी के स्मरण कराने पर श्रीकृष्ण मुस्कराते हुए सर्प के बंधन से मुक्त हुए और उसके फण पर चढ़कर नृत्य करने लगे। उनकी चरणध्वनि से कालिया मूर्छित हो गया और उसके मुख से रक्त बहने लगा। यह देखकर नागपत्नियाँ करुणा से भर श्रीकृष्ण से प्रार्थना करने लगीं "हे देवेश! आप सर्वज्ञ, परमेश्वर और अचिन्त्य ज्योति स्वरूप हैं। आप कालिय के अपराध को क्षमा कीजिए, वह आपके सामने बलहीन है और अब मरने वाला है। कृपा करके इसे जीवनदान दें।" कालिय नाग ने श्रीकृष्ण की महिमा स्वीकार करते हुए कहा मेरी चित्तवृत्ति केवल आपकी कृपा की ओर लगी है। अत: मुझ पर प्रसन्न हों। विनम्र होकर कालिय ने कहा–हे केशव! मेरा जन्म क्रूर सर्पजाति में हुआ है, अत: यह स्वभाववश था। आपने जिस जाति, रूप और गुण से मुझे बनाया, उसी अनुसार मैंने आचरण किया। यदि मैंने कोई अन्याय किया हो तो दण्ड उचित है। परंतु आपने जो दण्ड दिया है, वह मेरे लिए सर्वोत्तम है। दूसरों का दिया वरदान भी इतना प्रिय नहीं। अंत में उसने कहा, 'हे अच्युत! आपने मेरा विष और अहंकार नष्ट कर दिया, मेरे पुरुषार्थ का मर्दन किया। अब मुझे जीवनदान दें और आदेश दें कि मैं आगे क्या करूँ। श्रीकृष्ण ने कालिय को यमुना छोड़ समुद्र जाने का आदेश दिया और वरदान दिया कि उनके चरणचिह्नों के कारण गरुड़ उसे नहीं सताएगा। कालिय अपने परिवार सहित चला गया। जबकि कृष्ण द सुप्रीम पर्सनैलिटी ऑफ गॉडहेड सोलहवें अध्याय में कालिया को वश में करने का वर्णन किया है कि भगवान कृष्ण को पता चला कि कालिय नाग के विष से यमुना का जल प्रदूषित हो गया है, जिससे पूरा क्षेत्र

जहरीला हो गया था। पक्षी भी मर रहे थे और पेड़-पौधे सूख गए थे। यह देखकर कृष्ण ने कदम्ब वृक्ष से कूदकर विषैली झील में कूदने का निश्चय किया। कदम्ब वृक्ष, जो भगवान कृष्ण के चरणकमलों से जीवित हो गया था, कृष्ण की भुजाओं की ताकत से नदी उफन उठी, और यह उनका शक्तिशाली प्रदर्शन था। जब कृष्ण यमुना में नदी में गये तो भयंकर ध्वनि उत्पन्न करते हैं, तो कालिया नाग यह समझता है कि यह आक्रमण है। कृष्ण के सुंदर रूप को देखकर कालिय क्रोधित हो जाता है और उन्हें अपनी कुंडलियों से लपेट लेता है। कृष्ण के संकट में पड़ते ही वृन्दावन के ग्वालबाल, नन्द-यशोदा और पशु अत्यंत भयभीत हो उठे। सभी चिंतित थे, आँसू बहा रहे थे और सोच रहे थे कि आज शायद कृष्ण पराजित हो जाएँ। उनका जीवन केवल कृष्ण पर निर्भर था। इस बीच, बलराम मुस्कुराते हुए खड़े थे, क्योंकि वे जानते थे कि कृष्ण किसी भी संकट से उबरने में सक्षम थे। दो घंटे तक श्रीकृष्ण कालिया नाग की कुंडलियों में फंसे रहे, परंतु जब उन्होंने देखा कि वृंदावनवासी शोक में डूबे हैं, तो उन्होंने स्वयं को मुक्त कर लिया। कालिया ने क्रोधित होकर अपने फन फैलाए, विषैले धुएं और ज्वालाएँ उगलते हुए कृष्ण पर हमला किया। कृष्ण ने चपलता से कालिया को थकाया और उसके फनों पर नृत्य किया। देवताओं ने पुष्पवर्षा की। चरणों के प्रहार से कालिया निर्बल हो गया। उसने कृष्ण का वध करने का प्रयास किया, पर असफल रहा। अंततः वह आत्मसमर्पण कर श्रीकृष्ण को परम पुरुषोत्तम मानने लगा। कालिया की पत्नियाँ अस्त-व्यस्त वस्त्रों में भगवान श्रीकृष्ण के चरणों में गिरकर विनम्रता से अपने पति के लिए क्षमा याचना करने लगीं। उन्होंने कहा कि भगवान का दण्ड और कृपा एक समान कल्याणकारी हैं, वे चकित थीं कि पापी कालिया को भगवान के चरणों की धूल कैसे प्राप्त हुई, जो महान संत भी कठिन तप से चाहते हैं। उन्होंने श्रीकृष्ण की अहेतुक कृपा की सराहना की, जो तामसिक जीवों को भी भक्ति का बीज दे सकती है। नागपत्नियाँ भगवान श्रीकृष्ण से कालिया के लिए क्षमा याचना करती हैं और उन्हें ब्रह्मंड का सर्वोच्च नियंत्रक मानती हैं। वे कहती हैं कि सभी जीव भगवान के अंश हैं और उनके आदेशों से मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं। उनकी प्रार्थना से प्रसन्न होकर श्रीकृष्ण ने कालिया को क्षमा कर उसकी माया का नाश किया और यमुना छोड़ समुद्र जाने का आदेश दिया। उन्होंने यमुना को शुद्ध किया और घोषणा की कि अब कालिया से कोई भय नहीं। गरुड़ भी उसे नहीं सताएगा। जो यह कथा सुनेगा, वह सर्पभय से मुक्त होगा। श्रीविष्णु पुराण में कालिय नाग लीला को सामाजिक और पर्यावरणीय संकट के संदर्भ में प्रस्तुत किया गया है, जहाँ यमुना का विषाक्त होना, जीवों की मृत्यु और कृष्ण का निर्णायक कदम ब्रजवासियों की भलाई हेतु धर्मिक उत्तरदायित्व को दर्शाता है। यह संस्करण नैतिकता और समाज कल्याण पर बल देता है। वहीं इस्कॉन की पुस्तक कृष्ण द सुप्रीम पर्सनैलिटी ऑफ गॉडहेड में यह लीला भगवान के ऐश्वर्य और भक्ति की महिमा का प्रदर्शन है। कदम्ब वृक्ष का पुनर्जीवन, नदी का उफान और कृष्ण की शक्तिशाली भुजाएँ दिव्यता को उजागर करती हैं। इस्कॉन का दृष्टिकोण आध्यात्मिक महिमा और भक्ति पर केंद्रित है। दोनों में समानता यह है कि कृष्ण संकट में ब्रज की रक्षा करते हैं और जीवन पुनः संभव बनाते हैं, परंतु श्रीविष्णु पुराण इसे अधिक सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ में प्रस्तुत करता है, जबकि इस्कॉन ग्रंथ इसे कृष्ण की दिव्यता का प्रतीक मानता है।

5. प्रलम्बासुर वध बाल लीला- श्रीविष्णु पुराण के पंचम अंश के नवें अध्याय में प्रल्बासुर वध का वर्णन किया है जिसमें बताया गया है धेनुकासुर का वध करके वासुदेवपुत्र श्रीकृष्ण और बलराम प्रसन्नचित्त होकर भाण्डीरवन के विशाल वटवृक्ष के नीचे पहुँचे। वे कंधे पर गौ-बाँधने की रस्सी डाले, बनमाला और रंगीन वस्त्र पहने हुए थे। सिंहनाद करते, वृक्षों पर चढ़ते और गाते हुए वे बछड़ों की भाँति सुशोभित दिख रहे थे। उनके वस्त्र श्वेत और श्याम मेघों से युक्त, इन्द्रधनुष सदृश्य प्रतीत हो रहे थे। समस्त लोकपालों के स्वामी होने के बावजूद वे मनुष्यधर्म का पालन करते हुए लोकिक लीलाओं में लीन थे। इसी बीच, प्रलम्बासुर नामक एक दैत्य ग्वालबाल के वेश में छिपकर वहाँ आया। उसने कृष्ण को अजेय समझकर बलराम को मारने की योजना बनाई। तब ग्वालबालों ने 'हरिणाक्रीड़न' नामक खेल खेला, जिसमें दो-दो बालक एक-दूसरे को कंधे पर उठाकर दौड़ते थे। कृष्ण ने श्रीदाम को और बलराम ने प्रलम्बासुर को हराया। हारे हुए बालक विजेताओं को भाण्डीरवट तक ले गए। परंतु प्रलम्बासुर बलराम को कंधे पर बिठाकर आकाश की ओर तेज गति से भागा। उसका शरीर विशाल, विकराल, मुकुट और आभूषणों से सुसज्जित था। बलराम ने कृष्ण से कहा, "भैया! यह दैत्य मुझे लिए जा रहा है, बताओ क्या करूँ?" कृष्ण ने मुस्कुराकर बलराम को अपने दिव्य स्वरूप की स्मृति दिलाई और समझाया कि वे दोनों ही इस संसार के सृष्टिकर्ता और पालनकर्ता हैं, जिनका शरीर ब्रह्मंड के अंगों से निर्मित है। उन्होंने बलराम को प्रेरित किया कि वे इस दैत्य का नाश करें। क्रोधित बलराम ने प्रलम्बासुर के सिर पर प्रहार किया, जिससे उसके दोनों नेत्र निकल गए और वह रक्त वमन करता हुआ गिर पड़ा। गोकुल के बालक और गोप उसका वध देखकर 'साधु, साधु' कहकर बलराम की प्रशंसा करने लगे। अंत में, बलराम और कृष्णचन्द्र प्रसन्न होकर गोकुल लौट आए। जबकि कृष्ण द सुप्रीम पर्सनैलिटी ऑफ गॉडहेड अट्ठारहवें अध्याय में इस लीला का वर्णन किया गया। एक बार श्रीकृष्ण और बलराम जब अपनी बाल लीलाओं में लीन थे, तभी प्रलम्बासुर नामक एक राक्षस ग्वालबाल का वेश धारण कर उनके दल में सम्मिलित हो गया। वह दोनों भाइयों का अपहरण करना चाहता था। श्रीकृष्ण सर्वज्ञ थे, अतः उन्होंने उसकी पहचान कर ली, परंतु मित्र रूप में स्वीकार करते हुए बोले, "हे मित्र, अच्छा हुआ कि तुम हमारे खेल में सम्मिलित हुए।" फिर कृष्ण ने सबको द्वन्द्व युद्ध के लिए जोड़ों में बाँट दिया। नियम था कि जो हारेगा, वह विजयी को पीठ पर उठाएगा। खेल प्रारम्भ हुआ और वे भाण्डीरावण वन की ओर बढ़े। बलराम का दल विजयी रहा। उसी समय प्रलम्बासुर ने बलराम को उठाया और दूर वन की ओर भाग गया। दूर ले जाकर उसने विशाल राक्षसी रूप धारण कर लिया, उसका शरीर बादलों तक फैला, आँखें अग्नि-सी जलती थीं और दाँत नुकीले थे। पहले बलराम चकित हुए, फिर तुरंत स्थिति समझ गए। उन्होंने प्रलम्बासुर के सिर पर घूँसे से प्रहार किया, जिससे वह गिर पड़ा और उसके मुँह से रक्त बहने लगा। राक्षस की मृत्यु पर भयंकर ध्वनि हुई। ग्वालबाल वहाँ पहुँचे और बलराम की स्तुति करने लगे "बहुत अच्छा, बहुत अच्छा।" सभी ने उन्हें प्रेम से गले लगाया और बधाइयाँ दीं। विष्णु पुराण और कृष्ण द सुप्रीम पर्सनैलिटी ऑफ गॉडहेड दोनों में प्रस्तुति में भिन्नता है। विष्णु पुराण में कृष्ण और बलराम की बाल लीलाओं, उनके वस्त्र, बनमाला, और वृक्षों पर चढ़ते हुए दृश्य को

अत्यंत चित्रात्मक रूप में प्रस्तुत किया गया है। कृष्ण द्वारा बलराम को उनका दिव्य स्वरूप याद दिलाना इस ग्रंथ की विशेषता है, जिससे कथा में आध्यात्मिक गहराई आती है। वहीं, कृष्ण द सुप्रीम पर्सनैलिटी अ, फ ग, डहेड में बलराम की वीरता और प्रलम्बासुर के विकराल रूप का स्पष्ट और प्रभावशाली वर्णन मिलता है। कृष्ण की सर्वज्ञता, राक्षस की पहचान और मित्रता का अभिनय भी इस संस्करण को रोचक बनाते हैं। दोनों रूपों में बालकों के आदर्श रूप में कृष्ण–बलराम की दिव्यता उजागर होती है।

समाजशास्त्रीय विश्लेषण

पूतना वध- पूतना वध की कथा केवल दैत्यवध नहीं है, यह उस सामाजिक मानसिकता का प्रतिनिधित्व करती है जहाँ बालकों की रक्षा को समुदाय की सामूहिक जिम्मेदारी माना जाता है और संकट आने पर समाज एकजुट होकर प्रतिक्रिया देता है। समाज की संरचना में सामूहिक सुरक्षा, सतर्कता और नैतिक बोध भी दर्शाती है यह लीला मातृत्व की अवधारणा को भी विस्तारित करती है जहाँ एक राक्षसी भी कृष्ण को दूध पिलाने के कारण 'माँ' की श्रेणी में आती है, जिससे मातृत्व एक जैविक नहीं बल्कि भावनात्मक–सांस्कृतिक तत्व बन जाता है। पूतना वध सामूहिक आस्था इस रूप में प्रकट होती है कि संकट के समय वे भगवान कृष्ण की ओर निहारते हैं और जब वे देखते हैं कि बालक कृष्ण जीवित हैं और पूतना मारी गई है, तो उनका विश्वास और गहरा हो जाता है। इस प्रकार यह कथा धार्मिक विश्वास को एक सामूहिक अनुभव बनाती है, जो समुदाय में आपसी विश्वास, धार्मिक परंपराओं और सांस्कृतिक मूल्यों को सुदृढ़ करती है। पश्चिमी समाज में जहाँ ईश्वर की छवि दंड देने वाले की होती है, वहाँ इस कथा के माध्यम से एक करुणामयी और समर्पण–सक्षम भगवान की छवि प्रस्तुत की जाती है जिससे श्रीकृष्ण वैश्विक आध्यात्मिक संवाद के केंद्र में आ जाते हैं।

तृणावर्त वध लीला- इस लीला में जब तृणावर्त बालक कृष्ण को उठाकर ले जाता है, तब सम्पूर्ण वृंदावन समुदाय विशेषकर गोपियाँ, माता यशोदा के साथ व्याकुल हो उठती हैं और बालक की खोज में लग जाती हैं। यह दृश्य स्पष्ट करता है कि प्राचीन भारतीय समाज में बालकों की देखभाल केवल माता–पिता की जिम्मेदारी नहीं थी, बल्कि संपूर्ण समुदाय उस बालक की सुरक्षा एवं भलाई में सहभागी होता था। यह सामूहिक पालन की परंपरा को दर्शाता है। जब तृणावर्त मारा जाता है और बालक कृष्ण सकुशल मिलते हैं, इस विश्वास के साथ ही सभी सोचते है कि उनके पुण्य कर्मों के फलस्वरूप यह बालक उन्हें प्राप्त हुआ है। यह सामूहिक नैतिकता और धार्मिक आस्था की अभिव्यक्ति है जो समाज में नैतिक अनुशासन और धर्मपरायणता को प्रेरित करती है। यह लीला सुरक्षा बनाम संकट की सार्वभौमिक अवधारणा को उजागर करती है, जिससे वैश्विक समाज कृष्ण को एक सांस्कृतिक नायक के रूप में देखता है।

धेनुकासुर वध- धेनुकासुर वध की लीला यह संकेत देती है कि जब कोई संकट आता है तब सामाजिक नेतृत्व, यहाँ कृष्ण और बलराम के रूप में, उसका समाधान करते हैं। वे मित्रों के साथ मिलकर उस असुर से संघर्ष करते हैं, यह कथा एक आदर्श सामाजिक नेतृत्व, सहयोग और सामाजिक न्याय की मिसाल बन जाती है। धेनुकासुर वध उनके लिए केवल असुर मरण नहीं, बल्कि भय और असुरक्षा से मुक्ति का प्रतीक बनता है। यह

सामूहिक आस्था धार्मिक नेतृत्व को नैतिक उत्तरदायित्व सौंपती है और समाज के आचरण को दिशा देती है। इस्कॉन ने इस लीला को समकालीन वैश्विक विमर्शों में–जैसे सतत विकास सार्वजनिक संसाधनों की पहुँच, और पर्यावरणीय संतुलन, के प्रतीक रूप में देखी जाती है।

कालिया नाग लीला- इस कथा में कालिया नाग के विषैले पानी से यमुना का प्रदूषण, वृक्षों और पक्षियों का मरना, समाज के लिए संकट का रूप ग्रहण करता है। श्रीकृष्ण का यमुना में कूदकर कालिया नाग का दमन करना केवल एक व्यक्तिगत विजय नहीं, बल्कि समाज की सामूहिक सुरक्षा और पर्यावरण संरक्षण का प्रतीक है। कृष्ण संकट में फंसे थे, तो गोपियाँ और अन्य लोग व्याकुल हो जाते हैं, लेकिन उनका यह विश्वास कि कृष्ण उनसे अलग नहीं हो सकते, इस कथा में एक गहरे सामूहिक विश्वास और श्रद्धा को उजागर करता है। कृष्ण का नाग को पराजित करना, उनकी दिव्य शक्ति का प्रदर्शन है, और यह विश्वास का प्रतीक है कि जब तक कृष्ण का मार्गदर्शन है, तब तक कोई भी संकट समाज को नष्ट नहीं कर सकता। यह कथा न केवल भारतीय संस्कृति में, बल्कि विश्वभर में भक्ति और पर्यावरणीय चेतना के संदेश को फैलाती है। अराजकता, विषाक्तता और बुराई पर विजय एक सार्वभौमिक संदेश के रूप में व्यक्त होता है।

प्रलम्बासुर वध- प्रलम्बासुर वध लीला में ग्वालबालों की भागीदारी सामाजिक सामूहिकता को दर्शाती है बलराम पर संकट आने पर कृष्ण न केवल स्थिति को समझते हैं, बल्कि बलराम को उनके दिव्य स्वरूप की स्मृति भी दिलाते हैं। यह केवल एक पौराणिक प्रेरणा नहीं, बल्कि यह दर्शाता है कि समाज को समय-समय पर अपने मूल्यों, शक्तियों और पहचान की स्मृति कराना आवश्यक है। यह लीला मानव मूल्य आधारित शिक्षण के रूप में प्रस्तुत करती है। बचपन की मासूमता में भी विवेक, साहस और निर्णायक शक्ति होती है।

आधुनिक समाज में बाल लीलाओं की प्रासंगिकता- भारतीय सांस्कृतिक परंपरा में श्रीकृष्ण की बाल लीलाएँ केवल धार्मिक आख्यान नहीं, बल्कि समाज में बालकों की भूमिका, अधिकारों और संरक्षण की गहन अभिव्यक्ति हैं। आज के समय में, जब बाल अधिकार वैश्विक विमर्श का हिस्सा बन चुके हैं, तब इन लीलाओं का पुनर्पाठ समाज को नई दृष्टि देता है। श्रीकृष्ण की लीलाएँ जैसे धेनुकासुर, कालिय नाग, और प्रलम्बासुर वध यह दर्शाती हैं कि बालक केवल संरक्षित नहीं, समर्थ भी होते हैं। यह दृष्टिकोण आधुनिक बाल अधिकारों की उस अवधारणा से मेल खाता है, जिसमें बालकों को स्वतंत्र, विचारशील और निर्णय लेने योग्य माना गया है। कृष्ण का ग्वालबालों और गोपियों से संवाद करुणा, समानता और सहभागिता का उदाहरण है, जो आज के समाज में बालकों के साथ सम्मानजनक व्यवहार की प्रेरणा देता है। प्ैज्ञब्ब्छ जैसी संस्थाएँ इन लीलाओं को आधुनिक संदर्भ में प्रस्तुत कर बच्चों के व्यक्तित्व विकास और नैतिक शिक्षा का माध्यम बना रही हैं। अतः श्रीकृष्ण की बाल लीलाएँ आज के समाज के लिए सांस्कृतिक पुनर्संरचना, सामाजिक चेतना और मूल्य आधारित जीवनशैली का स्रोत बनती हैं, जिससे अधिक संवेदनशील और समावेशी समाज की कल्पना साकार हो सकती है।

शोध पद्धति- यह शोध एक गुणात्मक एवं वर्णनात्मक पद्धति पर आधारित है, जिसमें समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से श्रीकृष्ण की बाल लीलाओं का विश्लेषण किया गया है। इसमें द्वितीयक स्रोतों श्रीविष्णु पुराण तथा इस्कॉन द्वारा प्रचारित ग्रंथ कृष्ण द सुप्रीम पर्सनैलिटी ऑफ गॉडहेड के माध्यम से विश्लेषण किया गया है। जिसमें श्रीकृष्ण की प्रमुख बाल लीलाओं को चुना उनमें वर्णित प्रतीकों, संवादों, घटनाओं एवं पात्रों का समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से विश्लेषण किया गया है और साथ ही यह समझने का प्रयास किया गया कि ये लीलाएँ किस प्रकार सामाजिक प्रभाव और सामूहिक आस्था के स्वरूप और वैश्विक प्रसार के माध्यम से आध्यात्मिक जागरूकता का निर्माण करती हैं।

शोध की सीमाएँ- यह शोध श्रीकृष्ण की बाल लीलाओं का समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से अध्ययन करता है,यद्यपि यह विषय समकालीन शोध के लिए अत्यंत प्रासंगिक है, तथापि इसकी कुछ सीमाएँ स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती हैं। यह अध्ययन मुख्यत: दो स्रोतों श्रीविष्णु पुराण और इस्कॉन द्वारा प्रकाशित कृष्ण द सुप्रीम पर्सनैलिटी ऑफ गॉडहेड पर आधारित है। इससे अन्य महत्वपूर्ण धार्मिक ग्रंथों जैसे भागवत पुराण, महाभारत, हरिवंश पुराण आदि की उपेक्षा हुई है, जो बाल लीलाओं के विविध और गहन आयाम प्रस्तुत करते हैं।यह शोध सैद्धांतिक स्वरूप का है, जिसमें अनुभवजन्य अध्ययन का अभाव है।

निष्कर्ष- श्रीकृष्ण की बाल लीलाएं भारतीय समाज के लिए केवल धार्मिक आख्यान नहीं हैं, बल्कि यह जीवन की रक्षा, समाज संगठन, सामूहिक आस्था और आत्मिक विकास के उपकरण हैं। विष्णु पुराण इन लीलाओं को परंपरागत सांस्कृतिक चेतना में स्थापित करता है, जबकि कृष्ण द सुप्रीम पर्सनैलिटी ऑफ गॉडहेड पुस्तक उन्हें वैश्विक और समसामयिक समाज की आवश्यकता अनुसार ढालता है। इन दोनों ही दृष्टिकोणों से स्पष्ट होता है कि भक्ति पर आधारित लीलाएं न केवल आध्यात्मिक अनुभव का माध्यम हैं, बल्कि समाजशास्त्रीय दृष्टि से भी अत्यंत संगठक, प्रेरणादायक और लोक-कल्याणकारी,समाज सेवा और नैतिक पुनर्निर्माण में भी संलग्न हैं। ये लीलाएँ सामूहिक स्मृतियों में संग्रहीत होती हैं, तो वे सामाजिक सामंजस्य, एकता सहयोग और धार्मिक स्वतंत्र के माध्यम से समाज में एकता और स्थिरता की नींव रखते हैं। प्रभुपाद ने कृष्ण की इन लीलाओं को समाज में एक आदर्श जीवन प्रणाली के रूप में स्थापित करने का प्रयास किया- जहाँ धर्म, नीति, आनंद और सेवा चारों तत्व सहज रूप में समाहित हो जाते हैं। जहाँ विष्णु पुराण लीलाओं को सांस्कृतिक विरासत के रूप में संरक्षित करता है, वहीं इस्कॉन की प्रस्तुति उन्हें सार्वभौमिक मूल्य के रूप में प्रचारित करती है। विष्णु पुराण की लीलाएं मूलत: धार्मिक नैतिकता की स्थापना पर बल देती हैं। यहाँ श्रीकृष्ण का हर कार्य अधर्म के विरुद्ध धर्म की स्थापना का माध्यम है। पूतना-वध, तर्णाव्रत वध, धेनकासुर वध और कालिया नाग लीला- ये सब समाज में यह सन्देश देती हैं कि ईश्वर धर्म के साथ हैं, और अंतत: अधर्म का विनाश निश्चित है। इस्कॉन का दृष्टिकोण थोड़ा अधिक व्यावहारिक और सार्वभौमिक है। प्रभुपाद ने इन लीलाओं के माध्यम से भक्ति में नैतिकता को केंद्र में रखा। सेवा, प्रेम और त्याग को व्यक्तिगत जीवन और सामाजिक व्यवहार दोनों में अनिवार्य बताया गया। यह नैतिकता आत्मकेंद्रित नहीं, बल्कि समाज केंद्रित होती है। विष्णु पुराण में सामूहकि आस्था एक सांस्कृतिक धारा के रूप में अस्तित्व

में आता है– जहाँ समाज की सामूहिक स्मृति में ये पात्र रच–बस गए हैं, जिससे समाज में धार्मिक आस्था स्थिर रहती है। वहीं इस्क, न ने इन लीलाओं के माध्यम से एक संगठित, वैश्विक सामूहिक आस्था का निर्माण किया है। ये सामूहिक आस्था न केवल आध्यात्मिक चेतना बढ़ाते हैं, बल्कि सामाजिक सेवा के माध्यम से भी योगदान देते हैं।

अत: यह स्पष्ट होता है कि श्रीकृष्ण की बाल लीलाओं का तुलनात्मक समाजशास्त्रीय विश्लेषण न केवल सांस्कृतिक स्थायित्व और सामूहिक आस्था को समझने में सहायक है, बल्कि यह वैश्वीकरण के संदर्भ में धार्मिक कथाओं की पुनर्व्याख्या के लिए भी एक सशक्त आधार प्रदान करता है। ये लीलाएँ समाज के लिए सांस्कृतिक आदर्श, नैतिक प्रेरणा और आध्यात्मिक चेतना का समन्वित स्रोत हैं।

संदर्भ सूची-

- Kumar, Indrajit. "Leela Of Bala Krishna Through Banker's Lens : Reading 'The Dance Of Govinda'. Elementary Education Online, (2021). Vol 20 (Issue 6) Pg. 1-9
- Srimad Bhagavatam, Canto 10. Translated by A.C. Bhaktivedanta Swami Prabhupada. The Bhaktivedanta Book Trust (BBT).
- Bhaktivedanta, A. C. Krsna: The Supreme Personality of Godhead. The Bhaktivedanta Book Trust, (1970). Pg.55 - 151
- Vishnu Purana, Book 5. Translation by H.H. Wilson. Pg. 355
- ShreeVishnu purana, Translation by shreemunilal gupta pg. 367 - 405
- ISKCON India. Official Website & Cultural Outreach Publications.
- Pattanaik, Devdutt. Myth =Mithya: A Handbook of Hindu Mythology. Penguin Books. (2006). Pg.81
- Durkheim, Émile. The Elementary Forms of Religious Life. (1912). pg. 47
- Bryant, Edwin F. Krishna: A Sourcebook. Oxford University Press. (2007).
- Radhakrishnan, S.. The Bhagavadgita. HarperCollins Publishers. (1948).
- https://srujanee.in/view/shree-krishan-baal-leela-aaTw9gRH
- https://thepunjabpulse.com/ gekjs&thou&esa&श्री- कृष्ण
- https://ravivardelhi.com/shri-krishna-a-wonderful-and-unique-national-hero-of-our-culture/
- https://chatgpt.com/

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 42, Hindi Edition, Year-21, Jan.- June 2025

उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के अभिभावक शैली का उनके शैक्षिक शिथिलता पर प्रभाव का अध्ययन

•रितु विश्वकर्मा
••स्वाती पाण्डेय

सारांश- प्रस्तुत शोध अध्ययन का उद्देश्य उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के अभिभावक शैली का उनके शैक्षिक शिथिलता पर प्रभाव का अध्ययन करना है। प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्रतिदर्श का चयन छत्तीसगढ़ राज्य के दुर्ग जिले के शासकीय एवं अशासकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों को लिया गया है। इन विद्यालयों से गैरआनुपातिक स्तरीकृत यादृच्छिक विधि द्वारा 600 विद्यार्थियों का चयन किया गया जिसमें 300 छात्राएं एवं 300 छात्र है। शोध में डॉ. मधु गुप्ता एवं डिम्पल मेहतानी (2017) द्वारा निर्मित अभिभावक शैली मापनी (PSS-GMMD) तथा अशोक के कालिया एवं मंजू यादव (2015) द्वारा निर्मित शैक्षिक शिथिलता मापनी (APS-KAYM) का प्रयोग किया गया है। शोध अध्ययन से प्राप्त आकड़ों के सांख्यिकीय विश्लेषण हेतु त्रिदिश प्रसरण विश्लेषण (222), मध्यमान, प्रमाणिक विचलन का प्रयोग किया गया है। निष्कर्ष में पाया गया कि उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के अभिभावक शैली का उनके शैक्षिक शिथिलता पर मुख्य प्रभाव सार्थक नहीं पाया गया। लिंग का उनके शैक्षिक शिथिलता सार्थक प्रभाव पाया गया। शाला प्रकार का उनके शैक्षिक शिथिलता सार्थक प्रभाव पाया गया।

मुख्य शब्द- अभिभावक शैली, शैक्षिक शिथिलता, उच्चतर माध्यमिक विद्यालय

प्रस्तावना- शिक्षा मानव जीवन का आधार है, जो ज्ञान की वृद्धि के साथ–साथ व्यक्तित्व निर्माण, सामाजिक उत्तरदायित्व और भावनात्मक परिपक्वता का भी मार्ग प्रशस्त करता है। उच्चतर माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थी जीवन एक निर्णायक मोड़ पर होता है, जहाँ शैक्षिक सफलता या असफलता भविष्य की दिशा तय करती है। इस संदर्भ में विद्यार्थियों की शैक्षिक शिथिलता एक गंभीर चिंता का विषय बनकर उभर रही है, जो उनके शैक्षणिक प्रदर्शन, रुचि, नियमितता तथा आत्मप्रेरणा में कमी के रूप में परिलक्षित होती है। इस

• शोधार्थी
•• प्राध्यापक, भारती विश्वविद्यालय, दुर्ग, (छ.ग.)

शिथिलता के अनेक कारण हो सकते हैं, परंतु अभिभावक शैली इसका एक महत्वपूर्ण सामाजिक-मनौवैज्ञानिक पक्ष है, जो प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से विद्यार्थियों के अध्ययन व्यवहार को प्रभावित करती है। अभिभावकों का पालन-पोषण का तरीका, संवाद शैली, अनुशासन, प्रोत्साहन तथा भावनात्मक सहयोग छात्रों के मानसिक और शैक्षिक विकास में निर्णायक भूमिका निभाते हैं। अत: यह अत्यंत आवश्यक हो जाता है कि उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों में शैक्षिक शिथिलता के संदर्भ में अभिभावक शैली की भूमिका का गहन विश्लेषण किया जाए, जिससे कि शिक्षकों, अभिभावकों और नीति-निर्माताओं को उचित दिशा-निर्देश प्रदान किया जा सके।

अभिभावक शैली- अभिभावक शैली पालन-पोषण की वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से माता-पिता बच्चों के व्यवहार और विकास को इस प्रकार नियंत्रित करते हैं कि वे एक सामाजिक रूप से स्वीकार्य जीवन जी सकें, अपने वातावरण के अनुरूप ढल सकें और अपने लक्ष्यों की प्राप्ति कर सकें। यह एक समाजीकरण प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से माता-पिता अपने बच्चों में सांस्कृतिक रूप से वांछनीय व्यवहार का विकास करते हैं।

दूसरे अर्थ में अभिभावक शैली से आशय उस विशिष्ट व्यवहारात्मक ढाँचे से है, जिसके अंतर्गत माता-पिता अपने बच्चों के साथ संवाद करते हैं, अनुशासन लागू करते हैं, स्नेह प्रकट करते हैं और बच्चों के सामाजिक, भावनात्मक एवं बौद्धिक विकास को आकार देते हैं। यह शैली माता-पिता के विश्वासों और मूल्यों को दर्शाने के साथ-साथ यह भी निर्धारित करती है कि वे अपने बच्चों से क्या अपेक्षाएँ रखते हैं और उन्हें किस प्रकार मार्गदर्शन प्रदान करते हैं। प्रत्येक माता-पिता की पालन-पोषण की शैली उनके सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक और पारिवारिक पृष्ठभूमि से प्रभावित होती है। अभिभावक शैली बच्चों के दैनिक जीवन पर प्रभाव डालती है, जिससे उनका आत्मविश्वास, स्वायत्तता, निर्णय-क्षमता और व्यवहारिकता प्रभावित होती है।

शैक्षिक शिथिलता- 'शैक्षिक शिथिलता' दो शब्दों से मिलकर बना है 'शैक्षिक' और 'शिथिलता'। 'शैक्षिक' शब्द शिक्षा से संबंधित है अर्थात विद्यालय, अध्ययन, अधिगम प्रक्रिया, ज्ञान अर्जन, पाठ्यक्रम, परीक्षा और शैक्षिक वातावरण से जुड़ी गतिविधियों को दर्शाता है। वहीं 'शिथिलता' का शाब्दिक अर्थ है किसी कार्य को विलम्ब करना, स्थगित करना, उत्साह या सक्रियता की कमी, धीमापन या क्रियाशीलता में गिरावट। जब इन दोनों शब्दों को मिलाकर देखा जाता है तो 'शैक्षिक शिथिलता' का शाब्दिक अर्थ होता है शिक्षा या अध्ययन से संबंधित गतिविधियों में रुचि की कमी, प्रयास में ढिलाई तथा सीखने की प्रक्रिया में सक्रिय सहभागिता का अभाव।

शैक्षिक शिथिलता उस स्थिति को इंगित करती है जहाँ विद्यार्थी अपनी शैक्षिक जिम्मेदारियों के प्रति उदासीन हो जाते हैं। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि विद्यार्थी में क्षमता नहीं होती, अपितु यह एक मानसिक या व्यवहारिक स्थिति होती है जिसमें वे पढ़ाई को लेकर निष्क्रिय, असावधान या आलसी हो जाते हैं। वे समय पर गृहकार्य नहीं करते, कक्षा में ध्यान नहीं देते, असाइनमेंट अधूरे छोड़ देते हैं, परीक्षा की तैयारी में कोताही बरतते हैं और सामान्यत: अध्ययन में निरंतरता नहीं बनाए रखते। यह शिथिलता अक्सर बाहरी और आंतरिक दोनों कारकों के प्रभाव से उत्पन्न होती है जैसे कि पारिवारिक वातावरण,

शैक्षिक दबाव, आत्मविश्वास की कमी, लक्ष्यहीनता, शिक्षण शैली की नीरसता, मानसिक तनाव या अवसाद।

इस प्रकार, शैक्षिक शिथिलता का शाब्दिक अर्थ केवल पढ़ाई में धीमापन नहीं है, बल्कि यह एक जटिल और बहुआयामी मनो-शैक्षिक स्थिति को दर्शाता है, जिसमें विद्यार्थी बौद्धिक रूप से सक्षम होने के बावजूद अपने शैक्षिक उत्तरदायित्वों का निर्वहन उचित रूप से नहीं कर पाते। यह स्थिति यदि समय रहते न सुधारी जाए, तो आगे चलकर यह छात्र की शैक्षिक उपलब्धि, आत्म-सम्मान और भविष्य की संभावनाओं को भी प्रभावित कर सकती है। अत: इसके मूल कारणों की पहचान करके समय रहते समाधान की दिशा में प्रयास करना आवश्यक हो जाता है।

संबंधित शोध अध्ययन-

मुमिना एवं अन्य (2022) ने केन्या राज्य के लामु शहर के शासकीय व अशासकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के अभिभावक शैली एवं शैक्षिक प्रदर्शन के मध्य संबंध का अध्ययन किया। इस अध्ययन में 247 विद्यार्थियों और 8 शिक्षकों का सुविधानुसार न्यादर्श विधि द्वारा चयन किया गया। अभिभावक शैली मापनी और शैक्षिक प्रदर्शन मापनी का प्रयोग कर आंकड़ों का संग्रह किया गया। पियर्सन पोस्ट-सहसंबंध द्वारा आंकड़ों का विश्लेषण किया गया। जिससे यह पाया गया कि अधिनायकवादी अभिभावक शैली का शैक्षिक प्रदर्शन के साथ नकारात्मक सहसंबंध होता है। यह भी पाया गया कि अनुमेयवादी अभिभावक शैली का भी शैक्षिक प्रदर्शन कि साथ नकरात्मक संबंध हैं।

ओकानसे एवं अन्य (2022) नें "विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का उनके शैक्षिक शिथिलता के प्रभाव" का अध्ययन किया। अध्ययन हेतु यू.के. के घाना शहर के 200 विद्यार्थियों का चयन सुविधाजनक यादृच्छिक विधि द्वारा किया गया। आंकड़ों के संग्रह हेतु शैक्षिक शिथिलता मापनी और बिग फाईव व्यक्तित्व मापनी का प्रयोग किया गया। अध्ययन में यह पाया गया कि व्यक्तित्व के आयाम जैसे खुलापन, बहिर्मुखी व सहमती शैक्षिक शिथिलता के साथ नकारात्मक रूप से सहसंबंधित थे अन्य आयामों के साथ सकारात्मक रूप से सहसंबंधित थे। साथ ही खुलापन आयाम विद्यार्थियों के शैक्षिक शिथिलता का निर्धारण सर्वाधिक रूप से करता हैं।

ग्रामाजे एवं अन्य (2020) ने विद्यार्थियों के व्यक्तिगत कुसमायोजन एवं आत्मसम्मान का उनके अभिभावक शैली और आक्रामकता के साथ संबंध का अध्ययन किया। अध्ययन हेतु स्पेन के 969 विद्यार्थियों का चयन यादृच्छिक विधि द्वारा किया गया। अध्ययन में यह पाया गया कि उग्र किशोरों में निम्नतम आत्मविश्वास और उच्च व्यक्तिगत कुसमायोजन होता है। आक्रामकता एवं गैर-आक्रामकता किशोरों में प्रारम्भ में एक समान सोच होती है जो धीरे-धीरे अभिभावक शैली के अनुसार बदलता है। यह भी पाया गया कि अच्छे अभिभावक शैली से विद्यार्थियों की उपलब्धि भी अच्छी होती है।

राजपक्ष (2021) नें "श्रीलंका के स्नातक विद्यार्थियों के शैक्षिक शिथिलता, आत्मप्रभावकारिता और अभिप्रेरणा का उनके शैक्षिक प्रदर्शन पर प्रभाव" का अध्ययन किया। अध्ययन हेतु 381 विद्यार्थियों का चयन यादृच्छिक विधि द्वारा किया गया।

आंकड़ों के संग्रह हेतु शैक्षिक शिथिलता मापनी, आत्म–प्रभावकारिता मापनी, अभिप्रेरणा मापनी एवं शैक्षिक प्रदर्शन मापनी का प्रयोग किया गया। अध्ययन में यह पाया गया कि शैक्षिक शिथिलता, आत्मप्रभावकारिता और अभिप्रेरणा के मध्य माध्यम के रूप में कार्य करता है। इसका सीधा प्रभाव शैक्षिक प्रदर्शन पर पड़ता है। यह भी पाया गया कि अत्म–प्रभावकारिता और अभिप्रेरणा का सीधा प्रभाव शैक्षिक शिथिलता पर नहीं पड़ता हैं।

समस्या कथन- उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के अभिभावक शैली का उनके शैक्षिक शिथिलता पर प्रभाव का अध्ययन।

शोध अध्ययन के उद्देश्य- उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के अभिभावक शैली, लिंग एवं शाला के प्रकार का उनके शैक्षिक शिथिलता पर मुख्य एवं अंत:क्रियात्मक प्रभाव का अध्ययन करना।

शोध अध्ययन की परिकल्पनाएँ -

परिकल्पना 1- उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के अभिभावक शैली, लिंग एवं शाला के प्रकार का उनके शैक्षिक शिथिलता पर मुख्य एवं अंत:क्रियात्मक प्रभाव सार्थक नही पाया जाएगा।

जनसंख्या- प्रस्तुत शोध अध्ययन में छत्तीसगढ़ राज्य के दुर्ग जिले के शासकीय एवं अशासकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों एवं उनमें अध्ययनरत छात्र एवं छात्राओं को जनसंख्या के रूप में लिया गया है।

न्यादर्श- प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्रतिदर्श का चयन छत्तीसगढ़ राज्य के दुर्ग जिले के शासकीय एवं अशासकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों को लिया गया है। इन विद्यालयों से गैरआनुपातिक स्तरीकृत यादृच्छिक विधि द्वारा 600 विद्यार्थियों का चयन किया गया जिसमें 300 छात्राएं एवं 300 छात्र है।

उपकरण-

- शोध में डॉ. मधु गुप्ता एवं डिम्पल मेहतानी (2017) द्वारा निर्मित अभिभावक शैली मापनी (PSS-GMMD) का प्रयोग किया गया है।
- शोध में अशोक के कालिया एवं मंजू यादव (2015) द्वारा निर्मित शैक्षिक शिथिलता मापनी (APS-KAYM) का प्रयोग किया गया है।

प्रयुक्त सांख्यिकी विधियाँ- प्रस्तुत शोध अध्ययन से प्राप्त आकड़ों के सांख्यिकीय विश्लेषण हेतु त्रिदिश प्रसरण विश्लेषण (2×2×2), मध्यमान, प्रमाणिक विचलन का प्रयोग किया गया है।

प्रदत्तो का विश्लेषण एवं विवेचना

परिकल्पना 1- उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के अभिभावक शैली, लिंग एवं शाला के प्रकार का उनके शैक्षिक शिथिलता पर मुख्य एवं अंत:क्रियात्मक प्रभाव सार्थक नही पाया जाएगा।

तालिका क्रमांक- 1

उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के अभिभावक शैली, लिंग एवं शाला के प्रकार का उनके शैक्षिक शिथिलता पर मुख्य एवं अंत:क्रियात्मक प्रभावों के सन्दर्भ में 2×2×2 प्रसरण विश्लेषण सारांश

प्रसरण का स्त्रोत	वर्गों का योग	स्वतंत्रता की कोटि	मध्यमान वर्ग	F मान
अभिभावक शैली	611.744	1	611.744	3.795•
लिंग	2250.542	1	2250.542	13.961**
शाला प्रकार	720.597	1	720.597	4.470*
अभिभावक शैली × लिंग	14.020	1	14.020	0.087•
अभिभावक शैली × शाला प्रकार	743.073	1	743.073	4.610*
लिंग × शाला प्रकार	48.304	1	48.304	0.300•
अभिभावक शैली × लिंग × शाला प्रकार	549.250	1	549.250	3.407•
त्रुटि	95429.589	592	161.199	
योग	3083913.000	600		
संशोधित योग	101057.958	599		

** 0.01 सार्थकता स्तर पर सार्थक, * 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक, • सार्थक नहीं

मुख्य प्रभाव -

अभिभावक शैली का प्रभाव- प्रस्तुत तालिका के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के अभिभावक शैली का उनके शैक्षिक शिथिलता पर मुख्य प्रभाव के लिए F का गणना मान df (1,592) पर 3.795 है, जो कि 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक नहीं पाया गया। अर्थात् उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के अभिभावक शैली का उनके शैक्षिक शिथिलता पर मुख्य प्रभाव सार्थक नहीं पाया गया। अत: अभिभावक शैली के मुख्य प्रभाव के लिए शून्य परिकल्पना स्वीकृत होती है।

लिंग का प्रभाव- तालिका के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि लिंग का शैक्षिक शिथिलता पर मुख्य प्रभाव के लिए F का गणना मान df (1,592) पर 31.961 है जो की 0.01 सार्थकता स्तर पर सार्थक पाया गया। अर्थात् उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के लिंग का उनके शैक्षिक शिथिलता सार्थक प्रभाव पाया गया। अत: लिंग के मुख्य प्रभाव के लिए शून्य परिकल्पना अस्वीकृत होती है।

अतएव यह कहा जा सकता है कि छात्र एवं छात्राओं के शैक्षिक शिथिलता के मध्य सार्थक अंतर पाया गया। इस अंतर को स्पष्ट करने हेतु मध्यमान एवं प्रमाणिक विचलन की गणना की गई जो निम्नानुसार है :-

तालिका क्रमांक 2

छात्र एवं छात्राओं के शैक्षिक
शिथिलता के प्राप्तांको का मध्यमान एंव प्रमाणिक विचलन

लिंग	संख्या	मध्यमान	प्रमाणिकविचलन
छात्राएँ	300	68.36	1 2.355
छात्र	300	72.65	13.270

तालिका से यह स्पष्ट होता है कि छात्राओं के शैक्षिक शिथिलता का मध्यमान एवं प्रमाणिक विचलन 68.36 तथा 12.355, जबकि छात्रों के शैक्षिक शिथिलता का मध्यमान एवं प्रमाणिक विचलन 72.65 तथा 13.270 पाया गया। मध्यमानों की तुलना करने पर यह ज्ञात होता है कि छात्रों में छात्राओं की अपेक्षा शैक्षिक शिथिलता अधिक पायी जाती है।

शाला प्रकार का प्रभाव- तालिका के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि शाला प्रकार का शैक्षिक शिथिलता पर मुख्य प्रभाव के लिए F का गणना मान df (1,592) पर 4.470 है जो की 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक पाया गया। अर्थात् उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के शाला प्रकार का उनके शैक्षिक शिथिलता सार्थक प्रभाव पाया गया। अत: शाला प्रकार के मुख्य प्रभाव के लिए शून्य परिकल्पना अस्वीकृत होती है।

अतएव यह कहा जा सकता है कि शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के विद्यार्थियों के शैक्षिक शिथिलता के मध्य सार्थक अंतर पाया गया। इस अंतर को स्पष्ट करने हेतु मध्यमान एवं प्रमाणिक विचलन की गणना की गई जो निम्नानुसार है :-

तालिका क्रमांक 3

शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के विद्यार्थियों के शैक्षिक शिथिलता के प्राप्तांको का मध्यमान एंव प्रमाणिक विचलन

शाला प्रकार	संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन
शासकीय	300	69.21	13.051
अशासकीय	300	71.80	12.816

तालिका से यह स्पष्ट होता है कि शासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों के शैक्षिक शिथिलता का मध्यमान एवं प्रमाणिक विचलन 69.21 तथा 13.051, जबकि अशासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों के शैक्षिक शिथिलता का मध्यमान एवं प्रमाणिक विचलन 71.80 तथा 12.816 पाया गया। मध्यमानों की तुलना करने पर यह ज्ञात होता है कि शासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों में अशासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों की अपेक्षा शैक्षिक शिथिलता अधिक पायी जाती है।

अंत:क्रियात्मक प्रभाव -

अभिभावक शैली × लिंग का प्रभाव- प्रस्तुत तालिका के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि अभिभावक शैली × लिंग के अंत:क्रियात्मक प्रभाव के लिए F का गणना मान df (1,592) पर 0.087 है, जो कि 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक नहीं पाया गया। अर्थात् अभिभावक शैली × लिंग के अंत:क्रियात्मक प्रभाव का शैक्षिक शिथिलता पर सार्थक प्रभाव नहीं पाया गया। अत: अभिभावक शैली × लिंग के अंत:क्रियात्मक प्रभाव के लिए शून्य परिकल्पना स्वीकृत होती है।

अभिभावक शैली × शाला प्रकार का प्रभाव- प्रस्तुत तालिका के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि अभिभावक शैली × शाला प्रकार के अंत:क्रियात्मक प्रभाव के लिए F का गणना मान df (1,592) पर 4.610 है, जो कि 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक पाया गया। अर्थात् अभिभावक शैली × शाला प्रकार के अंत:क्रियात्मक प्रभाव का शैक्षिक शिथिलता पर सार्थक प्रभाव पाया गया। अत: अभिभावक शैली × शाला प्रकार के अंत:क्रियात्मक प्रभाव के लिए शून्य परिकल्पना अस्वीकृत होती है।

अतएव यह कहा जा सकता है कि अभिभावक शैली × शाला प्रकार के अंत:क्रियात्मक प्रभाव का विद्यार्थियों के शैक्षिक शिथिलता पर सार्थक अंतर पाया गया। जिसे ज्ञात करने हेतु अभिभावक शैली × शाला प्रकार के मध्यमान एवं प्रमाणिक विचलन को तालिकाबद्ध किया गया जो निम्नानुसार है –

तालिका क्रमांक 4

अभिभावक शैली × शाला प्रकार के अंत:क्रियात्मक प्रभाव के प्राप्तांको का मध्यमान एवं प्रमाणिक विचलन

अभिभावक शैली	शाला प्रकार	संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन
उच्च	शासकीय	133	71.78	13.364
	अशासकीय	153	71.74	14.492
निम्न	शासकीय	167	67.16	12.460
	अशासकीय	147	71.86	10.851

तालिका से यह स्पष्ट होता है कि उच्च अभिभावक शैली वाले शासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों का मध्यमान एवं प्रमाणिक विचलन 71.78 एवं 13.364 है तथा उच्च अभिभावक शैली वाले अशासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों का मध्यमान एवं प्रमाणिक विचलन 71.74 एवं 14.492 है। जबकि निम्न अभिभावक शैली वाले शासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों का मध्यमान एवं प्रमाणिक विचलन 67.16 एवं 12.460 है तथा निम्न अभिभावक शैली वाले अशासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों का मध्यमान एवं प्रमाणिक विचलन 71.86 एवं 10.851 है। मध्यमानों की तुलना करने पर यह पाया गया कि निम्न अभिभावक शैली वाले अशासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों में अन्य की अपेक्षा शैक्षिक शिथिलता अधिक पायी जाती है।

लिंग × शाला प्रकार का प्रभाव- प्रस्तुत तालिका के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि लिंग X शाला प्रकार के अंत:क्रियात्मक प्रभाव के लिए F का गणना मान df (1,592) पर 0.300 है, जो कि 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक नहीं पाया गया। अर्थात् लिंग × शाला प्रकार के अंत:क्रियात्मक प्रभाव का विद्यार्थियों के शैक्षिक शिथिलता पर सार्थक प्रभाव नहीं पाया गया। अत: लिंग × शाला प्रकार के अंत:क्रियात्मक प्रभाव के लिए शून्य परिकल्पना स्वीकृत होती है।

अभिभावक शैली × लिंग × शाला प्रकार का प्रभाव- प्रस्तुत तालिका के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि अभिभावक शैली × लिंग × शाला प्रकार के अंत:क्रियात्मक प्रभाव के लिए F का गणना मान df (1,592) पर 3.407 है, जो कि 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक नहीं पाया गया। अर्थात् अभिभावक शैली × लिंग × शाला प्रकार के अंत:क्रियात्मक प्रभाव का विद्यार्थियों के शैक्षिक शिथिलता पर सार्थक प्रभाव नहीं पाया गया। अत: अभिभावक शैली × लिंग × शाला प्रकार के अंत:क्रियात्मक प्रभाव के लिए शून्य परिकल्पना स्वीकृत होती है।

निष्कर्ष- उपर्युक्त अध्ययन के परिणामों से यह निष्कर्ष पाया गया कि–

- उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के अभिभावक शैली का उनके शैक्षिक शिथिलता पर मुख्य प्रभाव सार्थक नहीं पाया गया।
- उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के लिंग का उनके शैक्षिक शिथिलता सार्थक प्रभाव पाया गया। जिसमें मध्यमानों की तुलना करने पर यह ज्ञात होता है कि छात्रों में छात्राओं की अपेक्षा शैक्षिक शिथिलता अधिक पायी जाती है।
- उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के शाला प्रकार का उनके शैक्षिक शिथिलता सार्थक प्रभाव पाया गया। जिसमें मध्यमानों की तुलना करने पर यह ज्ञात होता है कि शासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों में अशासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों की अपेक्षा शैक्षिक शिथिलता अधिक पायी जाती है।
- अभिभावक शैली × लिंग के अंत:क्रियात्मक प्रभाव का शैक्षिक शिथिलता पर सार्थक प्रभाव नहीं पाया गया।
- अभिभावक शैली × शाला प्रकार के अंत:क्रियात्मक प्रभाव का शैक्षिक शिथिलता पर सार्थक प्रभाव पाया गया। मध्यमानों की तुलना करने पर यह पाया गया कि निम्न अभिभावक शैली वाले अशासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों में अन्य की अपेक्षा शैक्षिक शिथिलता अधिक पायी जाती है।
- शाला प्रकार के अंत:क्रियात्मक प्रभाव का विद्यार्थियों के शैक्षिक शिथिलता पर सार्थक प्रभाव नहीं पाया गया।
- अभिभावक शैली × लिंग × शाला प्रकार के अंत:क्रियात्मक प्रभाव का विद्यार्थियों के शैक्षिक शिथिलता पर सार्थक प्रभाव नहीं पाया गया।

संदर्भ सूची-

1. Mumina, P. Asatsa, S. and Onyango, C. L.A. (2022). Relationship between parenting styles and academic performance of secondary school students in public and private school in lamu country, Kenya. *International Journal of Research and Innovation in Social Science*, 6(3), 568-577.
2. Okokon, E., Duke, A.E., Echeweozo, E.O. and Allahoki, N.D. (2022). School environment factors and physics students' academic achievement in calabar education zone of cross river state, Nigeria. *Internation Journal of Innovative Schience and Research Technology*, 7(2), 1053-1061.
3. Gramaja, F. P., Garcia, O.F., Reyes, M., Serra, E. and Garcia, F. (2020). Parenting styles and aggressive adolescents: Relationship with self esteem and personal adjustment. *The European Journal of Psychology Applied to Legal Context,* 12(1), 1-10.
4. Rajapakshe, W. (2021). The impact of academic procrastination, self-efficacy and motivation on academic performance among undergraduates in non-state universities in Sri Lanka. *Asian Joural of Education and Social Studies*, 14(3), 25-38.

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 42, Hindi Edition, Year-21, Jan.- June 2025

संयुक्त परिवार का स्वरूप एवं परिवर्ततन की प्रवृत्ति एक समाजवैज्ञानिक विश्लेषण

• शोभा प्रजापति
•• ब्रजेश कुमार सिंह

सारांश- सामाजिक संस्थाएँ मानव की आवश्यकता पूर्ति के साधन हैं। मानव की आवश्यकताओं में परिवर्तन होने पर इन संस्थाओं में भी परिवर्तन देखने को मिलते हैं। समाज की सभी संस्थाओं में परिवार सर्वाधिक आधारभूत व प्रारम्भिक संस्था है। मानव ने सुरक्षा, पोषण व जैविक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए परिवार के रूप में जिस सामूहिक जीवन की शुरुआत की उसमें समय व स्थान के अनुसार अनेकों परिवर्तन हमें देखने को मिलते हैं। परम्परागत भारतीय समाज में परिवार का तात्पर्य संयुक्त परिवार से लिया जाता है। संयुक्त परिवार से तात्पर्य ऐसे परिवार से है जिसमें कई पीढ़ी के लोग साथ रहते हैं, उनका एक सामान्य निवास होता है, सभी सदस्यों की सामूहिक सम्पत्ति होती है, सभी सदस्य एक रसोई में बना भोजन करते हैं। वर्तमान समय में विभिन्न कारणों से संयुक्त परिवार के संरचनात्मक व प्रकार्यात्मक पक्षों में अनेकों परिवर्तन हमें देखने को मिलते हैं। अनेक अध्ययनों एवं समाज के वास्तविक जीवन की घटनाओं में हम देखते हैं कि संयुक्त आवास, संयुक्त रसोई व संयुक्त सम्पत्ति वर्तमान में संयुक्त परिवार के आधार नहीं हैं। कर्त्ता की सर्वोपरिता भी अब परिवार में देखने को नहीं मिलती। अनुशासन का जो प्रभाव परिवार में पाया जाता था वह भी अब देखने को नहीं मिलता। प्रस्तुत शोध पत्र में द्वितीयक स्रोतों के माध्यम से संयुक्त परिवार की निरन्तरता व परिवर्तन को विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द- सामाजिक संस्था, संयुक्त परिवार, कर्ता, निरन्तरता, परिवर्तन।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, सामाजिक प्राणी के रूप में मानव ने अपनी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अनेक संस्थाओं का निर्माण किया है। इन संस्थाओं में परिवार सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं आधारभूत संस्था है। परिवार किसी भी सामाजिक संरचना की केन्द्रीय ईकाई है। परिवार एक सर्वव्यापी सामाजिक संस्था है। परिवार की सर्वव्यापकता को स्पष्ट करते हुए एण्डरसन का कथन है कि, "परिवार का एक रूप वह

• शोध छात्रा, समाजशास्त्र विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी
•• प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी

है जिसमें हम जन्म लेते हैं और दूसरा रूप वह है जिसमें हम स्वयं बच्चों को जन्म देते हैं।"[1] परिवार की सर्वव्यापकता को इसी से समझा जा सकता है कि हममें से प्रत्येक व्यक्ति इनमें से किसी एक का सदस्य अवश्य होते हैं। परिवार व्यक्ति की सामाजिक व जैविक आवश्यकताओं की पूर्ति का एक महत्वपूर्ण आधार है। बर्गेस तथा लॉक के अनुसार, "परिवार ऐसे व्यक्तियों का समूह है जो विवाह, रक्त अथवा गोद लेने के सम्बन्धों द्वारा संगठित हैं जिसके सदस्य एक छोटी सी गृहस्थी का निर्माण करते हैं।" पति-पत्नी, माता-पिता, पुत्र-पुत्री अथवा भाई-बहन के रूप में एक दूसरे से अन्तःक्रियाएँ करते हैं और एक सामान्य संस्कृति का निर्माण एवं देखरेख करते हैं।"[2] मैकाइवर व पेज के अनुसार, "परिवार पर्याप्त निश्चित यौन सम्बन्ध द्वारा परिभाषित एक ऐसा समूह है जो बच्चों के जनन एवं लालन-पालन की व्यवस्था करती है।"[3] परिवार ही ऐसी संस्था है जिसके माध्यम से व्यक्ति संस्थागत रूप से अपनी जैविकीय आवश्यकताओं को पूरा करता है एवं एक जैविकीय प्राणी सामाजिक प्राणी के रूप में परिवर्तित होता है। यही कारण है कि परिवार किसी भी सामाजिक संरचना का एक महत्वपूर्ण आधार है। अतः जब कभी भी परिवार की विशेषताओं में परिवर्तन होता है तो सम्पूर्ण सामाजिक संरचना भी उसी के अनुसार परिवर्तित होने लगती हे। परिवार की सार्वभौमिकता व सर्वव्यापकता को स्पष्ट करते हुए मैलीनोवस्की ने अपनी पुस्तक "Sex and Repression in Savage Soiety" में स्पष्ट लिखा है, "परिवार ही एक ऐसा समूह है जिसे मनुष्य पशु अवस्था से अपने साथ लाया है। मैकाइवर तथा पेज ने परिवार की आठ ऐसी विशेषताओं का उल्लेख किया है जो अन्य संस्थाओं व समितियों में नहीं पाई जाती।

1. परिवार अन्य सभी सामाजिक संस्थाओं व समितियों में सार्वभौम है। यह सभी समाजों में व समाज के विकास के सभी स्तरों पर पाई जाती है। प्रत्येक मनुष्य परिवार का सदस्य है और रहेगा।
2. परिवार के सदस्यों के बीच भावनात्मक सम्बन्ध पाये जाते हैं। पति-पत्नी के बीच का दाम्पत्य सम्बन्ध, माता-पिता व बच्चों के बीच पाया जाने वाला वात्सल्य प्रेम एवं परिवार के अन्य सभी सदस्यों के बीच पाया जाने वाला भावनात्मक सम्बन्धी ही परिवार का आधार है।
3. परिवार के सभी सदस्यों पर यह रचनात्मक प्रभाव डालता है। यह व्यक्ति के शारीरिक व मानसिक दोनों ही प्रकार के विकास में सहायक होता है।
4. अन्य सभी संस्थाओं की तुलना में परिवार का आकार छोटा होता है।
5. परिवार किसी भी सामाजिक संरचना का आधार स्तम्भ होता है। यह सामाजिक ढाँचे में केन्द्रीय स्थिति को प्राप्त होता है।
6. परिवार के सभी सदस्यों का एक-दूसरे के प्रति असीमित उत्तरदायित्व पाया जाता है।
7. प्रत्येक समाज में परिवार कुछ निश्चित नियमों के अनुसार चलता है।
8. परिवार की स्थायी व अस्थायी दोनों प्रकृति होती है। एक समिति के रूप में परिवार में तलाक, मृत्यु, त्याग, आदि कारणों से परिवर्तन होता रहता है, किन्तु संस्था के रूप में परिवर्तन सदैव बना रहता है।

परिवार की उत्पत्ति सम्बन्धी सिद्धान्त- परिवार एक महत्वपूर्ण सामाजिक संस्था है। परिवार की उत्पत्ति के सम्बन्ध में विभिन्न विद्वानों के विचार एक दूसरे से काफी भिन्न हैं। परिवार की उत्पत्ति के सम्बन्ध में विभिन्न सिद्धान्त प्रचलित हैं।

शास्त्रीय सिद्धान्त- परिवार की उत्पत्ति का शास्त्रीय सिद्धान्त प्लेटो व अरस्तू द्वारा प्रस्तुत किया गया। सर हेनरीमेन ने इस सिद्धान्त को आगे बढ़ाया। इस सिद्धान्त के अनुसार परिवार का प्रारम्भिक स्वरूप पितृसत्तात्मक था। सर हेनरी मेन के अनुसार मातृसत्तात्मक परिवारों का जन्म बाद की बात है। आलोचकों का यह मानना है कि अनुसंधान से प्राप्त तथ्य इस सिद्धान्त की पुष्टि नहीं करते कि सभी समाजों में परिवार का प्रारम्भिक स्वरूप पितृसत्तात्मक ही था।

यौन साम्यवाद- मार्गन, फ्रेजर और ब्रिफाल्ट जैसे विद्धानों के अनुसार प्रारम्भ में समाज में परिवार जैसी कोई संस्था नहीं थी बल्कि यौन साम्यवाद की स्थिति व्याप्त थी। मार्गन ने अपने सिद्धान्त की सत्यता को प्रमाणित करने के लिए अनेक जनजातियों के उदाहरण को प्रस्तुत किया है जिनमें यौन स्वच्छन्दता की स्थिति विद्यमान थी। कुछ जनजातियों में त्योहारों के अवसर पर यौन सम्बन्ध किसी के भी साथ स्थापित करने की स्वतंत्रता प्राप्त होती है। अनेक जनजातियों में पत्नी की अदला–बदली की भी प्रथा विद्यमान रही है। जनजातियों में पाई जाने वाली युवागृह व्यवस्था जिसमें युवा लड़के–लड़कियाँ रात में भोजन करने के बाद एक स्थान पर रहते हैं जहाँ यौन सम्बन्ध स्थापित करने की काफी स्वतंत्रता रहती है। यौन साम्यवाद का ही उदाहरण है, किन्तु अनेक विद्वानों ने इसे स्वीकार नहीं किया है और इसे गलत प्रमाणित करने के लिए अनेक प्रमाण प्रस्तुत किये हैं।

मातृसत्ता का सिद्धान्त- इस सिद्धान्त के प्रवर्तक श्री ब्रिफॉल्ट हैं। उन्होंने अपनी पुस्तक The Mothers में इस सिद्धान्त को तीन खण्डों में प्रस्तुत किया। इनके अनुसार प्रारम्भ में परिवार का स्वरूप मातृसत्तात्मक था। श्री ब्रिफॉल्ट ने अनेक मातृवंशीय और मातृसत्तात्मक जनजातियों का उल्लेख करते हुए इस बात पर बल दिया है कि प्रारम्भ में यौन सम्बन्ध अनिश्चित होने के कारण बच्चे को केवल अपनी माँ का ज्ञान होता था, पिता की कोई जानकारी उसको नहीं होती थी। ऐसी दशा में माता एवं संतान का सम्बन्ध ही पारिवारिक जीवन का एकमात्र आधार था। ऐसी दशा में परिवार का आदिम स्वरूप मातृसत्तात्मक होना स्वाभाविक था। ऐसी स्थिति में श्री ब्रिफॉल्ट के अनुसार मानव परिवार के आदिम स्वरूप का मातृसत्तात्मक होना स्वाभाविक था। श्री ब्रिफॉल्ट के अनुसार, "पशु परिवार जिससे यह आशा की जाती है कि मानव के सामाजिक समूह का जन्म हुआ है, मातृसत्तात्मक है।" श्री ब्रिफॉल्ट के अनुसार परिवार की उत्पत्ति का मूल कारण माता के मातृभाव की मूल प्रवृत्ति है। इस मूल प्रवृत्ति की भावना के कारण ही परिवार की आवश्यकता का अनुभव किया गया। पुरुष तो केवल यौन सम्बन्धी आकर्षणों के कारण ही परिवार में रहना चाहता है किन्तु माता ने अपनी और संतानों की सुरक्षा, पोषण, स्वास्थ्य, सामाजिक, आर्थिक आवश्यकताओं का अनुभव करते हुए पुरुष को परिवार में रहने के लिए प्रेरित किया। इस प्रकार स्त्री द्वारा स्थापित परिवार का प्रारम्भिक स्वरूप मातृसत्तात्मक था। बाद में कृषि तथा अन्य आर्थिक अधिकार पुरुषों के हाथ में चले जाने के कारण पितृसत्तात्मक परिवारों का जन्म हुआ। श्री टायलर ने भी इस

सिद्धान्त का समर्थन किया है। आपके अनुसार प्रारम्भ में परिवार मातृसत्तात्मक था फिर मातृसत्तात्मक एवं पितृसत्तात्मक का मिश्रण हुआ और बाद में पितृसत्तात्मक परिवार का उदय हुआ।

उद्विकासीय सिद्धान्त- इस सिद्धान्त को बैकोफन ने प्रस्तुत किया फिर लुकेस मार्गन ने इसे एक सुनिश्चित रूप दिया। इस सिद्धान्त के अन्य समर्थकों में श्री मैकलेनन, स्पेंसर, ल्युबक तथा टायलर का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। बैकोफन ने उद्विकासीय क्रम को निम्नवत् प्रस्तुत किया है-

1. प्रारम्भिक अवस्था में पारिवारिक जीवन अत्यन्त अनिश्चित था। पारिवारिक सम्बन्धों में केवल माता और संतान का सम्बन्ध ही स्थायी और निश्चित था। बच्चे को अपने वास्तविक पिता का कुछ भी ज्ञान न था। समूह के सभी पुरुष सभी के लिए भोजन व सुरक्षा का ध्यान रखते थे। यह परिवार का प्रारम्भिक स्वरूप था।
2. दूसरी अवस्था में परिवार का स्वरूप पहले की तुलना में कुछ अधिक स्पष्ट हुआ। इस अवस्था में कन्या वध के कारण समाज में लड़कियों की संख्या अत्यन्त कम हो गयी। इस अवस्था में बहुपति विवाह की प्रथा का जन्म हुआ।
3. कृषि कार्यों हेतु श्रम शक्ति की आवश्यकता में वृद्धि तथा जीवित रहने के साधनों में वृद्धि के फलस्वरूप स्त्री श्रम को भी महत्व दिया जाने लगा। भोजन, बच्चों के पालन-पोषण, घरेलू कार्यों व कृषि कार्यों में सहयोग हेतु महिलाओं को स्थायी श्रम शक्ति के रूप में देखा जाने लगा जिसके फलस्वरूप बहुपत्नी परिवार का व्यवस्था का विकास हुआ।

सभ्यता के विकास के साथ स्त्रियों के साथ न्याय व उनके लिए समान अधिकार की माँग की जाने लगी जिसके फलस्वरूप एक विवाह की प्रथा का आरम्भ हुआ। एक विवाह से युक्त परिवार आधुनिक समाज की विशेषता बन गयी। लुइस मार्गन के अनुसार परिवार के उद्विकास के निम्न पाँच स्तरों का उल्लेख करते हुए यह बताया कि परिवार इन स्तरों से गुजरते हुए अपनी वर्तमान स्थिति पर पहुँचा। परिवार के विकास के स्तरों को निम्नवत् समझा जा सकता है--

रक्त सम्बन्धी परिवार- मानव जीवन के विकास की प्रारम्भिक अवस्था में रक्त सम्बन्धी परिवार पाया जाता रहा है। उद्विकास की इस अवस्था में निकट सम्बन्धियों में भी वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किये जाते थे।

समूह परिवार- परिवार के उद्विकास की दूसरी अवस्था में स्त्रियों का एक समूह पुरुषों के दूसरे समूह से विवाह करता था। इस प्रकार विवाह करने वाले सभी स्त्री-पुरुष एक दूसरे के पति-पत्नी होते थे। अधिकांशत: विवाह करने वाले पुरुष भाई-भाई तथा स्त्रियाँ बहन-बहन होती थीं, किन्तु कभी-कभी नहीं भी होते थे। जो भी हो ऐसी स्थिति में यौन सम्बन्ध अत्यधिक अनिश्चित और अनियंत्रित था।

सिंडेस्मियन परिवार- यह परिवार के उद्विकास की तीसरी अवस्था है जिसमें एक स्त्री का एक पुरुष से ही विवाह होता है किन्तु परिवार में ब्याही हुई सभी स्त्रियों के साथ सभी पुरुष दाम्पत्य सम्बन्ध रख सकते थे। इस प्रकार की पारिवारिक व्यवस्था में भी यौन

सम्बन्ध निश्चित नहीं थे।

पितृ सत्तात्मक परिवार- यह परिवार के उद्विकास की चौथी अवस्था है जिसमें परिवार पर पुरुषों का आधिपत्य था। इस अवस्था में पुरुष एकाधिक स्त्रियों से सम्बन्ध रख सकता था।

एक विवाही परिवार- परिवार उद्विकास की यह अंतिम व आधुनिक अवस्था है। इसमें एक पुरुष का एक ही स्त्री से विवाह और यौन सम्बन्ध होता है।

इस प्रकार उद्विकासीय सिद्धान्त के अनुसार परिवार की उत्पत्ति एवं विकास प्रत्येक समाज में कुछ निश्चित स्तरों से गुजरते हुए हुआ है, किन्तु वास्तव में यह सिर्फ एक कल्पना मात्र है। वास्तव में प्रत्येक समाज की भौगोलिक, सामाजिक व सांस्कृतिक परिस्थितियाँ अलग होने के कारण प्रत्येक समाज में परिवार के विकास की समान अवस्थाएँ नहीं हो सकती।

एक विवाह का सिद्धान्त- इस सिद्धान्त के प्रतिपादक श्री वेस्टनमार्क हैं। इन्होंने अपनी पुस्तक "The History of Human Marriage" में यह स्पष्ट किया है कि मानव समाज में कभी भी यौन साम्यवाद, बहु-विवाह या समूह विवाह की स्थिति विद्यमान न थी। एक विवाह परिवार मानव समाज व संस्कृति के विकास के सभी स्तरों पर विद्यमान रहा है। वेस्टरमार्क अपने सिद्धान्त के पक्ष में दो तर्क प्रस्तुत करते हैं, प्रथम, पुरुष ताकतवर होने के कारण स्त्री पर अपना अधिकार ही नहीं बल्कि एकाधिकार भी चाहता है। दूसरा, पुरुष में स्वभावत: ईर्ष्या की भावना होने के कारण कोई पुरुष अपनी स्त्री को दूसरे पुरुष से सम्बन्ध रखने देना नहीं चाहता, जिसका स्वाभाविक परिणाम एक विवाही परिवार है। यौन साम्यवाद, समूह विवाह एवं बहुविवाह सामाजिक नियमों के क्षणिक उल्लंघन एवं अपवाद मात्र हैं, कभी स्थायी रूप से नहीं पाये गये। श्री गैलीनोवस्की ने भी वेस्टरमार्क के सिद्धान्त को स्वीकार किया है। उन्होंने अपनी पुस्तक 'Sex and Repression in Savage Society' में लिखा है, "परिवार ही एक ऐसा समूह है जिसे मनुष्य पशु अवस्था से अपने साथ लाया है और यह परिवार एक विवाही परिवार ही है।"

इस प्रकार परिवार की उत्पत्ति के सम्बन्ध में विभिन्न विद्वानों में काफी मतभेद रहा है, किन्तु विश्व के सभी समाजों के अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि परिवार का अस्तित्व सदैव रहा है। मजूमदार ने लिखा है, "श्री वेस्टरमार्क तथा मॉर्गन के सिद्धान्त जीवित हैं, इसलिए नहीं कि वे सच है, वरन् इसलिए कि वे परिवार गतिशील धारणा पर आधारित हैं।" समाज में पाई जाने वाली सभी संस्थाओं में परिवार अत्यधिक महत्वपूर्ण सामाजिक संस्था है तथा यह एक सार्वभौमिक सामाजिक संस्था भी है। इस संस्था के द्वारा महत्वपूर्ण कार्यों को किया जाता है। जी.पी. मर्डाक परिवार को एक सार्वभौमिक संस्था मानते हुए इसके चार महत्वपूर्ण कार्य बताये हैं-

1. यौन सम्बन्धी कार्य
2. प्रजनन सम्बन्धी कार्य
3. आर्थिक कार्य
4. शैक्षिक कार्य

मैकाइवर व पेज ने परिवार के तीन प्रकार्यों का उल्लेख किया है। (1) यौन

सम्बन्धी प्रकार्य, (2) प्रजनन सम्बन्धी प्रकार्य, (3) पालन-पोषण सम्बन्धी प्रकार्य या आर्थिक प्रकार्य। ऑगबर्न तथा निमकाफ ने परिवार के निम्नलिखित कार्यों का उल्लेख किया है-(1) स्नेह एवं प्रेम सम्बन्धी कार्य, (2) आर्थिक कार्य, (3) मनोरंजन सम्बन्धी कार्य, (4) पालन-पोषण अथवा रक्षा सम्बन्धी कार्य, (5) धार्मिक कार्य, (6) शिक्षा सम्बन्धी कार्य।

भारतीय सन्दर्भ में परिवार के पारम्परिक स्वरूप एवं उसके कार्य- भारत में परिवार का अर्थ संयुक्त परिवार से है। संयुक्त परिवार से हमारा तात्पर्य ऐसे परिवार से है जिसमें कई पीढ़ियों के लोग परस्पर साथ रहते हैं तथा एक दूसरे से सम्पत्ति, आय तथा पारस्परिक अधिकारों एवं कर्त्तव्यों के द्वारा सम्बन्धित हों। इरावती कर्वे के अनुसार "संयुक्त परिवार ऐसे व्यक्तियों का समूह है जो एक ही छत के नीचे रहते हैं, एक ही रसोई में बना भोजन करते हैं, सामान्य सम्पत्ति के अधिकारी होते हैं, जो सामान्य पूजा में भाग लेते हैं तथा जो परस्पर एक दूसरे से विशिष्ट नातेदारी से सम्बन्धित हैं।[4]

आई.पी. देसाई, "हम उस गृह को संयुक्त परिवार कहते हैं जिसमें एकाकी परिवार की अपेक्षा अधिक पीढ़ियों के सदस्य सम्मिलित होते हैं और जो एक दूसरे से सम्पत्ति, आय और पारस्परिक अधिकारों तथा कर्त्तव्यों द्वारा बँधे होते हैं।"[5]

एस.सी. दूबे के अनुसार, "यदि अनेक परिवार संयुक्त रूप से रहते हों, उनमें निकट सम्बन्ध हो, वे एक ही स्थान पर बना भोजन करते हों तथा एक आर्थिक इकाई के रूप में कार्य कर रहे हों तब उनके इस सम्मिलित रूप को एक संयुक्त परिवार कहा जा सकता है।"[6]

संयुक्त परिवार के सदस्यों की संख्या अधिक होती है। सभी लोगों का सामान्य निवास होता है, सभी सदस्यों की सामान्य सामूहिक सम्पत्ति होती है, सामान्य पूजा स्थान होता है, सभी सदस्यों की सामूहिक रसोई होती है। संयुक्त परिवार में 'कर्त्ता' का प्रमुख स्थान रहा है। परिवार के सभी निर्णयों में कर्त्ता का निर्णय अंतिम निर्णय होता था। उसे सभी सदस्यों का आदर व सम्मान प्राप्त होता था। कर्त्ता ही परिवार के सभी सदस्यों के व्यवहार को नियंत्रित करता था। कर्त्ता की पत्नी परिवार की अन्य स्त्रियों को विभिन्न कार्यों का आदेश देती थी। परिवार की संयुक्त सम्पत्ति से सभी सदस्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति समान रूप से होती थी। परिवार के सभी सदस्य मिलकर आर्थिक क्रियाओं विशेषकर कृषि कार्य को करते थे। बच्चों के पालन-पोषण में संयुक्त परिवार का विशेष योगदान रहा है। परिवार में दादा-दादी, चाचा-चाची एवं परिवार के अन्य सदस्यों के बीच बच्चों का समाजीकरण व पालन-पोषण अत्यन्त सुगमता से होता रहता था। वृद्धों व असहायों की देखभाल भी कोई समस्या न थी। भारतीय संस्कृति व परम्परा की निरन्तरता को बनाये रखने व मानवीय मूल्यों के विकास में संयुक्त परिवार की भूमिका अत्यधिक महत्वपूर्ण रही है। परिवार अपने सदस्यों को प्रथाओं, परम्पराओं, रुढ़ियों व सामाजिक मूल्यों को पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरित करता रहता है। परिवार में माता-पिता व अन्य बड़े सदस्यों का वात्सल्य, भाई-बहन व अन्य सदस्यों के हास-परिहास सभी सदस्यों को आनन्द प्रदान करता है। जीवन में बड़ी से बड़ी असुरक्षा की स्थिति में संयुक्त परिवार अपने सदस्यों को सुरक्षा प्रदान करता है।

परिवार की संरचना व कार्यों में निरन्तरता एवं परिवर्तन- वर्तमान समय में संयुक्त परिवार की संरचना व कार्यों में तेजी से परिवर्तन हो रहे हैं एक तरफ परिवार की संयुक्तता प्रभावित हो रही है, जिसके कारण संयुक्त परिवार की जगह एकाकी परिवारों में वृद्धि हो रही है वहीं दूसरी ओर परम्परागत परिवार के जो कार्य थे उसमें तेजी से परिवर्तन हो रहा है।

बदलते सामाजिक परिवेश में नौकरी, व्यवसाय, शिक्षा आदि विभिन्न कारणों से कई पीढ़ी के लोगों का साथ रहना सम्भव नहीं रहा जिससे परम्परागत संयुक्त परिवार की जगह एकाकी परिवार की संख्या बढ़ती जा रही है। केवल नगरों में ही नहीं बल्कि गाँवों में भी व्यक्ति अपनी पत्नी और बच्चों के साथ पृथक रूप से रहकर अपनी आमदनी का उपभोग स्वयं ही करना चाहता है। संयुक्त परिवार के सदस्यों में जो परस्पर त्याग, अपनत्व व स्नेह की भावना पाई जाती थी वह अब धीरे-धीरे समाप्त होती जा रही है। व्यक्तिवादिता सभी प्रकार के पारिवारिक सम्बन्धों में देखा जा सकता है। धार्मिक क्रिया-कलापों व प्रथाओं तथा परम्परा के पालन का महत्व कम होने से संयुक्त परिवार के धार्मिक प्रकार्य का महत्व भी कम होता जा रहा है। जिससे परिवार के सदस्यों को परस्पर बाँधे रखने वाला आधार धीरे-धीरे कमजोर पड़ता जा रहा है। संयुक्त परिवार में कर्त्ता को जो एकाधिकार प्राप्त था वह धीरे-धीरे समाप्त होता जा रहा है। वर्तमान में प्रत्येक सदस्य अपनी सुविधानुसार कोई भी कार्य एवं व्यवहार करता है, उसे कर्त्ता की अनुमति व आदेश की कोई आवश्यकता नहीं होती। सामूहिक सम्पत्ति की धारणा भी अब धीरे-धीरे समाप्त होती जा रही है। परिवार का प्रत्येक सदस्य अपनी आमदनी को स्वयं एवं अपनी पत्नी, बच्चों पर खर्च करना चाहता है। प्रत्येक कमाऊ सदस्य अपनी सम्पत्ति को व्यक्तिगत रूप से ही रखता है। संयुक्त परिवार में अनुशासन, नियंत्रण एवं आचरण के जो मानदण्ड थे वे अब धीरे-धीरे समाप्त होते जा रहे हैं। परिवार में स्त्रियों एवं बच्चों के अधिकारों में वृद्धि हुई है। संयुक्त परिवार में स्त्रियों व बच्चों पर रखा जाने वाला कठोर अनुशासन अब धीरे-धीरे समाप्त हो रहा है। परिवार में स्त्रियाँ, युवा व बच्चों की शिक्षा, शादी-विवाह, कॅरियर आदि विषयों पर खुलकर अपने विचारों को न केवल साझा करते हैं बल्कि कई बार माता-पिता व बच्चों के निर्णयों में विरोध उत्पन्न हो जाता है। परिवार में पति-पत्नी के बीच मित्रतापूर्ण समानतायुक्त दाम्पत्य सम्बन्धों का विकास हुआ है। संयुक्त परिवारों के विघटन होने, परिवार के सदस्यों की संख्या कम होने, व्यक्तिवादिता में वृद्धि होने, अनुशासन में शिथिलता आने के कारण बुजुर्गों की देखभाल व छोटे बच्चों का पालन-पोषण व समाजीकरण समाज के सामने एक चुनौती भरा प्रश्न है। परिवार में होने वाले परिवर्तनों को विभिन्न विद्वानों व शोधकर्त्ताओं ने अपने अध्ययनों के माध्यम से स्पष्ट किया है।

परिवार में हो रहे परिवर्तनों के सम्बन्ध में विभिन्न अध्ययनों के निष्कर्ष- परिवार का अध्ययन करने वाले विद्वानों में के.एम. कापड़िया, ए. रास, ए.एम. शाह, आई.पी. देसाई, एम.एस. गोरे, रामकृष्ण मुखर्जी, पी. कोलेण्डा, विलियम आगबर्न, मिल्टन सिंगर जैसे विद्वानों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। कापड़िया ने अपने शोध में संरचनात्मक संयुक्त परिवार व प्रकार्यात्यमक संयुक्त परिवार में भेद किया है। कापड़िया ने गुजरात के शहरी व ग्रामीण परिवारों का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया। उन्होंने अपने अध्ययन में यह

पाया कि ग्रामीण और नगरीय क्षेत्रों में संयुक्त परिवार एकाकी परिवार समान अनुपात में हैं। जातिगत आधार पर उन्होंने यह पाया कि निम्न जातियों की अपेक्षा उच्च जातियों में संयुक्त परिवार अधिक हैं। उनका निष्कर्ष रहा कि ग्रामीण व नगरीय दोनों ही क्षेत्रों में संयुक्त परिवार की प्रधानता रही है।[7]

एलिस रास ने नगरीय क्षेत्र के 157 परिवारों का अध्ययन किया। उन्होंने अपने अध्ययन में उत्तरदाताओं से उनके बाल्यावस्था तथा तत्कालीन अवस्था के परिवार का वर्णन करने को कहा। अध्ययन से प्राप्त तथ्यों के अनुसार परिवार की प्रवृत्ति संयुक्त से एकाकी परिवार की ओर है। उन्होंने अपने अध्ययन में यह पाया कि अधिकांश लोग अपने जीवन का एक बड़ा भाग एकाकी परिवार में व्यतीत करते हैं। वर्तमान पीढ़ी पर नातेदारों व रिश्तेदारों का नियंत्रण भी कम होता जा रहा है। यह संयुक्त परिवार के टूटने की ओर इंगित करता है।[8]

ए.एम. शाह ने गुजरात के एक गाँव के 283 परिवारों का अध्ययन किया। अपने अध्ययन में उन्होंने यह पाया कि लगभग 68 प्रतिशत परिवार एकाकी थे जो कि संयुक्त परिवार प्रणाली के बिखराव की ओर संकेत करता है।[9]

आई.पी. देसाई का परिवार पर अध्ययन सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। उन्होंने परिवार पर कई लेख, शोध-पत्र व पुस्तकें लिखी। आई.पी. देसाई ने अपने अध्ययन में यह पाया कि रसोई का विभाजन, सम्पत्ति का विभाजन तथा अलग आवास परिवार को एकाकी नहीं बनाता। यदि अलग-अलग रहते हुए भी परिवार के सदस्य एक दूसरे के प्रति संयुक्तता का भाव रखते हैं तो उसे संयुक्त परिवार ही माना जायेगा। इनके अनुसार भारतीय समाज में परिवार का तात्पर्य संयुक्त परिवार से है। एकाकी परिवार वास्तव में पश्चिमी समाज की देन है। संयुक्तता का भाव होना ही संयुक्त परिवार का वास्तविक आधार है।[10]

रामकृष्ण मुखर्जी ने पश्चिम बंगाल के परिवारों का अध्ययन कर यह निष्कर्ष निकाला कि संयुक्त परिवार की संरचना समय के साथ एकाकी परिवार में बदल रही है।11

एम.एस. गोरे ने दिल्ली व हरियाणा के आस-पास के 499 अग्रवाल समाज के परिवारों का अध्ययन कर यह निष्कर्ष दिया है कि वर्तमान शिक्षा व नगरीकरण के फलस्वरूप संयुक्त परिवार के स्वरूप में हमें परिवर्तन देखने को मिलता है।[12]

पी.एम. कोलिण्डा ने महाराष्ट्र के पूना जिले के लोनीखण्ड गाँव का अध्ययन करने पर वहाँ संयुक्त परिवार की अधिकता पाई। कोलिण्डा ने अपने अध्ययन में यह पाया कि निम्न जातियों की तुलना में उच्च जातियों में संयुक्त परिवार अधिक थे। उन्होंने क्षेत्रीय आधार पर भी संयुक्त परिवार में अन्तर पाया। गंगा के मैदान व मैसूर की उत्तरी पश्चिमी जातियों में, पश्चिमी बंगाल एवं मध्य भारत की तुलना में संयुक्त परिवार अधिक थे।[13]

प्रो. योगेन्द्र सिंह ने लिखा है कि संयुक्त परिवार में होने वाला परिवर्तन परम्परा से पूरी तरह टूटकर आधुनिकता की ओर जाने की प्रवृत्ति को नहीं दर्शाती बल्कि स्वयं परम्परा के आधुनिकीकरण को भी दर्शाती है। आगे कहते हैं, यद्यपि आधुनिक परिवर्तन के फलस्वरूप एकाकी परिवारों की संख्या में वृद्धि हुई है लेकिन आज भी लोग हिन्दू संयुक्त परिवार को आदर्श मानते हैं।[14]

ममता पाण्डेय ने अपने शोध 'ग्रामीण संयुक्त परिवार के बदलते प्रतिमान' में यह निष्कर्ष दिया है कि संयुक्त परिवार के परम्परागत प्रतिमान पूरी तरह बदल गये हैं और इसके भविष्य का स्वरूप अनिश्चित है।[15]

प्रमिला कपूर ने अपनी पुस्तक 'मैरिज एण्ड वर्किंग वूमन इन इण्डिया' में यह उल्लेख किया है कि परम्परागत समाज की तरह वर्तमान में विवाह को एक धार्मिक संस्कार नहीं माना जाता। वर्तमान में बाल-विवाह कीजगह अधिक आयु में विवाह का प्रचलन है ताकि आर्थिक स्वतंत्रता व शैक्षिक विकास हेतु व्यक्ति को अवसर प्राप्त हो सके। संयुक्त परिवार में परिवर्तन के लिए अनेक कारक उत्तरदायी हैं। प्रारम्भ में कृषि व कुटीर उद्योगों में संलग्नता के कारण परिवार उत्पादन व उपभोग की इकाई था किन्तु वर्तमान परिवार उपभोग की इकाई बन गया है। औद्योगीकरण संयुक्त परिवार के बिखराव का प्रमुख प्रारम्भिक कारक रहा। परिवार को छोड़कर जब व्यक्ति उद्योगों में काम करने लगा तो धीरे-धीरे ग्रामीण संयुक्त परिवार का बना रहना सम्भव नहीं रहा। औद्योगीकरण ने ही नगरीकरण को जन्म दिया। नगर की चकाचौंध और भौतिक सुविधाओं के आकर्षण ने भी संयुक्त परिवार को विपरीत रूप से प्रभावित किया। स्वतंत्रता, समानता व विभिन्न सुविधाओं से युक्त एकाकी नगरीय परिवार को छोड़कर स्त्रियाँ व बच्चे ग्रामीण संयुक्त परिवार में नहीं रहना चाहते। जिससे संयुक्त परिवार धीरे-धीरे बिखरने लगा।

पाश्चात्य शिक्षा, संस्कृति, उदारवाद, व्यक्तिवाद व उपयोगितावाद ने भी संयुक्त परिवार को विपरीत रूप से प्रभावित किया। यातायात व संचार के साधनों के विकास के परिणामस्वरूप लोगों में गतिशीलता बढ़ी। जिससे संयुक्त परिवार के लोगों का साथ रहना धीरे-धीरे असम्भव होने लगा।

जनसंख्या वृद्धि के कारण भूमि पर दबाव बढ़ा भूमि के छोटे टुकड़े लोगों के भरण-पोष्ण में समर्थ नहीं रहे जिससे लोग परिवार छोड़कर रोजगार हेतु अन्य स्थानों पर गमन करने लगे जिससे परिवार की संयुक्तता प्रभावित हुई।

स्वतंत्रता से पूर्व व बाद में बने कानूनों ने भी संयुक्त परिवार की संयुक्तता को प्रभावित किया है। इन कानूनों में हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, हिन्दू स्त्रियों का सम्पत्ति अधिकार अधिनियम, बाल-विवाह निरोधक अधिनियम, हिन्दू विवाह अधिनियम आदि के प्रभाव से स्त्रियों के अधिकारों में वृद्धि होने, कर्त्ता के अधिकारों में ह्रास होने, विवाह-विच्छेद को मान्यता मिलने, स्त्रियों को सम्पत्ति सम्बन्धी, बच्चों के गोद लेने, भरण-पोषण आदि अधिकार मिलने, युवाओं को सम्पत्ति में अधिकार मिलने आदि कारणों से संयुक्त परिवार की संयुक्तता विपरीत रूप से प्रभावित हुई।

परिवार में स्त्रियों, बच्चों, सम्पत्ति व कार्यों को लेकर होने वाले झगड़े व तनाव भी संयुक्त परिवार के विघटन हेतु उत्तरदायी हैं। शिक्षा, स्वास्थ्य, नौकरी व नगरीय सुविधाओं का आकर्षण भी संयुक्त परिवार के विघटन हेतु उत्तरदायी रहा। इस प्रकार विभिन्न कारकों ने संयुक्त रूप से परम्परागत भारतीय परिवार को संरचनात्मक व प्रकार्यात्मक दोनों ही प्रकार से परिवर्तित किया है।

निष्कर्ष- विषय से सम्बन्धित तथ्यों के विश्लेषण व दिन-प्रतिदिन की घटनाओं के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि परिवार की संरचना एवं प्रकार्य दोनों में स्पष्ट परिवर्तन

देखा जा सकता है। वर्तमान में संयुक्त परिवार की जगह एकाकी परिवार का प्रचलन गाँव तथा नगर दोनों ही क्षेत्रों में देखा जा सकता है। परम्परागत रूप से परिवार में अनुशासन व नियंत्रण बनाये रखने में परिवार के बड़े बुजुर्गों जो महत्व था अब धीरे-धीरे कम होता जा रहा है। परिवार में हो रहे इस बदलाव के फलस्वरूप वृद्धों का सम्मान की जगह अब वृद्धावस्था एक समस्या की तरह उभरकर सामने आ रही है। पहले परिवार में सदस्यों की सम्पत्ति संयुक्त रखने की जो परम्परा थी अब समाप्ति की ओर है अब यदि संयुक्त परिवार है भी तो उनकी सम्पत्ति संयुक्त न होकर सभी कमाऊ सदस्य अपनी अर्जित सम्पत्ति को अपने पास केवल रखना ही नहीं चाहते बल्कि अपनी सुविधानुसार खर्च भी करते हैं। परम्परागत परिवार में एक सामान्य पूजा घर व स्थान की व्यवस्था थी अब इसमें भी परिवर्तन देखा जा सकता है अब सभी लोग अपनी इच्छा व आस्था के अनुसार किसी भी मत व विश्वास का अनुसरण कर रहे हैं। एक ही परिवार में कई मत व पंथ में विश्वास करने वाले लोगों को देखा जा सकता है। परिवार के परम्परागत रीति-रिवाजों व नियमों के पालन के प्रति शिथिलता भी स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। परिवार में लिए जाने वाले निर्णयों में पारस्परिक सहमति का ध्यान रखा जाता है। निर्णयों में महिलाओं की भागीदारी भी स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। महिलाओं को घर के साथ बाहर कार्य करने व अर्थोपार्जन की स्वीकृति ग्रामीण व शहरी दोनों ही क्षेत्रों में देखा जा सकता है।

घरेलू कार्यों में पुरुषों का सहयोग एवं इसकी स्वीकार्यता भी बढ़ रही है। परम्परागत रूप से परिवार द्वारा किये जाने वाले कार्य जैसे बच्चों का प्रजनन व समाजीकरण, आर्थिक सहयोग, सामाजिक सुरक्षा, भोजन व स्वास्थ्य की देखभाल आज भी परिवार द्वारा ही समग्रता से किये जा रहे हैं। शिक्षा सम्बन्धी कार्य अब परिवार द्वारा नहीं किया जाता बल्कि 3 वर्ष जैसी छोटी उम्र से बच्चों की शिक्षा की सम्पूर्ण जिम्मेदारी विद्यालय एवं समकक्ष दूसरी संस्थाओं के हाथों में चली गयी है। इस प्रकार संयुक्त परिवार में संरचनात्मक एवं प्रकार्यात्मक दोनों ही प्रकार के परिवर्तन देखने को मिलते हैं। संयुक्त परिवार में होने वाले परिवर्तनों से ऐसा लगता है कि क्या भविष्य में संयुक्त परिवार समाप्त हो जायेगा किन्तु विभिन्न अध्ययनों से प्राप्त निष्कर्षों से यह स्पष्ट होता है कि संयुक्त परिवार में होने वाला परिवर्तन परिवर्तनशील परिस्थितियों के साथ साथ परिवार का समायोजन है। संयुक्त आवास, संयुक्त रसोई, संयुक्त सम्पत्ति भले ही आधुनिक परिवार में हमें देखने को नहीं मिलता किन्तु आज भी लोग भावात्मक रूप में कहीं न कहीं अपने को मूल परिवार से सम्बद्ध पाते हैं। विवाह, जन्म, मृत्यु के आयोजनों के साथ आकस्मिक आवश्यकता व असुरक्षा की स्थिति में संयुक्त परिवार के प्रति अपने दायित्वों को निभाना व्यक्ति अपनी नैतिक जिम्मेदारी समझता है। ऐसे समय में व्यक्ति अपने मूल परिवार से सम्बन्धित व्यक्तियों से ही सहयोग की अपेक्षा रखता है। ऐसे समय में विभिन्न कारणों से अलग-अलग स्थानों पर एकाकी परिवार में रहने वाले संयुक्त परिवार के सदस्य हर सम्भव सहयोग हेतु तत्पर रहते हैं। जिससे निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि संयुक्तता, सहअस्तित्व, त्याग व सहयोग की जिस भावना पर संयुक्त परिवार आधारित है वह भौतिक व संरचनात्मक रूप से अलग होने पर भी सदस्यों को परस्पर बाँधे रखती है।

के.एम. कापड़िया ने अपने अध्ययन में यह पाया कि "हिन्दू मनोवृत्तियाँ आज भी संयुक्त परिवार के पक्ष में है।" यह कथन वर्तमान परिस्थितियों में फिट बैठता है अतः निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि संयुक्त परिवार आज भी अपने अस्तित्व में है और भविष्य में भी बना रहेगा।

संदर्भ सूची-

1. Anderson and Parker, 1964, Society : Its Organization and Opration, P. 160.
2. Burgess and Locke, 1953, Family, P. 8.
3. MacaIver and Page, 1937, Society, P. 238.
4. Karve, Iravati, 1968, Kinship Organization in India. P. 10.
5. Desai, I.P., 1956, The Joint Family in India, Sociological Bulletin, Vol. V, P. 158.
6. Dubey, S.C., 1969, Manav Aur Sanskriti, Raj Kamal Prakashan, Delhi.
7. Kapadia, K.M., 1958, Marriage and Family in India, Rawat Publication.
8. Ross, Aleen, D., 1961, The Hindu Family in Its Urban Setting Indian Branch, Oxford University Press.
9. Shah, A.M., 1973, The Household Dimension of the Family in India Crient Longman, New Delhi.
10. Desai, I.P., 1964, Some Aspects of Family in Mahua, Asia Publishing House, Newyork.
11. Mukharji, Ram Krishna, 1965, The Sociologist and Social Change in India Today.
12. Gore, M.S., 1968, Urbanization and Family Change, Popular Prakashan, Bombay.
13. Kolenda, P.M., 1967, Family Structure in Village Lonikhand.
14. Singh, Yogendra, 1973, Social Change in India.
15. Pandey, Mamta, Gramin Sanyukt Parwar Ke Badalate Pratiman.

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 42, Hindi Edition, Year-21, Jan.- June 2025

शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत् किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन

•प्रीति सोनी
••मीता झा

सारांश- विद्यार्थियों में मानसिक स्वास्थ्य उनके भावनात्मक, सामाजिक और बौद्धिक संतुलन को दर्शाता है, जो उनके समग्र विकास और सीखने की क्षमता को प्रभावित करता है। एक स्वस्थ मानसिक स्थिति विद्यार्थी को आत्मविश्वासी, एकाग्र और चुनौतियों का सामना करने में सक्षम बनाती है। शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत् किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य की भिन्नता को ज्ञात करना है। प्रस्तुत शोध अध्ययन में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया। शोध में रायपुर जिले के माध्यमिक विद्यालयों (4 शासकीय एवं 4 अशासकीय) के कुल 200 विद्यार्थियों (100 छात्र एवं 100 छात्रा) का चयन गैरअनुपातिक यादृच्छिक न्यादर्श विधि द्वारा किया गया है। प्रस्तुत शोधकार्य हेतु सुशमा तलेसरा एवं अख्तर बानो (2005) द्वारा निर्मित मानसिक स्वास्थ्य बैटरी का उपयोग किया गया है। अध्ययन में प्रदत्तों से प्राप्तांको का मध्यमान, प्रमाणिक विचलन एवं टी-मूल्य द्वारा सांख्यिकीय विश्लेषण किया गया है। निष्कर्ष में छात्र तथा छात्राओं के के मानसिक स्वास्थ्य में सार्थक अंतर पाया गया। जिसमें देखा गया कि छात्राओं का मानसिक स्वास्थ्य छात्रों की अपेक्षा अधिक पाया जाता है। शासकीय तथा अशासकीय माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य में सार्थक अंतर पाया गया। जिसमें देखा गया कि अशासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों में शासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों की अपेक्षा मानसिक स्वास्थ्य अधिक पाया जाता है। साथ ही अध्ययन में महत्वपूर्ण सूझाव प्रदर्शित किये गये है।

मुख्य शब्द- कार्य संतुष्टि, शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, प्राध्यापक, तुलनात्मक अध्ययन, लिंग भेद

प्रस्तावना- किशोरावस्था मानव जीवन का अत्यंत महत्वपूर्ण और संवेदनशील चरण होता है, जिसमें शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और भावनात्मक परिवर्तनों की अधिकता देखी जाती है। यह एक संक्रमणकाल है, जिसमें बाल्यावस्था की सरलता से

• शोधार्थी, मनोविज्ञान अध्ययनशाला, पंडित रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर
•• प्रोफेसर, मनोविज्ञान अध्ययनशाला, पंडित रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर

युवावस्था की जटिलताओं की ओर कदम बढ़ता है। इस समय किशोर अपनी पहचान की खोज में रहते हैं और समाज, परिवार, विद्यालय एवं साथियों से मिलने वाले अनुभवों के आधार पर उनका मानसिक संतुलन बनता या बिगड़ता है। ऐसे में यदि किशोरों को उचित मार्गदर्शन, समर्थन और प्रेरणा नहीं मिलती है, तो उनके मानसिक स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। मानसिक तनाव, चिंता, आत्मविश्वास की कमी और आत्मघाती विचार जैसी समस्याएँ इस अवस्था में प्रकट हो सकती हैं।

शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के वातावरण, संसाधनों, शिक्षण विधियों, शिक्षकों की संवेदनशीलता और अनुशासनात्मक नीतियों में स्पष्ट भिन्नता पाई जाती है, जो किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य को भिन्न-भिन्न रूपों में प्रभावित करती है। इन दोनों प्रकार के विद्यालयों में अध्ययनरत किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य की दशा एवं दिशा का तुलनात्मक अध्ययन न केवल शिक्षा व्यवस्था की प्रभावशीलता को उजागर करता है, बल्कि यह भी स्पष्ट करता है कि कौन-से कारक किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य को पोषित करने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं। इस अध्ययन का उद्देश्य है कि किशोरों की मानसिक स्थिति को बेहतर समझकर, उनके संपूर्ण विकास हेतु शैक्षणिक नीतियों में आवश्यक सुधारों का सुझाव प्रस्तुत किया जा सके।

मानसिक स्वास्थ्य- मानसिक स्वास्थ्य एक व्यक्ति की संज्ञानात्मक, भावनात्मक और व्यवहारिक स्थिति का संकेतक होता है, जो यह निर्धारित करता है कि वह जीवन की दैनिक चुनौतियों का सामना कितनी संतुलित और सकारात्मक दृष्टि से करता है। मानसिक रूप से स्वस्थ किशोर आत्मविश्वासी, सामाजिक रूप से सक्रिय, भावनात्मक रूप से स्थिर और निर्णय लेने में सक्षम होते हैं। वे न केवल पढ़ाई में अच्छे प्रदर्शन करते हैं, बल्कि सहपाठियों एवं परिवारजनों के साथ भी बेहतर संबंध बनाए रखते हैं। मानसिक स्वास्थ्य का ह्रास किशोरों में उदासी, चिड़चिड़ापन, आत्मग्लानि, एकाकीपन और कभी-कभी आत्मघाती प्रवृत्तियों को जन्म दे सकता है। किशोरावस्था में यदि मानसिक स्वास्थ्य की अनदेखी की जाए तो यह न केवल शैक्षिक उपलब्धि को बाधित करता है, बल्कि भविष्य के सामाजिक एवं व्यावसायिक जीवन में भी गहरे प्रभाव छोड़ता है। इसलिए किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य को गंभीरता से समझना और शैक्षणिक व पारिवारिक परिवेश में उन्हें सकारात्मक समर्थन देना अत्यंत आवश्यक है।

संबंधित शोध अध्ययन

अख्तर एवं बरूआ (2025) नें विद्यार्थियों के मानसिक तनाव व शैक्षणिक तनाव का अध्ययन किया। अध्ययन का उद्देश्य मानसिक स्वास्थ्य और शैक्षणिक तनाव के बीच संबंध का पता लगाना था। अध्ययन ढाका और चटग्राम स्थित छह निजी विश्वविद्यालयों के 297 विद्यार्थियों पर किया था। छात्रों के शैक्षणिक तनाव और मानसिक स्वास्थ्य को मापने के लिए एक स्वीकृत प्रश्नावली का उपयोग किया गया। आंकड़ों के विश्लेषण के लिए मल्टीपल रिग्रेशन म, डल का प्रयोग किया गया। अध्ययन में यह पाया गया कि शैक्षणिक तनाव के चार आयामों और छात्रों के मानसिक स्वास्थ्य के बीच सकारात्मक एवं सार्थक सह-संबंध है।

कपिल (2023) नें वर्तमान परिवेश में किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य का शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन किया। अध्ययन में उत्तर प्रदेश के देवरिया जिले के महाविद्यालय में अध्ययनरत् शहरी व ग्रामीण क्षेत्र के 20 छात्र एवं 20 छात्राओं का न्यादर्श के रूप में चयन किया गया। शैक्षिक उपलब्धि के मापन हेतु पूर्व कक्षाओं के प्राप्तांकों को लिया गया तथा मानसिक स्वास्थ्य के मापन हेतु अरूण कुमार सिंह एवं अल्पना सेनगुप्ता द्वारा निर्मित मानसिक स्वास्थ्य मापनी का प्रयोग किया गया। शोध के निष्कर्ष में मानसिक स्वास्थ्य का शैक्षिक उपलब्धि पर सकारात्मक प्रभाव पाया गया।

और्थ एवं विक (2022) ने किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य एवं उसके विभिन्न घटकों का अध्ययन किया। इस शोध के लिए 275 किशोरों का चयन स्तरीकृत यादृच्छिक नमूना विधि से किया गया। डेटा संग्रह हेतु मानसिक स्वास्थ्य मापनी का उपयोग किया गया तथा आंकड़ों का विश्लेषण विवरणात्मक पद्धति से किया गया। अध्ययन के निष्कर्षों से स्पष्ट हुआ कि मानसिक स्वास्थ्य किशोरों के मानसिक, शारीरिक एवं सामाजिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। साथ ही यह भी पाया गया कि मानसिक स्वास्थ्य का उनकी शैक्षिक उपलब्धियों पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।

शुक्ला (2017) ने केन्द्रीय विद्यालयों के किशोर छात्रों के सकारात्मक मानसिक स्वास्थ्य खेल में भागीदारी के संदर्भ में अध्ययन किया। इस अध्ययन में न्यादर्श के रूप में 15–22 वर्ष के 100 किशोर छात्र जो खेल में नियमित रूप से भाग लिए हैं चयनित किया गया। परिणाम यह है कि जो किशोंर छात्र खेल में नियमित रूप से भाग लिए है उनका मानसिक स्वास्थ्य सार्थक रूप से अधिक अच्छा पाया गया है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि प्रतिस्पर्धात्मक खेल किशोर छात्रों के मानसिक स्वास्थ्य को बढ़ावा देती है।

चटर्जी (2016) ने लिंग आधारित भिन्नता के आधार पर मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन किया। अध्ययन का उद्देश्य किशोरावस्था के प्रारंभिक चरण में आने वाले बालकों एवं बालिकाओं के मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव का परीक्षण करना था। राँची के विभिन्न विद्यालयों से चुने गए 50 किशोर विद्यार्थियों (25 बालक और 25 बालिका) को न्यादर्श के लिए चयन किया गया। प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषण माध्य, मानक विचलन एवं 'ज' मान के माध्यम से किया गया। अध्ययन के निष्कर्षों से ज्ञात हुआ कि बालक एवं बालिकाओं के मानसिक स्वास्थ्य स्तर में सार्थक अंतर पाया गया। बालकों का मानसिक स्वास्थ्य स्तर बालिकाओं की अपेक्षा अधिक पाया गया।

उद्देश्य

1. लिंग के आधार पर विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन करना।
2. शाला प्रकार के आधार पर विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन करना।

परिकल्पनाएँ-

1. छात्र तथा छात्राओं के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य में सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा।

2. शासकीय तथा अशासकीय माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य में सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा।

अध्ययन की परिसीमाएँ-

- प्रस्तुत लघुशोध अध्ययन में छत्तीसगढ़ राज्य के रायपुर जिले के विद्यालयों में अध्ययनरत् कक्षा 11 के विद्यार्थियों तक परिसीमित है।
- अध्ययन में केवल रायपुर जिले के विद्यालयों को शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के आधार पर विभाजित कर न्यादर्श लिया गया है।
- प्रस्तुत शोधकार्य हेतु 200 विद्यार्थियों (100 छात्र व 100 छात्राएँ) का चयन किया गया है।

न्यादर्श- शोध में रायपुर जिले के माध्यमिक विद्यालयों (4 शासकीय एवं 4 अशासकीय) के कुल 200 विद्यार्थियों (100 छात्र एवं 100 छात्रा) का चयन गैरअनुपातिक यादृच्छिक न्यादर्श विधि द्वारा किया गया है।

उपकरण- प्रस्तुत शोधकार्य हेतु सुषमा तलेसरा एवं अख्तर बानो (2005) द्वारा निर्मित मानसिक स्वास्थ्य बैटरी का उपयोग किया गया है।

सांख्यिकीय विश्लेषण- प्रस्तुत अध्ययन में प्रदत्तों से प्राप्तांको का मध्यमान, प्रमाणिक विचलन एवं टी-मूल्य द्वारा सांख्यिकीय विश्लेषण किया गया है।

विश्लेषण एवं विवेचना

परिकल्पना 01-छात्र तथा छात्राओं के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य में सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा।

तालिका क्रमांक - 1

छात्र तथा छात्राओं के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य का विवरण

क्र.	तुलनात्मक समूह	प्रदत्तों की संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	टी-मूल्य
1	छात्राएँ	100	181.44	6.837	3.114
2	छात्र	100	178.61	5.751	
df = 198		p > 0.05			

उपर्युक्त सारणी से स्पष्ट है कि छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य का मध्यमान 181.44 व प्रमाणिक विचलन 6.837 प्राप्त हुआ तथा छात्रों के मानसिक स्वास्थ्य का मध्यमान 178.61 व प्रमाणिक विचलन 5.751 प्राप्त हुआ। छात्र तथा छात्राओं के मध्य मानसिक स्वास्थ्य का टी-मूल्य 3.114 है जो स्वतंत्रता की कोटि 198 तथा सार्थकता स्तर 0.05 के तालिका मान से अधिक है अत: दोनों के मध्य सार्थक अंतर पाया गया।

इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि छात्र तथा छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य में सार्थक अंतर पाया गया तथा अत: परिकल्पना अस्वीकृत की जाती है। मध्यमान की तुलना से यह स्पष्ट होता है कि छात्राओं का मानसिक स्वास्थ्य छात्रों की अपेक्षा अधिक होता है।

परिकल्पना 01- शासकीय तथा अशासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य में सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा।

तालिका क्रमांक - 2
शासकीय तथा अशासकीय विद्यालय
के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य का विवरण

क्र.	तुलनात्मक समूह	प्रदत्तों की संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	टी-मूल्य
1	शासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों	100	180.14	4.578	10.829
2	अशासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों	100	186.86	4.189	
df = 198		p > 0.05			

उपर्युक्त सारणी से स्पष्ट है कि शासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य का मध्यमान 180.14 व प्रमाणिक विचलन 4.578 प्राप्त हुआ तथा अशासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य का मध्यमान 186.86 व प्रमाणिक विचलन 4.189 प्राप्त हुआ। शासकीय तथा अशासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों के मध्य मानसिक स्वास्थ्य का टी-मूल्य 10.829 है जो स्वतंत्रता की कोटि 198 तथा सार्थकता स्तर 0.05 के तालिका मान से अधिक है अत: दोनों के मध्य सार्थक अंतर पाया गया।

इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि शासकीय तथा अशासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य में सार्थक अंतर पाया गया तथा अत: परिकल्पना अस्वीकृत की जाती है। मध्यमान की तुलना से यह स्पष्ट होता है कि अशासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों में शासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों की अपेक्षा मानसिक स्वास्थ्य अधिक होता है।

निष्कर्ष- छात्र तथा छात्राओं के के मानसिक स्वास्थ्य में सार्थक अंतर पाया गया। जिसमें देखा गया कि छात्राओं का मानसिक स्वास्थ्य छात्रों की अपेक्षा अधिक पाया जाता है। शासकीय तथा अशासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य में सार्थक अंतर पाया गया। जिसमें देखा गया कि अशासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों में शासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों की अपेक्षा मानसिक स्वास्थ्य अधिक पाया जाता है।

सुझाव- विद्यालयों में प्रशिक्षित काउंसलरों की नियुक्ति की जानी चाहिए जो किशोरों को उनके मानसिक द्वंद्वों, तनाव, आत्म-संदेह और सामाजिक समस्याओं से उबरने में मार्गदर्शन दे सकें। शासकीय विद्यालयों में यह सुविधा विशेष रूप से आवश्यक है जहाँ छात्रों को सामाजिक और आर्थिक चुनौतियों का अधिक सामना करना पड़ता है।

शिक्षकों को किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य के प्रति संवेदनशील बनाने हेतु प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। उन्हें यह सिखाया जाए कि छात्रों में तनाव, अवसाद या आत्मग्लानि जैसे लक्षणों को कैसे पहचाना जाए और उन्हें किस प्रकार सहानुभूति और सहयोग प्रदान किया जाए।

विद्यालयों में भयमुक्त, सहयोगात्मक और प्रेरणादायक वातावरण विकसित किया जाना चाहिए जिससे किशोर अपने विचार और समस्याएं खुलकर साझा कर सकें।

किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य के संरक्षण में अभिभावकों की भूमिका भी महत्वपूर्ण होती है। विद्यालयों को नियमित रूप से अभिभावकों के लिए जागरूकता कार्यक्रम आयोजित करने चाहिए ताकि वे अपने बच्चों के भावनात्मक और मानसिक

परिवर्तनों को समझ सकें और उन्हें सकारात्मक समर्थन दे सकें।

छात्रों के लिए समूहगत कार्य, खेलकूद, सांस्कृतिक कार्यक्रम, और जीवन कौशल प्रशिक्षण जैसी गतिविधियाँ आयोजित की जानी चाहिए जो आत्म-विश्वास, आत्म-अभिव्यक्ति और सामूहिक सहयोग को बढ़ावा देती हैं। ये गतिविधियाँ मानसिक तनाव को कम करने में सहायक होती हैं।

विद्यालयों में मानसिक स्वास्थ्य संबंधी सुविधाओं, संसाधनों और प्रशिक्षित कर्मचारियों की उपलब्धता सुनिश्चित की जाए ताकि इन विद्यालयों में पढ़ने वाले किशोरों को समान अवसर और समर्थन मिल सके जैसे कि अशासकीय विद्यालयों में होता है।

संदर्भ सूची-

- Akter, R. and Barua, D. (2025). Academic Stress and Students' Mental Health. *Society & Sustainability,* 7(1), 23–31.
- Chatterjee, S. (2016). Gender based differences: an overview of mental health. *International Journal of Indian Psychology,* 3(2), 1-4.
- Kapil, A.K. (2023). A Study of the Impact of Adolescents' Mental Health on Academic Achievement in the Present Context. *A Quarterly Multidisciplinary Peer-reviewed online Journal*, 2(1), 179-189.
- Orth, Z. and WYK, B. (2022). Rethinking mental wellness among adolescents: an- integrative review. *Protocol of mental health components systematic review*, 11(83)1-7.
- Shukla, P.K. (2017). A study of positive mental health among male adolescent students of central school with special reference to participation in sports. New Roots. *A journal of school science research*, 4(1&2), 3438.

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 42, Hindi Edition, Year-21, Jan.- June 2025

रीवा जिले के वृद्धों की आर्थिक, स्वास्थ्य एवं मनोवैज्ञानिक समस्याओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन

• विमला यादव
•• महानंद द्विवेदी

सारांश- आधुनिक जीवनशैली, संयुक्त परिवार प्रणाली का विघटन, आर्थिक असमानता एवं स्वास्थ्य सेवाओं की सीमित उपलब्धता ने वृद्धजनों के जीवन को विशेष रूप से प्रभावित किया है। इस शोध में रीवा जिले के शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में निवासरत वृद्धजनों की आर्थिक निर्भरता, पेंशन की स्थिति, स्वास्थ्य संबंधी परेशानियाँ (जैसे- उच्च रक्तचाप, मधुमेह, नेत्र एवं अस्थि रोग) तथा सामाजिक उपेक्षा और मानसिक अवसाद जैसी मनोवैज्ञानिक समस्याओं का गहराई से विश्लेषण किया जाना है। वृद्धजन न केवल आर्थिक रूप से असुरक्षित हैं, बल्कि उन्हें समुचित स्वास्थ्य सेवाओं और पारिवारिक सहयोग का भी अभाव है। मानसिक समस्याएँ, विशेषकर अकेलापन और उपेक्षा, उनकी गुणवत्ता-पूर्ण जीवन जीने की क्षमता को प्रभावित करती हैं।

मुख्य शब्द- वृद्धजन, आर्थिक परनिर्भरता, स्वास्थ्य समस्याएं, मानसिक तनाव

प्रस्तावना- भारत जैसे विकासशील देश में वृद्धजन जनसंख्या का एक महत्वपूर्ण वर्ग हैं, जो सामाजिक, सांस्कृतिक एवं नैतिक मूल्यों के संवाहक माने जाते हैं। भारतीय संस्कृति में बुजुर्गों को 'अनुभव का खजाना', 'परिवार का मार्गदर्शक' और 'आशीर्वाद स्वरूप' माना गया है। किंतु बदलते सामाजिक संरचना, परिवार व्यवस्था के विघटन और आर्थिक प्रतिस्पर्धा के युग में वृद्धों की स्थिति चिंताजनक हो गई है। जीवन की इस उत्तर अवस्था में जब उन्हें सुरक्षा, सम्मान और सहानुभूति की आवश्यकता होती है, तब उन्हें उपेक्षा, तिरस्कार और अकेलेपन का सामना करना पड़ता है।

वृद्धजन वे व्यक्ति हैं, जिनकी आयु 60 वर्ष या उससे अधिक होती है। भारत में 2011 की जनगणना के अनुसार कुल जनसंख्या का लगभग 8.6 प्रतिशत हिस्सा वृद्धजनों का था और यह आँकड़ा 2021 तक लगभग 10 प्रतिशत के आसपास पहुँच गया है। यह प्रतिशत लगातार बढ़ रहा है, जिससे स्पष्ट होता है कि आने वाले वर्षों में वृद्धों की समस्याएँ और अधिक व्यापक और गंभीर हो सकती हैं। रीवा जिला जो मध्यप्रदेश का एक

• शोधार्थी समाजशास्त्र, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
•• प्राध्यापक, समाजशास्त्र, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

महत्वपूर्ण जिला है, यहाँ भी जनसंख्या के इस वर्ग की स्थिति कुछ भिन्न नहीं है। यहाँ के अधिकांश वृद्ध ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करते हैं, जहाँ आधारभूत सुविधाओं का अभाव, गरीबी, अशिक्षा और पारिवारिक विघटन उनकी समस्याओं को और गहरा बना देता है। प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य रीवा जिले के वृद्धजनों की आर्थिक, स्वास्थ्य एवं मनोवैज्ञानिक समस्याओं का समग्र अध्ययन करना है।

आर्थिक समस्याएँ- अधिकांश वृद्धजन जीवन के उत्तरार्ध में आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर नहीं रहते। सेवा-निवृत्ति, बेरोजगारी, पारिवारिक संपत्ति में अधिकार से वंचित रहना, पेंशन न मिलना या अपर्याप्त पेंशन उनकी आर्थिक स्थिति को अस्थिर बनाता है। ग्रामीण क्षेत्रों में यह स्थिति और विकट होती है, जहाँ वृद्धों के पास आय का कोई नियमित साधन नहीं होता है। पेंशन योजनाओं की सीमित पहुँच और असंगठित क्षेत्र में जीवन व्यतीत करने वाले लोगों की संख्या अधिक होने के कारण वे सामाजिक सुरक्षा से वंचित रह जाते हैं।

स्वास्थ्य संबंधी समस्याएँ- वृद्धावस्था में स्वास्थ्य समस्याएँ जैसे उच्च रक्तचाप, मधुमेह, नेत्र एवं श्रवण दोष, हड्डियों की दुर्बलता, मानसिक असंतुलन आदि सामान्य रूप से देखे जाते हैं। लेकिन स्वास्थ्य सुविधाओं की सीमित उपलब्धता, महंगी चिकित्सा सेवाएँ और चिकित्सकों की कमी रीवा जिले के वृद्धों के लिए चुनौती बन जाती हैं। शहरी क्षेत्रों में भले ही कुछ हद तक चिकित्सा सुविधाएँ उपलब्ध हों, परंतु ग्रामीण क्षेत्रों में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों की स्थिति अत्यंत दयनीय है। दवाइयों की अनुपलब्धता, रोग की सही पहचान में कठिनाई और समय पर चिकित्सा न मिलने से वृद्धों की समस्याएँ और बढ़ जाती हैं।

मनोवैज्ञानिक समस्याएँ- वृद्धावस्था में मानसिक समस्याओं का होना स्वाभाविक है, विशेषत: तब जब व्यक्ति परिवार से उपेक्षित हो या अकेले रह रहा हो। एकल परिवार की अवधारणा, बच्चों की रोजगार हेतु बाहर प्रवास, समाज की व्यस्त जीवनशैली आदि कारणों से वृद्धजन मानसिक रूप से अकेले पड़ जाते हैं। उन्हें न केवल संवाद की कमी का अनुभव होता है, बल्कि आत्मग्लानि, हीन भावना, अवसाद और कभी-कभी आत्महत्या जैसे विचार भी उत्पन्न होने लगते हैं। कई वृद्धजन स्वयं को समाज पर बोझ समझने लगते हैं, जो उनकी मनोस्थिति को और अधिक अस्थिर करता है।

सामाजिक व पारिवारिक परिप्रेक्ष्य- पूर्व में संयुक्त परिवारों में वृद्धजनों को विशेष सम्मान और निर्णय लेने की भूमिका प्राप्त होती थी। किंतु आज की भौतिकवादी संस्कृति में यह स्थिति उलट गई है। पारिवारिक कलह, पीढ़ियों के बीच मतभेद, वृद्धजनों की सलाह को महत्व न देना, उन्हें अनुपयोगी समझना आदि सामाजिक व्यवहार वृद्धावस्था को पीड़ादायक बना रहे हैं।

सरकारी योजनाओं की सुलभता एवं प्रभावशीलता- भारत सरकार और राज्य सरकारों द्वारा वृद्धजनों के लिए अनेक योजनाएँ संचालित की जाती हैं जैसे- इंदिरा गांधी राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना, वृद्धजन स्वास्थ्य देखभाल योजना, वरिष्ठ नागरिक कार्ड, आश्रय गृह योजना इत्यादि। किंतु इन योजनाओं का वास्तविक लाभ रीवा जिले के ग्रामीण वृद्धों तक बहुत कम पहुँच पाता है। जागरूकता की कमी, दस्तावेजों की जटिल

प्रक्रिया, भ्रष्टाचार और लापरवाही जैसी समस्याएँ इन योजनाओं की प्रभावशीलता को सीमित करती हैं।

उपरोक्त समस्याओं को दृष्टिगत रखते हुये रीवा जिले में वृद्धजनों की आर्थिक, स्वास्थ्य एवं मनोवैज्ञानिक समस्याओं पर कोई समग्र और क्षेत्रीय अध्ययन अब तक उपलब्ध नहीं है। यह शोध इन तीनों पहलुओं को एक साथ समाहित करते हुए न केवल वृद्धजनों की समस्याओं की पहचान करता है, बल्कि उनके समाधान हेतु भी सुझाव प्रस्तुत किया गया है। यह शोध पत्र समाजशास्त्र, जनस्वास्थ्य, मनोविज्ञान, तथा सामाजिक नीति निर्माण में कार्यरत संस्थाओं और शोधकर्ताओं के लिए उपयोगी होगा। अतः प्रस्तुत शोध पत्र में रीवा जिले के विभिन्न क्षेत्रों से चयनित वृद्धजनों के प्रत्यक्ष अनुभव, सामाजिक परिस्थितियाँ, स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता, पारिवारिक सहयोग, सरकारी योजनाओं की पहुँच एवं मनोवैज्ञानिक स्थिति का गहराई से अध्ययन कर समेकित निष्कर्ष और नीतिगत सुझाव प्रस्तुत किये गये हैं। यह अध्ययन न केवल स्थानीय प्रशासन को वृद्ध कल्याण योजनाओं के प्रभावी कार्यान्वयन हेतु मार्गदर्शन देगा, बल्कि समाज को अपने वृद्धजनों के प्रति दायित्वबोध भी करायेगा।

शोध का उद्देश्य- प्रस्तुत शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य रीवा जिले के वृद्धजनों की जीवन स्थितियों का समग्र विश्लेषण करना है, जिससे उनकी आर्थिक, स्वास्थ्य संबंधी एवं मनोवैज्ञानिक समस्याओं की वास्तविकता को समझा जा सके। वृद्धावस्था एक संवेदनशील अवस्था है, जिसमें व्यक्ति को विशेष सहयोग, सुरक्षा एवं सम्मान की आवश्यकता होती है। लेकिन वर्तमान सामाजिक एवं आर्थिक परिवेश में वृद्धजन अनेक प्रकार की चुनौतियों का सामना कर रहे हैं। इस शोध पत्र के माध्यम से उनके जीवन में आने वाली प्रमुख समस्याओं की पहचान कर, उन्हें दूर करने हेतु व्यवहारिक एवं नीतिगत समाधान प्रस्तुत करना प्रमुख उद्देश्य है। अतः प्रस्तुत शोध अध्ययन से संबंधित कुछ प्रमुख उद्देश्यों को सम्मिलित किया गया है, जो इस प्रकार है–

- रीवा जिले के वृद्धजनों की आर्थिक स्थिति का विश्लेषण करना।
- वृद्धजनों की स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं की पहचान
- वृद्धावस्था में आने वाली मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक समस्याओं का मूल्यांकन करना।

उपरोक्त शोध उद्देश्यों को केन्द्र में रखकर प्राथमिक समंकों का विश्लेषणात्मक मूल्यांकन कर इस शोध पत्र को सार्थक मानकों के अनुरूप पूर्ण किया गया है।

शोध प्रविधि- प्रस्तुत अध्ययन प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों पर प्रमुख रूप में आधारित है। रीवा जिले से प्राथमिक समंकों का संकलन करने के लिए दैव निदर्शन प्रविधि के सविचार निदर्शन विधि द्वारा कुल 300 वृद्धों का प्रत्यक्ष रूप से चयन कर सर्वेक्षण का कार्य किया गया और सर्वेक्षण करते समय साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग मौलिक तथ्यों को एकत्रित किया गया है। जिन्हें सरल व सुबोध बनाने हेतु उन्हें वर्गीकृत कर सारणीयन किया गया है और प्रस्तुत अध्ययन को पूर्ण करने हेतु वर्णनात्मक, अन्वेषणात्मक एवं विश्लेषणात्मक प्रविधियों का यथासम्भव उपयोग किया गया है।

प्रस्तुत अध्ययन कार्य को यथार्थ मानकों के अनुरूप पूर्ण करने के लिए रीवा जिले के वृद्धजनों को आधार बनाया गया और उनकी समस्याओं को पता लगाने के लिए प्राथमिक स्तर पर सर्वेक्षण का कार्य करने हेतु उनसे प्रत्यक्ष सम्पर्क स्थापित कर तथ्यों को संग्रहित किया गया है। इस प्रकार मौलिक रूप में संकलित किये गये समंकों का परीक्षणात्मक विश्लेषण करने हेतु सांख्यिकीय प्रविधियों का भी उपयोग किया गया है।

विश्लेषण- प्रस्तुत शोध अध्ययन के अंतर्गत रीवा जिले के 300 वृद्धजनों से प्रत्यक्ष साक्षात्कार एवं प्रश्नावली के माध्यम से प्राप्त जानकारी का सांख्यिकीय विश्लेषण किया गया है। अध्ययन का उद्देश्य वृद्धावस्था में आने वाली प्रमुख समस्याओं की पहचान करना, जिनमें आर्थिक, स्वास्थ्य एवं मनोवैज्ञानिक पक्ष प्रमुख रूप से सम्मिलित हैं। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु एक तालिका तैयार की गई है, जिसमें वृद्धजनों द्वारा बताए गए प्रमुख समस्याओं को क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत किया गया है। तालिका के माध्यम से यह ज्ञात करने का प्रयास किया गया है कि रीवा जिले में वृद्धों की समस्याएँ किस प्रकार की हैं और किस समस्या का प्रतिशत अधिक है। अत: अध्ययन क्षेत्र से चयनित वृद्धजनों से प्राथमिक रूप में संकलित किये गये समंकों को तालिका क्रमांक-01 में प्रस्तुत कर विश्लेषणात्मक विवेचन किया गया है, जो इस प्रकार है-

तालिका क्रमांक-01

रीवा जिले में वृद्धों की प्रमुख समस्याओं का विवरण

क्र.	समस्या का प्रकार	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
1.	आर्थिक रूप से परनिर्भर	75	25.00
2.	वृद्धावस्था पेंशन प्राप्त नहीं हो रही है	36	12.00
3.	स्वास्थ्य संबंधी गंभीर समस्याएँ (जैसे- डायबिटीज, बी.पी., हड्डी रोग आदि)	54	18.00
4.	नियमित स्वास्थ्य जाँच की सुविधा नहीं मिल पा रही है	33	11.00
5.	अकेलापन/परिवार से उपेक्षा	30	10.00
6.	मानसिक तनाव/अवसाद की स्थिति	27	9.00
7.	सामाजिक गतिविधियों में सहभागिता का अभाव	24	8.00
8.	सरकारी योजनाओं की जानकारी का अभाव	21	7.00
कुल योग		300	100.00

स्रोत- व्यक्तिगत सर्वेक्षण।

उपरोक्त तालिका क्रमांक 01 से स्पष्ट होता है कि रीवा जिले के 300 वृद्धजनों से प्राप्त उत्तरों के आधार पर उनकी प्रमुख समस्याओं का विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। इसमें यह स्पष्ट होता है कि 25 प्रतिशत प्रतिशत वृद्धजन आर्थिक रूप से परनिर्भर हैं, जो वृद्धावस्था में आत्मनिर्भर जीवन जीने में सबसे बड़ी बाधा है। 18 प्रतिशत उत्तरदाता स्वास्थ्य संबंधी गंभीर समस्याओं जैसे मधुमेह, उच्च रक्तचाप, हड्डियों की कमजोरी आदि से पीड़ित हैं, जबकि 11 प्रतिशत को नियमित स्वास्थ्य जाँच की सुविधा नहीं मिलती, जो स्थानीय स्वास्थ्य सेवाओं की कमी को दर्शाता है। 12 प्रतिशत वृद्धजनों को पेंशन नहीं मिल रही, जिससे उनकी आय का स्रोत बाधित होता है। साथ ही 10 प्रतिशत वृद्धजनों ने पारिवारिक उपेक्षा और अकेलेपन और 9 प्रतिशत ने मानसिक तनाव या अवसाद जैसी

समस्याओं की बात कही, जो वृद्धावस्था में मनोवैज्ञानिक असुरक्षा को दर्शाता है। इसके अलावा 8 प्रतिशत ने सामाजिक गतिविधियों में भागीदारी के अवसरों की कमी और 7 प्रतिशत ने सरकारी योजनाओं की जानकारी के अभाव को अपनी प्रमुख समस्या बतलाया है। अत: इस विश्लेषणात्मक अध्ययन से स्पष्ट है कि वृद्धों की समस्याएँ बहुआयामी हैं और इनके समाधान हेतु सामाजिक, स्वास्थ्य तथा प्रशासनिक स्तर पर ठोस और समन्वित प्रयासों की आवश्यकता है।

निष्कर्ष- प्रस्तुत शोध पत्र "रीवा जिले के वृद्धों की आर्थिक, स्वास्थ्य एवं मनोवैज्ञानिक समस्याओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन" से यह स्पष्ट होता है कि वृद्धजन एक अत्यंत संवेदनशील एवं उपेक्षित वर्ग के रूप में उभर कर सामने आए हैं। सामाजिक संरचना में आए परिवर्तन, संयुक्त परिवार प्रणाली का क्षरण और आर्थिक संसाधनों की असमानता ने वृद्धजनों को जीवन की इस उत्तर अवस्था में अनेक प्रकार की समस्याओं से जूझने के लिए विवश कर दिया है। अध्ययन के अंतर्गत प्राप्त आंकड़ों के विश्लेषण से यह सामने आया कि सर्वाधिक वृद्धजन आर्थिक रूप से परनिर्भर हैं, जिन्हें न नियमित आय का स्रोत प्राप्त होता है और न ही पेंशन योजनाओं का समुचित लाभ मिल पाता है। इसके साथ ही स्वास्थ्य संबंधी समस्याएँ जैसे उच्च रक्तचाप, मधुमेह, अस्थि रोग आदि बड़े पैमाने पर परिलक्षित होते हैं, परंतु स्वास्थ्य सेवाओं की नियमित उपलब्धता का अभाव उनकी स्थिति को और अधिक जटिल बनाता है। मानसिक स्तर पर भी वृद्धजन अकेलेपन, उपेक्षा और तनाव से ग्रसित पाये गये हैं, जिससे उनके जीवन की गुणवत्ता प्रभावित होती है। साथ ही यह भी स्पष्ट हुआ कि अधिकांश वृद्धजन सरकारी योजनाओं की जानकारी या पहुँच से वंचित हैं, जिससे उनका सामाजिक सुरक्षा कवच कमजोर होता है। अत: यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि वृद्धों की समस्याओं के समाधान हेतु केवल पारिवारिक उत्तरदायित्व ही पर्याप्त नहीं, बल्कि प्रशासन, समाज एवं स्वयंसेवी संस्थाओं को मिलकर जागरूकता, सेवा-सुविधाओं और नीति-निर्माण में सक्रिय भूमिका निभानी होगी, ताकि वृद्धजन गरिमामय, सुरक्षित और आत्मसम्मानपूर्ण जीवन जी सकें।

वृद्धजनों की समस्या हेतु समाधान- रीवा जिले के वृद्धजनों की समस्याओं के समाधान हेतु बहुआयामी और समन्वित प्रयासों की आवश्यकता है। सर्वप्रथम वृद्धावस्था पेंशन योजनाओं को अधिक प्रभावशाली एवं पारदर्शी बनाया जाना चाहिए, ताकि प्रत्येक पात्र वृद्धजन को समय पर आर्थिक सहायता प्राप्त हो सके। स्वास्थ्य क्षेत्र में विशेष वृद्धजन चिकित्सा शिविरों का आयोजन, मोबाइल हेल्थ यूनिट्स की स्थापना एवं प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों को सशक्त बनाना आवश्यक है, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में भी स्वास्थ्य सेवाएँ सुलभ हो सकें। मनोवैज्ञानिक समस्याओं के समाधान हेतु सामुदायिक वृद्ध सेवा केंद्र, मनोरंजन एवं परामर्श सेवाओं की स्थापना होनी चाहिए। परिवारों में वृद्धजनों के प्रति सम्मान, संवाद और सहभागिता की संस्कृति को पुन: स्थापित करना आवश्यक है, जिसके लिए जन-जागरूकता कार्यक्रम एवं सामाजिक अभियान चलाया जाना चाहिए। साथ ही सरकारी योजनाओं की जानकारी पहुँचाने के लिए पंचायत स्तर पर सूचना केंद्र, हेल्पलाइन एवं स्वयंसेवकों की सहायता ली जा सकती है। अत: सामाजिक संगठन, एनजीओ और स्थानीय प्रशासन को मिलकर वृद्धजनों के कल्याण हेतु नीतिगत

सहयोग प्रदान करना चाहिए ताकि वे अपने जीवन के इस अंतिम चरण को गरिमा, सुरक्षा और आत्मनिर्भरता के साथ जी सकें।

संदर्भ सूची-

1. मिश्र, ए.एन., भारत में वृद्धावस्था की सामाजिक समस्याएँ, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2018, पृष्ठ 52
2. शर्मा, के.एल., समाजशास्त्र के सिद्धांत एवं व्यवहार, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, मेरठ, पृष्ठ 134
3. भारत सरकार, भारत में वृद्धजन पर रिपोर्ट, सांख्यिकी एवं कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय, नई दिल्ली, 2021, पृष्ठ 18
4. श्रीवास्तव, आर., ग्रामीण भारत में वृद्धजनों की स्वास्थ्य देखभाल, सेज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2019, पृष्ठ 77
5. देसाई, एम., वृद्धजनों एवं उनके परिवारों के साथ सामाजिक कार्य, कॉन्सेप्ट पब्लिशिंग कंपनी, 2015 नई दिल्ली, पृष्ठ 112
6. भारत सरकार, जनगणना 2011 रीवा जिला प्रोफाइल, जनगणना निदेशालय, मध्यप्रदेश, पृष्ठ 9
7. विश्व स्वास्थ्य संगठन, वृद्धावस्था और स्वास्थ्य, जिनेवा : डब्ल्यूएचओ रिपोर्ट, 2020, पृष्ठ 4
8. मध्यप्रदेश सामाजिक न्याय विभाग, वरिष्ठ नागरिक नीति एवं योजनाएँ, भोपाल, 2021, पृष्ठ 29
9. दुबे, ए., भारत में वृद्धजनों की मनोसामाजिक समस्याएँ, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2017, पृष्ठ 45

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 42, Hindi Edition, Year-21, Jan.- June 2025

तिलक व गोखले के तुलनात्मक राजनीतिक विचार

•मेघा माहेश्वरी
•• रश्मि सोमवंशी

सारांश- गोखले और तिलक दोनों ही 20वीं सदी के शुरुआती दौर के अग्रणी राजनीतिक नेता थे। हालाँकि, उनकी विचारधाराओं में काफी अंतर था। गोखले को उदारवादी स्वभाव का एक नेकदिल व्यक्ति माना जाता था, जबकि तिलक एक क्रांतिकारी व्यक्ति थे जो स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए बल प्रयोग से परहेज नहीं करते थे। गोखले का मानना था, भारत को स्वशासन पाने के लिए संवैधानिक तरीका अपनाना चाहिए। वे ब्रिटिश सरकार को विश्वासपात्र मानते थे इसलिए उनका सहयोग करना चाहते थे। उन्होंने सरकार से प्रशासनिक सुधारों की सिफारिश की तथा प्राथमिक मुफ्त शिक्षा की भी वकालत की। उन्होंने भारतीयों के साथ हो रहे अन्याय के खिलाफ भी आवाज उठाई वहीं दूसरी ओर तिलक के दर्शन और मनोविज्ञान का आधार गीता है वह गीता के कर्मयोगी थे तथा आजीवन कर्मशील में डटे रहे। उन्होंने भारत की सोई जनता को निद्रा से जगा दिया। गाँधीजी को स्वराज की बुनियाद तैयार करके दी और स्वतंत्रता की इमारत खड़ी की और गाँधीजी ने तिलक द्वारा तैयार बुनियाद को पूरा किया था। तिलक गाँधीजी की तरह अहिंसा के पुजारी तो नहीं थे लेकिन भारत को तत्कालीन परिस्थितियों में से निकालने के लिए वे हिंसा का मार्ग उचित नहीं मानते थे।

मुख्य शब्द- अन्याय, स्वतंत्रता, कूटनीति, उच्च शिक्षा, राष्ट्रीय शिक्षा, स्वराज, शिवाजी महोत्सव, समाज सुधारक, राष्ट्रहित, आजादी

तिलक का स्कूल में पढ़ते समय जो व्यक्तित्व का नया रूप सामने आया, वे विद्यार्थी जीवन की अनेक घटनाएँ है, जिसमें स्पष्ट कर दिया था कि वे न तो खुद अपने ऊपर अन्याय को सहन करेगा और न ही किसी पर होने वाले अन्याय को चुपचाप देखेंगे। तिलक जी कभी अपने जीवन में डरकर अन्याय के सामने नहीं झुके। उनका कहना था अगर हम ऐसे ही काम करते रहेंगे जो सरल लगते हैं, तो हम कुछ नया नहीं सिख पायेंगे। एक बार एक मित्र ने पूछा कि तिलक जी आप ये बताओ, आपको गणित का इतना अच्छा ज्ञान होते हुये भी आपने उसमें सर्वोच्च डिग्री नहीं ली। बल्कि कानून की

• रिसर्च स्कॉलर, राजनीति विज्ञान, लॉर्ड्स विश्वविद्यालय, चिकानी, अलवर
•• शोध निर्देशिका, लॉर्डस विश्वविद्यालय, चिकानी, अलवर

पढ़ाई करी तो ऐसा आपने क्यों किया, तो इस पर तिलक ने बड़ी सहजता से जवाब दिया–गणित में उच्च शिक्षा प्राप्त करके मुझे नौकरी तो अवश्य मिल जायेगी, लेकिन देश की सेवा के लिए गणित नहीं बल्कि वकालत की आवश्यकता है। तिलक व गोखले दोनों का मानना था कि अगर "हमें स्वतंत्रता व समाज सुधार चाहिये तो राष्ट्रीय शिक्षा का प्रचार करना पड़ेगा।[1] अगर लोग शिक्षित होंगे तभी तो समाज सुधार में हमारे सहायक बनेंगे। तिलक शिक्षा क्या देते थे ? तो वे केवल विषय की नहीं, बुनियादी शिक्षा दिया करते थे, वे छात्रों को विषय की गहराई समझाया करते थे, उन्हें विषय की गहरायी को समझने के लिए प्रेरित करते थे।

तिलक ने लोगों को जो देश की वास्तविक स्थिति है उससे अवगत करवाया और अवगत करवाने के लिए उन्होंने कुछ उपाय सोचे, किस प्रकार जनता में नव चेतना आयेगी, जागृति आयेगी इसलिए उन्होंने पत्र केसरी का प्रकाशन किया, उन्होंने न केवल पत्रों में साहित्य लिखा, धर्म लिखा, इतिहास लिखा। इसके साथ–साथ बड़ी निर्भकता के साथ अंग्रेजी सरकार की कूटनीति, उनके बारे में कटु लेख प्रकाशित किये इसलिए सर वेलेंटाइन शिरोल ने तिलक को "भारतीय अशांति का जनक" का शीर्षक दिया। तब भी तिलक नहीं रूके। उनके पाठकों की संख्या दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी। प्रतिदिन पाठक जुड़ते जा रहे थे। सरकार ने तिलक पर मानहानि का केस लगाकर उनको कारावास की सजा सुनाई गई। सजा सुनाने के उपरांत उनको और प्रतिष्ठा मिली व जननायक एवं लोकनायक के रूप में प्रतिष्ठित हुये। उस समय जो कॉग्रेस थी, उदारवादियों का वह समूह था, उनके लिए स्वराज का मतलब अलग था। कॉग्रेस के उदारवादियों के लिए स्वराज का अर्थ–अंग्रेजी साम्राज्य और उसके अन्तर्गत औपनिवेशिकता शासन और थोड़ी बहुत हमें छूट, जबकि तिलक ने कहा–स्वराज्य का अर्थ विदेशी नियंत्रण से मुक्त स्वतंत्रता। उन्होंने उदारवादियों को उनकी गति, उनके कार्यों के तरीकों को भिक्षावृति कहा, उन्होंने इसका विरोध किया। तिलक ने कहा– मैं जानता हूँ हमें अपने अधिकारों के लिए माँग करनी चाहिये, हमें अनुभव करके ये माँग करनी चाहिए कि माँग अस्वीकार न हों, माँग प्रस्तुत करने और याचना करने में बहुत अंतर है। अगर आप अपनी माँग को न मंजूर किये जाने पर लड़ने को तैयार हो, तो निश्चित मानिये आपकी माँग कभी न मंजूर नहीं की जायेगी तिलक ने अपनी सारी शक्ति राष्ट्रीय आन्दोलन को शक्तिशाली बनाने में लगा दी, जो नवयुवक है उनमें आत्मनिर्भरता, आत्म बलिदान, आत्म विश्वास के भाव जागृत करे। तिलक जी चाहते थे भारतीय स्वतंत्रता किसी की कृपा से न ले बल्कि अपने अधिकार से अपने सामर्थ्य के बल पर अर्जित करे। इसलिए तिलक ने एकता के लिए मनाये जाने वाले सार्वजनिक गणेश उत्सव और शिव जयंती उत्सव की स्थापना की "गणेश जो आस्था के प्रतीक थे और छात्रपति शिवाजी महाराज जो व्यवस्था के प्रतीक थे।[2] छत्रपति शिवाजी महाराज के स्वराज्य विचारों का आदर्श सामने रखकर तिलक ने समस्त भारतवर्ष में राष्ट्रीय एकात्मकता को बढ़ावा दिया और देश प्रेम की भावना उनमें जाग्रत हो इसलिए यह उत्सव मनाये गये, अब तिलक का कार्यक्षेत्र बढ़ गया वे राष्ट्र नेता के रूप में पहचाने जाने लगे। उन्होंने साथ–साथ सामाजिक कार्य पर भी विशेष ध्यान दिया, नशाबंदी के लिए उन्होंने सरकार पर अपनी

लेखनी से दबाव बनाया, बाल-विवाह की निंदा की और विधवा के पुर्नविवाह पर जोर दिया। दलित और पिछड़े वर्गों को समाज की मुख्यधारा में लाने का प्रयास किया। "बहिष्कार के लिए जनता को प्रेरित किया।"

तिलक ने सम्पूर्ण भारत में स्वराज्य की प्राप्ति के लिए इतना उत्साह वातावरण तैयार किया कि हमें अपने शासन पर नियंत्रण चाहिये, हमें गुलामी नहीं चाहिये। उनका मानना था कि अन्याय और अत्याचार करने वाला तो दोषी होता है ही, मगर अन्याय और अत्याचार को सहन करने वाला तो उससे भी बड़ा दोषी होता है। तिलक का विचार था कि कॉग्रेस अंग्रेजी सत्ता को चुनौती देना सीखे। स्वराज्य हासिल करना है तो कुर्बानी देने के लिए सभी को तैयार रहना चाहिये। "तिलक ये नहीं चाहते थे कि स्वराज्य की प्राप्ति हमें, हिंसा का प्रयोग करके हो"[3] लेकिन अगर शांतिपूर्ण तरीके से प्रभावशाली कार्य सिद्ध न हो पाये तो हिंसात्मक कार्यों को अपनाने में भी कोई हानि नहीं है। तिलक का कहना था कि अगर आपका उद्देश्य सच्चा है और आपका संघर्ष अन्याय के खिलाफ है तो आपको अवश्य सफलता मिलेगी। जवाहरलाल नेहरू ने तिलक को भारतीय क्रान्ति का जनक कहा और गाँधी ने भारत के निर्माता कहा। गाँधी ने देशवासियों को सम्बोधित करते हुये कहा लोकमान्य तिलक नहीं रहे यह विश्वास नहीं होता कि हमसे बिछड़ गये वे जनता के प्राण बन चुके थे। एक महान व्यक्ति चला गया सिंह की गर्जना खामोश हो गयी। आने वाली कई पीढ़ियाँ अपने आधुनिक भारत का निर्माता मानकर सदा याद करेगी। ऐसे महापुरुष को मृत समझना गलत है, उनकी आत्मा सदा हमारे साथ रहेगी। भारत माता के इस महान सपूत के कर्तव्य को हम सत् सत् नमन करते हैं।

लोकमान्य तिलक का अविस्मरणीय योगदान है, देश के स्वतन्त्रता संग्राम की दिशा ही बदल कर रख दी थी, राष्ट्रीय जीवन में उनके योगदान को आदरपूर्वक याद किया जाता रहेगा। तिलक की विशिष्ट प्रतिभा और तीक्ष्ण समझ, साहस, न्याय की भावना और स्वराज्य के अभिनव विचार सभी को हमेशा प्रेरित करते रहेंगे, तिलक ने ब्रिटिश शासन से देश को मुक्त कराने में अहम योगदान दिया था। उन्होंने अपना सब कुछ त्याग कर पूरा जीवन देश के लिए संघर्ष किया।

गोखले जी जाति व्यवस्था और छुआछूत के खिलाफ थे, इन्होंने महिलाओं की मुक्ति और शिक्षा के लिये कई जरूरी पहल भी की। तिलक ने नरमपंथी को यह समझाया कि आप समझो, उदाहरण देकर वह बोलते है कि अगर ब्रिटिश अच्छे होते तो वह धर्म के आधार पर क्यूं बंगाल को बाँटते क्यूं हिंदू-मुस्लिम को लड़वाते। अगर उनको विकास ही करना था। ब्रिटिश सिर्फ यहाँ पर आर्थिक फायदे के लिये आये है हमारे फायदे के लिये नहीं। अगर हम कुछ ऐसा करे कि जो फायदा ये ले रहे है वे उनको मिलना बन्द हो जाए तो वे खुद ही चले जाऐंगे। ब्रिटिश की पुलिस, अदालत में जाना बंद कर दो। भारतीय इतिहास में अनेक महान देश प्रेमी हुये। जिन्होंने धरा को धन्य किया। ब्रिटिश हुकूमत के दौर में ऐसे देशभक्त एवं संस्कृति सेवी पुरुष हुये जिन्होंने आत्मसम्मान की कीमत पर कभी समझौता नहीं किया। इतिहास के युग से अनेक देशभक्तों ने देश की मान प्रतिष्ठा और देश की आजादी के संघर्ष के लिए अपना जीवन न्यौछावर कर दिया। ऐसे महापुरुषों के चरित्र दिशा-दशा दोनों में प्रेरणात्मक परिवर्तन लाने में संजीवनी का काम करते हैं। ऐसे ही

महान व्यक्ति तिलक और गोखले है। ऐसे महान भूमि के वीरों को जिन्हें आज सिर उठाकर स्मरण किया जाता है ऐसे त्याग, बलिदान, नैतिक बातें हमें अपने जीवन में ग्रहण करनी चाहिए। ईमानदारी से एक सच्चे नागरिक की तरह देश की सेवा में अपना कर्त्तव्य निभाना चाहिए। ये आजादी की साँस देने के लिए पता नहीं कितने नवयुवकों व नायकों ने अपना सब कुछ न्यौछावर कर दिया था। आधुनिक युग में भी इन विचारों की आवश्यकता है। आधुनिक राजनीतिक चिन्तन का विकास राष्ट्रीय आन्दोलन के विकास के साथ जुड़ा हुआ है। तिलक व गोखले राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान ऐसी उभरने वाली दो हस्ती है।

लोकमान्य तिलक एक प्रखर पत्रकार, स्वतन्त्रता सेनानी, समाज सुधारक और राष्ट्रीय नेता होने के साथ-साथ एक दार्शनिक तथा विद्वान शिक्षक, संस्कृति के पण्डित इतिहासकार, गणित और खगोलीय रूचि रखने वाले बहुआयामी व्यक्ति थे। तिलक को अपने धर्म, संस्कृति, देश के इतिहास पर गर्व था इसलिए युवकों के मन में उनके लिए गहरा सम्मान था। गोखले उदारवाद विचारक के साथ यथार्थवादी राजनीतिक, समाज सेवी व व्यवहारिक आदर्शवादी थे। गोखले भी अन्य महान राष्ट्रहित एवं राष्ट्रनिर्माता के रूप में सामने आते है। गोखले उदारवादी चिंतक होने के नाते व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का समर्थन करते थे। गोखले की भाषा प्रभावकारी होती थी। तिलक, गोखले दोनों ही अच्छे मित्र थे परन्तु इनके कार्य करने के तरीके भिन्न थे। तिलक उग्रवादी समर्थक तथा गोखले उदारवादी समर्थक थे। कॉग्रेस सरकार को अंग्रेज सरकार ने मान्यता दी कि भारतीय लोग शांतिपूर्ण मार्ग से अर्जी और प्रार्थना करके अपनी माँगे सरकार के सामने रखे, इसलिए कॉग्रेस को अनुयायी, विनय का मंच बनया गया। विरोध, याचिका, प्रार्थना में वि'वास रखने वाले इस मंच में भारत की सम्पूर्ण आजादी की माँग करने का साहस कतई नही था। इस ढीले-ढाले मंच को प्रखर राष्ट्रवाद के मंच में तब्दील करने का धैर्य किसी ने दिखाया तो वह नाम लोकमान्य तिलक। लोकमान्य तिलक ने इस मंच से छाती ठोककर स्वराज्य को अपना जन्मसिद्ध अधिकार4 बताते हुये, स्वाधीनता के आन्दोलन को जन आन्दोलन के रूप में तब्दीन कर दिया। भारतीय स्वतंत्रता मुहिम के तिलक अग्रस्थानों में उनके विचार लोगों द्वारा स्वीकृत थे। इसलिए लोकमान्य का आदरणीय शीर्षक उन्हें लोगों द्वारा ही प्राप्त हुआ था।[5]

उस तरह आजादी मिलना मुश्किल था और एक लम्बा समय भी लग जाता। उग्रवाद विचारक तिलक समझना चाहते थे कि आजादी हम लड़कर लेंगे और अंग्रेजों की किसी भी बातों को नहीं मानना है उनके किसी तरीके से हाथ नहीं मिलाना है। अंग्रेजों की संस्था का हमें बहिष्कार करना है। अंग्रेजों के साथ हमें कोई भी समझौता नहीं करना है, हमें अधिराज्य पद नहीं चाहिए हमें पूर्ण तरह से आजादी चाहिए। गोखले ने जॉन स्टुअर्ट मिल और एडमंड बर्क को भी पढ़ा जो राजनीतिक अर्थशास्त्र और समाज सुधारक रहे है। इनके राजनीतिक सिद्धान्त से काफी प्रभावित थे वे इसको भी लाना चाहते थे। गोखले शिक्षा के महत्व को बहुत अच्छे से समझे थे, जानते थे कि एक शिक्षक व्यक्ति अपने अधिकार को समझता है तो उसे पता है आजादी की कीमत वह अपने कानूनी अधिकार को जानता है, उस व्यक्ति को पागल नहीं बनाया जा सकता, उस व्यक्ति को हमें भेड़ चाल की तरह नहीं चलाना पड़ेगा कि किसी भी आन्दोलन में

झोंक दिया वह अपनी मर्जी से सब कुछ कर सकता है। तिलक ने भी शिक्षा के महत्व को समझते हुए राष्ट्रभक्ति के निर्माण में सुशिक्षित लोगों का योगदान बढ़ाने हेतु अपने सहयोगियों के साथ न्यू इंग्लिश स्कूल और फर्ग्यूसन कॉलेज पुणे की भी नींव रखी। उन्होंने पत्रकारिता में प्रवेश करते हुये जंगे आजादी की शुरूआत की, समाचार पत्रों के माध्यम से उन्होंने अपने तीव्र और प्रभावशाली विचारों से अंग्रेजों की क्रूरता और अमानुष्यता से समाज को परिचित करवाया।

बंगाल विभाजन में नरम दल, याचिका डाल रहा था, दूसरी तरफ गरम दल के नेता का कहना था, कर ली आपने प्रार्थना, डाल दी याचिका, मिल गई आजादी, ये नहीं देंगे आपको आजादी, ये हमारे दे'ा का बँटवार कर रहे है। हमारे लोगों को जाति और धर्म के आधार पर बाँट रहे है और ये चीज अंग्रेज करने में सफल भी रहे, कहीं न कहीं, उन्होंने कॉग्रेस को भी तोड़ दिया। नरम दल के लोग का क्या तरीका था कि वे निवेदन करते थे आप ये चीज मुहैया कराओ, हमारे लोगों को इस चीज की जरूरत है। आप सरकार में हो तो ये आपकी जिम्मेदारी बनती है, दोनों की विचारधारा में बहुत फर्क था, गोखले जहाँ पर विरोध करते थे कि लड़के-लड़कियों की शादी की उम्र न्यूनतम होनी चाहिए, तो तिलक कहते थे नहीं स्वीकृति आयु विधेयक, जैसे यह विधेयक पास नहीं करना चाहिए हम भारतीयों को अगर समस्या है तो यह हम मिलकर हल करेंगे और इस चीज में वे प्रगतिशील विचारधारा नहीं रखते थे। तिलक ने इस विधेयक का विरोध किया।[6] तिलक और गोखले इस बातचीत पर एक-दूसरे के विरोधी थे। तिलक, ब्रिटिश की जो नीति थी उनका विरोध करते थे, वे कहते थे चाहे कोई भी प्रथा हो, हमारी प्रथा है, हम उससे निपटेंगे। ब्रिटिश सरकार को कोई हक नहीं है कि वे हमारे ऊपर कानून बनाये।

दूसरी तरफ गोखले कहते थे कि समाज सुधारने के लिए हमें कानून बनाने की जरूरत है। चाहे ब्रिटिश के रहते बने या हमें बाद में बनाना पड़े। हमें ऐसे कानून लाने की जरूरत है जो कि समाज के अन्दर की बुराईयों को आगे जाने से रोकती है तो ऐस कानून हमें लाने चाहिये। ये बात इनके बीच में खण्डन था। उसके बाद उदारवादी का तरीका क्या था कि कैसे स्वतंत्रता लानी है यानि हमें विरोध भी जाहिर करना है, लेकिन संवैधानिक तरीके से। हमारे अधिकारों की बात करनी है, मौलिक अधिकार, मानवा अधिकार की बात करनी है, लेकिन तिलक का दृष्टिकोण था कि हमें और ज्यादा आक्रामक होना पड़ेगा। हमें लड़ के आजादी लेनी पड़ेगी। हमें किसी के सामने क्यूं झुकेंगे। हमारा आजादी का अधिकार, हमारा खुद का अधिकार है तो हम क्यों निवेदन बार-बार करें। अंग्रेजों के सामने क्यों हाथ जोड़े, क्यों गिड़गिड़ाये।[7] हमारी आजादी हमारा अधिकार है। तिलक की ये विचारधारा थी।[8] दूसरी तरफ गोखले चाहते थे कि जो ये ब्रिटिश संस्था ने तैयार किया है, इन्हीं में से धीरे-धीरे आजादी लेंगे और हमारे अधिकार के बारे में इनको आगाह करेंगे, इनको प्रार्थना करेंगे तो हमें आजादी मिलेगी। ये चीज हालाँकि इतनी ज्यादा सफल तो नहीं हो पायी। 1920 का दौर आते-आते जो नरमपंथी थे उनको भी इस बात का एहसास हो गया कि ऐसे नहीं चलेगा। हमें थोड़ा सा आक्रामक रूख तो अपनाना पड़ेगा। गाँधीजी भी गोखले को गुरू तो मानते थे, परन्तु भी उनकी सोच पर पूरी तरह विश्वास नहीं करते थे। गोखले जब अफ्रीका में गाँधी से मिले थे।[9] तो उनके अन्दर इनको एक सम्भावना दिखी कि

यह वह व्यक्ति है जो बड़े मांस को खींच सकता है, बड़ी जनता इनके पीछे चल सकती है इनमें आन्दोलन करने की एक अपार क्षमता है मिलने के बाद उनसे कहते है कि आप भारतीयों की समस्या को समझिये, उनकी क्या दिक्कते हैं, "ब्रिटिश हुकूमत के अन्दर हमें क्या-क्या झेलना पड़ रहा है" उनको समझिये और पूरे देश का भ्रमण कीजिये उसके बाद अपने देश में एक मुहिम चलाइये और कॉग्रेस से भी जुड़े। गाँधी भी तो एक बड़े नेता थे गोखले के हर एक दृष्टिकोण से यह सहमत नहीं थे, जैसे कि गोखले का यह मानना था कि ब्रिटिश ने यहाँ पर संस्था स्थापित की है, हमें उनके अन्दर सुधार करना है, हमें अपनी संस्था स्थापित करने की जरूरत नहीं है, हमें इनमें ही सुधार करके, अपना काम चलायेंगे। लेकिन गाँधी का मानना था कि हमें ब्रिटिश को भारत से बाहर भगाना है और हमें अपने देश को आजाद कराना है तो इन संस्थाओं को ध्वस्त करना पड़ेगा। जैसे कि सविनय अवज्ञा आन्दोलन, असहयोग आन्दोलन हुआ, उसमें गाँधीजी की मुहिम थी कि चरखा चलाओ, भारतीय वस्त्र अपनाओ, विदेशी वस्त्रों की होली जलाओ, विदेशियों की नौकरियों को ठुकराओ, इन सब संस्थाओं को फैल कर दो। तब ये अपने आप ही चले जायेगा। फिर क्या करेंगे यहाँ रहकर, लेकिन गोखले की सोच ऐसी नहीं थी, उनका मानना था कि किसी भी तरह ब्रिटिश से आजादी लेनी है पर प्रार्थना करके। तिलक व गोखले का निजी स्वार्थ नहीं था बस इनका समर्पण था कि हमें हमारे देश को आगे बढ़ाना चाहिये यानि अपनी पूरी जिम्मेदारी निभाना चाहते थे फिर समाज को ऊपर उठाना हो, चाहे देश को आगे बढ़ाना हो, उसमें हर तरह से सहयोगी थे और इनके इरादे बिल्कुल सच्चे थे, ये चाहते थे कि देश आजाद हो।

संदर्भ ग्रथ सूची

1. कुमार राजेश, गोपाल कृष्ण गोखले (जीवनी), ड्रीम बुक सर्विस, दिल्ली 2007, पृष्ठ 16
2. कुमारी ममता, गोपाल कृष्ण गोखले, ग्रंथ अकादमी, नई दिल्ली, 2012, पृष्ठ 27
3. प्रभा, डॉ. (श्रीमती) शशि आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तक, आर्या पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 2015, पृष्ठ 22
4. गुप्ते, डॉ. मनीषा गोपाल कृष्ण गोखले, व्यक्तित्व एवं कृतित्व, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 2005, पृष्ठ 2
5. कुलश्रेष्ठ, डॉ. (श्रीमती) सुधा, भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक का योगदान, सत्यम पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 2007, पृष्ठ 35
6. गुप्ता, विश्व प्रकाश एवं गुप्ता मोहिनी, लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक (व्यक्ति और विचार), राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1999, पृष्ठ 91
7. कुमार सिंह, मनोज एवं कुमार चौधरी शैलेश कुमार, भारतीय राजनीतिक चिन्तक बाल गंगाधर तिलक, डिस्कवरी पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, 2007, पृष्ठ 123
8. वहीं, पृष्ठ 124
9. शर्मा, प्रीतम प्रसाद एवं अरोड़ा मनोज, इन्सां, स्वतंत्रता सेनानी गोपाल कृष्ण गोखले को-ऑपरेशन पब्लिकेशन्स, 2016, पृष्ठ 79

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 42, Hindi Edition, Year-21, Jan.- June 2025

संस्कृत साहित्य में प्रकृति-चित्रण (रघुवंशम् महाकाव्य के विशेष संदर्भ में)

• मधु

सारांश- साहित्य में प्रकृति शब्द का प्रयोग विविध अर्थों में किया जाता है। दर्शनशास्त्र में जहाँ सृष्टि, माया, शाश्वत, सत्य, प्रजा, विचार शून्य स्वभाव आदि के रूप में व्याप्त है वहीं 'गीता' में - 'प्रकृतेः क्रियमाणानि पुनः गुणैः कर्माणि सर्वथा' अर्थात् प्रकृति को गुण एवं अर्थों के कर्ता के रूप में देखा गया है। प्रकृति को सृष्टि के आदि के रूप में स्वीकार करने पर इसका क्षेत्र विस्तृत हो जाता है। महाकवि कालिदास प्रकृति देवी के प्रवीण पुरोहित थे। उनकी सूक्ष्म दृष्टि ने प्रकृति के सूक्ष्म रहस्यों को ज्ञात करके उनके काव्य में समाहित कर दिये। उनके प्राकृतिक वर्णन इतने सजीव है कि वर्णित वस्तु हमारे नेत्रों के समक्ष नृत्य करने लगती है। प्रकृति का सूक्ष्म निरीक्षण करना तथा उसका मार्मिक अंश ग्रहण करना कालिदास के काव्य की महती विशेषता है। रघुवंशम के प्रथम सर्ग में तपोवन का तथा त्रयोदश में त्रिवेणी का सुन्दर वर्णन कल्पना के साथ निरीक्षण शक्ति का मञ्जुल सामंजस्य है। कालिदास की निरीक्षण शक्ति अत्यन्त सूक्ष्म तथा पैनी है, उनका प्रकृक्ति वर्णन वैज्ञानिक तथा प्रभामण्डित है। 'रघुवंशमहाकाव्यम' कविकुलगुरू कालिदास द्वारा रचित विश्व प्रसिद्ध महाकाव्य है। इसमें उन्नीस सर्ग है जिसमें राजा रघु के वंश का वर्णन किया गया है। कालिदास के रघुवंश महाकाव्य में प्रसाद गुण की अगाधता, माधुर्य व मधुर सन्निवेश कोमलकान्त पदावली का प्राचुर्य उपमा की अपूर्वता, अलङ्कारों की रमणीयता, छन्दों की छटा और भाव सौष्ठव और प्रकृति का हृदयकारी चित्रण पर्याप्त मात्रा में विद्यमान है। रघुवंशमहाकाव्यम् में कालिदास ने प्रकृति का अत्यंत सुन्दर वर्णन किया है। प्रकृति के साथ कालिदास को अपूर्व सहानुभूति है। कालिदास का प्रकृति वर्णन बड़ा ही अनुपम है इसका उदाहरण 'रघुवंशमहाकाव्यम' में स्पष्ट दिखता है। कालिदास के महाकाव्य रघुवंशम में देखा गया है कि प्रकृति के प्रति मनुष्य का प्रेम चित्रित करते-करते कवि की भावना मनुष्य के प्रति प्रकृति के प्रेम को चित्रित करने लग जाती है और फिर इन दोनों से हटकर परमेश्वर के प्रति इन दोनों के अनुराग का वर्णन करने लग जाती है। कालिदास वस्तुतः शृंगार एवं प्रकृति सौन्दर्य के सच्चे कवि है। वे प्रकृक्ति के सच्चे पुजारी माने जाते है। प्रकृति उनके काव्य में आकर सजीव चेतन सत्ता बन जाती है और मानवीय भावों का अनुभव करती हुई सी दिखलाई पड़ती है। बाह्य एवं अन्तरू प्रकृति वर्णन में कालिदास अत्यन्त विख्यात हैं। सहज एवं मुखर बाह्य

• सह आचार्या,संस्कृत विभाग, एस आर डी ए गर्ल्स पी जी कॉलेज, हाथरस

प्रकृति तथा अन्तः प्रकृति के दृश्यों का ऐसा संश्लिष्ट चित्रण किया गया है कि हमारे मानसिक नेत्रों के सम्मुख वह दृश्य सजीव नृत्य करने लगता है।

मुख्य शब्द- प्रकृति, दृश्य, ऋतु, मेघ, वृक्ष, व्यवहार, सरोवर, नदी, पर्वत।

प्रकृति शब्द 'प्र' उपसर्गपूर्वक 'क' धातु से 'क्तिन' प्रत्यय के योग से निष्पन्न होता है, जिसका अर्थ है प्रकरण या सन्दर्भ, किन्तु लोक व्यवहार में प्रकृति का अर्थ सन्दर्भ या प्रकरण से न लेकर संसार में दिखायी देने वाले पेड़-पौधों, नदी, पर्वतों, तालाब, निर्झर गुफाओं से लिया जाता है। यह आवश्यक नहीं कि व्युत्पत्तिपरक अर्थ और लोक व्यवहार में व्याप्त अर्थ में साम्य ही हो।

साहित्य में प्रकृति शब्द का प्रयोग विविध अर्थों में किया जाता है। दर्शनशास्त्र में जहाँ सृष्टि, माया, शाश्वत, सत्य, प्रजा, विचार शून्य स्वभाव आदि के रूप में व्याप्त है वहीं ष्गीताष् में - 'प्रकृतेः क्रियमाणानि पुनः गुणैः कर्मणि सर्वथा'[1] अर्थात् प्रकृति को गुण एवं अर्थों के कर्ता के रूप में देखा गया है। प्रकृति को सृष्टि के आदि के रूप में स्वीकार करने पर इसका क्षेत्र विस्तृत हो जाता है।

महाकवि कालिदास प्रकृति देवी के प्रवीण पुरोहित थे। उनकी सूक्ष्म दृष्टि ने प्रकृति के सूक्ष्म रहस्यों को ज्ञात करके उनके काव्य में समाहित कर दिये। उनके प्राकृतिक वर्णन इतने सजीव है कि वर्णित वस्तु हमारे नेत्रों के समक्ष नृत्य करने लगती है। प्रकृति का सूक्ष्म निरीक्षण करना तथा उसका मार्मिक अंश ग्रहण करना कालिदास के काव्य की महती विशेषता है। कालिदास ने प्रकृति चित्रण की निम्न विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए ही रघुवंश महाकाव्य की रचना की है-

मानवीकरण- कालिदास ने प्रकृति को मानवीकृत किया है, यानी उसे मानवीय भावनाओं और क्रियाओं से संपन्न दिखाया है। उदाहरण के लिए, दूसरे सर्ग में, जब राजा दिलीप नन्दिनी की सेवा के लिए वन में जाते हैं, तो रास्ते में पड़ने वाले वृक्षों को ऐसा लगता है कि वे भी दिलीप के साथ चल रहे हैं और उनके विजय की घोषणा कर रहे हैं।

अलंकारों का प्रयोग- कालिदास ने प्रकृति के वर्णन में उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक आदि अलंकारों का प्रयोग किया है, जिससे वर्णन और भी आकर्षक और प्रभावशाली हो गया है।

ऋतुओं का वर्णन- रघुवंश में विभिन्न ऋतुओं का वर्णन भी मिलता है, जो राजाओं के जीवन और घटनाओं से संबंधित है।

भावों की अभिव्यक्ति- प्रकृति के माध्यम से पात्रों के भावों को व्यक्त किया गया है। उदाहरण के लिए, जब राजा दिलीप नन्दिनी की सेवा कर रहे होते हैं, तो प्रकृति उनके प्रति सम्मान और भक्ति व्यक्त करती है।

महाकवि कालिदास के वर्णन नितान्त सूक्ष्म, सुन्दर तथा संश्लिष्ट रूप में होते हैं। "रघुवंशम" के प्रथम सर्ग में तपोवन का तथा त्रयोदश में त्रिवेणी का सुन्दर वर्णन कल्पना के साथ निरीक्षण शक्ति का मञ्जुल सामंजस्य है। कालिदास की निरीक्षण शक्ति अत्यन्त सूक्ष्म तथा पैनी है, उनका प्रकृक्ति वर्णन वैज्ञानिक तथा प्रभामण्डित है। इस

वैज्ञानिक तथ्य निरीक्षण चातुरी का प्रत्यक्ष वर्णन कालिदास ने इस पद्म में किया है –

'सीकर–व्यतिकरं मरीचिभिर्दूरमत्यवनते विवस्वाति।
इन्द्र चापं परिवेष शून्यतां निर्झरास्तव पितुर्वजन्त्यमीपम।।'

ये उक्ति रूढ़ि का अनुसरण करने वाले कवि की नहीं हो सकती वरन् ये उक्तियाँ उस कवि की है जो मुक्त दृष्टि से प्रकृति की शोभा देखते हुये सब कुछ भूल जाता है। कालिदास के प्रकृति वर्णन में अनेक वैशिष्टच है। कवि मानव सौन्दर्य की तीव्रता तथा यथार्थता के अभिव्यञ्जन के निमित्त प्रकृति का आश्रय लेता है तो कहीं वह प्रकृति के ऊपर मानव भावों तथा व्यापारों का ललित आरोप करता है। 'रघुवंशमहाकाव्यम' कविकुलगुरू कालिदास द्वारा रचित विश्व प्रसिद्ध महाकाव्य है। इसमें उन्नीस सर्ग है जिसमें राजा रघु के वंश का वर्णन किया गया है। कालिदास के रघुवंश महाकाव्य में प्रसाद गुण की अगाधता, माधुर्य व मधुर सन्निवेश कोमलकान्त पदावली का प्राचुर्य उपमा की अपूर्वता, अलंकारों की रमणीयता, छन्दों की छटा और भाव सौष्ठव और प्रकृति का ह्रदयकारी चित्रण पर्याप्त मात्रा में विद्यमान है। रघुवंशमहाकाव्यम् में कालिदास ने प्रकृति का अत्यंत सुन्दर वर्णन किया है। प्रकृति के साथ कालिदास को अपूर्व सहानुभूति है। कालिदास का प्रकृति वर्णन बड़ा ही अनुपम है इसका उदाहरण 'रघुवंशमहाकाव्यम' में स्पष्ट दिखता है।

चतुर्थ सर्ग में सूर्य और चन्द्रमा के गुणों का वर्णन करते हुये दिखलाया गया है कि जिस प्रकार सूर्य और चन्द्रमा हमें आनन्द प्रदान करते हैं वैसे ही राजा रघु है जो प्रजा को आनन्द प्रदान करते है। प्रकृति के इन्हीं दो रूप सूर्य और चन्द्रमा का आरोपण राजा रघु में किया गया है–

'यथा प्रहलादनाच्चन्द्रः प्रतातक्तपनो यथा तथैव, सोऽभूदन्वथों राजा प्रकृति रज्जनात्।।'[2]

अर्थात् जिस प्रकार चन्द्रमा और सन्ताप देने से सूर्य सार्थक नाम वाले हुये उसी प्रकार वे रघु राजा को प्रसन्न करने से सार्थक नाम वाले हुये।

'रजोभिः स्यन्दनोद्धतैर्गजैश्च घनसन्निभैः। भुवस्तलमिव व्योम कुर्वन् व्योमेव भूतलम्।।'[3]

रथ से उड़ी हुई धूलि से और मेघ के तुल्य (गर्जन करने वाले तथा वर्ण और आकार वाले) हाथियों से क्रम से आकाश को पृथ्वीतल की भाँति और पृथ्वीतल को आकाश की भांति करते हुये श्वे रघु महाराज पूर्व दिशा को गये। दुःख की स्थिति में भी प्रकृति इसी प्रकार संवेदनशील दिखाई देती है। प्रस्तुत उदाहरण में कालिदास द्वारा प्रकृति की इसी संवेदनशीलता को प्रस्तुत किया गया है। इन्दुमती के विरह में अज विलाप कर रहे हैं तो सरोवरों में स्थित हंसादि पक्षी भी करूण स्वर में क्रंदन करने लगते है।

"हंसश्रेणीषु तारासु कुमुद्वत्सु च वारिषु। विभूतयस्तदीयानां पर्यस्ता यशसामिव।।"[4]

हंसों की पंक्तियों में, नक्षत्रों में और कुमुद से युक्त जल में रघुसम्बन्धी यश की सफेदीरूप विभूति मानों फैली हुई थी। 'विललाप स बाष्पगनदं सद्दजामप्यपहाय धीरताम्। अभितत्प्तमयोऽपि माईवं भजते कैच कथा शरीरिषु।।'[5]

अर्थात् अज स्वाभाविक भो धैर्य को छोड़कर आँसू से गदगद होकर विलाप करने लगे, तपा हुआ (जड़) लोहा भी कोमल हो जाता है (तब चौतन्य) जीवधारियोंके विषयमें क्या कहना है? अर्थात् दु:खसंतप्त प्राणियों के तरल होने में कोई आश्वर्य नहीं है।
'कुसुमान्यपि गात्रसङ्गमात्प्रभवन्त्यायुरपोहितं यदि न भविपयति हन्त। साधनं किमिवान्यत्प्रहरिवय तो विधे:।।[6]

अर्थात् अज विलाप करते हुये कहते जा रहे हैं कि फूल भी शरीर पर गिरने से प्राण लेने में समर्थ हो सकते हैं तो हाय मारने की इच्छा करने वाले दैव का साधन दूसरी कौन वस्तु नहीं हो सकती है? सभी वस्तुयें प्राण घातक हो सकती है। इन्दुमती द्वारा अपनी सन्तान के समान पालित प्रियकूलता तथा आम्रवृक्ष माता से हीन हो गये हैं। उन्हें देखकर अब को अपने सुखमय दिनों की याद आ जाती है और हृदय में शूल उठ खड़ा होता है –
'तौ सारांसि रसबद्धिरम्बुभि: कूजितै: श्रुतिसुखै: पतत्रिण: वायव: सुरभि पुष्परेणुभिश्छायया च जलदा सिषेधिरे।'

अर्थात् सरोवरों ने मधुर जल से, पक्षियों ने कानों के सुखप्रद कलखों से, वायु ने सुगन्धित पुष्प परागों से, मेघों ने शीतल छाया से उन दोनों राजकुमारों की सेवा की। सप्तम् सर्ग में चन्द्रमा की सुन्दरता का वर्णन करते हुये कहते है–
'तं स्वसा नागराजस्य कुमुदस्य कुमुद्वती, अन्वगात्कुमुदानन्दं शशाङ्कमिव कौमुदी।'[7]

रघुवंशमहाकाव्यम् में महाकवि कालिदास को जहाँ–जहाँ प्रकृति के सुन्दर दर्शन हये हैं, उन्होंने उसे चित्रित करने में तनिक भी देर नहीं लगायी। जैसे ऋतुओं से संबंधित प्रस्तुत उदाहरण उनके प्रक्रतिप्रेमी होने के ही साक्ष्य हैं।
'यवनीमुखपद्माभां सेहे मधुमदं न सरू। बालातपमिवाब्जानामकालजलदोदय:।।'[8]

अर्थात् रघु ने यवन की स्त्रियों के मद्यपान–अनित कमल–सदृश मुख को जैसे वर्षा ऋतु के अलावे और ऋतुओं में मेघों का उदय होना कमल–सम्बन्धी सूर्य की कोमल किरणों को नहीं सहता है उसी भाँति नहीं सहन किया। शरद ऋतु का वर्णन करते हुए महाकवि कालिदास कहते हैं कि–
'पुण्डरीकातपत्रस्तं विकसित्काम चामर: प्रऋतुर्विडम्बयामास न पुन: प्राप्य तच्छियम।।'[9]

अर्थात् श्वेत कमलरूपी छत्र वाली खिले हुये कामरूपी चंवर वाली शरद ऋतु ने उस रघु का अनुसरण किया, किन्तु रघु की शोभा को न पा सकी। महाकवि कालिदास पंचम सर्ग में ओस की बूंदों तथा वृक्ष के पत्तों का वर्णन करते हुए कहते है कि लाल वर्ण के वृक्षों के पत्तों पर पड़ी हुई, हार के स्वच्छ मोतियों के समान निर्मल ओस की बूंदें, लाल लाल ओठों पर वर्तमान, दातों की चमक सहित तुम्हारे मुस्कुराने की तरह सुंदर लग रही है।

'ताम्रोदरेषु पतितं तरूपल्लवेषु निर्धोतहारगुलिकाविशदं हिमाम्भ:।
आभाति लब्वपरभागतयाधरोष्ठे ल लास्मितं सदशनार्चिरिव त्वदीयम्।।[10]

रघुवंशम् के द्वादश सर्ग में राम वनवास का वर्णन करते हये कालिदास दण्डकारण्य की दर्गम्यता तथा भीषणता पर एक पंक्ति भी नहीं लिखते। केवल प्रकृति के कोमल रूपों का चित्रण ही रघुवंशम् में मिलता है। प्रकृति की दृष्टि से रघुवंशमहाकाव्यम् एक सफल महाकाव्य है।

विश्व के विशाल साहित्य में 'शेक्सपियर' को लोग आन्तरिक जगत का और 'ष्कालिदास' को बाह्य जगत् का सर्वश्रेष्ठ साहित्यकार मानते है। बाह्य जगत् के वि में प्राकृतिक वर्णन में कालिदास ने जो काव्य रचना की, वह साहित्य जगत् में अद्वितीय है। कालिदास के महाकाव्य रघुवंशम में देखा गया है कि प्रकृति के प्रति मनुष्य का प्रेम चित्रित करते-करते कवि की भावना मनुष्य के प्रति प्रकृति के प्रेम को चित्रित करने लग जाती है और फिर इन दोनों से हटकर परमेश्वर के प्रति इन दोनों के अनुराग का वर्णन करने लग जाती है। कालिदास वस्तुतः शृंगार एवं प्रकृति सौन्दर्य के सच्चे कवि है। वे प्रकृक्ति के सच्चे पुजारी माने जाते है। प्रकृति उनके काव्य में आकर सजीव चेतन सत्ता बन जाती है और मानवीय भावों का अनुभव करती हुई सी दिखलाई पड़ती है।

बाह्य एवं अन्तरू प्रकृति वर्णन में कालिदास अत्यन्त विख्यात हैं। सहज एवं मुखर बाह्य प्रकृति तथा अन्तः प्रकृति के दृश्यों का ऐसा संश्लिष्ट चित्रण किया गया है कि हमारे मानसिक नेत्रों के सम्मुख वह दृश्य सजीव नृत्य करने लगता है।

कालिदास के सम्बन्ध में पं. चन्द्रशेखर पाण्डेय की अवधारणा सर्वथा तथ्यपूर्ण है कि 'महाकवि कालिदास के प्रकृति वर्णन में निरीक्षण की नवीनता, सहृदयता की समरसता तथा कल्पना की कमनीयता पायी जाती है। उन्होंने प्रधान तथा प्रकृति के केवल भव्य, मनोरम और सौन्दर्य समुज्जवल पक्ष का ही वर्णन किया गया है।' उपर्युक्त उदाहरणों के अनुसार विवेचित तथ्यों के आधार पर यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि महाकवि कालिदास प्रकृति चित्रण में अत्यन्त पारंगत है। उन्होंने प्रकृति एवं मानव के मध्य तदात्म्य स्थापित करते हुये साहित्य के दरबार में अपनी प्रतिभा के गौरव से जिस स्थान पर अधिकार कर कालिदास विराजमान थे, आज भी उस आसन के अधिकारी मात्र कालिदास ही हैं। कहा भी गया -

'पुरा कवीनां गणना प्रसङ्गे कनिष्ठिकाधिष्ठत कालिदासः,
अद्यापि तत्तुल्य कविर्भाव अनामिका सार्थवती बभूव।।'

संदर्भ सूची-

1. श्रीमद् भगवद्गीता 3/27
2. रघुवंश महाकाव्यम् 4/12
3. रघुवंश महाकाव्यम् 4/29
4. रघुवंश महाकाव्यम् 4/19
5. रघुवंश महाकाव्यम् 8/43
6. रघुवंश महाकाव्यम् 8/44
7. रघुवंश महाकाव्यम् 17/6
8. रघुवंश महाकाव्यम् 4/61
9. रघुवंश महाकाव्यम् 8/17
10. रघुवंश महाकाव्यम् 5/70
11. रघुवंश महाकाव्यम्, पंडित हरगोविंद शास्त्री, चौखंबा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, संस्करण सप्तम, वि. सं. 2051,
12. काव्यमाला, श्री विनीत गेरा, गुरुकुल पब्लिशिंग हाउस, हैदराबाद।

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 42, Hindi Edition, Year-21, Jan.- June 2025

भारतीय ज्ञान परंपरा और दर्शनः ऐतिहासिक भूमिका एवं आधुनिक संदर्भ

• अमोल कुमार

सारांश- भारतीय ज्ञान परंपरा विश्व की प्राचीनतम और समृद्ध बौद्धिक परंपराओं में से एक है, जिसने जीवन- दृष्टि, नैतिकता, आध्यात्मिकता और समग्र विकास की दिशा दी। इस परंपरा का मूल आधार 'दर्शन' है, जो केवल तर्क का विषय न होकर आत्मसाक्षात्कार, मोक्ष और जीवन के उद्देश्य की खोज का मार्ग है। दर्शन शब्द 'दृश' से उत्पन्न होकर सत्य और ब्रह्म के अनुभवात्मक साक्षात्कार को इंगित करता है। भारतीय दर्शन में षड्दर्शन (सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, पूर्व मीमांसा, वेदांत) के साथ-साथ बौद्ध, जैन, चार्वाक और लोक परंपराओं की बहुलता भी समाहित है। इन सभी का लक्ष्य आत्मा की पहचान और मोक्ष प्राप्ति रहा है। यह दर्शन केवल विद्वानों तक सीमित नहीं रहा, बल्कि जनमानस में भी जीवंत रहा है। उपनिषद काल ने आत्मा और ब्रह्म के संबंध की व्याख्या कर भारतीय दर्शन की नींव रखी। शंकराचार्य के अद्वैत से लेकर रामानुज के विशिष्टाद्वैत और माध्वाचार्य के द्वैत तक विभिन्न दृष्टिकोणों ने दर्शन को समृद्ध किया। बौद्ध और जैन दर्शनों ने नैतिकता और बहुलता को नया आयाम दिया। आधुनिक संदर्भ में यह दर्शन मानसिक तनाव, पर्यावरणीय संकट और नैतिक विघटन के समाधान प्रस्तुत करता है। योग, ध्यान, वसुधैव कुटुंबकम, और सर्वे भवन्तु सुखिनः जैसे सिद्धांत आज वैश्विक मंच पर स्वीकार्यता पा रहे हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में इसकी समाविष्टि इसका प्रमाण है। अंततः भारतीय दर्शन केवल अतीत की स्मृति नहीं, बल्कि वर्तमान की आवश्यकता और भविष्य की दिशा है। यह दर्शन जीवन को समग्रता से देखने, आत्म-विकास, सामाजिक उत्तरदायित्व और विश्वबंधुत्व की प्रेरणा देता है। इसलिए इसका अध्ययन मात्र शैक्षणिक नहीं, बल्कि मानवीय और वैश्विक चेतना के लिए अनिवार्य है।

मुख्य शब्द- भारतीय ज्ञान परंपरा, भारतीय दर्शन, षड्दर्शन, आत्मा और मोक्ष, योग और ध्यान, नैतिकता और जीवन- दृष्टि

भारतीय ज्ञान परंपरा विश्व की प्राचीनतम और सर्वाधिक समृद्ध बौद्धिक परंपराओं में से एक है, जिसने न केवल भारतवर्ष को, बल्कि सम्पूर्ण मानवता को

• सहायक प्राध्यापक (अतिथि), ए. आई - ए. एस विभाग, रामेश्वरदास पन्नालाल महिला महाविद्यालय, पटना सिटी, पाटलिपुत्र विश्वविद्यालय, पटना

जीवन- दृष्टि, नैतिकता, आध्यात्मिकता और समग्र विकास के सूत्र प्रदान किए हैं। इस परंपरा की विशिष्टता इसकी बहुआयामी दृष्टि में निहित है, जिसमें वेद, उपनिषद, पुराण, आयुर्वेद, व्याकरण, ज्योतिष, गणित, कला, और विशेष रूप से दर्शन जैसे अनुशासनों का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है।[1] दर्शन भारतीय बौद्धिक परंपरा का मूल आधार है, जो न केवल सैद्धांतिक विमर्श है, बल्कि यह आत्मानुभूति, आध्यात्मिक अन्वेषण और जीवन के उद्देश्यों की स्पष्टता का माध्यम भी है।[2] 'दर्शन' शब्द संस्कृत धातु ' दृश' से व्युत्पन्न है, जिसका तात्पर्य केवल इंद्रियगम्य देखने से नहीं, बल्कि सत्य, आत्मा, ब्रह्म और परम यथार्थ के अनुभवात्मक साक्षात्कार से है।[3] भारतीय दर्शन एक ऐसी प्रणाली है जो यथार्थ को केवल तर्क और बुद्धि से नहीं, बल्कि अनुभव, साधना और जीवन के अनुशासन से समझने का प्रयास करती है। इस दर्शन में मोक्ष की प्राप्ति, धर्म के आचरण, कर्म की व्याख्या और आत्मा की खोज जैसे मौलिक प्रश्नों का समाधान प्रस्तुत किया गया है।[4] भारतीय दर्शन की विविधता इसकी शक्ति रही है। षड्दर्शन- सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, पूर्व मीमांसा, और वेदांत ने यथार्थ को समझने के लिए भिन्न-भिन्न पद्धतियाँ अपनाईं, किन्तु इन सभी का अंतिम उद्देश्य आत्मसाक्षात्कार और जीवन-मुक्ति की प्राप्ति रहा। इसके साथ-साथ बौद्ध, जैन, चार्वाक और लोक परंपराओं ने भी भारतीय चिंतन को विस्तृत और बहुलतावादी बनाया। इन दर्शनों ने केवल सैद्धांतिक नूतनता नहीं दी, बल्कि समाज, संस्कृति और जीवन मूल्य निर्माण में भी क्रांतिकारी भूमिका निभाई।[5]

प्राचीन विश्वविद्यालयों नालंदा, तक्षशिला, विक्रमशिला आदि में दर्शनशास्त्र शिक्षा का केन्द्रीय विषय था। वहाँ ज्ञान के साथ आचरण, संयम, सेवा और सामाजिक उत्तरदायित्व की शिक्षा दी जाती थी।[6] भारतीय संत-चिंतक परंपरा में शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, नागार्जुन, बुद्ध, महावीर, वल्लभाचार्य, चौतन्य महाप्रभु, स्वामी विवेकानंद, और श्री अरविंद जैसे विचारकों ने दर्शन को शास्त्र से जन-मानस तक पहुँचाया और इसे एक जीवंत जीवन-दर्शन के रूप में रूपांतरित किया।[7] आज की वैश्विक परिप्रेक्ष्य में जब मानवता भौतिक समृद्धि के साथ मानसिक तनाव, नैतिक विघटन और पर्यावरण संकट से जूझ रही है, तब भारतीय दर्शन की शिक्षाएँ अत्यंत प्रासंगिक हो उठती हैं। अहिंसा, सत्य, करुणा, वसुधैव कुटुम्बकम, सर्वे भवन्तु सुखिनः जैसे सिद्धांत आज की सामाजिक विघटनकारी प्रवृत्तियों के लिए समाधान प्रस्तुत करते हैं। योग, ध्यान, और संतुलित जीवनशैली जैसे भारतीय योगदान आज पूरी दुनिया में मानसिक स्वास्थ्य और आध्यात्मिक संतुलन के लिए अपनाए जा रहे हैं। नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति (2020) में भारतीय ज्ञान परंपरा को समाहित करना इस बात का संकेत है कि आज भी यह परंपरा भविष्य निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। यह केवल अतीत की स्मृति नहीं, बल्कि वर्तमान की आवश्यकता और भविष्य का पथप्रदर्शक है। अतः 'भारतीय ज्ञान परंपरा में दर्शन' का अध्ययन केवल ऐतिहासिक या बौद्धिक जिज्ञासा नहीं, बल्कि एक ऐसी जीवन- दृष्टि की पुनर्खोज है, जो व्यक्ति और समाज दोनों को संतुलन, सह-अस्तित्व और आत्म-विकास की दिशा में ले जा सकती है।[8] यह दर्शन आज भी उतना ही जीवंत है जितना वह सहस्रों वर्ष पूर्व था, और यही इसकी सार्वकालिक प्रासंगिकता का प्रमाण है।

परिचय- भारत एक ऐसा देश है जिसकी सांस्कृतिक और बौद्धिक परंपरा सहस्रों वर्षों पुरानी है। इस परंपरा की विशिष्टता इस बात में निहित है कि यह केवल ज्ञानार्जन तक सीमित नहीं रही, बल्कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को दिशा और दर्शन प्रदान करती रही है। भारतीय ज्ञान परंपरा का मूल आधार जीवन की एक समग्र, संतुलित और मूल्यनिष्ठ दृष्टि है, जो व्यक्ति, समाज, प्रकृति और ब्रह्मांड के बीच सामंजस्य स्थापित करती है। इस परंपरा की आत्मा दर्शन में निहित है, एक ऐसा अनुशासन जो केवल तर्क या विचार का अभ्यास नहीं, बल्कि जीवन जीने की शैली, आत्मबोध की प्रक्रिया और परम सत्य के साक्षात्कार का मार्ग है।

'दर्शन' शब्द संस्कृत धातु ' दृश' से उत्पन्न हुआ है, जिसका अर्थ है "देखना"। किंतु यह देखने की प्रक्रिया केवल भौतिक या इंद्रियजन्य नहीं है, बल्कि यह एक गहन आंतरिक अनुभूति है, जो आत्मा, ब्रह्, और सृष्टि की यथार्थता को प्रत्यक्ष अनुभव करने की चेष्टा करती है। भारतीय परंपरा में दर्शन का लक्ष्य सत्य का तात्त्विक बोध, मोक्ष की प्राप्ति, और जीवन के उद्देश्य की खोज रहा है। इस संदर्भ में भारतीय दर्शन को एक अनुभवप्रधान प्रणाली के रूप में देखा जाता है जो तर्क और साधना दोनों का समन्वय करती है।

भारतीय ज्ञान परंपरा में विभिन्न दार्शनिक मतों और विचारधाराओं को स्थान मिला है। षड्दर्शन–सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, पूर्व मीमांसा और वेदांत–इन सभी ने अपने–अपने ढंग से यथार्थ, आत्मा और ब्रह्म की व्याख्या की है। इनके अतिरिक्त बौद्ध, जैन, चार्वाक और लोक–परंपराओं ने भारतीय चिंतन को और अधिक व्यापक और बहुलतावादी बनाया। यह बहुलता भारतीय दर्शन की जीवंतता का प्रमाण है, जो विरोधी विचारों को भी समाहित कर सकने में सक्षम है।

इतिहास साक्षी है कि भारत में दर्शन केवल विद्वानों तक सीमित नहीं रहा, बल्कि यह जनमानस का हिस्सा बन गया। नालंदा, तक्षशिला, विक्रमशिला जैसे विश्वविद्यालयों में दर्शन शिक्षा का केंद्र रहा, जहाँ विद्यार्थियों को केवल शास्त्र का ज्ञान ही नहीं, बल्कि आचरण, अनुशासन, ध्यान, और सामाजिक उत्तरदायित्व की शिक्षा भी दी जाती थी। शंकराचार्य, बुद्ध, नागार्जुन, रामानुज, विवेकानंद और श्री अरविंद जैसे महापुरुषों ने दर्शन को आमजन से जोड़कर इसे जन–चेतना का हिस्सा बनाया।

भारतीय दर्शन का स्वरूप और विशेषताएँ- भारतीय दर्शन मानव जीवन के गूढ़तम प्रश्नों का उत्तर खोजने का प्रयास है। यह केवल बौद्धिक विचार या चिंतन की प्रक्रिया नहीं है, बल्कि एक जीवन–पद्धति है जो आत्मा, ब्रह्, पुनर्जन्म, कर्म और मोक्ष जैसे विषयों पर गहन विचार प्रस्तुत करता है। भारतीय दर्शन का मुख्य लक्ष्य है –सत्य की खोज, आत्मा की पहचान, ब्रह्म की अनुभूति और अंततः संसारिक बंधनों से मुक्ति की प्राप्ति। यह दर्शन व्यक्ति के मानसिक, नैतिक, और आध्यात्मिक विकास का मार्गदर्शन करता है तथा जीवन के व्यवहारिक पक्षों में भी इसकी गहरी प्रासंगिकता है। भारतीय दर्शन की पहली प्रमुख विशेषता इसका आध्यात्मिक दृष्टिकोण है। यहाँ आत्मा और ब्रह्म को केन्द्रीय विषय माना गया है। आत्मा को शुद्ध चेतना और शाश्वत तत्व के रूप में स्वीकार किया जाता है, जो न तो जन्म लेता है, न मरता है। ब्रह्म को परम सत्य या परम सत्ता कहा गया है जिससे

समस्त सृष्टि उत्पन्न हुई है। उपनिषदों में वर्णित "अहं ब्रह्मस्मि" और "तत्त्वमसि" जैसे महावाक्य इस अद्वैत की अनुभूति को दर्शाते हैं।[9] दूसरी विशेषता है प्रायोगिकता। भारतीय दर्शन केवल वैचारिक या सैद्धांतिक विमर्श नहीं है, बल्कि यह जीवन में उतरने योग्य व्यवहारिक सिद्धांत प्रस्तुत करता है। योग, ध्यान, तप, त्याग और संयम जैसे साधनों के माध्यम से व्यक्ति आत्मा की शुद्धि और अंततः मोक्ष की ओर अग्रसर होता है। गीता में श्रीकृष्ण अर्जुन को कर्मयोग, ज्ञानयोग और भक्तियोग जैसे व्यवहारिक मार्गों का उपदेश देते हैं, जिससे यह स्पष्ट होता है कि दर्शन केवल सोचने की वस्तु नहीं, जीने की प्रक्रिया है। तीसरी विशेषता है नैतिकता और मूल्यों पर बल। भारतीय दर्शन में सत्य, अहिंसा, दया, क्षमा, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह और तप को जीवन के अनिवार्य अंग माने गए हैं। जैन और बौद्ध दर्शन ने तो इन नैतिक मूल्यों को संपूर्ण जीवन की नींव बना दिया। यही कारण है कि भारतीय समाज में नैतिकता को केवल सामाजिक आवश्यकता नहीं, बल्कि आध्यात्मिक उन्नति का साधन माना गया है। चौथी विशेषता है बहुलता और वैचारिक विविधता। भारतीय दर्शन में षड्दर्शन- सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, पूर्व मीमांसा और वेदांत के रूप में वैचारिक विविधता की समृद्ध परंपरा है। इन दर्शनों ने ब्रह्म, आत्मा, जगत, कर्म और मोक्ष के विषय में भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण प्रस्तुत किए हैं, लेकिन इनके बीच संवाद, सह-अस्तित्व और सम्मान की भावना भी रही है। जहाँ सांख्य दर्शन द्वैत पर बल देता है, वहीं वेदांत अद्वैत की प्रतिष्ठा करता है। न्याय और वैशेषिक दर्शन प्रमाण और तर्क पर बल देते हैं, तो योग आत्म-संयम और साधना पर आधारित है।[10] पाँचवीं विशेषता है मोक्षकेंद्रीता। सभी दर्शनों-आस्तिक या नास्तिक का अंतिम लक्ष्य मोक्ष है, यानी जन्म-मरण के चक्र से मुक्ति। यह मुक्ति आत्मज्ञान, कर्म की शुद्धि, ध्यान और भक्ति के माध्यम से प्राप्त की जाती है। भारतीय दर्शन में यह विश्वास प्रबल है कि यह संसार दुखमय है और उससे पार पाने का एकमात्र उपाय है आत्मा की यथार्थ पहचान।छठी विशेषता है शास्त्रों पर आधारितता। भारतीय दर्शन वेद, उपनिषद, ब्राह्मण, गीता और स्मृतियों पर आधारित है। वेदान्त विशेष रूप से उपनिषदों की शिक्षाओं का सार है। हालांकि बौद्ध और जैन दर्शन ने वैदिक प्रामाण्य को अस्वीकार किया, फिर भी वे भारतीय बौद्धिक परंपरा में एक विशिष्ट स्थान रखते हैं।

अंततः, भारतीय दर्शन की सातवीं विशेषता है व्यक्तिगत उन्नति और लोककल्याण का समन्वय। यह दर्शन व्यक्ति को आत्मोन्नति के साथ-साथ समाज की भलाई के लिए भी प्रेरित करता है। "वसुधैव कुटुम्बकम" और "सर्वे भवन्तु सुखिनः" जैसे विचार भारतीय दृष्टिकोण की व्यापकता और करुणा को उजागर करते हैं। इस प्रकार भारतीय दर्शन समग्र जीवन- दृष्टि प्रस्तुत करता है, जिसमें आत्मा की मुक्ति ही नहीं, बल्कि सामाजिक, नैतिक, और व्यवहारिक संतुलन की भी चिंता की गई है। यह न केवल एक गहन दार्शनिक परंपरा है, बल्कि आज भी मानव जीवन के लिए उपयोगी और प्रेरणास्पद मार्गदर्शक है।

ऐतिहासिक भूमिका- भारतीय ज्ञान परंपरा में वेद और उपनिषद काल का स्थान अत्यंत विशिष्ट है। यह काल न केवल धार्मिक अनुष्ठानों और यज्ञकर्म का युग था, बल्कि दार्शनिक चिंतन और आत्म-खोज की एक नई चेतना का प्रारंभ भी था। विशेष रूप से

उपनिषदों में जीवन, ब्रह्मांड और चेतना को लेकर जो विचार प्रस्तुत किए गए, उन्होंने भारतीय दर्शन की आधारशिला रखी। इन्हीं ग्रंथों में अद्वैत, द्वैत और विशिष्टाद्वैत जैसे दर्शन के बीज छिपे हुए हैं, जो आगे चलकर क्रमशः शंकराचार्य, माध्वाचार्य और रामानुजाचार्य जैसे महान आचार्यों द्वारा विकसित किए गए। उपनिषदों की दार्शनिक विशेषता यह है कि वे ईश्वर, आत्मा, जगत और मोक्ष जैसे विषयों पर मौलिक और गहन विमर्श प्रस्तुत करते हैं। इनमें मनुष्य के अंतर्मन की यात्रा, आत्मा की शुद्धता, और ब्रह्म के साथ उसकी एकता का विश्लेषण किया गया है। 'अहं ब्रह्मास्मि', 'तत्त्वमसि', 'प्रज्ञानं ब्रह्म' और 'अयमात्मा ब्रह्म' जैसे महावाक्य उपनिषदों में आत्मा और ब्रह्म की अद्वितीयता को रेखांकित करते हैं। ये कथन स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि व्यक्ति की वास्तविक पहचान किसी बाह्य रूप या कर्म से नहीं, बल्कि उस चेतन तत्व से है जो समस्त ब्रह्मांड में व्याप्त है।[11]

अद्वैत सिद्धांत के अनुसार ब्रह्म ही एकमात्र सत्य है, और संसार माया है। यह विचार उपनिषदों में स्पष्ट रूप से उभरता है, जहाँ ब्रह्म को न तो जन्मा हुआ, न ही मरणशील, न ही रूपधारी बताया गया है। वह नित्य, शुद्ध, बुद्ध और सत्यस्वरूप है। वहीं द्वैत का बीज भी उन उपनिषदों में मौजूद है जो जीव और ईश्वर को दो अलग सत्ता मानते हैं, जैसे कि श्वेताश्वतर उपनिषद, जहाँ भक्ति और ईश्वर के स्वरूप का वर्णन मिलता है। विशिष्टाद्वैत का आधार भी उपनिषदों में मिलता है, जहाँ आत्मा को ब्रह्म का अंश माना गया है,[12] जो ब्रह्म से भिन्न नहीं, किंतु उसमें पूर्णतः विलीन भी नहीं। इसके अतिरिक्त, उपनिषदों में आत्मा की शाश्वतता, पुनर्जन्म, कर्मफल, मोक्ष और मुक्ति जैसे विषयों पर भी विस्तृत विमर्श मिलता है। 'नेति नेति' (यह नहीं, वह नहीं) जैसी उपनिषद की व्याख्या यह दिखाती है कि ब्रह्म को शब्दों, रूपों और कल्पनाओं से परे समझा जाना चाहिए।

उपनिषद काल में ज्ञान को केवल पठन-पाठन या यज्ञकर्म से नहीं, बल्कि श्रवण, मनन और निदिध्यासन के माध्यम से अर्जित करने पर बल दिया गया। यह काल मनुष्य की आत्म-साक्षात्कार की आंतरिक यात्रा का आरंभ था, जहाँ बाह्य धार्मिक कर्मकांडों से हटकर व्यक्ति अपनी चेतना की ओर उन्मुख हुआ। अतः उपनिषद काल केवल दार्शनिक विमर्श का युग नहीं था, बल्कि यह आध्यात्मिक क्रांति का समय था, जिसने भारत को एक ऐसी दृष्टि दी, जो आज भी योग, ध्यान, वेदांत और भक्ति की चेतना में जीवित है।[13] भारतीय दर्शन में आत्मा और ब्रह्म दो ऐसे केंद्रीय तत्त्व हैं जिनके इर्द-गिर्द समस्त वैदिक और उपनिषदिक चिंतन घूमता है। आत्मा का तात्पर्य उस चेतन सत्ता से है जो प्रत्येक व्यक्ति के भीतर विद्यमान है वह जो शरीर, मन और इंद्रियों से परे है, नित्य, शाश्वत और अपरिवर्तनीय है।[14] वहीं ब्रह्म वह सार्वभौमिक चेतना है जो सम्पूर्ण सृष्टि का मूल है, जो निराकार, निर्गुण, अनंत और सर्वव्यापी है। उपनिषदों में आत्मा और ब्रह्म के संबंध को अत्यंत गहराई से प्रस्तुत किया गया है। शंकराचार्य के अद्वैत वेदांत के अनुसार, आत्मा और ब्रह्म में कोई भेद नहीं है 'अहं ब्रह्मास्मि' (मैं ही ब्रह्म हूँ) जैसे महावाक्य इसी एकता की पुष्टि करते हैं।[15] यह विचार यह दर्शाता है कि आत्मा और ब्रह्म वास्तव में एक ही चेतना के दो रूप नहीं, बल्कि एक ही सत्ता हैं; भेद केवल अविद्या (अज्ञान) के कारण प्रतीत होता है।[16]

दूसरी ओर, माध्वाचार्य के द्वैत वेदांत में आत्मा और ब्रह्म को पूर्णत: भिन्न माना गया है। इस दृष्टिकोण में ब्रह्म (ईश्वर) सृजनकर्ता है और आत्मा उसकी सृष्टि, जो कभी ब्रह्म के समान नहीं हो सकती। विशिष्टाद्वैत में रामानुजाचार्य आत्मा को ब्रह्म की विशिष्टता मानते हैं आत्मा ब्रह्म से भिन्न नहीं, पर पूर्णत: समान भी नहीं है; वह उसका अंश है, जैसे शरीर आत्मा का निवास है। इस प्रकार आत्मा और ब्रह्म का संबंध विभिन्न दर्शनों में भिन्न-भिन्न रूप से प्रस्तुत हुआ है, किंतु सभी में यह स्वीकार किया गया है कि आत्मा का परम लक्ष्य ब्रह्म के साथ तादात्म्य या समीपता प्राप्त करना है।[17] ब्रह्मज्ञान या आत्मसाक्षात्कार ही मुक्ति का मार्ग है, ऐसा उपनिषदों का मत है। 'तत्त्वमसि' (तू वही है) जैसे वाक्य स्पष्ट करते हैं कि जब आत्मा अपने वास्तविक स्वरूप को पहचान लेती है, तभी वह अपने ब्रह्मरूप को अनुभव करती है। आत्मा और ब्रह्म का यह अद्वितीय संबंध ही भारतीय दर्शन की सबसे बड़ी विशेषता है, जो व्यक्ति को बाह्य धार्मिक कर्मकांडों से हटाकर आंतरिक चेतना की ओर उन्मुख करता है।[18]

प्राचीन भारत में ज्ञान और दर्शन की शिक्षा का एक संगठित और समृद्ध ढांचा विकसित हुआ था, जिसका केंद्र रहे- नालंदा, तक्षशिला, और विक्रमशिला जैसे विश्वप्रसिद्ध महाविद्यालय। ये संस्थान न केवल भारत बल्कि पूरे एशिया में दार्शनिक, धार्मिक और वैज्ञानिक अध्ययन के लिए आकर्षण का केंद्र थे।[19] तक्षशिला में न्याय, आयुर्वेद, और वैशेषिक जैसे दर्शनों की शिक्षा दी जाती थी, जबकि नालंदा और विक्रमशिला में विशेष रूप से बौद्ध दर्शन, व्याकरण, और तर्कशास्त्र का गहन अध्ययन होता था। इन संस्थानों में हजारों छात्र देश-विदेश से आते थे और शिक्षकों के सान्निध्य में शास्त्रों के गूढ़ रहस्यों को समझते थे।[20]

भक्ति और तत्त्वज्ञान का समन्वय भारतीय दर्शन की एक विशिष्ट विशेषता रही है। शंकराचार्य ने अद्वैत वेदांत को स्थापित करते हुए ज्ञान को मोक्ष का मार्ग बताया, किंतु साथ ही उन्होंने उपासना और भक्ति की महत्ता को भी स्वीकार किया।[21] रामानुजाचार्य ने विशिष्टाद्वैत वेदांत की स्थापना की, जिसमें उन्होंने आत्मा और ब्रह्म के संबंध को विशिष्ट रूप में व्याख्यायित किया और भक्ति को मोक्ष प्राप्ति का प्रमुख साधन माना। माध्वाचार्य ने द्वैत दर्शन का प्रतिपादन किया, जिसमें उन्होंने ईश्वर और जीव को पूर्णत: पृथक मानते हुए भक्ति को ही मुक्तिपथ बताया। इस प्रकार इन आचार्यों ने भक्ति और तत्त्वज्ञान को परस्पर विरोधी नहीं, बल्कि पूरक सिद्ध किया।[22]

बौद्ध और जैन दर्शन ने भारतीय चिंतन को एक नई गहराई और नैतिकता की परिपक्व दृष्टि प्रदान की। बौद्ध दर्शन ने दु:ख, अनित्य और अनात्मा जैसे सिद्धांतों के माध्यम से जीवन के यथार्थ को समझाने का प्रयास किया।[23] गौतम बुद्ध ने चार आर्य सत्यों और अष्टांगिक मार्ग के द्वारा जीवन की समस्याओं का समाधान प्रस्तुत किया, जिसमें नैतिक आचरण, ध्यान और प्रज्ञा का संयोजन था। जैन दर्शन ने अहिंसा, अपरिग्रह, और अनेकांतवाद को केंद्रीय सिद्धांत माना और आत्मा की शुद्धि और मोक्ष प्राप्ति के लिए तप और संयम पर बल दिया।[24] इन दोनों परंपराओं ने भारतीय दर्शन को केवल वैदिक परिधि में नहीं बाँधा, बल्कि उसे व्यापक, बहुलतावादी और नैतिक आधार प्रदान किया।इन सभी तत्वों ने भारतीय दर्शन को न केवल बौद्धिक रूप से समृद्ध किया, बल्कि

उसे आचरण, समाज और जीवन की दिशा देने वाला एक समग्र जीवन-दर्शन बना दिया।[25]

प्रासंगिकता- आज का युग विज्ञान, तकनीक, सूचना, और उपभोक्तावाद का है, जहाँ मनुष्य ने बाह्य रूप से बहुत तरक्की की है, किंतु भीतर से वह असंतुलन, तनाव, और नैतिक दुविधाओं का शिकार हो गया है। ऐसे समय में भारतीय दर्शन केवल अतीत की बौद्धिक थाती नहीं, बल्कि आज के जटिल जीवन के लिए एक सशक्त मार्गदर्शक बनकर उभरता है। इसकी शिक्षाएँ न केवल वैचारिक हैं, बल्कि व्यवहारिक और सार्वकालिक हैं।भारतीय दर्शन आत्मा, चित्त, और मन की स्वाभाविक प्रवृत्तियों को समझने और उन्हें संयमित करने पर बल देता है। उपनिषदों, योगदर्शन, और भगवद्गीता में वर्णित ध्यान, वैराग्य, संतोष, स्वाध्याय जैसे साधन आधुनिक जीवन की व्यग्रता और चिंता को संतुलित करने में अत्यंत उपयोगी हैं।[26] आज के तनावपूर्ण और प्रतिस्पर्धात्मक वातावरण में जब लोग मानसिक बीमारियों और आत्मविस्मृति से ग्रस्त हैं, तब दर्शन के साधन जैसे योग और ध्यान उन्हें आत्म-साक्षात्कार और संतुलन की दिशा में ले जाते हैं।भारतीय दर्शन केवल आत्मा और ब्रह्म की खोज तक सीमित नहीं है, वह जीवन के सामाजिक पक्षों को भी अत्यंत महत्व देता है। अहिंसा, सत्य, करुणा, शौच, दया, अपरिग्रह, कर्तव्यबोध जैसे मूल्य समाज में सद्भाव, सहिष्णुता और समन्वय का आधार बनते हैं। आज जब समाज में नैतिक क्षरण, हिंसा, वैमनस्य और विघटन बढ़ रहा है, तब भारतीय दर्शन की नैतिक शिक्षाएँ व्यक्ति और समाज दोनों को मानवता की ओर उन्मुख करती हैं।[27]

भारतीय दर्शन शिक्षा को केवल सूचना का संप्रेषण नहीं, बल्कि अंत:करण की शुद्धि, बुद्धि का विकास, और चरित्र निर्माण का साधन मानता है। तैत्तिरीय उपनिषद कहता है– 'सा विद्या या विमुक्तये' अर्थात् वह ज्ञान जो मुक्ति दे। यही दृष्टिकोण राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में परिलक्षित होता है, जिसमें नैतिकता, भारतीय परंपरा, आध्यात्मिकता और मूल्यपरक शिक्षा को स्थान दिया गया है। यह नीति विद्यार्थियों को केवल नौकरी हेतु नहीं, बल्कि एक उत्तरदायी नागरिक और संवेदनशील मनुष्य के रूप में विकसित करने का प्रयास है।[28] भारतीय दर्शन प्रकृति को केवल संसाधन नहीं मानता, बल्कि उसे माँ के रूप में पूजनीय समझता है। वृक्ष, नदी, गाय, पृथ्वी आदि को देवता का स्वरूप मानना इस बात का प्रमाण है कि हमारे पूर्वजों में प्रकृति के प्रति गहरी श्रद्धा और संरक्षण का भाव था। ऋग्वेद में पृथ्वी को 'वसुंधरा' कहा गया है[29], जिसका तात्पर्य है– सबको धारण करने वाली। आज जब विश्व जलवायु परिवर्तन, वनों की कटाई और प्रदूषण की गंभीर समस्याओं से जूझ रहा है, तब भारतीय दर्शन की पर्यावरण-सम्मत जीवनशैली, मितव्ययिता, और संतुलन भावना सतत विकास का सशक्त आधार बन सकती है। भारतीय दर्शन की शिक्षाएँ केवल अतीत की स्मृति नहीं, बल्कि वर्तमान की आवश्यकता और भविष्य की तैयारी हैं। यह हमें स्वयं को जानने, समाज को समझने, और प्रकृति से सामंजस्य स्थापित करने की राह दिखाता है। यह केवल तर्क नहीं, एक जीवन दृष्टि है जो आधुनिक जीवन की उलझनों को सरलता और शांति से सुलझा सकती है।

वैश्विक संदर्भ में योगदान- भारतीय दर्शन की मूलभूत अवधारणाएँ जैसे योग, ध्यान, अहिंसा, आत्म-ज्ञान और सह-अस्तित्व न केवल भारत की सांस्कृतिक विरासत का अंग हैं, बल्कि आज यह समस्त मानवता के लिए प्रेरणास्रोत बन गई हैं। प्राचीन काल से ही भारत ने आत्मा की खोज और जीवन के गूढ़ रहस्यों की व्याख्या के माध्यम से एक ऐसी दार्शनिक परंपरा विकसित की जो सार्वभौमिक, समावेशी और कालातीत है। यह दर्शन केवल भारत तक सीमित नहीं रहा, बल्कि उसने विश्व की बौद्धिक, नैतिक और आध्यात्मिक चेतना को भी गहराई से प्रभावित किया है।30 योग और ध्यान की विधियाँ, जो कभी केवल भारतीय ऋषियों की तपस्थली का हिस्सा थीं, आज संयुक्त राष्ट्र जैसे वैश्विक संस्थानों द्वारा मान्यता प्राप्त कर चुकी हैं। 21 जून को अंतरराष्ट्रीय योग दिवस के रूप में मनाया जाना इसका प्रमाण है कि भारतीय जीवनशैली की यह विद्या अब विश्व के लिए मानसिक शांति, स्वास्थ्य और संतुलन का साधन बन चुकी है।[31]अहिंसा का सिद्धांत जिसे महावीर और बुद्ध ने दर्शन में प्रतिष्ठित किया और जिसे महात्मा गांधी ने आधुनिक विश्व राजनीति में कार्यरूप में उतारा, वह आज भी वैश्विक संघर्ष समाधान, मानवाधिकार और शांति आंदोलनों की आधारशिला है। गांधीजी के सिद्धांतों से प्रेरित होकर नेल्सन मंडेला, मार्टिन लूथर किंग जूनियर जैसे वैश्विक नेताओं ने सत्य और अहिंसा को अपनी क्रांतिकारी राजनीति में अपनाया।[32]

स्वामी विवेकानंद ने 1893 के शिकागो धर्म संसद में भारतीय दर्शन की सार्वभौमिकता, सहिष्णुता और एकता के विचार को जिस प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया, उसने भारत को वैश्विक बौद्धिक मानचित्र पर स्थापित कर दिया। उनके भाषणों में निहित आत्म-ज्ञान, आत्मबल और विश्व-बंधुत्व की भावना आज भी उतनी ही प्रासंगिक है। श्री अरविंद के योग-समन्वयवाद ने पश्चिमी वैज्ञानिक चेतना और भारतीय आध्यात्मिक ज्ञान का एक नया सेतु निर्मित किया, जिससे आधुनिक विश्व में 'इंटेग्रल योग' जैसे विचार को स्वीकार्यता मिली। रमण महर्षि की हू एम आई? जैसी आत्म-अन्वेषी साधना विधि आज भी वैश्विक अध्यात्म-जगत में आदर के साथ अनुकरणीय मानी जाती है।[33] इस प्रकार भारतीय दर्शन ने वैश्विक मानवता को केवल ज्ञान नहीं, बल्कि जीने की एक गहन दृष्टि दी है, जो वसुधैव कुटुम्बकम, सर्वे भवन्तु सुखिनः, और लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु जैसे विचारों में प्रकट होती है। यह दर्शन आधुनिक विश्व को एक संतुलित, नैतिक और आत्मज्ञानी समाज की ओर ले जाने की क्षमता रखता है।[34]

निष्कर्ष- भारतीय दर्शन मात्र अतीत की कोई स्मृति नहीं, बल्कि यह एक ऐसी जीवंत परंपरा है जो आज भी मानवता के सामने उपस्थित जटिलताओं, द्वंद्वों और संकटों के समाधान की संभावनाएँ प्रस्तुत करती है। यह परंपरा सहस्रों वर्षों से मानव जीवन को दिशा देती रही है, और इसकी प्रासंगिकता आज के दौर में और भी अधिक स्पष्ट हो उठती है। भारतीय दर्शन का स्वरूप न तो केवल तर्क पर आधारित है, और न ही मात्र आस्था पर; यह एक ऐसा समन्वित चिंतन है जिसमें अनुभव, विवेक, साधना, संयम, और समरसता का अद्वितीय संगम दृष्टिगोचर होता है।दर्शन का यह स्वरूप व्यक्ति को केवल बाह्य जगत में उलझने नहीं देता, बल्कि उसे अंतर्मुखी बनाकर आत्मा, ब्रह्म, और यथार्थ की खोज में

प्रवृत्त करता है। यह दर्शन "स्व" की खोज, सत्य का साक्षात्कार, और मोक्ष की आकांक्षा को जीवन का परम उद्देश्य मानता है। यही कारण है कि भारतीय दार्शनिक परंपरा में जीवन को एक साधना के रूप में देखा गया है, न कि केवल उपभोग या तर्क-वितर्क का क्षेत्र।

आधुनिक विश्व जिन समस्याओं से जूझ रहा है, जैसे मानसिक तनाव, मूल्यहीनता, सामाजिक विघटन, उपभोक्तावाद, और पर्यावरणीय असंतुलन, उनके मूल में जीवन दृष्टि की एकरूपता और स्थूलता है। ऐसे समय में भारतीय दर्शन का समग्र और संतुलित दृष्टिकोण, आत्मनियंत्रण और करुणा पर आधारित नैतिक मूल्य-तंत्र, न केवल व्यक्ति को आत्मिक शांति प्रदान कर सकता है, बल्कि समाज को सामूहिक संतुलन और शांति की ओर भी अग्रसर कर सकता है।

'वसुधैव कुटुम्बकम' का विचार केवल एक सांस्कृतिक घोषवाक्य नहीं, बल्कि यह वैश्विक सह-अस्तित्व की आधारशिला है। 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' की भावना सामाजिक समरसता और करुणामूलक विकास का मार्ग प्रशस्त करती है। इसी प्रकार 'अहिंसा परमो धर्मः' की धारणा मानवीय संबंधों की आधारभूत नींव बन सकती है।इसलिए भारतीय दर्शन का अध्ययन केवल एक शैक्षणिक अनुष्ठान नहीं, बल्कि यह आज की वैश्विक चेतना के निर्माण की एक अनिवार्य प्रक्रिया है। आवश्यकता है कि इस दार्शनिक धरोहर को केवल ग्रंथों तक सीमित न रखते हुए इसे जीवन के व्यवहारिक पक्ष में उतारा जाए, शिक्षा में, नीति-निर्माण में, आचरण में, और अंतर्राष्ट्रीय संवाद में। जब हम भारतीय दर्शन को आधुनिक संदर्भों में पुनर्जीवित करेंगे, तब ही यह परंपरा केवल अतीत की वैभवगाथा नहीं, बल्कि भविष्य का पथ-प्रदर्शक बन पाएगी। अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि भारतीय दर्शन न केवल भारत की आत्मा है, बल्कि यह समस्त मानवता के लिए एक सार्वकालिक और सार्वभौमिक विचारधारा है, जिसकी ओर लौटना आज की एक आवश्यकता ही नहीं, दायित्व भी है।

संदर्भ सूची-

1. राधाकृष्णन, एस., भारतीय दर्शन (भाग-1), ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2004, पृ. 18।
2. दासगुप्त, सुरेन्द्रनाथ, भारतीय दर्शन का इतिहास (खंड-1), मोटिलाल बनारसीदास, वाराणसी, 2006, पृ. 92।
3. शंकराचार्य, विवेकचूडामणि, चौखम्बा संस्कृत सीरीज़, वाराणसी, 2008, पृ. 22।
4. स्वामी निखिलानन्द, आत्मबोध, अद्वैत आश्रम, कोलकाता, 1931, पृ. 45।
5. गोविंद चंद्र पांडेय, भारतीय संस्कृति और सभ्यता, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2011, पृ. 101।
6. बिमल कृष्ण मतिलाल, दार्शनिक परंपराएँ, मोटिलाल बनारसीदास, दिल्ली, 2003, पृ. 58।
7. विद्या निवास मिश्र, भारतीय बौद्धिक परंपरा, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, 2001, पृ. 87।
8. चन्द्रधर शर्मा, भारतीय दर्शन, मोटिलाल बनारसीदास, दिल्ली, 2005, पृ. 74।
9. भगवानदास, प्राचीन भारतीय शिक्षा, चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी, 1998, पृ. 112।
10. बालदेव उपाध्याय, भारतीय चिंतन की भूमिका, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 2000, पृ. 66।
11. शंकराचार्य, ब्रह्मसूत्र भाष्य, चौखम्बा संस्कृत सीरीज़, वाराणसी, 2008, पृ. 12–18।

12. रामानुजाचार्य, श्रीभाष्य, गौड़ीय मठ, मथुरा, 1996, पृ. 42–50।
13. माध्वाचार्य, ब्रह्मसूत्र भाष्य, द्वैत दर्शन प्रकाशन, उडुपी, 2005, पृ. 34–39।
14. छान्दोग्य उपनिषद, चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी, 2010, पृ. 126–134।
15. बृहदारण्यक उपनिषद, चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी, 2006, पृ. 51–55।
16. दासगुप्त, सुरेन्द्रनाथ, पूर्वोक्त, पृ. 89–101।
17. राधाकृष्णन, एस., भारतीय दर्शन, (पूर्वोक्त), पृ. 217–233।
18. स्वामी निखिलानन्द, पूर्वोक्त, पृ. 45–53।
19. राधाकृष्णन, एस., पूर्वोक्त, पृ. 88।
20. दासगुप्त, सुरेन्द्रनाथ, भारतीय दर्शन का इतिहास (खंड-2), वाराणसी, 2007, पृ. 112।
21. बालदेव उपाध्याय, भारतीय संस्कृति का बौद्धिक विकास, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 1999, पृ. 56।
22. हजारीप्रसाद द्विवेदी, भारतीय ज्ञान परंपरा, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2002, पृ. 101।
23. लक्ष्मीनारायण शर्मा, भारतीय दर्शन का स्वरूप, चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी, 2005, पृ. 92।
24. चन्द्रधर शर्मा, पूर्वोक्त, पृ. 141।
25. विद्याभूषण, बौद्ध तर्कशास्त्र का इतिहास, भारतीय विद्या परिषद, पुणे, 1998, पृ. 73।
26. बालदेव उपाध्याय, पूर्वोक्त, पृ. 104।
27. चन्द्रधर शर्मा, पूर्वोक्त, पृ. 185।
28. भगवद्गीता, अध्याय 6, श्लोक 5–7, गीता प्रेस, गोरखपुर, 2014, पृ. 112।
29. भारत सरकार, राष्ट्रीय शिक्षा नीति – 2020, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, नई दिल्ली, पृ. 14–21।
30. गोविंद चंद्र पांडेय, पूर्वोक्त, पृ. 93।
31. विवेकानंद, स्वामी, विश्वधर्म महासभा भाषण, राम कृष्ण मिशन, कोलकाता, 1995, पृ. 12।
32. गांधी, महात्मा, सत्य के प्रयोग, नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, 2002, पृ. 91।
33. अरविंद, श्री, सिंथेसिस ऑफ योग, श्री अरविंद आश्रम, पांडिचेरी, 2005, पृ. 145।
34. रमण महर्षि, हू एम आई?, रमणाश्रम, तिरुवन्नामलाई, 2000, पृ. 23।

RNI No MP BIL 01034 / 12 / 1 / 2005 - TC
REGISTRAR OF NEWS PAPERS IN INDIA, GOVT. OF INDIA

Centre for Research Studies
Rewa-486001 (M.P.) India
Registered Under M.P. Society Registration Act,
1973, Reg. No. 1802, Year-1997
www.researchjournal.in

ISSN 0973-3914

Editor: Prof. Akhilesh Shukla, Published by Dr. Gayatri Shukla on behalf of Gayatri Publications, Rewa - 486001 (M.P.) and Printed at Glory Offset Nagpur